

(4th part of the work)

(4)

(F)

2
श्री:

॥ पुरश्चर्यणिवम् ॥

(इ)

III 2d Part.

RHYTHAMBHARA GNANA SABHA

(कृतः श्री जान सभा)

WZ-605-B, PALAM VILLAGE & P.O.

NEW DELHI-110045

(19)



भूमिका ।

(19)

Handwritten signature or name in Devanagari script.

विदितोऽयं विद्वद्भिर्भवद्भिः पुरश्चर्यार्णवस्यातुल्यविषयभङ्गिभारः । तत्र
कतिपयानां विषयाणां दिदृक्षुसौकर्याय सत्वरं लाभाय च मातृकावर्णाननु-
सृत्यात्रैव शकले सूची संरक्षिता यस्या विलोकनेन मनसि तात्रिकविषय-
जातदिदृक्षोद्रेकः सहसा शाम्येत् ।

अथ तन्त्रशास्त्रे मन्त्रोद्धारो, देवताध्यानानि, यन्त्राणि चातिदुर्ज्ञेयान्यवग-
म्य तदखिलानां सुलभाय सर्वजनीनो वर्णवीजकोशोऽनेकान् मातृकावीजको-
शानवलोक्य निहितोऽथ येषां ध्यानार्थं चित्राणि यन्त्राणि च तेषां देवानाम-
नुक्तान्यन्यतोऽपि संगृह्य न्यस्तानि ।

नैतावद्भिः-(वर्णवीजकोशध्यानचित्रयन्त्रैर्विद्वांसो मां यथार्थं वक्रोक्त्या
वा तन्त्रे सर्वज्ञताधिकारितागतं ब्रुवाणाः स्वमनोमोदं लभन्ताम् । किन्तु निष्पक्ष-
पातिमतिभिस्तेऽक्षरशोऽस्मत्परिश्रममवलोक्यानवधानतातोऽनवगताभिप्रायतश्च
ग्रन्थपूर्वापरसम्बन्धविघटनाद्यखिलाशुद्धिसूचनां शोधनपुरस्सरां कम्पन्ग-
पतिभ्यो वितरीतुमारभन्ताम् । येनातिलज्जमानः स्तोकबुद्धिविभवाद्
पुनरन्यावसरे तन्निःक्षेपणादतिधन्यवाददानविहितनिष्कयोऽयं जनो भवि-

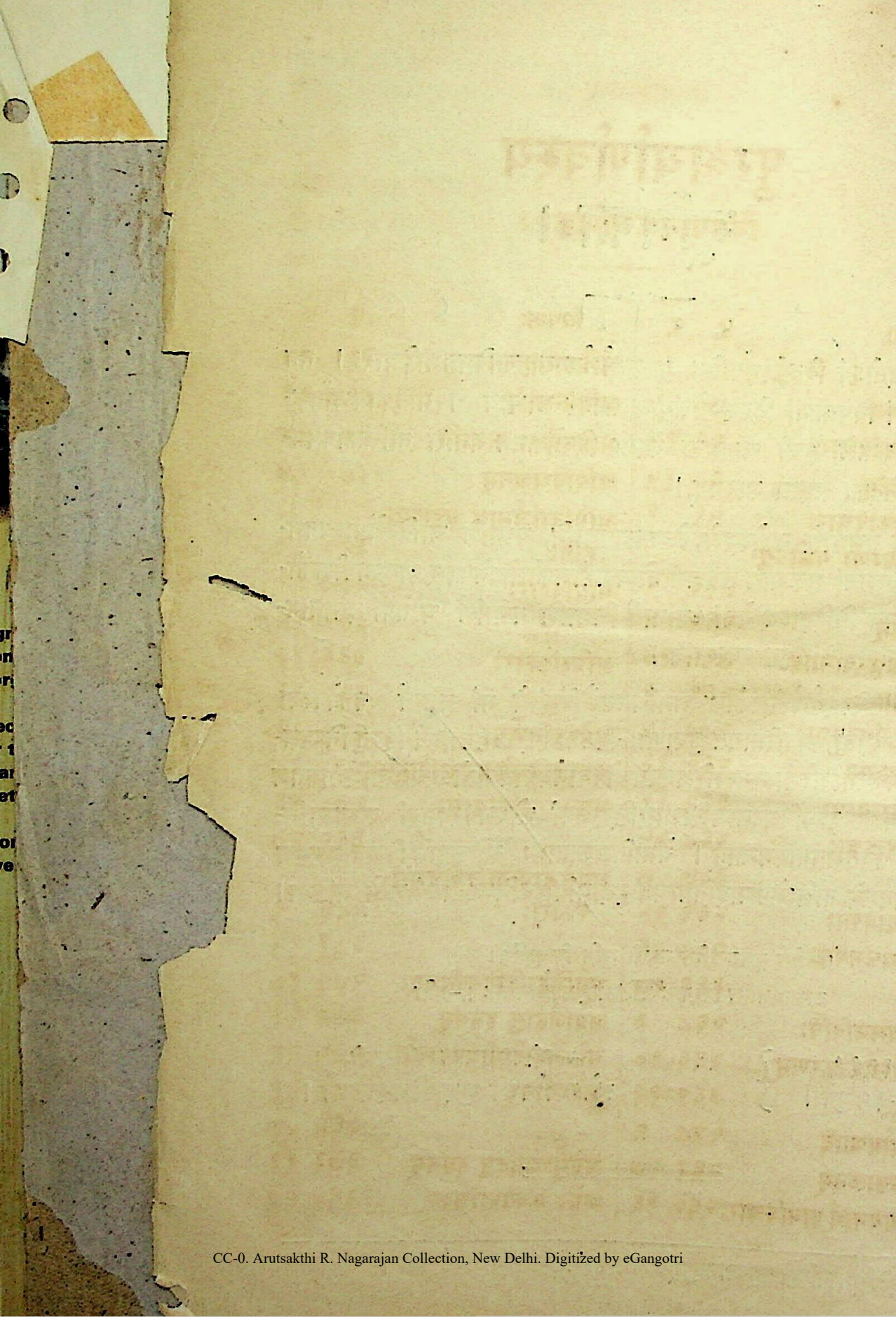
पतन्ति पुनरुद्यन्ति बहवो भुवि किन्तु ते ।

उत्थापयन्ति विरलाः पतितान् बलभागिनः ॥-इति

सं. १९६१
आषाढ-१९ बुधे ।

}

भवदीयकरुणाकणामिलाषी,
झोपाभिधो मुरलीधरशर्मा ।



पुरश्चर्यार्णवस्य

विषयानुक्रमणिका ।

| विषयाः | पृ. प. | विषयाः | पृ. प. |
|-------------------------------------|--------|--------------------------------------|--------|
| [अ] | | | |
| अकडमचक्रम् | ७० ५ | अग्निप्रयोत्तजनः | २६५ १४ |
| अकडमचक्रविचारः | ६९ १५ | अग्निमन्त्रादि | ८९७ २३ |
| अकथहचक्रम् | ६० १५ | अग्निवर्णतः फलानि | ३०० १४ |
| अकथहचक्रविचारः | ५९ १ | अग्निविसर्जनम् | ३८० १४ |
| अकृतपुरश्चरणो मन्त्रोऽशु- भप्रदः | ४१६ ९ | अग्निविसर्जनार्थं महान्या- हतिः | ३८० २ |
| अक्षपाटनम् | २६२ ५ | अग्निविहारः | २८८ ११ |
| अक्षोभ्यमन्त्रध्यानादि | ७९५ १० | " | ३७५ १२ |
| अग्निजिह्वाः | २६९ १ | अग्निसंस्कारः | २६६ १० |
| अग्निजिह्वाधिदेवताः | २७० ५ | " | ३६१ ११ |
| अग्निजिह्वानाम | २६९ ११ | अग्नेरङ्गनिर्णयः | २९९ २३ |
| अग्निजिह्वान्यासः | ३६२ ११ | अग्नेरङ्गविशेषे हवनादिफलम् | २९९ १८ |
| अग्निजिह्वामन्त्राः | २६८ २५ | अग्नेर्ऋष्यादिन्यासः | २७० १३ |
| " | ३६७ ७ | " | ३६२ २७ |
| अग्निजिह्वावर्णाः | २६९ २५ | अग्नेर्गर्भाधानादिषोडशसं- स्काराः | २८४ ९ |
| अग्निज्वालनमन्त्रः | २६७ २६ | " | ३७१ १५ |
| " | ३६१ २७ | अग्नेर्जिह्वादिदिङ्निर्णयः | २७४ १७ |
| अग्निज्वालनविधिः | २६८ ३ | अग्नेर्जिह्वासु हवनम् | ३७२ २१ |
| अग्नित्रयस्यैकीकरणम् | २६६ १० | अग्नेर्जिह्वाहोमीयपदार्थाः | २७५ २२ |
| " | ३६१ ११ | अग्नेर्ध्यानम् | २७९ ११ |
| अग्निदुर्गामन्त्रादि | ९४८ ९ | " | ३६४ ७ |
| अग्निप्रज्वालनम् | २६१ २७ | अग्नेर्मूर्त्यादिषु हवनम् | ३७३ ११ |
| अग्निप्रणयनार्थं पात्रविचारः | २६५ १६ | अग्नेः ऋष्यादांशः | २६४ २४ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|----------------------------|-----|----|----------------------------|------|----|
| अग्नेः क्रव्यादांशः | २६५ | २३ | अध्वशोधनम् | ३७७ | १५ |
| अग्नेः परिस्तरणम् | २७२ | १२ | अध्वोत्पत्तिः | ३७९ | १ |
| " | ३६५ | १४ | अनन्तमन्त्रध्यानादि | ६९५ | ६ |
| अग्नेः पित्रोर्विसर्जनम् | २८६ | ८ | " | ९०२ | २२ |
| अग्नेः पूजनम् | २७३ | १६ | अनन्तयन्त्रम् | ११५८ | २० |
| " | ३६५ | ९ | अनाहतचक्रे शिवध्यानम् | ४९२ | १ |
| अग्न्याशुद्रासनम् | ३०७ | १० | अनुक्तजपसंख्याकमन्त्रज- | | |
| अग्न्युत्तारणम् | ५२० | २ | पसंख्या | ५४५ | १४ |
| अघोरमन्त्रः | ४४२ | १४ | अन्तर्मातृकान्यासः | १६८ | २१ |
| अघोरमन्त्रध्यानादि | ८२३ | १४ | " | ३३० | १७ |
| अङ्कुरार्पणकर्माणि | १४१ | ८ | अन्तर्यागः | ३३२ | १ |
| अङ्कुरार्पणम् | १४१ | ५ | अन्तर्यागविधिः | १८९ | २२ |
| अङ्कुरार्पणार्थं स्थानादि- | | | अन्नपूर्णाप्रकरणम् | ८७४ | २३ |
| नियमः | १४१ | १९ | अन्नपूर्णायन्त्रम् | ११५७ | १९ |
| अङ्गन्यासः | १८५ | १२ | अपराजितापूजा | ११२४ | ११ |
| अङ्गन्यासस्य नित्यता | १८७ | ५ | अपराजितावैष्णवीमन्त्रः | ११३३ | ३ |
| अङ्गमुद्रा | १८५ | ६ | अपरीक्ष्योपदेशदीक्षानि- | | |
| अङ्गुलादिमानम् | १३१ | १ | षेधः | ३९३ | ९ |
| अचला रात्रिः | ९६० | १६ | अप्सरस्साधनम् | १२१६ | १२ |
| अजपागायत्रीजपसङ्कल्पः | ४९४ | १६ | आभिषेकमन्त्रः | ४०४ | २ |
| अजपाजपनिवेदनम् | ४९३ | ९ | अमृतीकरणम् | २१९ | २१ |
| अजपाजपविधिः | ४८८ | ३ | " | ३४६ | २६ |
| अदीक्षितानिन्दा | ३८ | २० | अर्घपात्रप्रमाणम् | २०० | १० |
| " | ३९ | ४ | अर्घपात्रम् | १४८ | १६ |
| अदीक्षितपूजादि निष्फलम् | ३८ | ११ | अर्घपात्रद्रव्याणि | १९६ | १२ |
| अधमपूजा | ३६ | २२ | अर्घचन्द्रकुण्डम् | १२९ | १७ |
| अधिवासनम् | २८९ | १९ | अर्धनारीश्वरमन्त्रध्यानादि | ७०३ | २१ |
| " | ३७६ | १ | अवगुण्ठनम् | ३४६ | १५ |
| अध्वनामानि | ३०२ | २ | अविहितदीपादौ निषेधः | २४७ | १२ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|---------------------------|------|----|----------------------------|-----|----|
| अशुभखञ्जरीटशान्तिः | ११२७ | ११ | आग्नेय्यादिकलशस्थापनम् | ३४५ | १७ |
| अशुभस्वप्नशान्तिः | २९८ | ७ | आचमनपात्रम् | १४८ | १७ |
| अशुभस्वप्नाः | २९६ | ५ | आचमनमन्त्रः | ३२४ | २० |
| अशौचे विशेष आश्विनशुक्ले | ९९१ | २१ | " | ४९८ | २३ |
| अष्टगन्धं गणेशादिदेवानाम् | २१४ | १४ | आचमनीयपात्रस्थापनम् | ३३९ | १० |
| अष्टदिक्पालहोमः | २८६ | १६ | आचाराः सविधयः | २१ | ५ |
| " | ३७३ | ११ | आचार्यादिसम्भारः | १४८ | १० |
| अष्टदिक्पालार्थं कलश- | ३७३ | ११ | आज्ञाचक्रे गुरुध्यानम् | ४९२ | ११ |
| स्थापनम् | ३४५ | १९ | आज्यसंस्कारः | ३६९ | १५ |
| अष्टदिग्गजपूजनम् | ३४५ | २१ | आणवी दीक्षा | ३८९ | २२ |
| अष्टपाशाः | ४३ | १८ | आणवीभेदाः | ३८९ | २५ |
| अष्टभैरवाः | ४७३ | ९ | आतुराह्निकम् | ३५ | ७ |
| अष्टमतरङ्गविषयकथनम् | ७ | २ | आत्ममन्त्रः | १५९ | ३ |
| अष्टमनृसिंहमन्त्रध्यानादि | ६६४ | २१ | आपदुद्धारवटुकमन्त्रः | ७०५ | २० |
| अष्टमीकृत्यम् | १०३६ | १८ | आभिषेचिकी दीक्षा | ३९२ | १५ |
| अष्टमीनिर्णयः | ९८१ | ११ | आम्नायदेवाराधनफलम् | १५ | ६ |
| अष्टमीव्रतनिषेधः पुत्रिणः | १००४ | १४ | आम्नायमार्गयोः सङ्गतिः | २० | १४ |
| अष्टशक्तयः | ४७३ | १३ | आलीढलक्षणम् | ७८८ | २३ |
| अष्टादशोपचाराः | २२५ | ३ | आवरणदेवताः | ३५१ | १८ |
| अष्टास्रकुण्डम् | १३० | ११ | आवरणपूजा | २४० | २ |
| असक्तपूजकस्यावाहनादि | ३४७ | १ | आवश्यककुण्डानि | १३२ | ९ |
| अस्त्रपूजनम् | १०४१ | ७ | आवाहनादिमुद्राः | २२० | १५ |
| अहिबलचक्रम् | ९८ | १५ | आश्विनशुक्लप्रतिपन्निर्णयः | ९६९ | २६ |
| अहिबलचक्रविचारः | ९७ | २४ | आसननामलक्षणानि | ४२७ | १३ |
| [आ] | | | आसनपरिग्रहः | ३२४ | २२ |
| आगमशब्दार्थः | ३२ | २ | आसनप्रकारः | २२६ | २ |
| आगमस्य वेदाङ्गत्वम् | ३१ | १७ | आसनप्रमाणानि | ४२७ | १० |
| | | | आसनशोधनम् | १५८ | १६ |

१ शरीरावयवविहितान्यासनानि वेदितव्यानि ।

| विषयाः | पृ. | प. |
|--------------------|-----|----|
| आसनसंस्कारः | ७३१ | १६ |
| आसनादिदानमुद्राः | २५२ | २१ |
| आसनानि | ४२६ | ७ |
| आसनानि कामनाभेदेन | ४२६ | १८ |
| आसनानि निषिद्धानि | ४२६ | २६ |
| आसनोपवेशनदिङ्गियमः | १५९ | ७ |
| आसनोपवेशनमन्त्रः | १५८ | १९ |

[इ]

| | | |
|---------------------------|------|----|
| ✓ इन्द्रयन्त्रम् | ११५९ | १६ |
| ✓ इन्द्राणीमन्त्रादि | ११३५ | २१ |
| इन्द्राणीयन्त्रम् | ११५८ | २७ |
| इन्द्रादिलोकपालध्यानादि | २४२ | ३ |
| इष्टदेवध्यानम् | १८८ | ८ |
| इष्टदेवध्याने द्वैविध्यम् | १८८ | २३ |

[ई]

| | | |
|-----------------|------|----|
| ✓ ईशानमन्त्रादि | ९०१ | २६ |
| ईशानयन्त्रम् | ११५८ | १९ |

[उ]

| | | |
|------------------------------|------|----|
| उच्चैर्मन्त्रोच्चारणे दोषः | ५३३ | १६ |
| ✓ उच्छिष्टगणेशमन्त्रादि | ६३८ | २० |
| ✓ उच्छिष्टचाण्डालिनीयन्त्रम् | ११५७ | ५ |
| उत्तमपूजा | ३६ | २० |
| उत्तमब्राह्मणलक्षणम् | २५ | २ |
| उदयास्तपुरश्चरणभेदाः | ५६७ | १ |
| उदितचक्रम् | ७१ | १ |
| उदितचक्रविचारः | ७० | ८ |
| उपचारमुद्राः | २५२ | २१ |
| उपचारसमर्पणम् | ३४९ | २ |
| उपचारसमर्पणविधिः | २२६ | २ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|-------------------|-----|----|
| उपदेशदीक्षा | ३९२ | २३ |
| उपदेशदीक्षासमयादि | ३९३ | ६ |
| उपासनाभेदाः | ३७ | १२ |
| उमामाहेश्वरीतिथिः | ९८२ | १३ |
| उष्णिक् | १४८ | २० |

[ऋ]

| | | |
|-----------------------|-----|----|
| ऋणिधनिचक्रम् | ६३ | १ |
| ऋणिधनिचक्रविचारः | ६१ | ११ |
| ऋत्विगावरणवाक्यानि | ३२० | १३ |
| ऋषिच्छन्दआदिज्ञानमाव- | | |
| श्यकम् | ५३६ | १७ |
| ऋषिन्यासमुद्रा | १८५ | २ |
| ऋषिन्यासः | १८४ | ७ |

[ए]

| | | |
|----------------------------|------|----|
| ✓ एकजटागायत्री | ५०५ | २० |
| एकजटामन्त्रः | ७८४ | २२ |
| एकजटायन्त्रम् | ११५१ | १२ |
| एकव्यादिमुखरुद्राक्षनामानि | ४३६ | ११ |
| एकपीठे पृथक्पूजानिषेधः | ५२३ | १६ |
| एकलिङ्गस्थानलक्षणम् | ७३२ | ११ |
| एकलिङ्गादौ क्षेत्रपालवि- | | |
| शेषाः | ४७६ | ४ |
| एकाङ्गादिमन्त्राः | ४१४ | २२ |
| एकादशतरङ्गविषयकथनम् | ९ | १ |
| एकादशतृसिंहमन्त्रादि | ६६७ | ४ |
| एकाशीतिपदवास्तुचक्रम् | १०८ | २ |
| एकाशीतिपदवास्तुचक्र- | | |
| विचारः | १०६ | १९ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|--|------|----|-------------------------------------|------|-----|
| एकाशीतिपदवास्तुचक्रा- दिकोष्ठपूरणद्रव्यवर्णाः | ११० | ६ | कलामातृकान्यासः | १७१ | १८ |
| [क] | | | कलावती दीक्षा | ३८५ | १८ |
| कच्छपभेदाः | १०५६ | १७ | कलोत्पत्तिस्थानम् | १७२ | २० |
| कमलाक्रमः | ८४९ | २२ | कलौ जपः शस्तः | ४१५ | ११ |
| कमलेश्वरीभैरवीमन्त्रादि | ८१० | २० | कलौ विष्ण्वादिमाहात्म्य- स्थितिः | ४१५ | १३ |
| कमलेश्वरीभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ५ | कल्किमन्त्रादि | ६९२ | ८ |
| करणनिर्णयः | ८० | १२ | कल्कियन्त्रम् | ११४५ | ५ |
| करमाला वैष्णवे | ४४७ | ९ | कवित्वसम्पादनार्थं पुर- श्चरणम् | ५७३ | २१ |
| करमाला शाक्ते | ४४७ | २३ | " | ५७६ | १९ |
| करशुद्धिप्रकारः | १६१ | ४ | कामकलाकालीप्रकरणम् | ७७२ | ८ |
| करशुद्धिः | ३२५ | २६ | कामकलागायत्री | ५०८ | २ ✓ |
| कर्करीजलविकरणम् | २६० | २ | कामकलानामानि | ५९८ | ४ |
| कर्णपिशाचिनीसाधनम् | १२२१ | २ | कामकलायन्त्रम् | ११५० | १० |
| कर्णमातङ्गीमन्त्रादि | ८३२ | ११ | कामकलास्थानानि | ५९७ | २२ |
| कर्णयोर्मन्त्रश्रवणसंख्या | ३१२ | ११ | कामगायत्री | ५०८ | ८ |
| कर्दमप्रकारः | २३० | ८ | कामनाभेदेन पूजास्थानानि | ३७ | ७ |
| कर्पूरस्तवपुरश्चरणम् | ११६८ | २१ | कामनाभेदेन मालाभेदाः | ४३१ | २१ |
| कर्मविशेषेऽग्निजिह्वान्यासः | ३६२ | १५ | काममन्त्रादि | ७२० | २३ |
| कर्मविशेषे पात्रविशेषः | २७८ | २३ | कामराजविद्यामन्त्रः | ७९६ | ११ |
| कर्षादिप्रमाणानि | ९५० | ८ | कामरूपादिपीठस्थानानि | ४८२ | १५ |
| कलशप्रमाणम् | २१२ | २ | कामेश्वरीभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ६ |
| कलशभेदाः | २११ | २३ | कामेश्वरीसाधनम् | १२२५ | ९ |
| कलशस्थापनम् | ३३३ | ८ | काम्याभिषेकः | ११६४ | १६ |
| " | ९७६ | २० | कार्त्तवीर्यमन्त्रप्रयोगः | ७१४ | १६ |
| " | १०२० | २२ | कार्त्तवीर्यमन्त्रभेदाः | ७११ | ६ |
| कलशस्थापनविधिः | १९३ | २२ | कार्त्तवीर्यमन्त्रादि | ७०९ | २५ |
| कलानामानि | १७२ | ८ | कार्त्तवीर्ययन्त्रम् | ११४६ | ९ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|-------------------------------|------|----|---------------------------------|------|----|
| कार्तवीर्ययन्त्रं काम्यार्थम् | ११४६ | ११ | कुण्डलक्षणम् | १२८ | २२ |
| कालरात्रिः | ९६० | ८ | कुण्डलधारिणीसाधनम् | १२२२ | २३ |
| कालाग्निरुद्रः | १८७ | २४ | कुण्डसंख्या | १२९ | ४ |
| कालीकृष्णयोरैक्यम् | १७ | ९ | कुण्डसंस्कारः | २६१ | ३ |
| कालीगायत्री | ५०४ | २६ | कुण्डानां फलानि | १३६ | ५ |
| कालीगायत्रीपुरश्चरणम् | ७५२ | १८ | कुण्डे आधारशक्त्यादिपूजनम् | ३५९ | १५ |
| कालीगायत्र्यन्तरम् | ५०५ | ८ | कुण्डे कण्ठमानम् | १३२ | २० |
| कालीध्यानम् | ७२७ | १५ | कुण्डे स्वातमानम् | १३२ | १ |
| कालीध्यानमाहात्म्यम् | ७२८ | ७ | कुण्डेऽग्निजिह्वापूजनम् | ३६७ | ७ |
| कालीपदव्युत्पत्तिः | २० | २ | कुण्डेऽग्निनिधानम् | ३६१ | १९ |
| कालीपुरश्चरणार्थं देशाः | ७३२ | ८ | कुण्डेऽग्निपूजनम् | ३६६ | ७ |
| कालीपूजागृहम् | ७३३ | ३ | कुण्डेऽग्निप्रक्षेपणविधिः | २६६ | २२ |
| कालीप्रकरणम् | ७२३ | १ | कुण्डेऽग्न्यङ्गदेवतादिपूजनम् | ३६७ | १६ |
| कालीमन्त्रपुरश्चरणम् | ७३३ | १० | कुण्डे देवताध्यानम् | ३६० | १५ |
| कालीमन्त्रान्तराणि | ७५० | १७ | कुण्डे देवतापूजनम् | ३५९ | ९ |
| कालीमन्त्रार्थः | ७२४ | ९ | कुण्डे देवतापूजने श्रीविद्यायां | | |
| कालीमाहात्म्यम् | ७२५ | ७ | विशेषः | ३५९ | ११ |
| कालीयन्त्राणि | ११४८ | १२ | कुण्डे नाभिरचनाप्रकारः | १३४ | २० |
| कालीशापोद्धारः | ७२८ | १२ | कुण्डे पीठपूजनम् | ३६० | ९ |
| काल्या ऋष्यादिन्यासः | ७२७ | २ | कुण्डे पूजनक्रमः | २६३ | ९ |
| काल्या द्वाविंशत्यक्षरमन्त्रः | ७२४ | ३ | कुण्डे मेखलामानम् | १३३ | ३ |
| काल्या नव नामानि | १६ | १८ | कुण्डे मेखलालक्षणम् | १३२ | ३ |
| काल्याः कलौ विशेषः | १६ | १२ | कुण्डे मेखलासु पूजनम् | ३६५ | २४ |
| काल्युपासकदेवर्षयः | ७२३ | १९ | कुण्डे योन्यादिरचनाप्रकारः | १३४ | ८ |
| कीलकाष्टपरिमाणादीनि | ४७१ | २ | कुण्डे रेखासु पूजनम् | ३५९ | ४ |
| कीलारोपणादिमन्त्राः | ४७१ | ६ | कुण्डे रेखालिखनक्रमः | २६२ | १७ |
| कुण्डचित्राणि | १३७ | | " | ३५८ | २७ |
| कुण्डभेदा वर्णभेदतः | १३६ | १० | कुण्डेऽष्टदलकमलपूजने वैष्ण- | | |
| कुण्डभेदाः कामभेदतः | १३६ | १७ | वे विशेषः | ३६० | २ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|---------------------------|------|----|----------------------------|------|----|
| कुण्डेऽष्टदलकमले पूजनम् | ३५९ | १९ | कुल्लुकाऽकरणे हानिः | ५३५ | २ |
| कुण्डेऽष्टादशसंस्कारकरणा- | | | कुल्लुकाजपस्थानम् | ५३२ | ९ |
| क्षमस्योपायः | ३५८ | २४ | कुल्लुकाद्युत्पत्तिः | ५२९ | २ |
| कुण्डेऽष्टादशसंस्काराः | ३५७ | २४ | कुल्लुकानामृष्यादयः | ५३० | ४ |
| कुण्डे हवनसंख्यया मानानि | १२५ | २२ | कुल्लुकाः | ५३० | २ |
| कुत्सितशिष्यलक्षणम् | ४७ | ८ | कुवेरमन्त्रादि | ९०० | २१ |
| कुब्जिकाप्रकरणम् | ८७९ | ९ | कुवेरयन्त्रम् | ११५८ | १९ |
| कुब्जिकायन्त्रम् | ११५७ | २३ | कुशविशेषः | ४९६ | ७ |
| कुमारीध्यानादि | १०८८ | ११ | कूर्मचक्रनवकोष्ठेषु पूज्य- | | |
| कुमारीनामानि वर्षभेदतः | १०८३ | ९ | देवाः | ४८२ | १ |
| " | ११७४ | ११ | कूर्मचक्रपरिमाणादि | ४८४ | १५ |
| कुमारीनिमित्तं भूषणादि | १०८९ | १४ | कूर्मचक्रप्रदर्शनम् | ४७६ | १६ |
| कुमारीन्यासः | १०८७ | १७ | कूर्मचक्रम् | ४७७ | २ |
| कुमारीपूजनफलम् | ११०० | २३ | कूर्मचक्रविचार आवश्यकः | ४७७ | ६ |
| कुमारीपूजनम् | ११७४ | १७ | कूर्मचक्रविचारः | ४७७ | ११ |
| कुमारीपूजाविधिः | १०८१ | ३ | कूर्मचक्रविचाराभावस्था- | | |
| कुमारीभोजनम् | १०९१ | १६ | नम् | ४८४ | ६ |
| कुमारीभोजनार्थमन्नो- | | | कूर्मचक्रे विशेषः | ४७८ | ३ |
| त्सर्गः | १०९२ | ३ | कूर्मचक्रे शुभाशुभानि | ४७८ | १९ |
| कुमारीभोजने शुभाशु- | | | कूर्मभेदाः | १०५६ | १७ |
| भानि | १०९४ | १७ | कूर्ममन्त्रादि | ६४७ | ८ |
| कुमारीलक्षणम् | १०८२ | १० | कूर्मयन्त्रम् | ११४१ | १४ |
| कुमारीस्तुतिः | १०८५ | १७ | कृत्यशेषम् | ११०५ | २० |
| " | १०९३ | ३ | कृष्णमन्त्रपुरश्चरणम् | ५६५ | १ |
| कुम्भः (प्रमाणविशेषः) | ३९९ | २२ | कृष्णमन्त्रः सर्वश्रेष्ठः | ७४ | ३ |
| कुलवारादयः | ९६१ | १२ | कृष्णमन्त्रादि | ६८३ | २५ |
| कुलवृक्षाः | ४०९ | १४ | कृष्णयन्त्रम् | ११४५ | १ |
| कुलाकुलचक्रम् | ५८ | १५ | केतुमन्त्रादि | ८९१ | १० |
| कुलाकुलचक्रविचारः | ५७ | १८ | " | ९४७ | १६ |

पुरश्चर्यार्णवस्य

८

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|-------------------------------|------|----|-----------------------------|------|----|
| केतुयन्त्रम् | ११५८ | १४ | खड्गपूजनमन्त्रः | १०६५ | १४ |
| केशवादिमातृकान्यासः | १७३ | ११ | खड्गभेदाः | १०५६ | २० |
| ✓ कौमारीमन्त्रादि | ११३१ | ११ | खड्गभेदाः | १०६८ | २ |
| कौमारीयन्त्रम् | ११५८ | २१ | खण्डितादियन्त्रे दोषः | ५२३ | २३ |
| ✓ कौलेशभैरवी | ८१२ | ५ | खारी(प्रमाणविशेषः)लक्षणम् | ३९९ | २० |
| क्रमदीक्षा | ३९४ | ६ | [ग] | | |
| क्रमदीक्षाप्राप्तदेवता | ३९४ | ६ | | | |
| क्रमदीक्षाफलम् | ३९६ | ११ | गङ्गाप्रकरणम् | ८८१ | १६ |
| क्रमदीक्षावश्यकत्वम् | ३९६ | ७ | गङ्गायन्त्रम् | ११५८ | १ |
| क्रव्यादनाम | २६६ | ७ | गजपूजा | १११४ | ६ |
| क्रव्यादांशपरित्यागमन्त्रः | २६५ | २३ | गणचक्रम् | ६८ | १ |
| क्रियावत्यादिदीक्षा | १४७ | ३ | गणचक्रविचारः | ६८ | ३ |
| ✓ क्रोधभैरवमन्त्रादि | ८२० | १२ | गणेशगायत्री | ५०४ | २ |
| क्रोधरात्रिः | ९६० | १२ | गणेशतत्त्वानि | ३७७ | २० |
| क्रोधाङ्कुशमुद्रा | १२१३ | २३ | गणेशपूजायां द्वारपूजनम् | ३२३ | २ |
| काथाः | २१३ | ४ | गणेशप्रकरणम् | ६३० | ४ |
| ✓ क्षिप्रप्रसादनगणेशमन्त्रादि | ६३३ | ३ | गणेशमातृकान्यासः | १८० | ८ |
| क्षेत्रपालनामानि | ४७५ | १३ | गणेशयन्त्रप्रकरणम् | ११४० | ८ |
| ✓ क्षेत्रपालवल्लिमन्त्रः | ४७२ | २३ | गणेशसूक्तपुरश्चरणम् | ९३३ | ११ |
| क्षेत्रपालमन्त्रादि | ७०५ | १३ | गणेशादिक्रमो मार्गभेदेन | २५७ | ५ |
| क्षेत्रपालयन्त्रम् | ११४६ | २ | गणेशादिपञ्चदेवैक्यम् | १९ | ६ |
| [ख] | | | गणेशादिवलिः | ३५५ | १३ |
| | | | गणेशादिशक्तयः | ४९२ | २१ |
| खगभेदाः | १०५८ | २ | गणेशान्नायभेदैर्नामभेदाः | १० | २० |
| खड्गरीटदर्शनविधिः | ११२६ | ९ | गणेशान्नायभेदैर्मन्त्रभेदाः | १० | १५ |
| ✓ खड्गरीटप्रणाममन्त्राः | ११२७ | ४ | गण्डकवलौ विशेषः | १०७२ | २ |
| खड्गरीटाष्टनामानि | ११२६ | २४ | गण्डकभेदाः | १०५६ | २० |
| खड्गध्यानम् | १०६६ | २३ | गन्धदानमन्त्रः | २२८ | २१ |

१ अयं पशुर्गणः कापरनामेति ।

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|------------------------------|------|----|-------------------------------|------|----|
| गन्धप्रकाराः | २३० | २ | गुरुशिष्यपरीक्षणसमयः | ५० | ४ |
| गन्धर्वक्रमः | ८४७ | २० | गुरुशुक्रादिशुद्धिविचारो | | |
| गन्धाष्टकानि | २१४ | १४ | दीक्षायाम् | ७८ | ५ |
| गरुडगायत्री | ५०८ | ११ | गुरुस्तुतिः | ३८३ | ६ |
| गरुडमन्त्रादि | ७०८ | २५ | गुरुं विना मन्त्रान्तरग्रहणो- | | |
| गरुडयन्त्रम् | ११४६ | ७ | पायः | ४११ | १४ |
| गवयभेदाः | १०५७ | ४ | गुरुपदेशं विनोपासनानिषेधः | ३८ | २ |
| गायत्रीपुरश्चरणादि | ९०३ | ११ | गुरोराज्ञाग्रहणवाक्यम् | ३१९ | ७ |
| गायत्रीपूजायन्त्रम् | ९०६ | १७ | गुरोरावरणवाक्यम् | ३१९ | १६ |
| गायत्रीपूजाविधिः | ९०७ | ६ | गुरोर्विशेषः | ५१ | १४ |
| गायत्रीप्रणवव्याहृत्याद्यै- | | | गुर्वादिनमस्कारः | ३२५ | १८ |
| क्यम् | ९११ | ८ | गुह्यकालीगायत्री | ५०७ | ९ |
| गायत्रीमुद्रा | ९०८ | ६ | गुह्यकालीध्यानम् | ७६४ | १९ |
| गायत्रीव्याहृतिप्रणवैक्यम् | ९११ | ३ | गुह्यकालीपुरश्चरणम् | ७७० | १६ |
| गायत्रीव्याहृतिव्याख्या | ९१० | १८ | गुह्यकालीप्रकरणम् | ७६१ | २२ |
| गुरुचतुष्टयम् | २०८ | ११ | गुह्यकालीमन्त्रः | ७६२ | २० |
| गुरुतर्पणम् | ३३९ | २२ | गुह्यकालीयन्त्रम् | ११४९ | २२ |
| गुरुत्यागकरणे दृष्टान्तः | ५१ | ९ | गुह्यकाल्या ऋष्यादि | ७६३ | २३ |
| गुरुत्यागे फलम् | ५० | ११ | गुह्यकाल्युपासकाः | ७६२ | ३ |
| गुरुत्यागो मार्गभेदेन | ५० | १६ | गृहकूर्मे गृहनामविचारः | ४७९ | ४ |
| गुरुदक्षिणा | ३१४ | १४ | गृहदशा | ४८१ | १५ |
| " | ३८३ | १९ | गृहस्थजपे विशेषः | ४६७ | २२ |
| गुरुद्वारा शिष्याराधनार्पणम् | ३८१ | ११ | गोधिकाभेदाः | १०५६ | २१ |
| गुरुध्यानम् | ४८५ | २२ | गोपालगायत्री | ५०४ | १७ |
| गुरुपर्वाणि | ७९ | १९ | गोपालसुन्दरीमन्त्रादि | ६९५ | १० |
| गुरुपङ्क्तिपूजनम् | ३५१ | २४ | गोरक्षनाथगायत्री | ११३८ | ७ |
| गुरुमाहात्म्यम् | ४२ | ५ | गोरक्षनाथमन्त्रादि | ११३७ | २१ |
| गुरुलक्षणम् | ४४ | २० | गौरीगायत्री | ५०७ | ६ |
| गुरुशब्दार्थः | ४४ | १४ | गौरीमन्त्रादि | ७०८ | ६ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|-----------------------------------|------|----|--------------------------|------|----|
| ग्रन्थनाम . | २ | ८ | घण्टापूजनविधिः | २४५ | २ |
| " | १२३० | २१ | घण्टामन्त्रः | २४५ | ४ |
| ग्रन्थनिर्माणसमयः | १२३० | १९ | " | ३५३ | १ |
| ग्रन्थनिर्मातृनाम | २ | ७ | घृतभेदाः | २८० | २४ |
| " | १२३० | १८ | घृतसंस्कारः | २८० | १४ |
| ग्रन्थनिर्मातृप्रशंसा | २ | ९ | घोरात्रिः | ९६० | १५ |
| " | १२३० | १७ | | | |
| ग्रन्थादरे दृष्टान्तः | २ | १७ | [च] | | |
| ग्रहणपुरश्चरणसंकल्पः | ५८२ | ८ | चक्रमन्त्रादि | ६९४ | १४ |
| ग्रहणपुरश्चरणे शौचाद्य- | | | चण्डिकाध्यानम् | ९६५ | ११ |
| विचारः | ५८० | १४ | चण्डीपाठपुरश्चरणं कामना- | | |
| ग्रहणाभिन्नयोगा दीक्षायाम् | ८० | १९ | विशेषतः | ११८३ | १० |
| ग्रहणादयो विशिष्टा दीक्षायाम् | ७९ | १२ | चण्डीपाठमाहात्म्यम् | ११८१ | २० |
| ✓ ग्रहणे ग्राह्यमन्त्राः | ८० | २१ | चण्डीपाठसंख्या कामना- | | |
| ग्रहणे जपारम्भकालः | ५८१ | ७ | विशेषे | ११८१ | २४ |
| ग्रहणे पितृश्राद्धार्थं स्वर्णदा- | | | चतुर्थतरङ्गविषयकथनम् | ४ | १७ |
| नम् | ५८१ | २४ | चतुर्थतृसिंहमन्त्रादि | ६६१ | १५ |
| ग्रहणे पुरश्चरणम् | ५७८ | ७ | चतुर्दशतृसिंहमन्त्रादि | ६६८ | ११ |
| ग्रहणे पुरश्चरणमावश्यकम् | ५८१ | १२ | चतुर्दशभुवनानि | ३०३ | २१ |
| ग्रहणे भोजनादिविचारः | ५८३ | १० | चतुःषष्टिपदवास्तुचक्रम् | ११० | ३ |
| ग्रहमातृकाध्यानादि | ८९२ | १३ | चतुःषष्टियोगिन्यः | १०३८ | २१ |
| ग्रहमातृकाप्रकरणम् | ८९१ | २६ | चत्वारो बडुकाः | १०४३ | २१ |
| ग्रहमातृकायन्त्रम् | ११५८ | १६ | चन्द्रमन्त्रादि | ८८५ | ११ |
| ग्राहभेदौ | १०५६ | २२ | " | ९४२ | १८ |
| ग्राह्यमन्त्रविचारः | ५७ | ५ | चन्द्रयन्त्रम् | ११५८ | २ |
| | | | चरुपाकः | २८७ | ११ |
| [घ] | | | " | ३७४ | २१ |
| ✓ घटचालनमन्त्रः | ४०३ | १८ | चरुपाशनम् | २८९ | २ |
| ✓ घटे पल्लवादिदानमन्त्राः | ४०३ | ३ | " | ३७५ | २१ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|---------------------------|------|----|------------------------|------|----|
| चरुहोमः | २८७ | २० | जपकालोऽधिकारिभेदेन | ४१९ | १३ |
| " | ३७५ | १७ | जपक्रमो मालायाम् | ५४० | १६ |
| चामुण्डामन्त्रादि | ९५५ | १७ | जपनियमः | २५८ | २ |
| " | ११३६ | ६ | " | ४६५ | १२ |
| चामुण्डायन्त्रम् | ११५८ | २७ | जपपूतौ देवमार्गभेदेन | | |
| चाषपक्षिदर्शनफलम् | ११२८ | २ | विशेषः | ५४८ | १५ |
| चाषप्रणाममन्त्रः | ११२८ | ८ | जपपूतौ विशेषः | ५४८ | २ |
| चितासाधनम् | ६१२ | ३ | जपसमये देवचिन्तन- | | |
| चितासाधनसंकल्पः | ६१४ | १२ | प्रकारः | ५३९ | १४ |
| चिन्तामणिसरस्वतीमन्त्रादि | ८७० | २१ | जपसमर्पणम् | २५८ | ८ |
| चीनक्रमः (महाचीनदिव्यची- | | | जपसमर्पणानन्तरकृत्यम् | २५८ | १३ |
| नक्रमौ) | ८४३ | २ | जपसंख्यार्थं द्रव्याणि | ४४८ | २४ |
| " | ८४७ | २ | जपस्त्रिविधिः | ५४१ | १४ |
| चेटीसाधनम् | १२२४ | २१ | जपः कामनाविशेषे | ५४२ | २ |
| चैतन्यभैरवीमन्त्रादि | ८०९ | १९ | जपादिकमावश्यकै | ५४५ | ३ |
| चैतन्यभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ३ | जपारम्भः | ५३८ | २५ |
| [छ] | | | जपे त्याज्यानि | ४६६ | ९ |
| छागभेदाः | १०५७ | ५ | जपे नियच्युतौ प्राय- | | |
| छागादयः प्रशस्ताः | १०६३ | २४ | श्चित्तम् | ४६८ | २१ |
| छागादिवलिविधिः | १०६४ | २० | जपे नियमविशेषाः | ५४२ | २१ |
| छागो निषिद्धः | १०६२ | २ | जपे वस्त्रनियमः | ४७० | ४ |
| छिन्नमस्तागायत्री | ५०६ | १२ | जयदुर्गामन्त्रादि | ९५८ | ६ |
| छिन्नमस्ताप्रकरणम् | ८१३ | २४ | जलदानम् | ३५४ | ११ |
| छिन्नमस्तायन्त्रम् | ११५५ | १५ | जलप्रणाममन्त्रः | ४९७ | १ |
| छिन्नमस्तायाः प्रशस्तपु- | | | जलशोधनम् | १५८ | ११ |
| ष्पाणि | २३७ | १४ | " | ३२४ | १६ |
| [ज] | | | जातिभेदेन निषिद्धबलिः | १०६२ | ६ |
| जडादिकम् | ३६ | १२ | जीवबलिः | १०४९ | २२ |
| | | | जीवबलेर्देवविशेषः | १०५१ | ३ |

विषयाः

पृ. प.

| | |
|----------------------------------|--------|
| ज्येष्ठपुत्राय मन्त्रदाने विशेषः | ५२ १६ |
| ज्वालामुखीसाधनम् | १२२० २ |
| ज्वालिनीमुद्रा | २६८ ११ |

[त]

| | |
|---------------------------|--------|
| तत्त्वमुद्रा | ४६१ १८ |
| तत्त्वशुद्धिः | २०८ १९ |
| ✓ तत्त्वाध्वशोधनमन्त्रः | ३०२ १५ |
| तत्त्वाध्वादिहवनम् | ३७८ १० |
| तत्त्वानि | ३०३ ३ |
| " | ३७७ २० |
| तर्पणम् | ५०९ ८ |
| " | ५४५ २५ |
| ✓ तर्पणमन्त्रः | ५४६ ५ |
| ✓ तर्पणमन्त्रः शाक्ते | ५४६ ९ |
| तर्पणमन्त्रो वैष्णवे | ५४६ १६ |
| तात्रिकवलिः | १०५० ६ |
| तात्रिकसन्ध्या | ५०२ १४ |
| तात्रिकस्तानसंकल्पः | ४९७ ५ |
| तापनादिषट्संस्काराः | २८१ ४ |
| " | ३६९ २१ |
| तामसी पूजा | ३७ ५ |
| तामस्युपासना | ३७ १६ |
| ताम्बूलप्रकारा देवताभेदेन | २५२ ११ |
| ताम्बूलार्पणम् | ३५५ ३ |
| ताराऋष्यादिन्यासः | ७८३ २४ |
| ✓ तारागायत्री | ५०५ १७ |
| तारागुरुपङ्कयः | २०७ २ |
| ताराध्यानम् | ७८५ ४ |

विषयाः

पृ. प.

| | |
|----------------------------------|--------|
| तारापुरश्चरणविधिः | ७८९ ६ |
| तारापूजायां विशेषः | २५१ २२ |
| ताराप्रकरणम् | ७८० १० |
| ताराभेदप्रकरणम् | ७९० २१ |
| तारामन्त्रार्थः | ७८२ २२ |
| तारामन्त्राः | ७८१ २ |
| तारायन्त्रम् | ११५१ ७ |
| ताराया विहितनिषिद्धपु- ष्पाणि | २३६ ३ |
| तारायां विशेषः | ३१९ ३ |
| तारारात्रिः | ९६० २३ |
| तारारामयोरैक्यम् | १९ १८ |
| ताराविषयेऽजपाजपे विशेषः | ४९४ ७ |
| ताराशब्दार्थः | २० १० |
| तिथिफलं दीक्षायाम् | ७६ ६ |
| तिथौ महाशब्दप्रयोगः | ९५९ ९ |
| तिलकधारणविधिः | ५०० १८ |
| तीर्थजलाभिषेचनमन्त्रः | ४९८ १६ |
| तीर्थजलामृतीकरणमन्त्रः | ४९८ ५ |
| तीर्थशक्तिध्यानम् | ४९७ १८ |
| तीर्थशक्तिमन्त्रः | ४९७ २३ |
| तीर्थावाहनमन्त्रः | ४९७ १३ |
| तुरगपूजा | १११३ ५ |
| तृतीयतरङ्गविषयकथनम् | ४ १० |
| तृतीयतृसिंहमन्त्रादि | ६६१ २ |
| तृतीयप्रणायामः | १६३ २१ |
| तेजोवन्तः | ४६९ ३ |
| त्रयोदशरासिंहमन्त्रादि | ६६८ ७ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|------------------------------|------|----|-----------------------------|------|----|
| त्रिपुरभैरवीगायत्री | ५०६ | ३ | दशदिक्पालबीजानि | ४७२ | १२ |
| त्रिपुरभैरवीमन्त्रानादि | ८०४ | ३ | दशदिग्वन्धनम् | ३२६ | ६ |
| त्रिपुरभैरवीयन्त्रम् | ११५४ | २४ | दशभुजादुर्गाध्यानम् | ९६३ | २१ |
| त्रिपुरसुन्दरीगायत्री | ५०५ | २४ | दशमनृसिंहमन्त्रादि | ६६७ | २१ |
| त्रिपुरादिपूजायां द्वारपूजने | | | दशमहाविद्या | १३ | १८ |
| विशेषः | ३२३ | ८ | " | ७२३ | ४ |
| त्रिपुराशब्दार्थः | २० | ५ | दशमहाविद्यादशावतारा- | | |
| त्रिराचमनम् | ३२४ | २० | णामैक्यम् | १९ | १८ |
| त्रिलोहीमुद्रा | ११६३ | १६ | दशमहाविद्याभैरवाः | १३ | २३ |
| त्रिविक्रममन्त्रादि | ६६९ | २५ | दशमी-(आश्विनस्य)कृत्यम् | १११९ | १७ |
| त्रैपुरतत्त्वानि | ३७८ | ८ | दशाङ्गधूपः | २४३ | २० |
| त्वरितामन्त्रादि | ८७३ | ६ | दशोपचाराः | २२४ | ४ |
| त्वरितायन्त्रम् | ११५७ | १७ | दारुणरात्रिः | ९६१ | ७ |
| [द] | | | दिव्यचीनक्रमः | ८४७ | ३ |
| दक्षिणामूर्तिमन्त्रादि | ७०० | १२ | दिव्यभावक्रमः | ८५२ | १६ |
| दक्षिणामूर्तियन्त्रम् | ११४५ | १८ | दिव्यभावः | ८५५ | १६ |
| दण्डप्रणामलक्षणम् | ११०५ | २४ | दीक्षाकर्माङ्गहवने संकल्पः | ३५७ | १८ |
| दत्तमन्त्रस्य गुरुकृतो जपः | ३१५ | २५ | दीक्षाग्रहणसमये शिष्य- | | |
| दधिवामनमन्त्रादि | ६६९ | ८ | नियमः | ३१२ | १ |
| दन्तकाष्ठपरीक्षा | ३२० | २२ | दीक्षाग्रहणानन्तरं गुरुगृहे | | |
| दन्तकाष्ठपरीक्षायामशुभ- | | | वासः | ३१६ | २३ |
| निराकरणार्थं मन्त्रः | ३२१ | ११ | दीक्षादानात् प्रागाभिषेकः | ३११ | १२ |
| दन्तधावनतः शुभाशुभानि | १४९ | १६ | दीक्षादिनकृत्यम् | २९८ | २३ |
| दन्तधावनमन्त्रः | ४९५ | १८ | " | ३७७ | ६ |
| दन्तधावनकाष्ठादि | ४९५ | १६ | दीक्षादिनात् प्राक्कृत्यम् | | |
| दन्तधावनं शिष्याय | १४९ | १४ | (शिष्यस्य) | १४७ | १३ |
| दन्तधावनाशुभे प्रायश्चित्तम् | १४९ | २० | " | ३१९ | १ |
| दशदिक्पालपूजनम् | ३५२ | ७ | दीक्षादिने गुरोरुपवास- | | |
| | | | निषेधः | ३१६ | ८ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|---------------------------|------|----|-----------------------------|------|----|
| दीक्षादिनोपवासनिषेधः | ३८३ | २७ | दुर्गापूजार्थं मण्डपः | ९६२ | ११ |
| दीक्षानिर्णयः | ७५ | ३ | दुर्गाप्रकरणम् | ९५२ | ४ |
| दीक्षाप्रयोगः | ३१९ | १ | दुर्गामन्त्रादि | ९५२ | ५ |
| दीक्षामण्डपद्वारपूजनम् | ३२१ | १३ | दुर्गामूर्त्तिमुखदिक् | ९६३ | १८ |
| दीक्षामण्डपपरिक्रमणे | | | दुर्गामूर्त्तिलक्षणम् | ९६२ | २१ |
| गुरुपाठ्यमन्त्राः | १५० | ८ | दुर्गायन्त्रम् | ११५९ | ५ |
| दीक्षामण्डपप्रवेशनियमः | ३२३ | १३ | दुर्गायाः प्रशस्तपुष्पम् | २३७ | २६ |
| दीक्षामण्डपसंस्कारः | ३२३ | १८ | दुर्गोत्सवविधिः | ९५८ | २२ |
| दीक्षामाहात्म्यम् | ३९ | १ | दुःस्वप्नशान्तिः | २९८ | २७ |
| दीक्षाया आवश्यकत्वम् | ३८ | २० | " | ३७६ | २४ |
| दीक्षायां प्रशस्तस्थानानि | ८१ | ७ | दुःस्वप्नाः | २९६ | ५ |
| दीक्षाविधिः | १४७ | ८ | दूतीयागफलम् | ६०७ | २५ |
| दीक्षाशब्दार्थः | ४० | १५ | दूतीयागविधिः | ५९२ | ६ |
| दीक्षास्थाननिर्णयः | ८४ | २ | दूतीयागाधिकारी | ६१० | २० |
| दीक्षितस्य तत्क्षणे जपनि- | | | दूतीयागोत्पत्तिः | ६०९ | ४ |
| यमः | ३१३ | २ | द्व्युदीक्षा | ३९० | २६ |
| दीपनाथभैरवपूजनम् | ३२४ | ५ | देवतातर्पणम् | ३३९ | ३१ |
| दीपपात्रम् | २४६ | ४ | देवतावाहनादि | २१७ | १८ |
| दीपपुरश्चरणम् | ५९० | १४ | " | ३४६ | २१ |
| दीपभेदाः | २४५ | १७ | देवतैकीकरणम् | ३७९ | २५ |
| दीपभ्रामणम् | २४७ | १ | देवीबोधनकालनिर्णयः | ९६६ | १३ |
| दीपशब्दार्थः | २४७ | २५ | देवीरात्रिः | ९६१ | २० |
| दीपस्थानदिङ्नियमः | २४६ | १५ | देवीसूक्तम् | ११७२ | २ |
| दीपिनीमन्त्रः | २२० | २ | देव्या आम्नायभेदैर्नामभेदाः | १२ | १ |
| दीपिनीविद्याप्रकरणम् | ८०३ | ५ | देव्या नानारूपाणि | ११ | २२ |
| दुर्गागायत्री | ५०८ | ५ | देहे कलास्थितिः | ३८५ | २४ |
| " | १०१५ | १३ | द्रव्यशुद्धिः | १५३ | ३ |
| " | १०३४ | १ | द्वादशतरङ्गविषयकथनम् | ९ | १४ |
| दुर्गागुरुपङ्क्तयः | २०७ | २२ | द्वादशशृङ्गसिंहमन्त्रादि | ६६७ | १० |

| विषयाः | पृ. | प. |
|-------------------------|------|----|
| द्वादशोपचाराः | २२४ | १२ |
| द्वारपूजाविधिः | १५१ | ४ |
| ✓द्वितीयनृसिंहमन्त्रादि | ६६० | ९ |
| द्विवर्षादिकुमारीनामानि | ११७४ | ११ |

[ध]

| | | |
|-----------------------|------|----|
| धनदासाधनम् | १२१४ | ७ |
| ✓धरणीमन्त्रादि | ६४९ | ११ |
| धरित्रीसाधनम् | १२२६ | १८ |
| धारणयन्त्रम् | ११५९ | १७ |
| धूपभेदा देवताभेदेन | २४४ | २० |
| धूपभेदाः | २४३ | १७ |
| धूपशब्दार्थः | २४५ | १४ |
| ✓धूमावतीगायत्री | ५०६ | १५ |
| ✓धूमावतीप्रकरणम् | ८२१ | १७ |
| धूमावतीप्रशस्तपुष्पम् | २३७ | १७ |
| धूमावतीयन्त्रम् | ११५६ | १६ |
| धूम्रक्रमः | ८५३ | ११ |
| ध्यानम् | ३४५ | २७ |
| ध्यानस्नानाविधिः | ४९९ | २१ |

[न]

| | | |
|----------------------------|------|----|
| नवकुलभेदौ | १०५७ | २ |
| नक्तपदार्थः | ५४४ | ६ |
| नक्षत्रचक्रम् | ६८ | १ |
| नक्षत्रचक्रविचारः | ६६ | १ |
| नक्षत्रफलं दीक्षायाम् | ७७ | ९ |
| नवग्रहप्रशस्तपुष्पाणि | २३८ | १९ |
| ✓नवग्रहाणां वैदिकमन्त्रादि | ९४२ | २ |
| ✓नव भैरवाः | १०४४ | १६ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|-----------------------------------|------|----|
| नवमतरङ्गविषयकथनम् | ८ | ३ |
| नवमीकृत्यम् | १०४६ | २२ |
| नवरत्नमुद्रा | ११६५ | ४ |
| नवरत्नानि | २१२ | २० |
| नवरात्रम् | ९६२ | ३ |
| नवार्णमन्त्रपुटितसप्तश- तीपाठः | ११८५ | २८ |
| ✓नवार्णमन्त्रः | ११८६ | ६ |
| नालापनयनप्रकारः | २८५ | २५ |
| नित्यकर्माणि | ४६३ | ९ |
| ✓नित्यक्लिन्नामन्त्रादि | ८७४ | २ |
| नित्यक्लिन्नायन्त्रम् | ११५७ | १७ |
| नित्यपूजाविधिः | ५१२ | ८ |
| नित्यपूजासंकल्पः | ५१२ | १२ |
| नित्यहोमविधिः | ५१३ | २३ |
| नित्यहोमसंकल्पः | ५१४ | ६ |
| नित्यहोमे विशेषः | ५१५ | १० |
| नित्याभैरवी | ८१२ | २५ |
| नियमाः | ४६३ | २ |
| निर्वाणम् | ५३३ | १२ |
| निर्माल्यधारणम् | ३१० | २० |
| निर्माल्यभोजिदेवार्चनम् | ३५५ | १ |
| निर्माल्यवासिदेवपूजनम् | ३१० | ९ |
| निर्माल्यवासिदेवाः | ३१० | १३ |
| निर्माल्यवासिनीपूजनम् | ११२० | ६ |
| निर्माल्यार्पणम् | ३८२ | १२ |
| निषिद्धकुमारी लक्षणम् | १०८२ | १७ |
| निषिद्धगुरुलक्षणम् | ४५ | २२ |
| निषिद्धपुष्पाणि | २३१ | १६ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|-----------------------------------|------|----|-------------------------------|------|----|
| निषिद्धबलिः | १०६१ | ३ | पञ्चकला | ३७७ | १५ |
| निषिद्धशिष्यलक्षणम् | ४७ | ८ | पञ्चगव्यम् | १५३ | १४ |
| निषिद्धश्छागः | १०६२ | २ | " | ४४० | २१ |
| नीराजनमन्त्रः | ११२४ | ७ | पञ्चगव्यशोधनमन्त्रः | १५३ | २१ |
| नीलकण्ठ-(पक्षि)प्रणाम- मन्त्रः | ११२८ | १० | पञ्चपल्लवाः | ३८४ | १५ |
| नीलकण्ठशिवमन्त्रादि | ७०३ | २ | पञ्चप्राणाहुतिदानम् | ३५४ | ७ |
| नीलक्रमः | ८४० | १९ | पञ्चभूतबीजानि | ५०३ | २ |
| नीलसरस्वतीगायत्री | ५०५ | २० | पञ्चभूतमित्रामित्रविचारः | ५८ | ९ |
| नीलसरस्वतीमन्त्रादि | ७८४ | १४ | पञ्चभूतवर्णाः | ५७ | २० |
| नीलसरस्वतीयन्त्रम् | ११५१ | १९ | पञ्चमतरङ्गविषयकथनम् | ४ | २३ |
| नृसिंहगायत्री | ५०४ | १३ | पञ्चवर्गाः | ४८१ | १२ |
| नृसिंहपुरश्चरणम् | ६५० | १२ | पञ्चशुद्धिः | १५२ | १४ |
| नृसिंहप्रकरणम् | | | पञ्चायतनदीक्षायां विशेषः | ३१३ | १३ |
| नृसिंहयन्त्रम् | ११४१ | १९ | पञ्चायतनदेवतास्थापन- क्रमः | ३८७ | २३ |
| नृसिंहस्य कामनाभेदेन ध्यानादि | ६५७ | १९ | पञ्चायतननिषेधः | ३८९ | १८ |
| नेमिपरिमाणम् (कुण्डे) | १३४ | २५ | पञ्चायतनी दीक्षा | ३८७ | १८ |
| नैर्ऋतमन्त्रादि | ८९९ | १० | पञ्चाशदौषधयः | २१३ | ३ |
| नैर्ऋतयन्त्रम् | ११५८ | १८ | पञ्चासकुण्डम् | १३० | १५ |
| नैवेद्यभक्षणम् | ३१६ | १५ | पञ्चोपचाराः | २२४ | १ |
| नैवेद्यस्थापनदिननियमः | २४८ | ३ | पत्रिकाचालनमन्त्रादि | ११२० | १४ |
| नैवेद्यादिदानविधिः | २४८ | १३ | पत्रिकापूजा | १००९ | १६ |
| " | २४९ | २२ | पत्रिकार्चनमन्त्रः | १०२२ | ११ |
| " | ३५३ | १५ | पत्रिकास्थापने विशेषः | १००९ | २० |
| [प] | | | पथिकादिकर्तृकोपासना | ३४ | १७ |
| पक्षफलं दीक्षायाम् | ७६ | ८ | पद्मकुण्डम् | १३० | ७ |
| पक्षिभेदाः | १०५८ | २ | पद्मपूजाप्रकारः | २११ | ४ |
| पञ्चकर्माणि | ३४ | ४ | परमीकरणम् | २२० | १० |
| | | | " | ३४६ | १८ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|----------------------------------|------|----|
| ✓ परशुराममन्त्रादि | ६७० | १७ |
| परशुरामयन्त्रम् | ११४२ | २ |
| पशुदानविधिः | १०६४ | २० |
| पशुपक्ष्यादिदैवतानि | १०७८ | २ |
| ✓ पशुपाशविमोचनीगायत्री | १०६५ | १ |
| पशुपाशविमोचनीगायत्र्य- न्तरम् | १०६५ | ९ |
| पशुभावः | ८६४ | २ |
| पश्वनुकल्पवलिः | १०६३ | ४ |
| पात्रभेदाः | २०१ | ६ |
| पात्रविशेषः | १९२ | १५ |
| पात्रस्थापनदिङ्गनियमः | २७७ | १६ |
| पात्रासादनम् | १९२ | १० |
| " | २७७ | २ |
| पाद्यपात्रम् | १४८ | १५ |
| पाद्यपात्रस्थापनम् | ३३६ | २४ |
| पाद्यादिद्रव्याणि | १९६ | २ |
| ✓ पारिजातसरस्वतीमन्त्रादि | ८७१ | ९ |
| ✓ पाशुपतास्त्रमन्त्रादि | ७०७ | ५ |
| पाशुपतास्त्रयन्त्रम् | ११४५ | २१ |
| पितृदीक्षानिवेधः | ५१ | २४ |
| पितृदीक्षाप्राशस्त्यम् | ५२ | १३ |
| पीठकुम्भे विशेषः | ३४५ | ११ |
| पीठनवशक्तयः | २६४ | १५ |
| पीठन्यासः | ३३१ | २ |
| पीठपूजा | ३४० | १४ |
| " | ३६० | ९ |
| पीठपूजाप्रकारः | २०९ | २४ |
| पीठपूजा वैष्णवे | ३६० | १३ |

| विषयाः | पृ. | प. |
|--------------------------------|-----|----|
| पीठलक्षणम् | १४८ | ११ |
| पीठशक्तिपूजाप्रकारः | २११ | १५ |
| पीठस्थानानि | ४८२ | १५ |
| पीठस्थानोत्पत्तिः | ४८३ | ८ |
| पीठे कुम्भस्थापनम् | ३४२ | ३ |
| पुत्रिणो महाष्टमीव्रतनिषेधः | ९७७ | ७ |
| पुरश्चरणकर्तुर्भोजननियमः | ५४४ | ४ |
| पुरश्चरणकर्तुर्भोजनपात्रम् | ५४४ | १६ |
| पुरश्चरणकर्तुः पेयजलम् | ५४४ | १५ |
| पुरश्चरणकालः | ४१६ | १९ |
| " | ५१५ | २० |
| पुरश्चरणदेशाः | ४२० | २० |
| पुरश्चरणपदार्थः | ४१३ | २ |
| पुरश्चरणपूर्वकृत्यम् | ४८४ | २२ |
| पुरश्चरणप्रयोजनम् | ४१३ | ५ |
| पुरश्चरणभेदाः | ५६३ | ७ |
| " | ५६८ | १८ |
| पुरश्चरणमावश्यकम् | ४१३ | १३ |
| पुरश्चरणम् | ५१५ | २० |
| पुरश्चरणस्वरूपम् | ४१४ | ४ |
| पुरश्चरणार्थं भूमिपरिग्रहः | ४७० | २३ |
| पुरश्चरणीयवस्त्वनुकल्पः | ७४४ | १८ |
| पुरश्चरणे आपन्नस्य साध- नम् | ५१७ | १४ |
| पुरश्चरणे आसनविशेषः | ४२७ | १३ |
| पुरश्चरणे आसनानि | ४२६ | ७ |
| पुरश्चरणे नियमाः | ४२० | १५ |
| पुरश्चरणे निषिद्धदेशाः | ४२३ | १२ |
| पुरश्चरणे निषिद्धानि | ४२५ | १७ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|------------------------------------|------|----|--|------|----|
| पुरश्चरणे निषिद्धासनानि | ४२६ | २४ | पूर्णाभिषेककलशः | ३९९ | ११ |
| पुरश्चरणे परान्नविचारः | ४२४ | १५ | पूर्णाभिषेककालः | ३९८ | ७ |
| पुरश्चरणे भक्ष्यनियमः | ४२३ | २१ | पूर्णाभिषेकमाहात्म्यम् | ४१० | ९ |
| पुरश्चरणे महिषीदुग्धनिषेधः | ४२४ | १३ | पूर्णाभिषेकविधिः | ३९८ | १६ |
| पुरश्चरणे संकल्पपूर्ववाक्यम् | ५१५ | २२ | पूर्णाभिषेकः | ३९७ | १४ |
| पुरश्चरणे संकल्पवाक्ययो- जना | ५१६ | २ | पूर्णाभिषेकार्थं तीर्थजलानि | ४०१ | २३ |
| पुरश्चरणे संकल्पार्थं दिशा | ५१५ | २७ | पूर्णाहुतिः | ३०७ | ४ |
| पुरश्चरणे सिद्धेरलाभे उ- पायः | ५५८ | २४ | " | ३७९ | १७ |
| पुरश्चरणे सूतकादौ विचारः | ५५० | ८ | पूर्वादिकलशेषु पूजनम् | ३४५ | १६ |
| पुरुषसूक्तपुरश्चरणम् | ९३५ | ३ | पूर्वादितः कलशस्थापनम् | ३४५ | १३ |
| पुष्पप्रशंसा | २३८ | २५ | पृथग्देवानां वलिः | १०५१ | ७ |
| पुष्पभेदाः | २३१ | ३ | प्रकृतितत्त्वानि | ३७८ | ४ |
| पुष्पाञ्जलिदानम् | ३५४ | १४ | प्रणवध्यानपुरश्चरणादि | ९१३ | ६ |
| पुष्पाभावे तत्प्रतिनिधिः | २३९ | १३ | प्रणवाद्युच्चारणे शुद्रस्य चाण्डालत्वम् | ५६ | ८ |
| पुस्तकलिखितमन्त्रजपनिषेधः | ४१ | ७ | प्रणामभेदाः | २५९ | १२ |
| ✓ पुंस्त्रीनपुंसकमन्त्राः | ७३ | ६ | प्रत्यङ्गिराप्रकरणम् | ८७६ | ७ |
| पूजाद्यसक्तस्य पुरश्चरणम् | ४६४ | १० | प्रत्यङ्गिरायन्त्रम् | ११५७ | २१ |
| पूजाद्रव्यसंस्कारः | ३२५ | १० | प्रमाणग्रन्थनामादि | १२२८ | १४ |
| पूजान्ते जपः | ३५४ | १७ | प्रशस्तपशुलक्षणम् | १०६३ | २४ |
| पूजान्ते स्तुतिः | ११०६ | २ | प्रशस्तमासादि दीक्षायाम् | ७५ | ११ |
| पूजायन्त्रप्रमाणम् | ५१९ | ११ | प्राणप्रतिष्ठा | २२२ | १ |
| पूजायन्त्रस्य न्यूनाधिक्ये फलम् | ५१९ | १४ | " | ३४८ | १८ |
| पूजायन्त्रे सुवर्णादिमानम् | ५१९ | १९ | प्राणप्रतिष्ठामन्त्रः | १६८ | ११ |
| पूजासामग्र्यभावे पूजनादि | ३५ | ७ | प्राणवायुः | ५२७ | २४ |
| पूर्णपात्रनियमः | ३०७ | १५ | प्राणशक्तिध्यानम् | ३४८ | १२ |
| पूर्णाभिषेक आवश्यकः | ३९८ | २ | प्राणशक्तिन्यासार्थं विनि- योगः | ३४७ | ५ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|----------------------------|------|----|---------------------------|------|----|
| प्राणशक्तिन्यासे ऋष्यादि- | | | बलिः | १०४९ | २२ |
| न्यासः | २४७ | ८ | वलयन्ते जपस्तत्समर्पणं च | ३५६ | २५ |
| प्राणस्थापनम् | ३२७ | ६ | वलयन्ते दीपदानम् | १०७४ | २० |
| प्राणादिपञ्चमुद्रा | २४९ | ५ | वलयन्ते स्तुतिः | १०७६ | १५ |
| प्राणायामपुरश्चरणम् | ११९९ | ५ | बहिर्मातृकान्यासः | १६९ | २० |
| प्राणायामभेदाः | १६३ | १५ | बहिर्मातृकान्यासः संहार- | | |
| प्राणायामलक्षणम् | १६१ | १७ | क्रमेणः | १७० | २४ |
| प्राणायामेऽङ्गुलिनियमः | १६२ | २१ | " | ३३० | २ |
| प्रातःकालादिपरिभाषा | ९६७ | १३ | बहिर्मातृकान्यासः सृष्टि- | | |
| प्रातःकालादिविचारो दी- | | | क्रमेण | १६९ | २० |
| क्षायाम् | ८३ | १३ | " | ३२७ | १२ |
| प्रातःकाले इष्टदेवचिन्तनम् | ४८६ | २१ | बहिर्मातृकान्यासः स्थिति- | | |
| प्रातःकृत्यम् | ४८५ | ९ | क्रमेण | १७१ | ७ |
| प्रोक्षणीपात्रस्थापनम् | ३३६ | १५ | " | ३२९ | १६ |
| [ब] | | | बहिर्मातृकान्यासे विशेषः | १७१ | १४ |
| ✓ बलराममन्त्रादि | ६८३ | १६ | " | ३३० | १० |
| बलरामयन्त्रम् | ११४५ | १ | बालाप्रकरणम् | ८०४ | १४ |
| बलिच्छेदनरीतिः | १०६७ | २० | बालायन्त्रम् | ११५४ | १३ |
| बलिच्छेदनास्त्राणि | १०६८ | २ | बीजनामानि | १४३ | २५ |
| बलिदातृनिर्णयः | १०६९ | ७ | बीजवपनम् | १४३ | १७ |
| ✓ बलिदानमन्त्रः | २५५ | १५ | बीजसेचनम् | १४४ | ६ |
| " | १०६७ | २० | बीजाङ्कुरादितः फलानि | १४५ | १३ |
| बलिदानसंख्या | १०६८ | १७ | बीजे जातिविभागः | ५६ | २० |
| बलिद्रव्याणि | २५५ | ५ | बीभत्सवाक्यैः क्रीडा | | |
| " | १०५० | १३ | मूर्तिचालनान्ते | ११२१ | ४ |
| बलिमस्तकपतनफलम् | १०७३ | ५ | बुद्धमन्त्रादि | ६९१ | १५ |
| बलिरक्तस्थापनपात्रम् | १०७२ | ११ | बुद्धयन्त्रम् | ११४५ | २ |
| बलिविशेषे देवतृप्तिकालः | १०५९ | २ | बुधमन्त्रादि | ८८७ | २३ |
| | | | " | ९४४ | ५ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|---------------------------------|------|----|--------------------------------|------|----|
| बुधयन्त्रम् | ११५८ | १४ | भिक्षान्नानि | ४२४ | २३ |
| बृहदर्घपात्रम् | १४८ | १९ | भुवनेश्वरीगायत्री | ५०६ | ८ |
| ✓ बृहस्पतिमन्त्रादि | ८८८ | १३ | भुवनेश्वरीप्रकरणम् | ८०६ | १७ |
| " | ९४४ | २२ | भुवनेश्वरीभैरवीमन्त्रादि | ८१० | ७ |
| बृहस्पतियन्त्रम् | ११५८ | १४ | भुवनेश्वरीभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ५ |
| बोधनकालः | ९६७ | १८ | भुवनेश्वरीमातृकान्यासः | १७८ | ९ |
| ब्रह्मणो मानसपुत्रा ऋषयः | ७४६ | १८ | भुवनेश्वरीयन्त्रम् | ११५४ | २० |
| ब्रह्मदक्षिणा | ३०७ | १४ | भुवनेश्वर्यादिविहितपुष्पम् | २३७ | १३ |
| " | ३६८ | १९ | भूतबलिः | २५१ | ३ |
| " | ३८० | १६ | " | २५७ | १० |
| ✓ ब्रह्ममन्त्रादि | ९०२ | ११ | " | ३५६ | ११ |
| ब्रह्मयन्त्रम् | ११५८ | २० | भूतलिपिदर्शनम् | ११६१ | २४ |
| ब्रह्मार्पणम् | ३०६ | १२ | भूतलिपिध्यानम् | ११६२ | १० |
| ब्रह्मावरणम् | २७७ | ९ | भूतलिपिनिर्णयः | ११६१ | ८ |
| " | ३६८ | २९ | भूतलिपिपुरश्चरणम् | ११६३ | ३ |
| ब्राह्मणभोजनम् | ३१५ | २० | भूतशुद्धिप्रकारः | १६४ | २० |
| ब्राह्मण्यादिभूमिः | ९७ | १४ | भूतशुद्धिः | ३२६ | ९ |
| ब्राह्मीयन्त्रम् | ११५८ | २१ | भूतशुद्धेः संक्षिप्तप्रकारः | १६८ | ३ |
| ✓ ब्राह्मयाद्यष्टशक्तिमन्त्रादि | ११३० | ५ | भूतापसारणम् | ३२३ | २८ |
| [भ] | | | " | १०१९ | १० |
| ✓ भगमालामन्त्रः | ६०४ | १३ | भूमिक्षमापनं प्रातःकृत्ये | ४९४ | २२ |
| भद्रकालीध्यानादि | ७५४ | २२ | भूमिपरीक्षा | ९६ | ९ |
| ✓ भवानी-(गौरी)यन्त्रम् | ११४६ | ४ | भूमिप्रार्थना वास्तुचक्रकोष्ठ- | | |
| भस्मधारणम् | ५०१ | १२ | खनने | १२१ | २२ |
| भस्मधारणं शुद्धस्य | ५०२ | ९ | भैरवक्रमः | ८४८ | १६ |
| भस्मनिर्माणम् | ५०१ | ८ | भैरवतर्पणम् | ३३९ | १७ |
| भस्मसंग्रहः | ५०१ | ६ | भैरवनामान्तराणि | १४ | ६ |
| भस्मसंस्कारः | ५०१ | १७ | भैरवसाधनम् | १२०३ | १९ |

| विषयः | पृ. | प. |
|---------------------------------|------|----|
| भैरवी- (त्रिपुराभैरवी)-प्रकरणम् | ८०८ | २० |
| भौममन्त्रादि | ८८६ | ६ |
| " | ९४३ | ९ |
| भौमयन्त्रम् | ११५८ | ४ |
| भ्रातृदीक्षानिषेधः | ५२ | १ |

[म]

| | | |
|---------------------------|------|----|
| मङ्गलाचरणम् | १ | १ |
| मणिकर्णिकामन्त्रादि | ८८३ | १६ |
| मण्डपरचनासमयः | १२३ | ९ |
| मण्डपरचनार्थं दिग्ज्ञानम् | १२२ | १४ |
| मण्डपस्थलोच्छ्रायः | १२३ | २५ |
| मण्डपहस्तनियमः | १२३ | १२ |
| मण्डपे कलशादयः | १२७ | ५ |
| मण्डपे तोरणानि | १२५ | १० |
| मण्डपे द्वाराणि | १२५ | ५ |
| मण्डपे ध्वजाः | १२६ | २० |
| मण्डपे विघ्ननिवारणार्थं | | |
| न्यग्रोधादिस्थापनमन्त्राः | १२५ | १८ |
| मण्डपे वेदीरचना | १२७ | २० |
| मण्डपे स्तम्भाः | १२४ | ४ |
| मत्स्यपुरश्चरणादि | ६४५ | २१ |
| मत्स्ययन्त्रम् | ११४१ | १० |
| मत्स्यभेदाः | १०५६ | १० |
| मधुपर्कपदार्थः | २०३ | ६ |
| मधुपर्कपात्रभेदाः | २०२ | २८ |
| मधुपर्कपात्रम् | १४८ | १८ |
| मधुपर्कपात्रस्थापनम् | ३३९ | १२ |

| विषयः | पृ. | प. |
|------------------------------------|------|----|
| मधुपर्कः | २२७ | १५ |
| मध्यमपूजा | ७६ | २१ |
| मनुष्यभेदः | १०५६ | ८ |
| मनुष्ये पशुत्वकरणम् | ५२२ | १८ |
| मनोहरासाधनम् | १२१२ | १७ |
| मन्त्रचैतन्यम् | ५२८ | १२ |
| मन्त्रजायतिः | ९४ | २१ |
| मन्त्रदानम् | ३८२ | २१ |
| मन्त्रदानविधिः | ३०७ | २३ |
| मन्त्रपदार्थः | ४१ | १७ |
| मन्त्रप्रतिष्ठा अधिकारिभेदेन | ५२२ | १२ |
| मन्त्रमाहात्म्यम् | ४१ | २० |
| मन्त्रविशेषेषु देवताविशेषाणां | | |
| शापाः | ८४ | १४ |
| मन्त्रशिखा | ५२८ | २ |
| मन्त्रशुद्धिलक्षणम् | १५३ | १ |
| मन्त्रशोधनप्रकारः | ९० | ९ |
| मन्त्रशोधनावश्यकचक्राणि | ५७ | १५ |
| मन्त्रसिद्धिदा देशाः | ४२१ | ९ |
| मन्त्रसिद्धिप्रकारः पुरश्चरणं विना | १२०० | ४ |
| मन्त्रसिद्धिप्रकारो दरिद्रस्य | ५४९ | १२ |
| मन्त्रसिद्धिमयान्याश्चर्याणि | ५५६ | १ |
| मन्त्रसिद्धिलक्षणम् | ५५३ | ४ |
| मन्त्रसिद्धेरुपायान्तराणि | ५६० | २ |
| मन्त्रसिद्धेर्विघ्नदः समयः | ५५५ | १५ |
| मन्त्रसिद्धेः सिद्धयः | ५५४ | १५ |
| मन्त्रस्नानविधिः | ४९९ | १० |
| मन्त्रस्य फलदातृत्वम् | ४१६ | १ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|------------------------------|------|----|------------------------------|------|----|
| मन्त्रस्य सूतकादिदोषाः | ५२६ | २० | महिषवलिदाने विशेषः | १०६९ | १७ |
| मन्त्रस्य सूतकादिदोषापकृतिः | ५२७ | ४ | महिषभेदौ | १०५६ | १९ |
| मन्त्रस्य स्वापप्रबोधौ | ६२७ | १५ | महिषमर्दिनीमन्त्रादि | ९५२ | २३ |
| मन्त्राणां जननादिप्रकारः | ९२ | ९ | महिषासुरोत्पत्तिः | ९९७ | १३ |
| मन्त्राणां दशसंस्काराः | ९२ | ५ | महौषधी | १०१५ | १९ |
| मन्त्रार्थादिज्ञानमावश्यकम् | ५२६ | ११ | माङ्गल्यद्रव्याणि | १००७ | ७ |
| मन्त्रावयवाः | ५३६ | २३ | मातङ्गीगायत्री | ५०६ | १९ |
| मन्त्रोत्पत्तिः | ७३ | २ | मातङ्गीप्रकरणम् | ८२७ | ७ |
| मन्त्रौषधम् | ६०७ | ६ | मातङ्गीप्रशस्तपुष्पम् | २३७ | १५ |
| ✓ मन्वन्तरभेदेन राममन्त्राः | ६७८ | २४ | मातङ्गीयन्त्रम् | ११५६ | २५ |
| मल्लनियुद्धम् | ११२९ | २ | मातामहदीक्षानिषेधः | ५१ | २४ |
| महाकालध्यानम् | ७५३ | १२ | मातृकान्यासपुरश्चरणम् | ११६३ | ११ |
| महाकालपुरश्चरणम् | ७५३ | २४ | मातृकान्यासमुद्रा | १८३ | ६ |
| ✓ महाकालमन्त्रः | ७५२ | २२ | मातृकान्यासार्थमृष्यादिन्या- | | |
| महाकालीमन्त्रध्यानादि | ७५४ | ५ | सः | १६९ | २० |
| ✓ महागणपतिमन्त्रः | ४७४ | ८ | " | ३२७ | १६ |
| ✓ महागणपतिमन्त्रादि | ६३५ | १२ | मातृकान्यासार्थं संकल्पः | ३१७ | १२ |
| महागणपतिमन्त्रेण हवनम् | ३७४ | ७ | मातृकायन्त्रम् | ११४८ | २ |
| महागणपतियन्त्रम् | ११४० | १६ | मातृदीक्षाप्राशस्त्यम् | ५३ | ९ |
| महाचीनक्रमः | ८४३ | ५ | मात्राकारलक्षणम् | १६१ | २१ |
| महादेवप्रार्थनं प्रातःकृत्ये | ४८७ | १७ | मानसस्नानविधिः | ५०० | ७ |
| महानवमीनिर्णयः | ९८५ | १६ | मानसीदीक्षा | ३९० | ८ |
| महावलौ विशेषः | १०७० | २१ | मात्री दीक्षा | ३९१ | २४ |
| महाभये आह्निकम् | ३६ | ७ | मार्गभेदेन गणेशवडुकादि- | | |
| महाराजक्रमः | ८५१ | ९ | क्रमः | २५७ | ६ |
| महालक्ष्मीध्यानम् | ९५६ | २५ | मार्गभेदेन दीक्षाकालः | ८३ | ६ |
| ✓ महालक्ष्मीमन्त्रादि | ८३४ | १९ | मार्गभेदेन पूर्णाभिषेकः | ४०८ | २३ |
| महाष्टमीनिर्णयः | ९८१ | ११ | मार्गभेदेनाधिकारिभेदाः | २२ | १७ |
| महासेतुः | ५३२ | २२ | मार्गविरोधे कर्त्तव्यम् | ३२ | २ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|-----------------------------|------|----|--------------------------------|------|----|
| मार्गव्यवस्था | २० | १४ | मुद्रिका | १४८ | २९ |
| मार्जनम् | ५४६ | २३ | मुष्ट्यादिपरिमाणानि | ३०७ | २० |
| मार्तण्डभैरवमन्त्रादि | ६४२ | ७ | मूर्त्यादिचालनमन्त्रः | ११२० | १४ |
| मालाकारः | ४४१ | १६ | मूलदेवतातर्पणम् | ३५२ | २३ |
| मालाग्रथनकालः | ४३९ | ७ | मूलदेवतापादुकार्चनम् | ३५२ | २० |
| मालाग्रथनप्रकारः | ४४० | ३ | मूलदेवतार्चनं प्रधानकलशे | ३४५ | २५ |
| मालाग्रथने सूत्रभेदाः | ४३९ | १४ | मूलाधारे गणेशध्यानम् | ४९१ | ८ |
| मालाग्रन्थिनियमः | ४४१ | १९ | मृगभेदाः | १०५६ | १३ |
| मालातोऽविघ्नप्रार्थनमन्त्रः | ५३९ | १२ | मृग्यादयस्तिस्त्रो मुद्रा हवने | २८२ | २३ |
| मालानियमच्युतौ हानिः | ४४४ | १४ | मृत्तिकाहरणम् | १४३ | २ |
| मालानियमाः | ४४४ | २ | मृत्युञ्जयमन्त्रादि | ६९९ | २३ |
| मालापूजनम् | ४४३ | १३ | मृदापहरणमन्त्रः | ४९६ | २१ |
| मालाप्रार्थनमन्त्रः | ५३९ | ९ | मृदुचूडासने | ७२९ | ६ |
| मालाभङ्गे उपायः | ४४४ | २५ | मृदासनाद्यनुकल्पः | ७२९ | १८ |
| मालाभेदाः | २३५ | १७ | मृन्मूर्त्तिदुर्गापूजनादि | १०२२ | १९ |
| " | ४३० | ११ | | | |
| मालामन्त्रः | ५४३ | १३ | [य] | | |
| मालायन्त्रम् | ११५८ | २४ | यतिदीक्षानिषेधः | ५२ | ३ |
| मालायां जपेऽङ्गुलिनियमः | ४४५ | ७ | यतिवानप्रस्थादीनां मातृ- | | |
| मालासंस्कारः | ४४० | १५ | काक्रमः | १७१ | १५ |
| मालासंस्कारोऽधिकारवि- | | | " | ३३० | १० |
| शेषे | ४४६ | १५ | यन्त्रगायत्री | ५२१ | २३ |
| मासफलं दीक्षायाम् | ७५ | ३ | " | ११६० | १५ |
| माहेश्वरीमन्त्रादि | ११३० | २२ | यन्त्रपुरश्चरणानि | ११५९ | ८ |
| मुक्तिभेदाः | १६ | २ | यन्त्रप्रतिष्ठाविधिः | ५२० | १९ |
| मुद्रानामानि | ४५० | १ | यन्त्रलिखनद्रव्याणि | ५२४ | १५ |
| मुद्रापदार्थः | ४४९ | १० | यन्त्रविशेषार्थमष्टगन्धः | ५२३ | २३ |
| मुद्राप्रदर्शनार्थमवसराः | ४४९ | २२ | यन्त्रे ताम्रादिमये पूजाव- | | |
| मुद्रालक्षणानि | ४५१ | १६ | र्षाणि | ५२५ | ८ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|-------------------------------|------|----|--------------------------------|------|----|
| यन्त्रे ताम्रादिमये फलानि | ५२५ | १४ | रामस्य शिवशक्त्यात्मकत्व- | | |
| यन्त्रे प्रस्ताराः | ५२५ | २० | प्रदर्शनम् | १८ | १६ |
| यन्त्रे रेखा | ५२५ | २५ | रामोत्पत्तिमासादि | ५७७ | ९ |
| ✓ यममन्त्रादि | ८९८ | २४ | राशिचक्रम् | ६६ | १ |
| यमयन्त्रम् | ११५८ | १७ | राशिचक्रविचारः | ६४ | ८ |
| यववपनविधिः | ९७५ | १५ | राहुमन्त्रादि | ८९० | १७ |
| युगभेदेन कल्पोक्तजपसं- | | | " | ९४६ | २२ |
| ख्या | ५४५ | ८ | राहुयन्त्रम् | ११५८ | १४ |
| युगभेदेने मार्गभेदप्राधान्यम् | ३१ | १२ | रुद्रगायत्री | ४४२ | १७ |
| युगभेदेनोपास्यदेवता | १६ | ८ | रुद्रभैरवीमन्त्रादि | ८१३ | ४ |
| युगादितिथयः | ७९ | २ | रुद्रभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | १२ |
| योगफलं दीक्षायाम् | ७८ | २३ | रुद्राक्षधारणप्रकारः | ४३८ | ९ |
| योनिकुण्डम् | १२९ | १३ | रुद्राक्षभेदास्तन्माहात्म्यं च | ४३६ | २ |
| [र] | | | रुद्राक्षस्यैकादिमुखभेदेन | | |
| रक्तपुष्पस्य विशेषता | २३४ | ६ | नामानि | ४३६ | १३ |
| रतिप्रियासाधनम् | १२२५ | २२ | रुद्राध्यायपुरश्चरणविधिः | ९१५ | ११ |
| ✓ राजमातङ्गीमन्त्रादि | ८२८ | २३ | रेवन्तादिपूजा | ११०८ | २३ |
| राजमातङ्गीयन्त्रम् | ११५७ | ५ | रोगार्त्तिकर्तृकोपासना | ३५ | ७ |
| राजसीपूजा | ३७ | ३ | | | |
| राजस्थुपासना | ३७ | १४ | [ल] | | |
| रात्रिमूक्तम् | ११७२ | २ | लक्ष्मीगणेशमन्त्रादि | ६३१ | १९ |
| ✓ रामगायत्री | ६८२ | १८ | लक्ष्मीगणेशयन्त्रम् | ११४० | १२ |
| ✓ राममन्त्रपुरश्चरणम् | ५७७ | १२ | लक्ष्मीगायत्री | ५०७ | २ |
| ✓ राममन्त्रादि | ६७१ | २५ | लक्ष्मीनृसिंहमन्त्रादि | ६६२ | १६ |
| राममन्त्रार्थः | ६७३ | ७ | लक्ष्मीमातृकान्यासः | १७८ | २५ |
| राममन्त्रो लक्ष्मणोपासितः | ६७८ | ७ | लक्ष्मीयन्त्रम् | ११५७ | ११ |
| रामयन्त्रम् | ११४२ | ७ | लक्ष्मीवासुदेवपुरश्चरणम् | ६४४ | १४ |
| रामस्य धारणयन्त्रे यन्त्र- | | | लक्ष्मीविद्याप्रकरणम् | ८३२ | २३ |
| लिखनक्रमः | ११४२ | १८ | लक्ष्म्याः प्रशस्तपुष्पाणि | २३७ | २२ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|---------------------------|------|----|------------------------------|------|----|
| लग्नफलं दीक्षायाम् | ७८ | ५ | वर्णमयी माला | ४३० | १७ |
| लोकपालमुद्रा | २४३ | ५ | वर्णौषधिपुरश्चरणम् | ५८३ | २१ |
| लोपामुद्राविद्यामन्त्रादि | ७९६ | १८ | वर्तिकाभेदाः | २४५ | २० |
| [व] | | | वश्यमातङ्गीमन्त्रादि | ८३१ | २२ |
| वक्तृकैकीकरणम् | ३७५ | ८ | वश्यमातङ्गीयन्त्रम् | ११५७ | ६ |
| ✓ वक्रतुण्डगणेशमन्त्रादि | ६३३ | १८ | वस्तुविशेषेऽग्निध्यानम् | ३०० | ११ |
| ✓ वगलामुखीगायत्री | ५०६ | २२ | वाग्मतीमन्त्रादि | ८८४ | ७ |
| ✓ वगलामुखीप्रकरणम् | ८२४ | २१ | वाग्मतीयन्त्रम् | ११५८ | १ |
| वगलामुखीप्रशस्तपुष्पम् | २३७ | १४ | वाचिकी दीक्षा | ३९१ | १४ |
| वगलामुखीयन्त्रम् | ११५६ | १८ | ✓ वामनमन्त्रादि | ६६८ | २२ |
| वज्रपुष्पस्य त्रैविध्यम् | २३४ | १२ | वामनयन्त्रम् | ११४१ | २४ |
| वज्रादिदशशस्त्रपूजनम् | ३५२ | १४ | वामनस्य षड्भेदाः | ६६९ | ५ |
| वटुक-(बाल-)-पूजनम् | १०८९ | १ | ✓ वायुमन्त्रादि | ९०० | ८ |
| ✓ वटुकमन्त्रः | ४७४ | ४ | वायुयन्त्रम् | ११५८ | १९ |
| वटुकयन्त्रम् | ११४५ | २४ | वारफलं दीक्षायाम् | ७७ | ४ |
| वटुकादिवलिदानम् | २५५ | १५ | वाराहीबीजम् | ४७४ | १३ |
| वटुकादिवलिदाने करादि- | | | ✓ वाराहीमन्त्रादि | ११३३ | १८ |
| नियमः | २५४ | २१ | वाराहीयन्त्रम् | ११५८ | २२ |
| ✓ वनदुर्गामन्त्रादि | ९५४ | २० | वासन्तीपूजा | ११२९ | ९ |
| वनदुर्गायन्त्रम् | ११५९ | २ | वास्तुकोष्ठखननम् | १२१ | ११ |
| ✓ वराहमन्त्रादि | ६४७ | २१ | वास्तुकोष्ठखनितृदक्षिणा | १२१ | २१ |
| वराहयन्त्रम् | ११४१ | १६ | वास्तुकोष्ठखनितृपूजनमन्त्रः | १२१ | १५ |
| ✓ वरुणमन्त्रादि | ८९९ | २० | वास्तुचक्रकोष्ठखननार्थं कु- | | |
| वरुणयन्त्रम् | ११५८ | १८ | हालपूजनमन्त्रः | १२१ | १२ |
| वर्गचक्रम् | ६४ | ५ | वास्तुचक्रोक्तदेवबलिमन्त्राः | ११५ | ४ |
| वर्गचक्रविचारः | ६३ | ४ | वास्तुदेवविसर्जनम् | १२१ | ७ |
| वर्णभेदेन कुण्डभेदाः | १३६ | १० | वास्तुध्यानम् | ११२ | ७ |
| वर्णमयी दीक्षा | ३८५ | ४ | वास्तुबलिमन्त्रः | ४७३ | ५ |
| | | | वास्तुयागविधिः | १०५ | ८ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|-----------------------------|------|----|-----------------------------|------|----|
| वास्तुयागावश्यकत्वम् | १०४ | ८ | विष्णुप्रतिमाप्रमाणम् | ५२३ | ८ |
| वास्तुयागोत्पत्तिः | १०४ | १७ | विष्णुमन्त्रादि | ६४३ | ३ |
| वास्तुशेषकृत्यम् | १२० | १० | विष्णुयन्त्रम् | ११४१ | ७ |
| ✓ विघ्नगणेशमन्त्रादि | ६३८ | ६ | विष्णुरात्रिः | ९६१ | २५ |
| ✓ विघ्नराजमन्त्रादि | ६३० | ४ | विसर्जनम् | १११९ | १९ |
| विघ्नराजयन्त्रम् | ११४० | ८ | विहिताविहितपुष्पविचारः | २३९ | ८ |
| विघ्नोत्सारणम् | १५२ | ५ | वीरदीक्षायां विशेषः | ३१६ | २५ |
| " | १५४ | २ | वीरपुरश्चरणम् | ५८४ | १६ |
| " | ३२३ | १० | वीरपुरश्चरणे आसनम् | ५८७ | २० |
| विघ्नोत्सारणमन्त्रः | १५४ | १५ | वीरपुरश्चरणे पूजितश- | | |
| " | ३२३ | ११ | क्तिस्तवः | ५८६ | ५ |
| " | ४७१ | २२ | वीरपुरश्चरणे पूज्यशक्तयः | ५८५ | ६ |
| विजयादशमीकृत्यम् | १११९ | १७ | वीरपुरश्चरणे पूज्यशक्तिपूजा | ५८५ | १५ |
| विजयादशमीनिर्णयः | ९८८ | २७ | वीरपुरश्चरणे शक्तिविचारः | ५८८ | २० |
| विधवादीक्षानिषेधः | ५३ | १२ | वीरभावः | ८५७ | १५ |
| विप्रादिकर्तृकोपासनायां | | | वीररात्र्यादयः | ९५९ | २४ |
| विशेषः | ७४५ | १६ | वीरसाधनम् | ६२६ | ७ |
| विभूतिधारणम् | ५०१ | ४ | वृत्तकुण्डम् | १३० | १ |
| विभूषणीसाधनम् | १२२१ | २० | वेदिकायां स्थाण्डिला- | | |
| ✓ विरिञ्चिगणनायकमन्त्रादि | ६३७ | ११ | दिनिर्माणम् | ३२४ | १२ |
| विल्वपत्रार्पणे विशेषता | २३५ | ११ | वैदिकतात्रिककुण्डयोर्भेदः | १३५ | ४ |
| विल्वाभिमन्त्रणम् | १००८ | ५ | वैदिकवालिः | १०५० | १३ |
| विशुद्धचक्रे जीवात्मध्यानम् | ४९२ | ६ | वैदिकब्राह्मणलक्षणम् | ५४ | २६ |
| विशेषार्घ्यस्थापनविधिः | २०० | २१ | वैदिकमृत्युञ्जयमन्त्रादि | ९१४ | ११ |
| " | ३३६ | २८ | वैश्वदेवहोमविधिः | २५० | १६ |
| विष्टरलक्षणम् | १४८ | १३ | वैश्वदेवहोमः | ३५४ | १९ |
| " | ७२९ | २४ | वैष्णवतत्त्वानि | ३०३ | ३ |
| विष्टरसंस्कारः | ७३० | १५ | " | ३७७ | २४ |
| विष्णुपूजायां द्वारपूजनम् | ३२२ | २५ | वैष्णवभेदाः | २७ | १६ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|------------------------------|------|----|------------------------|------|----|
| वैष्णवमन्त्रपुरश्चरणे विशेषः | ४१७ | १९ | शवसाधनम् | ६१८ | ५ |
| वैष्णवादिभेदेन चक्रविचारो | | | शाक्ततत्त्वानि | ३०३ | १६ |
| दीक्षायाम् | ५७ | ८ | " | ३७८ | ६ |
| " | ७२ | ४ | शाक्तपुरश्चरणे विशेषः | ४१८ | २ |
| वैष्णवीमन्त्रादि | ११३१ | २५ | शापितादयो मन्त्राः | ८५ | ३ |
| वैष्णवीयन्त्रम् | ११५८ | २१ | शाम्भवी दीक्षा | ३९२ | १९ |
| व्याघ्रभेदाः | १०५६ | २३ | शाम्भवी मुद्रा | १११६ | १६ |
| व्याहृतिहोमः | २८३ | २२ | शारदीपूजाफलम् | ११२३ | १ |
| " | ३७१ | ९ | शारदीयात्राप्रकारः | ११२४ | २२ |
| [श] | | | शारदोत्सवनिदानम् | ९९३ | १५ |
| शक्तिगणेशमन्त्रादि | ६६१ | १३ | शारदोत्सवनिदानम् | ९९३ | १५ |
| शक्रमन्त्रादि | ८९७ | १३ | शावरमन्त्रपुरश्चरणम् | ६११ | १० |
| शक्रयन्त्रम् | ११५८ | १६ | शावरमन्त्राणां जायतिः | ९५ | ९ |
| शङ्खस्थापनम् | ३३३ | ३० | शास्त्री दीक्षा | ३९२ | ११ |
| शङ्खावश्यकता विष्णुपूजा- | | | शिवगायत्री | ५०३ | १९ |
| याम् | १९७ | ३ | शिवनैवेद्यभक्षणनियमः | ३१६ | १८ |
| शतचण्डीमाहात्म्यम् | ११७७ | ४ | शिवप्रकरणम् | ६९७ | ३ |
| शतचण्डीविधिः | ११७२ | २६ | शिवमन्त्रग्रहणमावश्यकं | | |
| शतचण्ड्यादिदक्षिणा | ११७६ | १७ | शाक्तस्य | १४ | १४ |
| शनिमन्त्रादि | ८८९ | २२ | शिवयन्त्रम् | ११४५ | ९ |
| " | ९४६ | ५ | शिवलिङ्गप्रमाणम् | ५२३ | १० |
| शनियन्त्रम् | ११५८ | १४ | शिवस्नानम् | ५०० | १३ |
| शमीतरुप्रणाममन्त्रः | ११२८ | १६ | शिवाबलिः | ११०२ | ६ |
| शयनदिङ्मियमः | २८९ | २५ | शिवास्तुतिः | ११०४ | २० |
| शयननियमः | ४६५ | ४ | शिष्यलक्षणम् | ४६ | ६ |
| शरभमन्त्रादि | ७०४ | १० | शिष्यस्य देवतासविधे | | |
| शरभः | १०५७ | ३ | नयनम् | ३०७ | २३ |
| शरीरस्थपीठे स्थानानि | ४९० | ९ | " | ३८० | २५ |
| शल्योद्धारः | १०० | १३ | शिष्यस्य नामकरणम् | ३१३ | १७ |
| | | | " | ४०९ | २० |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|----------------------------|------|----|---------------------------|------|----|
| शिष्यस्य यागस्थले प्रवेश- | | | श्मशानादिलक्षणम् | ७३२ | १४ |
| दिङ्मियमः | ३०१ | १५ | श्यामलामन्त्रादि | ११३४ | ७ |
| शिष्याचमनम् | ३११ | २५ | श्रीधरमन्त्रादि | ६९६ | १० |
| शिष्याध्वशोधनम् | ३०१ | १७ | श्रीयन्नदर्शनफलम् | ११५२ | १६ |
| शिष्याभिषेकः | ३८२ | १५ | श्रीयन्नदानफलम् | ११५२ | २६ |
| शिष्यार्थं दन्तधावनम् | २८९ | ८ | श्रीयन्नपूजनफलम् | ११५२ | २३ |
| शिष्यार्थं वरप्रार्थना | ३०९ | ६ | श्रीयन्नपादोदकमा- | | |
| " | ३८१ | २५ | हात्म्यम् | ११५३ | ३ |
| शिष्योपवेशनार्थमासनम् | ३११ | ४ | श्रीयन्नम् | ११५२ | ७ |
| शिष्योपवेशनार्थं दिङ्मियमः | ३११ | ७ | श्रीयन्नोद्धारप्रकारः | ११५३ | ८ |
| ✓ शीतलापतिमन्त्रः | ११३९ | २४ | श्रीविद्यापूजायां विशेषः | २५२ | २ |
| ✓ शीतलामन्त्रादि | ११३८ | २३ | ✓ श्रीविद्याप्रकरणम् | ७९६ | ११ |
| ✓ शुक्रमन्त्रादि | ८८९ | ५ | श्रीविद्याप्रशस्तपुष्पाणि | २३६ | २१ |
| " | ९४५ | १३ | श्रीविद्यायां करमाला | ४४८ | ९ |
| शुक्रयन्त्रम् | ११५८ | १४ | ✓ श्रीसूक्तपुरश्चरणादि | ९४० | ८ |
| शुभस्वप्नाः | २९१ | १३ | | | |
| शुकरभेदाः | १०५६ | १७ | [ष] | | |
| शुद्रस्य पुराणादिपाठनिषेधः | ५५ | २३ | ✓ षट्कूटाभैरवीमन्त्रादि | ८१२ | १७ |
| शुद्रस्य वेदश्रवणनिषेधः | ५६ | १ | षट्कूटाभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ८ |
| शुद्रादिदीक्षादाननिषेधः | ५४ | २ | षट्पदमातृकाचक्रम् | ७२ | १ |
| शुद्रादिलिखितसप्तशती- | | | षट्पदमातृकाचक्रविचारः | ७१ | ४ |
| पाठनिषेधः | ११७१ | ९ | षडङ्गधूपौ | २४४ | ७ |
| शुद्रादीनामध्वशोधननिषेधः | ३०४ | १९ | षडस्रकुण्डम् | १३० | ३ |
| शूलिनीमन्त्रादि | ९५३ | २६ | षष्ठीकृत्यम् | १००२ | २ |
| शैवभेदाः | ३० | ११ | षष्ठीनिर्णयः | ९७७ | १६ |
| शौचमन्त्रः | ४९५ | ३ | षोडशभुजादुर्गाध्यानम् | ९६४ | १७ |
| शौचविधिः | ४९४ | २५ | षोडशाङ्गधूपः | २४४ | १३ |
| ✓ श्मशानकालीमन्त्रादि | ७५७ | ११ | षोडशीप्रकरणम् | ७९६ | २४ |
| श्मशानकालीयन्त्रम् | ११५० | २१ | षोढान्यासपुरश्चरणादि | ११६५ | १९ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|------------------------------|------|----|-------------------------------|------|----|
| [स] | | | सप्तशत्याः ५ अध्याये | | |
| सकलीकरणम् | २१९ | १६ | मन्त्राः | ११८९ | ६ |
| " | ३४६ | १७ | " ६ " | ११९० | ३ |
| सन्धिपूजनम् | १०४६ | ३ | " ७ " | ११९७ | ११ |
| सन्ध्यालोपप्रायश्चित्तम् | ५०८ | २३ | " ८ " | ११९० | १६ |
| सन्ध्याविधिः | ५०२ | १५ | " ९ " | ११९० | २० |
| सन्निधापनम् | ३४६ | ९ | " १० " | ११९१ | १ |
| सन्निरोधनम् | ३४६ | ११ | " ११ " | ११९१ | ९ |
| सन्यासिदीक्षानिषेधः | ५२ | ३ | " १२ " | ११९१ | १८ |
| सप्तमीकृत्यम् | १००८ | ४ | " १३ " | ११९२ | १ |
| सप्तमीनिर्णयः | ९७९ | २८ | सप्तास्रकुण्डम् | १३० | १९ |
| सप्तविकीर्णद्रव्याणि | ३२३ | २५ | सम्पत्प्रदाभैरवीमन्त्रादि | ८११ | ८ |
| सप्तशती-ऋष्यादिन्यासः | ११६९ | २५ | सम्पत्प्रदाभैरवीयन्त्रम् | ११५५ | ५ |
| सप्तशतीतः प्रश्नविधिः | ११९७ | १९ | सम्पदायः | ८६६ | ३ |
| सप्तशतीपाठक्रमः | १०४८ | ४ | सम्मुखीकरणम् | २१९ | ७ |
| " | ११७० | १३ | " | ३४६ | १३ |
| सप्तशतीपुरश्चरणम् | ११७२ | १० | सम्मोहनमातृकान्यासः | १७९ | १२ |
| सप्तशतीपुरश्चरणं | | | सरस्वतीध्यानम् | ९५७ | १३ |
| नवरात्रे | ११७२ | १८ | सरस्वतीप्रकरणम् | ८६८ | ४ |
| सप्तशतीप्रथमचरित्रे मन्त्राः | ११८६ | २५ | सरस्वतीयन्त्रम् | ११५७ | १५ |
| सप्तशतीप्रयोगाः | ११८४ | ४ | सर्वभूतबलिमन्त्रः | ४७४ | २३ |
| सप्तशतीमध्यमचरित्रे | | | सर्वमङ्गलाध्यानम् | ९६६ | ३ |
| मन्त्राः | ११८८ | १० | सर्वविद्यानां प्रशस्तपुष्पाणि | २३७ | १९ |
| सप्तशतीमन्त्राः कात्या- | | | सर्वतोभद्रमण्डलकोष्ठरञ्जन- | | |
| यनीयाः | ११९३ | ८ | द्रव्याणि | १५६ | १० |
| सप्तशतीविधानम् | ११६९ | १६ | सर्वतोभद्रमण्डलपूजनम् | ३४० | १० |
| ✓ सप्तशतीहोमादौ विशेषः | ११९२ | ४ | सर्वतोभद्रमण्डलम् | १५५ | ३ |
| सप्तशत्यभिषेकमन्त्राः | ११७६ | १३ | सर्वाम्नायपूजार्हा देवी | १३ | १२ |
| | | | सर्वौषधिः | ३८४ | १० |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|---|------|----|---------------------------------|------|----|
| ✓ सहस्रचण्डीविधानम् | ११७७ | १० | सिंहभेदाः | १०५७ | १ |
| ✓ सहस्रचण्डीहोमविधिः | ११७८ | ९ | सिंहिनीसाधनम् | १२२३ | १७ |
| ✓ सहस्रदलकमले परमात्म- ध्यानम् | ४९२ | १६ | ✓ सीतामन्त्रादि | ६८३ | ४ |
| सहस्रनामस्तवकवचपुरश्च- रणम् | ११६६ | ५ | सुदर्शनगायत्री | ५०४ | २० |
| ✓ संक्षेपदीक्षा | ३८४ | ५ | सुन्दरीसाधनम् | १२१० | १७ |
| ✓ संक्षेपसन्ध्या | ५०९ | ३ | ✓ सुमुखीमन्त्रादि | ८३० | १२ |
| संस्कारनिषेधः सिद्धमन्त्रे | ५३ | १६ | सुमुखीयन्त्रम् | ११५७ | ८ |
| संहारक्रमेण मातृका- ध्यानादि | १७० | २५ | सूक्तिकर्तृकोपासना | ३५ | २३ |
| " | ३३० | २ | सूर्यगायत्री | ५०४ | ५ |
| सात्त्विकी पूजा | ३७ | १ | सूर्यग्रहणं विशिष्टं दीक्षायाम् | ८० | २ |
| सात्त्विकयुपासना | ३७ | १२ | सूर्यचन्द्रकला | २१५ | ८ |
| सामान्यतत्त्वानि | ३०३ | १० | सूर्यचन्द्रग्रहणयोर्विशेषः | ९० | ८ |
| सामान्यपूजाभेदः | ३६ | १८ | सूर्यतस्तीर्थप्रार्थनम् | ४९७ | ९ |
| ✓ सामान्यमन्त्रः | ५७ | २ | सूर्यदेवीपूजयोर्द्वारपूजनम् | ३२३ | ५ |
| सामान्यार्घ्यस्थापनम् | १५० | १८ | ✓ सूर्ययन्त्रस्वयंक्षरः | ५११ | ६ |
| " | १९९ | १४ | ✓ सूर्यमन्त्रादि | ६२९ | २० |
| " | ३२१ | १६ | " | ९४१ | २४ |
| ✓ साम्राज्यलक्ष्मीमन्त्रादि | ८३९ | २२ | सूर्ययन्त्रम् | ११४० | २३ |
| सारसपक्षिदर्शनफलम् | ११२७ | १३ | सूर्यराशिफलं दीक्षायाम् | ८० | १५ |
| ✓ सिद्धाद्यविचार्यमन्त्राः | ७२ | ११ | सूर्यस्य द्वादश नामानि | ११ | ११ |
| ✓ सिद्धिकालीमन्त्रादि | ७५६ | १६ | सूर्यार्घदानमन्त्रः | १५९ | २० |
| सिद्धिलक्षणानि | ५५३ | ४ | " | ३२५ | ७ |
| ✓ सिद्धिलक्ष्मीमन्त्रादि | ७५८ | ५ | " | ५०९ | २४ |
| सिद्धिलक्ष्मीयन्त्रम् | ११५१ | २ | " | ५११ | २० |
| सिन्दूरहारिणीसाधनम् | १२२३ | ५ | सूर्यार्घदानमावश्यकम् | ५०९ | १९ |
| १ अथ ध्याने काचित् श्रुतिरस्ति तदर्थं शुद्धिपत्रं विलोक्यम् | | | सूर्याम्नायः | ११ | ५ |
| | | | सृष्टिक्रमेण मातृकाध्यानादि | १७० | ५ |
| | | | " | ३२८ | ५ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|----------------------------------|------|----|-----------------------------|------|----|
| सेतुः | ५३२ | १५ | स्वकर्तृकपत्न्यादिदीक्षावि- | | |
| सौभाग्यक्रमः | ८५४ | ४ | चारः | ५१ | १७ |
| सौरतत्त्वानि | ३०३ | ७ | स्वदेहे पीठपूजनम् | ३४० | ३ |
| " | ३७८ | १ | स्वप्ननिर्णयः | २९१ | १३ |
| स्त्रीदीक्षाविधिः | ५३ | ९ | स्वप्ननिवेदनम् | २९० | १० |
| स्त्रीनियमाः | ४६४ | १३ | स्वप्नफलपाकसमयः | २९१ | १८ |
| स्त्रीशूद्रयोर्मन्त्रश्रावणनियमः | ३१२ | २२ | स्वप्नमानवमन्त्रः | २९० | २२ |
| स्त्रीशूद्राणां मालासंस्कारः | ४४५ | १९ | " | ३७६ | ५ |
| स्त्रीशूद्रादिदेयमन्त्रविचारः | ५५ | १५ | स्वप्नवाराहीमन्त्रादि | ११३५ | ७ |
| स्थण्डिललक्षणम् | १३९ | २ | स्वप्नवाराहीयन्त्रम् | ११५८ | २७ |
| स्थानशुद्धिलक्षणम् | १५२ | २० | स्वप्नादिलब्धमन्त्रसंस्कारः | ५३ | १६ |
| स्थानसाधकनाम्नोर्मिन्त्राभि- | | | स्वलितसप्तशतीपाठनि- | | |
| त्रविचारः | ४८० | ५ | षेधः | ११७१ | ९ |
| स्थितिक्रमेण मातृकाध्या- | | | स्वाधिष्ठाने ब्रह्मध्यानम् | ४९१ | १३ |
| नादि | १७१ | ४ | स्वामिदीक्षाप्राशस्त्यम् | ५१ | २० |
| " | ३२९ | १६ | स्विष्टकृद्धोमः | २८३ | १४ |
| स्थिररेखायन्त्रप्रतिष्ठाकालः | ५१९ | २२ | [ह] | | |
| स्नानविधिः | ४९६ | २ | हनुमद्वायत्री | ५०८ | १५ |
| स्पर्शी दीक्षा | ३९० | २६ | हनुमद्यन्त्रम् | ११४७ | २० |
| स्मर-(काम-)मन्त्रादि | ७२० | २३ | हनुमन्मन्त्रादि | ७१६ | ९ |
| स्मरयन्त्रम् | ११४७ | २३ | हयग्रीवगायत्री | ५०४ | २३ |
| स्मार्त्तबलिः | १०५० | ९ | हयग्रीवमन्त्रादि | ६९२ | २४ |
| स्मार्त्ती दीक्षा | ३९० | ३ | हयग्रीवादियन्त्रम् | ११४५ | ६ |
| सुकुसुवसंस्कारः | २७९ | १२ | हरिद्रागणेशमन्त्रादि | ६३४ | २२ |
| " | ३६९ | ७ | हरिहरमन्त्रादि | ७०७ | १८ |
| सुगलक्षणम् | १३९ | ८ | हवनम् | २८३ | ३ |
| सुवधारणप्रकारः | २७२ | ३ | " | ३७० | १० |
| सुवलक्षणम् | १४० | २५ | हवनार्थमाग्निः | २६४ | २३ |
| | | | " | ३६१ | ५ |

| विषयाः | पृ. | प. | विषयाः | पृ. | प. |
|--------------------------------|------|----|-------------------------------|-----|----|
| हवने मृगयादयस्तिप्तो मुद्राः | २८२ | २३ | होमः स्त्रीशूद्राणां निषिद्धः | ५४९ | २७ |
| हविष्यान्नानि | ४२३ | २४ | होमार्थं द्रव्यासादनम् | ३६८ | २६ |
| ✓ हेरम्बमन्त्रध्यानपुरश्चरणानि | ६३४ | ५ | होमार्थं पात्रासादनम् | २७७ | २ |
| हंसध्यानम् | ४८९ | १७ | " | ३६८ | ८ |
| हंसिनीसाधनम् | १२२४ | ६ | होमार्थमनुकल्पः | ५४८ | २२ |
| हीनब्राह्मणलक्षणम् | २४ | १२ | " | ५५० | २६ |
| हुतशेषप्राशनम् | ३१६ | १३ | होमार्थमनुकल्पो वर्णभेदेन | ५४९ | ५ |
| हुताग्नौ देवपूजनम् | ३७५ | ५ | होमो दोषनिवारणार्थम् | ३२१ | ११ |
| होमद्रव्यप्रमाणानि | ९४९ | ८ | हौत्री दीक्षा | ३९२ | ४ |

पुरश्चर्याणवस्य शुद्धिपत्रम् ।

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. |
|---|----------------|----------|-----------------------------|------------------|----------|
| धावननिधि | धावनविधि | ६ ५ | भृङ्गामो | भृङ्गामो | ११४ १ |
| ब्राह्मादि | ब्राह्म्यादि | १ १४ | पुष्पादि- | पुष्पादि- | ११६ ११ |
| नैऋते | नैऋते | १३ ६ | हृद्यं | हृद्यं | ११७ १४ |
| वंशीधरं कृष्णदेहं चकार द्वापरे युगे । | | | भूयांशेऽश- | भूयांशेऽश- | १३० ३ |
| (तन्त्रराजेऽपि) | | | वियोनीति | वियोनीति | १३५ ५ |
| कदा चिदाद्या ललिता पुंरूपा कृष्णविग्रहा । | | | अर्धचन्द्रम् } त्र्यस्रम् } | अर्धचन्द्रम् } | १३७ १० |
| वेणुनादसमारम्भादकरोद्वियशं जगत् ॥ | | | षडस्रम् | पञ्चास्रम् | १३८ ३ |
| अहं सदाशिवो देवः प्रकृतिर्विष्णुरुच्यते । | | | पञ्चास्रम् | सप्तस्रम् | १३८ ३ |
| | त्रुटिः १७ १ | | सप्तस्रम् | षडस्रम् | १३८ ३ |
| शैवतारा | सैव तारा | १७ १८ | कुण्डमेकविधं | कुण्डमेकविधं | १३९ २ |
| वगामुखी | वगलामुखी | १९ २१ | रापर्णम् | रापर्णम् | १४१ ४ |
| ऽस्त्विति | ऽस्त्विति | ३५ १८ | दैर्घ्या- | दैर्घ्या- | १४२ १४ |
| मिर्माले | निर्माले | ३६ १७ | दीक्षादीनात् | दीक्षादीनात् | १४७ २४ |
| ग्राह्यो | ग्राह्या | ३९ २ | रचयते | रचयेत् | १५० १८ |
| प्रतिमा | प्रतिमा | ४० ७ | नदी | नन्दी | १५१ १६ |
| यस्य तुष्टा | यस्य तुष्टो | ४२ ७ | संज्ञान- | संज्ञान- | १५२ १७ |
| ऽन्ववायज्ञं | ऽन्ववायाद्यं | ४६ ८ | भूतानि | भूतानि | १५४ १६ |
| घातकं | घातकं | ४८ १ | द्वितीयकम् | द्वितीयकम् | १५५ १७ |
| श्रोतसि | स्रोतसि | ५० २० | मित्वा | मित्वा | १५७ ५ |
| कालद्वि- | कालिद्वि- | ७९ १० | ह्रीं ह्रीं सः | ॐ ह्रीं ह्रीं सः | १५९ २० |
| त्रेताऽसित- | त्रेताऽसित- | ८१ १९ | तावत्काला | तावत्काला | १६२ २४ |
| हूँकारो वा | हूँकारो वा | ८५ १२ | येनैव | येनैव | १६४ १० |
| वंशत्रयादितः | वंशत्रयान्वितः | ८८ ४ | अधिष्ठित- | अधिष्ठितं | १६४ २२ |
| षड्विंश- | षड्विंश- | ८९ ५ | उर्ध्वास्यं | उर्ध्वास्यं | १६९ ४ |
| युक्तमण्डप- | युक्तमण्ड- | ९६ ८ | भ्रमध्वे | भ्रमध्वे | १६९ १५ |
| सिद्धैः | सिद्धैः | ९७ १७ | स्वरूपिणी | स्वरूपिणी | १७३ १ |
| भवन्मत्येव | भवन्मत्येव | ९८ ६ | पूर्वयुक्त्येति | पूर्वयुक्त्येति | १७३ १६ |
| कृतिका | कृतिका | ९९ १ | रात्मानं | रात्मानं | १८८ १८ |
| पूर्वपाठा | पूर्वपाठा | ९९ ७ | सूचा | सूचा | १९० १ |
| भूमिस्थं | भूमिष्ठं | १०२ १४ | सुवम् | सुवम् | १९० १५ |
| चिदाइ | चिदारो | ११० ४ | प्राषाण- | प्राषाण- | १९२ १९ |
| सन्निरी- | सन्निरी | ११३ १७ | शङ्खवटी | शङ्खवटी | १९३ ३ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. |
|------------------|-----------------|----------|------------------|------------------|----------|
| प्रभाव | प्रभाव्य | ११४ ३ | इति | इति | २८६ १ |
| प्रोक्ष्य- | प्रोक्ष्य | ११५ ४ | दद्याद्वि- | दद्याद्वि- | २८६ २१ |
| व्रीहिर्वहु- | व्रीहिवहु | ११६ १७ | ऋत्विक्कर्तृ- | ऋत्विक्कर्तृ- | २८८ १७ |
| शङ्खवरो | शङ्खवटी | २०२ २८ | दर्शन | दर्शन- | २८९ २ |
| घटस्थान्ते | घटस्थान्ते | २०५ ६ | विशोधयं यत्नेन | विशोधयेत् तेन | २८९ १० |
| स्थापनीयनि | स्थापनीयानि | २०५ १२ | श्ररसी | श्ररसि | २९१ ८ |
| ऊर्ध्व- | ऊर्ध्व- | २०७ ३ | गाहास्तीद्वजे- | गोहस्तिद्विजदे- | |
| अवगन्तयाः | अवगन्तव्याः | २०८ ७ | देवादेवर्ज्यं | वादिवर्जं | २९६ २४ |
| ऊर्ध्वं | ऊर्ध्वं | २१० १ | सिद्धयेः | सिद्धयः | २९७ २२ |
| धारयन्तं | धारयन्तं | २१० १० | तारावज्रनखं | तारो वज्रनख- | |
| क्रौंचबीजं | क्रौमिं च | २२२ १४ | दंष्ट्रायुधा- | दंष्ट्राय महा- | |
| ताम्बूलानि | ताम्बूलानि | २२५ १५ | य महासि- | सिंहाय हूफ- | |
| सुधान्वितः | सुधान्वितः | २२७ २२ | हाय हूफ् | ट नमः | |
| सम्प्रदानं | सम्प्रदानं | २२८ ६ | नमः | | २९८ २० |
| द्रव्याद्यकृष्टः | द्रव्यादाकृष्टः | २३० ६ | दोतु- | होतु- | ३०१ १ |
| प्रियम्बदा | प्रियम्बदा | २३३ १८ | सुधौतदन्ताद्यं | सुधौतदन्ताद्यं | ३०१ ११ |
| ऊढाया | ऊढाया | २३४ १३ | कुञ्चित् कुञ्चि- | कुञ्चिः कुञ्चयो- | |
| वैकक्षिका | वैकक्षिका | २३५ २१ | दष्टौ | ऽष्टौ | ३०७ २० |
| नरश्रेष्ठ | नरश्रेष्ठ | २३८ २ | पेशान्यां | पेशान्यां | ३१० १० |
| समुद्धरेत् | समुद्धरेत् | २४१ १२ | ददानि | ददामि | ३१० १७ |
| निर्गति | निर्गतिम् | २४२ १ | पूर्णमानसः | पूर्णमानसः | ३१४ ५ |
| प्रासमुद्रां | प्रासमुद्रां | २४३ ३ | क्षाद्यै- | आद्यै- | ३११ १७ |
| प्रासं | प्रासं | २४९ ६ | दीक्षाक्रमः | दीक्षाक्रमः | ३१८ १३ |
| ध्यात्वा | ध्यात्वा | २५१ ८ | वैचित्र्य- | वैचित्र्य- | ३१८ १५ |
| ऊर्ध्वं | ऊर्ध्वं | | दिव्यदृष्ट्याऽ- | दिव्यदृष्ट्यव- | |
| निष्कले | निष्कले वा } | २५६ २ | वलोकनान् | लोकनान् | ३२३ १० |
| पीठोपीठा- | पीठोपपीठा- | २५६ ४ | वद्धाञ्जलिः | वद्धाञ्जलिः | ३२४ ५ |
| हरेम् | हरेत् | २५६ १० | नस्थित- | नसंस्थित- | ३२५ ८ |
| प्रयत्नाम् | प्रयुक्तम् | २५७ २१ | ल्याग्रेषु | ल्याग्रेषु | ३२८ ३२ |
| सर्पापा- | सर्पापा- | २६० २१ | ॐ | ॐः | ३२९ ३१ |
| अक्षपाठनं | अक्षपाठनं | ३६२ ४ | वत्तना | वत्तना | ३३२ ११ |
| इष्टां | इष्टं | २७१ ११ | स्थापययामि | स्थापयामि | ३३३ १५ |
| अतिरक्ता | अतिरक्ता | २७४ १९ | पूरणीय | पूरणीयम् | ३३७ २३ |
| सुषुम्णां | सुषुम्णां | २८२ १ | काथेन | काथेन | ३४२ ११ |
| प्रासन- | प्राशन- | २८४ १३ | पदर्थं | पदर्थं | ३४२ २९ |
| कुरकर्मसु | कुरकर्मसु | २८५ ५ | सनेयि | सनेयि | ३४२ ३० |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. |
|------------|---------------|----------|-----------------|----------------|----------|
| सूक्ष्माय | सूक्ष्मायै | ३४५ ११ | नियमन | नियमेन | ४१७ २८ |
| बध्वा | बद्धा | ३४६ २६ | प्रसूतो | प्रसुतो | ४१७ ३० |
| दावन- | दाचम | ३४९ ११ | गणशा | गाणेशा | ४१८ २७ |
| ज्ञातार्थे | ज्ञानार्थे | ३५० ११ | बध्वा | बद्धा | ४२७ १९ |
| दिवेद्य | निवेद्य | ३५० २२ | कूर्परे | कूर्परे | ४२९ २ |
| मन्त्राते | मन्त्रान्ते | ३५० २५ | व्यात- | व्यात्त- | ४२९ १८ |
| पञ्चषट्सं- | पञ्चधा षट्सो- | | विजनामि | विजानामि | ४३० १ |
| युक्तं | पेतं | ३५३ २७ | मुक्त्यर्थे | मुक्त्यर्थे | ४३१ २२ |
| बलिबटुकाय | बलिबटुकाय | ३५५ २२ | सर्वतन्त्रेषु | सर्वमन्त्रेषु | ४३४ १३ |
| ३५६ | २५६ | ३५६ २७ | नाशिते | नाशिनी | ४३५ ७ |
| पलये- | पलेपये | ३५८ ८ | -दशगुणैः | -दशगुणं | ४३५ ११ |
| ष्ट. तन् | ष्टातन् | ३६२ २७ | स्फादिकं | स्फाटिकं | ४३५ १३ |
| अजलिः | अलिः | ३६३ ७ | स्फाटिके | स्फाटिके | ४३५ २२ |
| वामकद्यां | वामकट्यां | ३६३ २१ | पितृणा- | पितृणा- | ४३७ १५ |
| बहे- | बहे | { ३६४ ६ | कूर्परे | कूर्परे | ४३८ १० |
| वेदिक | वैदिक | ३६४ २१ | ब्रह्मसूत्रै- | ब्रह्मसूत्रै- | ४३९ १५ |
| लोकिताक्ष | लोहिताक्ष | ३६८ ३ | श्रेष्ठाय | श्रेष्ठाय | ४४२ १० |
| गणपये | गणपतये | ३७३ १५ | ब्रुयति | ब्रुयति | ४४४ ४ |
| बध्वा | बद्धा | ३७६ १ | -त्रिषिद्धं सं | -त्रिषिद्धं सं | ४४४ ८ |
| द्रुणेश- | द्रुगाणेश- | ३७७ २३ | संब्रुयते | संब्रुयते | ४४४ २२ |
| -द्विधिमद- | -द्विधिमिद- | ३७८ २७ | कनिष्ठादित | कनिष्ठादि | ४४७ १८ |
| मात्मानि | मात्मानि | ३८५ ११ | अङ्गुष्ठा | -अनङ्गुष्ठा | ४५१ १६ |
| आग्नेय्यां | आग्नेय्यां | ३८७ २४ | तलान्तर्निर्लि- | तलान्तर्निर्लि | ४५२ १४ |
| चतान् | चतान् | ३८९ ११ | गोपनीया | गोपनीया | ४५३ १२ |
| -मस्तास्तु | -मस्तास्तु | ३८९ १८ | साधिनी | साधिनी | ४६० ८ |
| शक्तिशङ्ख- | शक्तिसङ्ख | ३९४ ४ | मन्त्रजपा- | मन्त्रचित्ता | ४६४ १३ |
| वत्वा | ध्यात्वा | ४०० २ | गूढयानो | गूढपादो | ४६८ १६ |
| खण्डव- | पण्णव- | ४०० १८ | वणस्तु- | वस्तु- | ४७४ १३ |
| पावर्ति | पार्वति | ४०१ १ | इन्द्र- | इन्द्र- | ४७५ १४ |
| देवेभ्यः | वेदेभ्यः | ४०१ १५ | ओद्याम्बुरोष- | ओद्याम्बुरोष- | |
| चर्मन्व- | चर्मण्ड- | ४०२ २ | धीशो- | धीमो | ४७५ १६ |
| इशाने | ईशाने | ४०३ २० | षकारेण | खकारेण | ४८० ८ |
| वोपरि | स्वोपरि | ४११ १७ | शकारेण | सकारेण | ४८९ ८ |
| कौणिन्या- | कौण्डिन्या- | ४१७ २१ | विधानः | विधानतः | ४९४ १३ |
| विषिद्ध- | निषिद्ध- | ४१७ २२ | प्रार्थित्वा | प्रार्थयित्वा | ४९४ २१ |

| | | | | | |
|------------------|-----------------|----------|--------------|--------------|----------|
| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. |
| -ऽन्तस्थिति | -न्तस्तिथि- | ४३५ ११ | मन्त्रस्नान- | मन्त्रस्नान- | ४३१ १६ |
| शाक्तेद्वयं वाच- | शक्तेद्वयं वाच- | ४३६ ११ | प्रजापते | प्रजायते | ५०१ १५ |

त्रुटिः ५०५ पृ. ६ प.

(सिद्धान्तसंग्रहे)

अथास्याः संप्रवक्ष्यामि ऋष्यादीन् भैरवोदितान् ।
 श्रीकृष्णस्तु ऋषिः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम् ॥
 शिवशक्त्यात्मिका काली देवता परिकीर्त्तिता ।
 पदैः सदीर्घैरङ्गानि कृत्वा ध्यायेज्जगन्मयीम् ॥
 स्मशानस्थां महाकालीं मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ।
 दंष्ट्राकरालवदनां मुण्डमालाविभूषिताम् ॥
 दक्षिणोर्ध्वे धनुर्वामे करपद्मे तथा शरान् ।
 अथः पाशं च खड्गं च धारयन्तीं क्रमेण च ॥
 नीलमेघप्रभादीप्तां महाकालतमन्विताम् ।
 प्रातस्तु संस्मरेदेनां मूलचक्रकृतालयाम् ॥
 मध्याह्नाहते चक्रे सायं व्योमाभ्युजस्थिताम् ।

| | | | | | |
|---------------|---------------|--------|--------------|----------------|--------|
| पराक्षिणा- | पराक्षिणा- | ५०५ ८ | भ्यां सिता | भ्यां शिता | ५७५ १३ |
| सवार्थं | सवार्थं | ५१४ ८ | उभयास्तं | उदयास्तं | ५७६ १४ |
| -दित्यहुः | -दित्याहुः | ५१५ १५ | साधनमुच्चये | साधनसमुच्चये | ५७७ २ |
| दर्पणैः | तर्पणैः | ५२२ १ | कन्यारूप- | कन्यारूप- | ५८५ १ |
| द्यथाशक्त्या | -द्यथाशक्त्या | ५२७ ४ | बहिष्कृते | बहिष्कृते | ५८६ २१ |
| इत्यामि- | इत्यमि- | ५२८ १ | तदन्तं | तदन्तं | ५११ ५ |
| सेनदशस्वराः | सेनदशः स्वराः | ५३७ ११ | अलिस्पन्द- | अलिस्पन्द- | ५९५ १४ |
| हिरण्यम् | हिरण्यम् | ५३९ १६ | मञ्चकाग्रेषु | मञ्चकाङ्गेषु | ५९६ ११ |
| संशुद्धे | सुशुद्धे | ५४४ १८ | पुजयेच्छेवे | पूजयेच्छेवे | ६०३ २३ |
| एषां | येषां | ५४५ १४ | प्रतिघाता- | प्रतिघाता- | ६०५ १८ |
| प्रायश्चित्त- | प्रायश्चित्त- | ५४८ २० | तस्याहिर्जा- | तस्मिन् हि जा- | ६०७ ३ |
| -भ्रुवाश्च | भ्रुवां च | ५४९ १० | धराणी | धरणी | ६०८ ६ |
| जाप्ययोः | जाप्यपोः | ५५० १३ | जगदे | यजने | ६११ ६ |
| देवीतर्प- | देवि तर्प- | ५५१ ३ | प्रक्षालितां | प्रक्षालितां | ६१४ ४ |
| नीरूप- | निरूप- | ५५३ १ | वीरार्दने | वीरार्दनेन | ६१६ ११ |
| बौद्धायनः | बौधायनः | ५५७ १ | सितवाद्या- | सितवाधा- | ६१६ २१ |
| सिद्धुपा- | सिद्धुपाया- | ५६२ २५ | चण्डिका | चण्डिका | ६१८ १ |
| दुग्धेनाशव- | दुग्धेनाशव- | ५६७ १३ | संस्थापये | संस्थापये | ६१८ १० |
| कुमुदै- | कुमुदै- | ५७१ २ | हस्तम् | हस्तम् | ६२७ १६ |
| देवी- | -देवी | ५७४ ११ | सुरासवैः | सुरासवैः | ६२८ २० |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. |
|---------------|------------------|----------|----------------|-----------------|----------|
| -णाढ्यं | णाद्यं | ६३५ १ | कारान्तौ | कारान्तौ | ७८१ २५ |
| ह्युर्ध्व- | ह्यूर्ध्व- | ६३७ १९ | डित्ययि | डित्यपि | ७८४ १६ |
| -मार्क्य- | -मार्णिक्य- | ६४० २२ | स्थ्यालङ्कार | स्थ्यलङ्कार | ७८५ १८ |
| नमःसास्त्रं | नमसाऽस्त्रं | ६४४ १९ | आलाढा | आलीढा | ७८९ २ |
| शुकं धानां | शुकं दधानां | ६४९ २४ | चन्द्रार्ध- | चन्द्रार्ध- | ७९१ १ |
| जाम्बुनद- | जाम्बूनद | ६५४ ७ | असां त्रयाणां | आसां तिसृणां | ७९१ ९ |
| रूपदंष्ट्र- | रुद्रप्रदंष्ट्र- | ६६२ ६ | वृत्त्या | वृत्त्या | ८०५ १० |
| नृसिंहोऽय- | हृनृसिंहो य- | ६६४ ९ | सक्तै- | शक्तै- | ८१५ २२ |
| तमो | नमो | ६६८ १६ | षड्वर्णै- | षड्वर्णै- | ८२२ २ |
| रामन्त्र | राममन्त्र | ६८३ १५ | गौर्यषे | गौर्यषे | ८२८ २५ |
| प्रीयम् | प्रियम् | ६८३ २० | वाशा | वसा | ८३६ २१ |
| सत्यत्वा- | शतत्वा- | ६९१ १६ | योन्यत्मक | योःन्यात्मक | ८५७ २१ |
| मिश्रि | मिश्र | ६९२ ६ | कौलेयस्तस्मा- | कौले यस्तस्मा- | ८६३ २० |
| नीलसमा | नीलहया | ६९२ १२ | वरहसित | वरभसित | ८७१ १८ |
| च भयं | चामयं | ६९३ ७ | क्षस्त्री | क्षस्त्रा | ८७२ ७ |
| वामचारेण | वामाचारेण | ७१६ ४ | मन्त्रदेवीं- | मन्त्रदेवीं- | ८७६ १६ |
| हृष्टा | हृष्टा | ७२० ५ | ह्रीं | ह्रीं | ८७८ १३ |
| चित्र | चित्र्य | ७२१ २० | व्यापकन्त | व्यापकं तु | ८७८ १८ |
| मृद्धि | मृदु | ७२९ ६ | भीषाभां | भोषणां | ८७८ २० |
| भावे तु कल्प- | भावेऽनुकल्प- | ७२९ १७ | धेया | ध्येया | ८८१ ७ |
| चापे | चाण्डे | ७३० ३ | तरो | तारो | ८८३ १६ |
| विस्तर- | विष्टर- | ७३१ १२ | श्वेतम्बरां | श्वेताम्बरां | ८८४ १२ |
| शूद्र | शूद्र | ७४० १ | हूनेत् | हुनेत् | ८८४ १९ |
| जयेत् | जपेत् | ७४२ १० | प्रकीर्त्तिताः | प्रकीर्त्तिताः | ८८६ ७ |
| स्युः | स्युः | ७४३ ११ | प्रकीर्त्तितम् | प्रकीर्त्तितम् | ८८७ ८ |
| तिष्ठन्सु | तिष्ठन्सु | ७४५ १६ | भौममन्त्रः | बुधमन्त्रः | ८८७ २१ |
| भ्रंशयि- | भ्रंशयि- | ७६७ १५ | सिध्यते | सिध्यति | ८९१ ६ |
| फड- | फडि- | ७५१ ११ | तदोर्मि- | दोर्मि- | ८९१ ८ |
| चर्चां | चर्चां | ७५९ १९ | द्विजोत्तमान् | द्विजोत्तमान् | ८९८ १९ |
| दंष्ट्राग्र | दंष्ट्राग्र | ७६६ १४ | यमन्त्रः | यममन्त्रः | ८९८ २३ |
| समुण्ड | सुमुण्ड | ७६८ ५ | अदित्य- | आदित्य- | ९०३ १८ |
| यावन्त्यः | यावत्यः | ७७६ ३ | द्यमानसः | द्यतमानः | ९०७ २ |
| ललानं | लालनं | ७७८ ९ | प्रभाती | प्रभावती | ९०८ १९ |
| प्रोमिति | स्प्रोमिति | ७७९ २० | स्याह्वीणां | स्य व्याह्वीनां | ९११ ७ |
| द्वारण- | द्वार | ७८१ १ | प्रीणिजाता- | प्राणिजाता- | ९११ १५ |
| अनन्तरं | अनुत्तरम् | ७८१ १७ | बृहत्या | बृहत्त्वा | ९१२ २६ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. |
|-----------------|---------------------|----------|-----------------|-----------------|----------|
| ज्यै हि | ज्यैर्हि | ९१४ १ | किलासश्चित्र- | किलातश्चित्र- | ९२४ ११ |
| मकुटं | मुकुटं | ९१४ २३ | हुनेद्रोसफ | हुनेद्रोशफ | ९२५ १४ |
| ब्रह्माण्डपावि- | ब्रह्माण्डमाविस्फु- | | दक्षिणमूर्त्ति- | दक्षिणामूर्त्ति | ९२६ ८ |
| स्फुरज्ज्यो- | रज्ज्योतिः- | | तिष्ठते | तिष्ठते | ९२६ २० |
| तिस्फा- | स्फा- | ९१६ ९ | ऊर्णा | ऊर्णा | ९२७ २ |
| तिष्ठते | तिष्ठते | ९२० १४ | आनुष्टुभस्य | आनुष्टुभस्य | ९३५ २ |
| पशिरिष्टं | परिशिष्टं | ९२३ १ | दाद्यात् | दद्यात् | ९३६ १३ |
| श्रेष्ठत्व- | श्रेष्ठत्व- | ९२३ २२ | यथाशक्ति | यथाशक्ति | ९३६ २३ |

त्रुटि ९४२ पृ. ८ प. ।

सप्ताश्वं सप्तखङ्गं च जातं देशे कलिङ्गके ।

विश्वामित्रार्षकं त्रिष्टुप् छन्दः काश्यपगोत्रजम् ॥

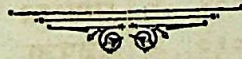
रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणैरुपशोभितम् ।

रक्तगन्धनुलेपाङ्गं रद्धध्वजपताकिनम् ॥

किरीडिनं सकेयूरं मणिगं रक्तच्छत्रिणम् ।

| | | | | | |
|---------------|-----------------|---------|----------------|----------------|---------|
| चात्रेयर्षं | चात्रेयार्षं | ९४३ २ | द्यदैवतम् | द्यमदैवतम् | १०७९ ५ |
| आभुवदुती | आभुवदूती | ९४६ २४ | प्रकर्त्तितम् | प्रकीर्त्तितम् | १०७९ १४ |
| तिन्दोऽक्षश्च | तिन्दुकोऽक्षश्च | ९५० ११ | सङ्ख्यान | सङ्ख्याने | १०८९ १८ |
| षोडशभि | षोडशभि | ९५० १६ | राङ्कुरे | राङ्कवे | १०९५ ९ |
| वेदपायराणाय | वेदपारायणाय | ९५९ १९ | उग्रचण्डा च | उग्रचण्डा | ११०७ ४ |
| शिरःचेशो | शिरःछेशो | ९६४ १० | ऽश्विभ्यां | ऽश्विभ्यां | ११११ १४ |
| कञ्जकोपेता | कञ्जकोपेता | ९६५ १९ | भूम्यर्थेऽनृत- | भूम्यर्थेऽनृत- | १११३ १६ |
| किरण्ये | किरण्ये | १००९ ९ | समारभ्य | समारभ्य | १११४ १० |
| हृता | हृता | १०१० ९ | गजपुजा | गजपूजा | १११४ ११ |
| सिन्धुमैरव | सिन्धुमैरव | १०१३ २३ | मुद्गरदर | मुद्गरदर | १११६ १५ |
| स्नापयेद् | स्नापयेद् | १०१४ १३ | नासारन्ध्रं | नासारन्ध्रं | १११६ १७ |
| स्तपतन्तु | स्तपयन्तु | १०१७ ८ | मांसं | मांसं | १११७ १२ |
| गीतवाद्या | गीतवाद्या | १०२० ५ | कूर्चास्नानल- | कूर्चास्नानल- | ११२१ ३ |
| व्रीहिने | व्रीहिणे | १०२१ ३ | उष्णीषी | उष्णीषी | ११२५ २ |
| ससागच्छ | समागच्छ | १०३५ १ | गान्धार- | गान्धार- | ११२५ ३ |
| विचीनां | विचीनां | १०५३ ३ | वाग्भवम् | वाग्भवम् | ११३४ ९ |
| सम्बृको | शम्बृको | १०५३ ६ | क्षिप्रसाद- | क्षिप्रसाद- | ११४० १४ |
| परिकल्पते | परिकल्पते | १०५७ ९ | त्रायवृतम् | त्रायवृतम् | ११४० १८ |
| प्राग्विपाकेन | प्राग्विपाकेन | १०५७ १७ | विद्वेषं | विद्वेषं | ११४६ २४ |
| पार्षतेणैव | पार्षतेणैव | १०५९ १९ | स्फुरत्केशरं | स्फुरत्केशरं | ११४८ २ |
| गात्र्यन्तर- | गात्र्यन्तर- | १०६५ ७ | त्रिकोणम् | त्रिकोणम् | ११४९ १ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । प. |
|---------------|---------------|----------|---------------|-----------------|----------|
| उत्तरान्तै | उत्तरान्तै | ११५० २३ | कमाना | कामना | ११८५ २६ |
| न्मन्त्रवर्णौ | न्मन्त्रवर्णौ | ११५६ ३ | द्विनम्र- | द्विनम्र- | ११८९ ८ |
| बुधादीनां | बुधादीनां | ११५८ १४ | उचुस्ततः | ऊचुस्ततः | ११९४ २१ |
| मालामन्त्रं | मालायन्त्रं | ११५८ २३ | प्रोको | प्रोक्तो | ११९५ १३ |
| प्रयोदयात् | प्रचोदयात् | ११६० १५ | स्तम्भनिर्मयः | स्तम्भं निर्मयः | १२०८ २१ |
| ध्यायै | ध्याये | ११६२ १० | लक्षे | लक्षं | १२१५ ११ |
| रीत्येत्यर्थः | रीत्येत्यर्थः | ११६४ १४ | मालिका | मालिकाम् | १२१७ २० |
| त्रिष्टुप् | त्रिष्टुप् | ११७० ७ | समागात्य | समागत्य | १२२५ १६ |
| गीवत् | गीतवत् | ११७० २३ | लिङ्गनादाभिः | लिङ्गनादिभिः | १२२६ ९ |
| पुश्चर- | पुरश्चरण- | ११७२ १७ | शैवागमं | शैवागमं | १२२९ १५ |
| संख्या | संख्यया | ११८३ १७ | संहिताम् | संहिताम् | १२३० १ |



1875

दशमहाविद्यास्तत्पुरश्चरणविशेषाश्च प्रदर्श्यन्ते ।

तथा च (मुण्डमालायाम्)

काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी ।

भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ॥

वगला सिद्धिविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका ।

एता दश महाविद्याः सिद्धिविद्याः प्रकीर्तिताः ॥

तत्रादौ प्रथमविद्या प्रोक्ता (कुमारीतन्त्रे)

भैरव उवाच ।

अस्ति गुह्यतमं ह्येतज्ज्ञानमेकं सनातनम् ।

अतीव हि सुगोप्यं च कथितुं नैव शक्यते ॥

अतीव मत्प्रियाऽसीति कथयामि तव प्रिये ।

सर्वं ब्रह्ममयं ह्येतत् संसारं स्थूलसूक्ष्मकम् ॥

प्रकृतिं तु विना नैव संसारमुपपद्यते ।

तस्माच्च प्रकृतेर्मूलकारणं नैव दृश्यते ॥

रूपाणि बहुसङ्ख्यानि प्रकृतेरस्ति भामिनि ।

एषां मध्ये महेशानि कालीरूपं मनोहरम् ॥

विशेषतः कलियुगे नराणां भुक्तिमुक्तिदम् ।

तस्या उपासकाश्चैव ब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥

इन्द्रः सूर्यश्च वरुणः कुबेरोऽग्निस्तथाऽपरः ।

दुर्वासाश्च वशिष्ठश्च दत्तात्रेयो बृहस्पतिः ॥

बहुना किमिहोक्तेन सर्वे देवा उपासकाः ।

कालिकायाः प्रसादेन भुक्तिमुक्त्यादिभागिनः ॥
 तस्या मन्त्रं प्रवक्ष्यामि यतो रक्षेजगन्नयम् ।
 ककारं वह्निसंयुक्तं रतिविन्दुसमन्वितम् ॥
 त्रिगुणं च ततः कूर्चयुग्मं लज्जायुगं ततः ।
 दक्षिणे कालिके चेति पूर्वबीजानि चोच्चरेत् ॥
 वह्निजायावधिः प्रोक्तो कालिकाया मनुः शिवे ।
 द्वाविंशत्यक्षरी विद्या सिद्धिविद्येयमीरिता ॥

मन्त्रार्थमाह (संकेततन्त्रे)

ककाराद्दिश्वमुत्पन्नं तेन सृष्टिस्वरूपिणी ।
 रेफः कालाग्निरुद्रात्मा तेन संहाररूपिणी ॥
 ईकारश्च महालक्ष्मीलोकत्रयविभाविनी ।
 तेनेयं पालिनी शक्तिः सामरस्यं च विन्दुना ॥

(कालोतन्त्रे)

ककाराच्छिवरूपत्वात् सर्वैश्वर्यप्रदायिनी ।
 ज्वलनार्णसमायोगात् सर्वतेजोमयी शुभा ॥
 विन्दुमाली केवलं तु सर्वतत्त्वप्रकाशिका ।
 विन्दुना निष्कलत्वाच्च कैवल्यफलदायिनी ॥
 कूर्चबीजं केवलं तु सर्वबोधप्रकाशकम् ।
 चैतन्यरूपं संसारभीषणं मुक्तिदायकम् ॥
 व्योम्ना प्रकाशमानत्वं प्रसमानत्वमग्निना ।
 तयोर्विसर्ग ईकारो विन्दुना* तान्त्रिकी मता ॥
 दक्षिणा सिद्धसाध्यादिरहिता क्षिप्रसिद्धिदा ।

* विन्दुनादात्मिका इति ४ पु० पा० ।

कालसंकलनात् काली कालग्रासं करोत्यतः ॥

स्वाहेति विषयाः सर्वे देवतायां समर्पिताः ।

एवं समस्तरूपेण केवलं चित्कलाऽपरा ॥

सर्वदेवमयो साक्षाच्छब्दब्रह्मस्वरूपिणी ।

एवं ध्यायेद्विशुद्धात्मा जीवन्मुक्तः स्वयं शिवः ॥

विद्यामाहात्म्यमाह (भैरवोतन्त्रे)

नात्र चित्ताविशुद्धिः स्यान्नारिमित्रादिदूषणम् ।

न वा प्रयासबाहुल्यं समयासमयादिकम् ॥

न वित्तव्ययबाहुल्यं कायक्लेशकरं न च ।

देवैर्देवत्वविधये सिद्धैः खेचरसिद्धये ॥

पद्मगै राक्षसैर्मर्त्यैर्मुनिभिश्च मुमुक्षुभिः ।

कामिभिर्धर्मिभिश्चार्थमीप्सुभिः सेव्यते सदा ॥

य एनां चिन्तयेन्मन्त्री सर्वकामसमृद्धिदाम् ।

तस्य हस्ते सदैवास्ति सर्वसिद्धिर्न संशयः ॥

तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभां गताः ।

राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः ॥

वह्नेः शैल्यं जलस्तम्भं गतिस्तम्भं विवस्वतः ।

दिवारात्रिव्यत्ययं च स कर्तुं भवति क्षमः ॥

अन्ते च लभते देव्या गणत्वं दुर्लभं नरः ।

चन्द्रसूर्यसमो भूत्वा वसेत् कल्पायुतं दिवि ॥

न तस्य दुर्लभं किञ्चिद्यः स्मरेद्दुष्टोरकालिकाम् ।

(कालीतन्त्रे)

अस्याः स्मरणमात्रेण सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ।

एवं समस्तविद्यानां राजी स्तोतुं न शक्यते ॥
 वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
 सर्वसिद्धिप्रदा देवी अनिरुद्धसरस्वती ॥
 तस्मादस्या ज्ञानमात्रात् सिद्धयः संभवन्ति हि ।

तथा ।

अपि चेत् त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत् ।
 अनिरुद्धसरस्वत्याः समो मन्त्रः सदा भवेत् ॥

तन्त्रान्तरे ।

कलौ काली कलौ काली कलौ काली तु केवला ।
 साधिता कालनाथेन प्रत्यक्षा कालिका कलौ ॥
 कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चिन्मोक्षकामुकः ।
 स भोजनं विना नूनं क्षुन्निवृत्तिमभीप्सति ॥
 कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चिच्छान्तिमिच्छति ।
 स हि शीतनिवृत्त्यर्थं हिमशैलं निषेवते ॥
 कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चित् काव्यमिच्छति ।
 स तु दुःखनिवृत्त्यर्थं पापानि कुरुते सदा ॥
 श्रीमहाकालिका विद्या कलौ पूर्णफलप्रदा ।
 कलिर्हि यस्या दासस्य पादपूजां करोति हि ॥
 अजानाज्जानतो वाऽपि सलीलं वा सहेलया ।
 स्मृताऽपि सिद्धिदा काली सकृदेव महेश्वरि ॥
 महाविद्या सिद्धिविद्या विद्याभेदैः प्रतिष्ठिता ।
 उपविद्यादिभेदैश्च कालिका संस्थिता भुवि ॥
 ताराद्याः सकला विद्याः कालिकायाः प्रजजिरे ।
 सर्वा विद्याः कालिकायां संस्थिता एव पार्वति ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः (कालीतन्त्रे)

भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिकच्छन्द उदाहृतम् ।

देवता कालिका प्रोक्ता लज्जाबीजं तु बीजकम् ॥

शक्तिस्तु कूर्चबीजं स्यादनिरुद्धसरस्वती ।

(कालोक्रमे)

कीलकं चाद्यबीजं तु चतुर्वर्गार्थसिद्धिदम् ।

(कालीतन्त्रे)

कवित्वार्थे नियोगः स्यादेवमृष्यादिकल्पना ।

अङ्गन्यासकरन्यसौ यथावदभिधीयते ॥

षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

(वीरतन्त्रेऽपि)

दीर्घषट्कयुताद्येन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

न्यासान्तराणि तत्रैव द्रष्टव्यानि ।

अथ ध्यानं (मेरुतन्त्रे)

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।

कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषणाम् ॥

खड्गाभयवराङ्गिच्छिन्नं मुण्डं च दधतीं करैः ।

महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ॥

कण्ठावसक्तमुण्डालीं गलद्रुधिरचर्चिताम् ।

कर्णावतंसतानीतशवयुग्मविराजिताम् ॥

घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ।

शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ॥

सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविच्छुरिताननाम् ।

घोररूपां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ॥

दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तलम्बकचोच्चयाम् ।

शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिताम् ॥
 शिवाभिघोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ।
 महाकालसमायुक्तां शवोपरिरतान्विताम् ॥
 सुखप्रसन्नवरदां स्मेराननसरोरुहाम् ।
 एवं संचिन्तयेत् कालीं श्मशानालयवासिनीम् ॥

तथा ।

कपिलारत्नसम्पूर्णपृथ्वीदानस्य यत् फलम् ।
 कोटिहोमसहस्रस्य देव्या ध्यानेन तत् फलम् ॥
 एतन्मन्त्रजपान्मन्त्री मुच्यते ब्रह्महत्यया ।
 पितृमातृवधायैश्च किमन्यैः *क्षुद्रघातकैः ॥

अथ शापोद्धारस्तत्रान्तरे ।

शापोद्धारं प्रवक्ष्यामि वशिष्ठमुनिना कृतम् ।
 चतुर्विंशतिलक्षाणि जप्त्वा कोपेन शप्तवान् ॥
 अद्य प्रभृति देवेशि कालिके कालरूपिणि ।
 तव मन्त्रेषु संसिद्धिः कष्टेनैव भविष्यति ॥
 इति श्रुत्वा महादेवी प्रादुर्भूता प्रसाद्य तम् ।
 उवाच पुत्र किमिदं शापदानं वृथा कृतम् ॥
 एवं फलं यथा न स्यात् तथा कुरु मुनीश्वर ।
 ज्ञानं दत्तं दुराराध्यं दुर्लभं यत् सुरैरपि ॥
 ततः प्रीत्या वरं लब्ध्वा ज्ञानविज्ञानसंयुतम् ।
 उवाच प्रीतमनसा शापान्तं मन्त्रसङ्कटे ॥
 मातः क्रोधेन कथितं तत्रोपायमहं ब्रुवे ।
 प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य घोररूपे च दक्षिणे ॥

* क्षुद्रघातकैस्ति २, ३, ४, ५, पु० पा० ।

सिद्धिं कुरुद्वयं प्रोच्य कालिकेति पदं ततः ॥

ममाभीष्टफलं शीघ्रं देहि द्रविणसम्पदम् ।

जपादौ मन्त्रमुच्चार्य जपान्ते च पुनः पठेत् ॥

भविष्यति ततः सिद्धिरचिरात् परमेश्वरि ।

अथासनभेदा उक्ता मत्स्यसूक्ते ।

मृदूचूडकमासीनश्चान्येषु कोमलेषु च ।

विष्टरे वा समासृत्य साधयेत् सिद्धिमुत्तमाम् ॥

एषां लक्षणानि तत्रैव ।

अर्वाक् षण्मासतो गर्भच्युतमाहुर्मृदुं बुधाः ।

चूडोपनयनैर्हीनमेतच्चाचूडकं विदुः ॥

निवृत्तचूडको बालो हीनोपनयनः पुमान् ।

यो मृतः पञ्चमे वर्षे तमेव कोमलं विदुः ॥

तथा ।

मृतासनं विना देवि यो जपेत् कालिकां नरः ।

तावत् स नारकी जेयो यावदाहूतसंश्लवम् ॥

यो वीर इत्यर्थः । पशोरुतु तादृशासननिषेधात् ।

मृदासनाद्यभावे ऽनुकल्प उक्तो (वीरतन्त्रे)

शवाभावे विष्टरं तु शवरूपं प्रकल्पयेत् ।

पञ्चाशद्भिर्भवेद्ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरम् ॥

(कालीतन्त्रादौ)

मृताभावे कुशरूपं विष्टरं परिकल्पयेत् ।

विष्टरः साधकस्याथ कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ॥

भूतपत्राणि यस्मिन् वै स कुशेत्यभिधीयते ।

हस्ते पादे दश दशमिता दिग्युगं हृत्सरोजे

विंशत्सङ्ख्याः सकलवरदे मस्तके कीर्त्तिताश्च ।
 गुह्ये जिह्वावदनरदने घ्राणकर्णस्तनेषु
 लिङ्गे चाण्डे युगपरिमिता योजनीयाः कुशाश्च ॥
 इत्येष विष्टरः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः ।
 कुशैर्वा बन्धनं कार्यं नाड्या वा परमेश्वरि ॥
 रक्तमिश्रितसूत्रेण पट्टसूत्रेण वा पुनः ।
 विष्टरं परिकल्प्याथ तस्योपरि जपं चरेत् ॥
 विधिविष्टरपद्मस्य विधिः प्रोक्तो मया तव ।
 शवरूपं प्रकल्प्याथ कविर्वाग्मी भवेन्नरः ॥
 स्वयम्भुवाक्तं सूत्रं च कर्त्तव्यं सर्वसिद्धये ।
 शत्राभावे विष्टरस्तु शवरूपः प्रकीर्त्तितः ॥
 विष्टरः शिवरूपः स्यात् स्वस्य शक्तित्वकल्पना ।
 शिवशक्तिसमायोगात् किं न सिद्ध्यति भूतले ॥

अथ विष्टरसंस्कारः (शक्तिसङ्क्रमे)

गायत्र्या त्रोटनं कार्यं मूलेन ग्रथनं चरेत् ।
 कृतसङ्कल्पको मन्त्री कोमलं वामपाणिना ॥
 कूर्चबीजेन सङ्गृह्य अत्रमन्त्रेण प्रोक्षणम् ।
 प्रणवं भुवनेशीं च समुच्चार्य तु तं वदेत् ॥
 शवरूप महाप्रेत चाष्टसिद्धिं प्रयच्छ मे ।
 इति स्तुत्वा तु तं सम्यक् कुशमध्ये निधापयेत् ॥
 तस्य देहे त्रिकोणं तु रक्तचन्दनकेन वै ।
 मायां तन्मध्यगां लिख्य बहिर्मण्डलकं चरेत् ॥
 प्रणवम्-आः सुरेखे च वज्ररेखे ततःपरम् ।

कूर्चं चास्त्रं वह्निवधूरयं च मण्डले मनुः ॥
 आकारं च ततो मायां क्रौंकारं हंस एव च ।
 वह्निजायां समुच्चार्य शवप्राणाः पदं वदेत् ॥
 इह प्राणाः पदं चोक्त्वा शवजीव इह स्थितः ।
 शवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुरेव च ॥
 श्रोत्रघ्राणानीहागत्य सुखं च चिरमेव च ।
 तिष्ठन्तु स्वाहया युक्तः प्राणसंस्थापने मनुः ॥
 प्रणवं पूर्वमुच्चार्याधारशक्तिपदं ततः ।
 कोमलासनपदं डेऽन्तं नमोऽन्तेन तमर्चयेत् ॥
 प्रणवं कामपीठाय नमः शब्दान्नमस्कृत्या ।
 स्वर्णैर्माषत्रयैः पट्टे कार्या मूर्तिः शवस्य तु ॥
 संस्थाप्य विस्तरस्यान्ते सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।

मृताभाव इति वचनात् पशोः शत्रानुकल्पकुशविष्टरमपि नास्ति मुख्येऽधिकारिण
 एवानुकल्पेऽधिकारादिति सुधारणवद्भवतः ।

आसनान्तरसंस्कारोऽप्युक्तो (भैरवतन्त्रे)

कुशं व्याघ्राजिनं वाऽपि कम्बलं लोहितं तथा ।
 कोमलाद्यासनं वाऽपि पीतवस्त्रेण वेष्टयेत् ॥
 आसनं सम्यगापाद्य ततः शोधनमाचरेत् ।
 कल्पोक्तेन विधानेन पूजां सम्यक् समाचरेत् ॥
 पूजार्थमासनमहं शोधयामि महेश्वरि ।
 देव्याज्ञामेवमादाय मूलहृन्मनुनाऽपि च ॥
 जलेनासनमभ्युक्ष्य कवचेनावगुण्ठय च ।
 अन्नमन्त्रेण संरक्ष्य सदाशिवनिभं स्मरेत् ॥
 तत्र पीठमनुं भक्त्या जपेदष्टोत्तरं शतम् ।

यथा विभवसम्भारैः पूजयित्वा सदाशिवम् ॥

सिद्धीश्वर महादेव सर्वसिद्धिप्रदायक ।

देहि मेऽभीष्टसिद्धिं त्वमेतदासनरूपतः ॥

इदं मन्त्रं समुच्चार्य उपविश्यासने ततः ।

यथाविधि विधायाथ गुरवे दक्षिणां ददेत् ॥

इत्यासनसंस्कारः ।

अथ देशाः (फेत्कारिणीधे)

एकलिङ्गे श्मशाने च शून्यागारे चतुष्पथे ।

तत्रस्थः साधयेद्योगी विद्यां त्रिभवमोचिनीम् ॥

एकलिङ्गलक्षणमुक्तं तत्रैव ।

पञ्चक्रोशान्तरे यत्र न लिङ्गान्तरमीक्षते ।

तदेकलिङ्गमाख्यातं तत्र सिद्धिरनुत्तमा ॥

श्मशानादिलक्षणमुक्तं (त्रिशक्तिरत्नाकरे)

दह्यन्ते व्यसवो यत्र शवकीलकसंकुले ।

गृध्रगोमायुकाकाद्यैर्मांसलुब्धैर्यदावृतम् ॥

तत् श्मशानमिति ख्यातं पिशाचगणसेवितम् ।

काकादिनीडसंयुक्तं कृत्तिच्छत्रादिसंयुतम् ॥

नागरैर्दूरनिर्मुक्तं साध्यसोद्देगकारकम् ।

सौधसंरुढघासाढ्यं शून्यागारं तदुच्यते ॥

चतुर्णां च यथा यत्र संयोगो युगपद्भवेत् ।

तच्चतुष्पथमित्युक्तं रजन्यामिष्टदायकम् ॥

पूर्वपूर्वमिदं शस्तं जघन्यश्चोत्तरोत्तरम् ।

उज्जटे पर्वते वाऽपि निर्जने वा चतुष्पथे ॥

देवागारे देवशून्ये विल्वमूले नदीतटे ।

स्वगृहे निर्जनारामे तथा चाश्वत्थसन्निधौ ॥

(कुमारोत्तिन्त्रे)

तदभावे दिव्यगेहे सिन्दूरादिभिरङ्किते ।

खड्गशूलगदाकर्त्राचामरव्यजनादिभिः ॥

वितानधूपसङ्कीर्णे कृष्णागुरुसुवासिते ।

युवतीनां सुरापीनां वेश्यानां लास्यशोभिते ॥

शङ्खघण्टारवाकीर्णे दीपावलिविराजिते ।

एवम्भूते गृहे पूजा कालिकायाः सुशोभना ॥

अथ पुरश्चरणविधिः (वीरतन्त्रे)

आदौ मन्त्रस्य सिद्ध्यर्थं पुरश्चरणमाचरेत् ।

ततः सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत् ॥

(स्वतन्त्रतन्त्रे)

दिवा लक्षं शुचिर्भूत्वा हविष्याशी जपेन्नरः ।

ततस्तु तद्दशांशेन होमयेद्धविषा प्रिये ॥

तर्पयेत् तीर्थतोयेन पयसा सर्पिषाऽपि वा ।

मधुना वा सितामिश्रतोयेन परमेश्वरीम् ॥

देवीं चाभिषिञ्चेत् तोयैस्तर्पणस्य दशांशतः ।

तद्दशांशं हविष्यान्नैर्भोजयेद्भक्तितः प्रिये ॥

कालीमन्त्रविदो विप्रान् दक्षिणां गुरवे ददेत् ।

पाशवं कठिनं कल्पं शृणु वैरं ततः प्रिये ॥

रात्रौ मांसाश्वैर्देवीं पूजयित्वा विधानतः ।

ततो नग्नां स्त्रियं नग्नो रमन् क्लेदयुतोऽपि वा ॥

जपेच्छ्रुतं ततो देवीं होमयेज्ज्वलितेऽनले ।

योनि कुण्डे स्थिते सर्पिर्मांसमद्ययुतं तथा ॥

दशांशं तर्पयेन्मद्यैर्मांसमिश्रैस्तु साधकः ।
 तर्पणस्य दशांशेन अभिषिञ्च्य जगन्मयीम् ॥
 दशांशं भोजयेत् साधु साधकं कालिकाप्रियम् ।
 मद्यं मांसं च मत्स्यं च चर्वणं च प्रदापयेत् ॥
 ततस्तु तोषयेद्भक्त्या गुरुं स्वर्णादिभिः प्रिये ।
 एतत्कल्पद्वयादेवि मन्त्रः सिध्यति वै ध्रुवम् ॥

(कालीतन्त्रे)

आदौ पुरस्क्रियां कुर्यान्नियमेन यथाविधि ।
 लक्षमेकं जपेद्द्विधां हविष्याशी दिवा शुचिः ॥
 रात्रौ ताम्बूलपूर्णास्यः शय्यायां लक्षमानतः ।
 ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगार्हो न चान्यथा ॥

(साधनसमुच्चये)

नित्यकर्म दिवा कृत्वा रात्रौ पूजां समाचरेत् ।
 पूजान्ते तु जपं कुर्यात् कारणास्वादमोदितः ॥
 जपेन लक्षमात्रेण कालीं विद्यां प्रसिध्यति ।

(भैरवतन्त्रे)

लक्षं जपेद्भविष्याशी दिनेनैव जितेन्द्रियः ।
 ब्रह्मचर्यपरो भूत्वा पुरश्चरणकर्मणि ॥
 तथा रात्रौ जपेद्भक्षं मन्त्री मैथुनतत्परः ।
 कृत्वाऽऽचारक्रमेणैवं साधयेन्मन्त्रमात्मनः ॥
 विधानेनाथ सिद्धिः स्यान्मनुरेव न संशयः ।

(भैरवयामले)

दीक्षाविधानमधिगम्य गुरोः सकाशा-
 लब्ध्वा मनुं जपति लक्षमितं दिवा यः ।

रात्रौ हविष्यभुगमत्सरकामकोप-

लोभाद्यचञ्चलमनाः स तु साधकेन्द्रः ॥

लक्षं निशि स्ववनितासु रतावसाने

नग्नो विमुक्तचिकुरस्त्वयि दत्तचित्तः ।

(महाकालस्तुतौ)

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो

दिवा मातर्युष्मच्चरणयुगलध्याननिरतः ।

परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनुं

जनो लक्षं स स्यात् स्मरहरसमानः क्षितितले ॥

(मेरुतन्त्रे)

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।

अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं जपेन्मनुम् ॥

दशांशं होमयेदाज्यैस्तर्पयेदभिषेचयेत् ।

होमं च तर्पणं पूजा कर्त्तव्या तु विशेषतः ॥

ततः प्रयोगान् कुर्वीत काम्यानिष्टफलास्तये ।

(वीरचूडामणौ)

साधनस्य विधिं वक्ष्ये संकेतपरमाद्भुतम् ।

येन विज्ञातमात्रेण खेचरत्वं च जायते ॥

होमं कुर्यात् प्रयत्नेन पायसेन तिलेन वा ।

स्नातः शुक्लाम्बरधरो नित्यकर्मदिवाशुचिः ॥

रात्रौ पूजां प्रकुर्वीत पञ्चमुद्राविधानतः ।

अनेनैव विधानेन लक्षमेकं जपेद्बुधः ॥

स्वस्वकर्म पुरस्कृत्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।

हावभावादिकं कुर्यान्महाचीनलतां हरेत् ॥

(श्रुतिसिद्धान्ततन्त्रे)

तेनैव तर्पणं कुर्यात् स्नानपानादिकं सदा ।
 दक्षिणे पाशवः कल्पो वीरकल्पस्तु वामिनाम् ॥
 कल्पद्वयं समाश्रित्य मन्त्रः सिध्यति सत्वरम् ।
 गुरोराज्ञां समादाय स्नातः शुक्लाम्बरः शुचिः ॥
 दिवा लक्षं जपेद्द्विधां ब्रह्मचर्यं समाश्रितः ।
 रात्रौ च देवदेवेशीमिष्ट्वा वामोपचारकैः ॥
 शक्तीः संपूज्य विधिवत् कृत्वा निधुवनोत्सवम् ।
 कोमलाद्यासनासीनो मुक्तकेशो दिगम्बरः ॥
 ताम्बूलपरिपूर्णास्यः सिन्दूराङ्कितभालकः ।
 रहस्यमालामादाय जपेच्छक्ष्मनन्यधीः ॥
 कुलमार्गप्रपन्नानां विधिरेषः प्रकीर्तितः ।

अत्र ब्राह्मणस्य पशोर्वा दक्षिणोपचारेण दिवैकलक्षजपः । शूद्रस्य वीरस्य च रात्रौ वामोपचारेणैकलक्षजप इति राघवभट्टादयः ।

तेषामयमाशयः ।

भैक्ष्यादिनियमाहारः सकृद्रात्रौ विधीयते ।
 दिवा चैव जपं कुर्यात् पौरश्चरणिको द्विजः ॥
 इति (फेत्कारिणी-)तन्त्रवचनात् ।

स्नातः शुक्लाम्बरधरः शुचिः प्रयतमानसः ।
 दिवा सर्वं प्रकर्त्तव्यं धर्मकामार्थसिद्धये ॥
 द्विजानामत्र सर्वेषां विधिरेषः प्रकीर्तितः ।

इति (मेरुतन्त्र-)वचनाच्च विप्रादिकर्तृकपुरश्चरणे ।

त्रिसन्ध्यं देवपूजां च त्रिसन्ध्यं जपमाचरेत् ।
 रात्रौ मन्त्रं च मालां च स्पृशेन्नैव कदा चन ॥

इति पशुभावप्रकरणीय- (भावचूडामणि-) वचनात् । पशुकर्तृकपुरश्चरणे च दिवस
एव कालः ।

एवं च ।

द्विजानां चैव सर्वेषां दिवाविधिरिहोच्यते ।

शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ॥

इति (महाकालसंहिता-) वचनोत्तरार्थात् ।

शूद्रकर्तृकपुरश्चरणे ।

गते तु प्रथमे यामे तृतीयप्रहरावधि ।

निशायामेव जप्तव्यं रात्रिशेषे जपेन्न च ॥

वीरपुरश्चरणप्रकरणीय- (मुण्डमाला-) वचनाद्वीरकर्तृकपुरश्चरणे च रात्रिरेव काल
इति व्यवस्थितौ ।

पशुर्गुस्मुखाल्लब्धां विद्यां कालघनप्रभाम् ।

पाशवेन तु कल्पेन लक्षं जपति साधकः ॥

दिव्यगुस्मुखाल्लब्ध्वा कालिकां दिव्यरूपिणीम् ।

लक्षं जप्यात् सदा मन्त्रं वीरकल्पेन साधकः ॥

इति (कालीकुलार्णव-) वचनात् ।

स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जपेत् पशुः ।

दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरो रात्रौ लक्षं जपन् चरेत् ॥

इति (कालीक्रम-) वचनाच्च सर्वेषामेकलक्षजपात्मकमेव पुरश्चरणं सिध्यतीति ।

अस्मिन् मते ।

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।

रात्रौ ताम्बूलपूर्णास्यः शय्यायां लक्षमानतः ॥

एवं लक्षद्वयं जप्त्वा तदशांशेन मन्त्रवित् ।

अयुतं होमयेद्देवि दिवारान्निप्रभेदतः ॥

इति सर्वेषां भिन्नभिन्नेति कर्तव्यताकसमुचितलक्षद्वयजपात्मकपुरश्चरणविधायक-
(कुमारीतन्त्र-) विरोधो दुर्वारः ।

(निरुत्तरतन्त्रेऽपि) लक्षद्वयपरिमित एव जप उक्तः ।

लक्षद्वयं जपेद्द्विधां दिवारात्रिप्रभेदतः—इति ।

सुधारणवद्वतस्तु—

‘एवं लक्षद्वयं जप्त्वा’ इत्यादि—(कुमारीतन्त्रा—) दिवचनाद्दिवारात्र्येभिर्नमिन्ना-
चारेणैकैकलक्षजपात्मकसमुचितलक्षद्वयजपः सर्वस्यैव प्राप्तः ।

स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जपेत् पशुः ।

दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरो रात्रौ लक्षं जपं चरेत् ॥

इति (कालीक्रम—) वचनेनापवाद्यते ।

एवं च वीरब्राह्मणस्यापि रात्रौ मैरेयाद्युपादानपुरःसरः ।

ब्राह्मणो मदिरां दत्वा ब्राह्मण्यादेव हीयते ।

इत्यादिवाक्यत्रिरुद्धो वीरभावप्रकरणियब्राह्मणकर्तृकक्षीरोपादानविधायक—(भाव-
चूडामणि—) विरुद्धश्च जपः प्राप्तः ।

तत्र

द्विजानां चैव सर्वेषां दिवाविधिरिहोष्यते ।

इत्यपवादकं वाक्यम् । तेन वीरस्यापि ब्राह्मणस्य मैरेयाद्युपादानपूर्वकं दिवाल्ल-
जपः पर्यवसन्नो भवति ।

एवं च राजन्यवैश्ययोः अपि रात्रिमात्रजपापवादकम् ।

शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ।

इत्युत्तरार्धम् । तेन (कुमारीकल्प—) वचनं राजन्यवैश्यविषयं पर्यवस्यति ।

अपवादविषयपरिहारेणोत्सर्गस्य व्यवस्थितेः पशूनां रात्रिजपश्च पशुभावप्रका-
णीय—(भावचूडामणि—) वचनपरास्त एवेति सर्वमनवद्यम् ।

वस्तुतस्तु—

‘पशुर्गुणमुखाल्लभ्या’ इत्यादि (कालीकुलार्णव—) वचनात् पशोर्लब्धमन्त्रस्य पशुभावेन
वीराल्लब्धमन्त्रस्य वीरभावेन च साधने एकलक्षजपो वैपरीत्ये च लक्षद्वयजप इत्याहुः ।
अत्र वैपरीत्ये (कुमारीतन्त्रो—) करीत्या लक्षद्वयजपस्य कर्तव्यतया वीराल्लब्धमन्त्रस्य पशु-
भावेन साधनासम्भवात् पशोर्लब्धमन्त्रस्य वीरभावेन साधनमेव वैपरीत्यमिति ध्येयम् ।
अत्र कृष्णभट्टपादाः ।

‘एवं लक्षद्वयं जप्त्वा’ इत्यादि—(कुमारीतन्त्रा—) दिवचनात् सर्वेषामपि लक्षद्वयपरि-
मित एव जपः । पशुदिव्यवीराणामेकैकलक्षजपविधायक—(कालीकुलार्णवकालीक्रमा—) दि-
वचनं तु सिद्धमन्त्रविषयम् ।

अत एवोक्तं (यामलादेः)

गुरुणा साधितो मन्त्रो यदि भाग्येन लभ्यते ।

लक्षमात्रं तदा जप्त्वा सर्वकर्माणि साधयेत्—इति ॥

तत्र विशेषस्तु ।

रात्रौ मांसासवैर्देवीं पूजयित्वा विधानतः ।

ततो नगनां स्त्रियं नग्नो रमन्—इत्यादि(स्वतन्त्रतन्त्रा—)दिवचनात् ।

ब्राह्मणो मदिरां दत्त्वा—इत्यादिमहाकालोक्तविरुद्धमैर्यदानादिकम् ।

अज्ञानात् स्वस्त्रियं गत्वा—इत्यादिसामान्यपुरश्चरणप्रकरणीय—(सिद्धान्तसम्प्रदाया)—दिवचनविरुद्धरात्रिजपप्राक्कालीनसुरतादिकं च ब्राह्मणस्यापि प्राप्तम् ।

तदुभयमपि ।

द्रव्येण सात्त्विकेनैव ब्राह्मणः पूजयेच्छिवम् ।

स्वकीयां परकीयां वा सामान्यवनितां तथा ॥

जपेयुस्ताः समाकृष्य क्षत्रविदशूद्रजातयः ।

इति (महाकालसंहिता)—वचनेनापवादते ।

एवं च ।

स्वजातकुसुमं चैव हेतुद्रव्यं च भैरव ।

स्पृष्ट्वा तथा समाग्राय पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥

ऋतुकालं विना चापि न गच्छेत् स्त्रियमादरात् ।

इत्यादिभिः पशुभावप्रकरणोय—(भावचूडामणि—)वचनैर्विप्रेतरपशोरपि तदुभयं निरस्तमेव ।

पशुमात्रस्य रात्रिजपनिषेधक—(भावचूडामणि—)वचनं तु एतद्देवताद्यतिरिक्तदेवतोपासकपशुपरम् ।

रात्रावपि जपेत् तावत् प्रत्यवायोपशान्तये ।

इति पशुकर्तृककाश्यप्रकरणीय—(श्रुतिसिद्धान्ततन्त्र)—वचनेन एतद्देवतोपासकपशो रात्रिजपस्यापि विहितत्वात् ।

शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ।

इति वचनं तु शूद्राणां रात्रिजपे फलातिशयबोधकं न तु शूद्रकर्तृकदिवातनजप-
प्रतिषेधकम् ।

तथा च ।

वीरदिव्यथेदिवापाशवकल्पेनैकलक्षजपो वीरकल्पेन रात्रावेकलक्षजपस्तत्रापि सा-
क्षान्मैरेयाद्युपादानं शूद्रस्यैव न तु वीरस्यापि त्रैवर्णिकस्य तदुपादानम् ।

क्षीरेण ब्राह्मणैस्तर्प्या धृतेन नृपवंशजैः ।

माक्षिकैर्वैश्यवर्णैस्तु आसवैः शूद्रजातिभिः ॥

इति (भैरवतन्त्र-) वचनात् ।

अत एवोक्तं (महाकालसंहितायाम्)

श्रयते यत् फलाधिक्यं तत्रादौ मद्यदानतः ।

तद्धि शूद्रपरं जेयं न तु द्विजपरं प्रिये-इति ॥

पशोस्तु दक्षिणाचारेण दिवैकलक्षजपस्तेनैवाचारेण रात्रावेकलक्षजप इति सर्वेषा-
मपि लक्षद्वयजपात्मकमेव पुरश्चरणं पर्यवसन्नमिति प्राहुः ।

मम त्वेवं प्रतिभाति ।

दक्षिणे पाशवः कल्पो वीरकल्पस्तु वामिनाम् ।

इत्यादि(श्रुतिसिद्धान्त-) तन्त्रवचनाद्दक्षिणमार्गिणः पाशवकल्प एव वाममा-
र्गिणा वीरकल्पपवाधिकारित्वे सिद्धे पाशवकल्पेन वीरकल्पेन च पुरश्चरणमुक्त्वा-

कुलमार्गप्रपन्नानां विधिरेष प्रकीर्तितः ।

इति तत्रैवोक्तत्वात् ।

कुलाचारक्रमेणैवं साधयेन्मन्त्रमात्मनः ।

इति (भैरवतन्त्र-) वचनात् ।

दक्षवामक्रियायुक्तः कौलश्चोभयमिश्रितः ।

इत्याद्याप्रकरणीय-(वाङ्मनस)-वचनाच्च एतत्कल्पद्वयाश्रयणे कौलिकस्यैवा-
धिकारः प्रतीयते ।

तथा च ।

पाशवकल्पेन दिवैकलक्षजपरूपपुरश्चरणं दक्षिणमार्गिणः । वीरकल्पेन रात्रावेकल-
क्षजपरूपपुरश्चरणं वाममार्गिणः । एतदुभयात्मकपुरश्चरणं कौलिकस्येति मार्गभिदेन पुर-
श्चरणस्यापि भेदः ।

द्विजानां चैव सर्वेषाम्—इत्यादौ द्विजपदं पशुपरं न तु विप्रमात्रपरम् ।
तस्य त्रैवर्णिकवाचकत्वात् । अत एव क्षत्रियवैश्ययोः संग्रहाय सर्वेषामिति पदमुपात्तम् ।
उत्तरार्धे तु नोपात्तम् । अन्यथा राजन्यवैश्यविषयकाकाङ्क्षाया अनिवृत्तिप्रसङ्ग इति तु
सुधारणवृत्तैवोक्तम् । पशुश्च दक्षिणमार्गी । एवमुत्तरार्धे शूद्रपदं वाममार्गीपरम् ।
अत एवोक्तं (मेरुतन्त्रे)

शूद्रादियवनान्तानां सिद्धिर्वामपथे स्थिता—इति ।

दिव्यो गुरुमुखात्—इत्यत्र दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरः—इत्यत्र च
दिव्यवीरौ वाममार्गीणौ न तु कौलिकौ । कौलिकवाममार्गीभेदेन तयोः प्रत्येके द्वैविध्यस्य
वक्ष्यमाणत्वात् तथा च दिव्यैकलक्षजपविधायकानि (कालीकुलार्णवा)—दिवचनानि दक्षि-
णमार्गीपरतया रात्रावेकलक्षजपविधायकानि (साधनसमुच्चया—)दिवचनानि वाममार्गीपर-
तया दिवारात्रिभेदेन समुचितलक्षद्वयजपविधायकानि (मैरवतन्त्रकुमारीतन्त्रा—)
दिवचनानि च कुलमार्गीपरतया संगमनीयानीति सकलमकलङ्कम् ।

किञ्च ।

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।

अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं जपेन्मनुम् ॥

इत्यादावपि त्रिविधमार्गीपथुकं त्रिविधपुरश्चरणं सुधीमिराकलनीयम् ।
ननु पशूनामेतदेवताराधने कथमधिकारः ।

दिव्यभावं वीरभावं विना कालीं न पूजयेत् ।

पूजयेन्नरकं याति दुःखं तस्य पदे पदे ॥

पशुभावाश्रितो देवि यदि कालीं प्रपूजयेत् ।

रौरवं नरकं याति यावदाहूतसंल्लवम् ॥

इति (निरुत्तरतन्त्र—)वचनेन निषेधादिति चेन्न । दिव्यभावमित्यादिवचनानां
वामाचारप्रकरणीयतया वाममार्गीणां पशुभावाश्रयणनिषेधपरत्वात् ।

तथा च ।

वाममार्गीं दिव्यभावं विना कालीं न पूजयेत् ।

पशुभावाश्रितः सन् यदि पूजयेत् तदा रौरवं नरकं यातीति तदर्थः ।

तदुक्तमन्यत्रापि ।

दिव्यभावं वीरभावं वाममार्गीं समाश्रयेत् ।

पशोः संसर्गमात्रेण रौरवं नरकं व्रजेत-इति ॥

तथा च ।

पशुभावो हि विप्राणां श्रेयस्करतरो मतः ।

तस्मात् पाशवकल्पेन विप्रः कालीं प्रपूजयेत् ॥

इति (श्रुतिसिद्धान्ततन्त्र-) वचनात् ।

विप्रो दक्षिणमार्गेण महामायां प्रपूजयेत् ॥

इत्यादि (सिद्धान्तसार-) वचनाच्च पशूनामेतद्देवतोपासनाधिकारित्वमक्षतमेव ।
अन्यथा ।

पशुर्गुस्मुखाल्लब्ध्वा-इत्यादिपूर्वोक्त-(कालोकुलार्णव-) वचनस्य ।

स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जयेत् पशुः ।

इत्यादि(काली क्रम-) वचनस्य चासङ्गत्यापत्तेः ।

एवं च ।

साधके क्षोभमापन्ने देवीक्षोभः प्रजायते ।

तस्मान्भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥

विना पीत्वा सुरां भुक्त्वा मांसं गत्वा रजस्वलाम् ।

यो जपेदक्षिणां कालीं तस्य दुःखं पदे पदे ॥

कलावासवयोगेन तर्पयेत् कालिकां प्रिये ।

इत्यादि-(निरुत्तरतन्त्र-) वचनानामपि धीरपरत्वमवगन्तव्यम् । धीरस्यापि ब्राह्मणस्य
मैत्रेयाद्युपादाननिषेधाद्ब्राह्मणेतरवीरपरत्वमुक्तवचनानामिति बहवः ।

वस्तुतो ब्राह्मणस्य धीरादिभाव एव निषिद्धः ।

पशुभावो हि विप्राणाम्-इत्युक्तत्वात् ।

ननु ।

मद्यं मत्स्यं तथा मांसं मुद्रां च मैथुनं ततः ।

ब्राह्मणो वीरभावेन कालिकायै निवेदयेत् ॥

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्च कुलयोगतः ।

पञ्चमैः पूजयेत् कालीं मोक्षार्थी यः कलौ भवेत् ॥

इत्यादि-(निरुत्तरतन्त्र-)-वचनाद्ब्राह्मणस्य वीरभावे कथं नाधिकार इति चेन्मैत्रम् ।

ब्राह्मं वीर्यं तथा क्षेत्रं संस्कारा ब्रह्मसंभवाः ।

ब्राह्मणाचरणाद्ब्रह्मविद्याभिर्ब्राह्मणो भवेत् ॥

इति (मेरुतन्त्रो-)-केषु पञ्चसु लक्षणेषु निर्देशक्रमप्रातिलोभ्येन लक्षणचतुष्टयहीनस्य शू-
द्रतुल्यस्यैव ब्राह्मणस्य वामाचाराधिकारितया सर्वाचारपरिभ्रष्टस्य तादृशस्यैव ब्राह्मणस्य
कुलाचाराधिकारितया च तदितरस्य विप्रस्य तदुभयानधिकारित्वेन वीरभावनिषेधात् ।

तदुक्तं (मेरुतन्त्रे)

उक्तेषु लक्षणेष्वेकं यस्मिन् विप्रे प्रदृश्यते ।

तस्यैव ब्राह्मणस्यात्र वामे स्यादधिकारिता ॥

तथा ।

चतुर्लक्षणहीनानां मार्गाः स्युः कौलिकादयः ।

तथा ।

सर्वाचारपरिभ्रष्टः कुलाचारं समाश्रयेत् ।

कुलाचारपरिभ्रष्टो रौरवं नरकं व्रजेत्-इति ॥

अत एवोक्तं (भावनिर्णये)

वृषलः पशुभावं तु न कदाऽपि समाश्रयेत् ।

ब्राह्मणो वीरभावं च मनसाऽपि न भावयेत् ॥

इति च शब्दाद्विव्यभाजमपि ।

एवं च ब्राह्मणकर्तृकमदिराद्युपादानविधायकं वाक्यं यत्र यत्रोपलभ्यते तत्र तत्र
ब्राह्मणपदस्य पूर्वोक्तलक्षणचतुष्टयहीनवीरब्राह्मणपरत्त्वमवधेयम् । तान्त्रिकमते तादृशे-
ऽपि ब्राह्मणपदप्रयोगात् । अत एव तस्यैव ब्राह्मणस्येत्युक्तं (मेरुतन्त्रे)

ब्राह्मणैस्तु सदा पेयं क्षत्रियैस्तु रणागमे ।

वैश्यैर्धनप्रयोगे च शूद्रैर्नैव कदा चन ॥

इति-(कुलार्णव-)-वचनं तु सदा पेयमित्यत्र सदा अपेयमित्यकारप्रदलेषादपि
सङ्गच्छते । एवं च कलिधर्मप्रकरणे गृह्यपरिशिष्टे हरिनाथोपाध्यायैः सौत्रामण्यां सुरा-
ग्रहणनिषेधस्योक्तत्वात् ।

कुलाचाराधिकारिब्राह्मणस्यास्मिरुपदर्शितत्वाच्च ।

सौत्रामण्यां कुलाचारे ब्राह्मणः प्रपिवेत् सुराम् ।

इति (समयाचार-)वचनं सङ्गच्छत एव ।

यत् तु ।

त्रेतायां पूजिता देवी घृतेन सर्वजातिभिः ।

मधुभिः सर्ववर्णैस्तु पूजिता द्वापरे युगे ॥

पूजनीया कलौ देवी केवलैरासवैः-इति (यामल-)वचनम् । ता
सर्ववर्णशब्दो ब्राह्मणेतरपरः ।

त्रय्यध्वरीणो भूदेवस्त्रिपदायज्ञसूत्रधृक् ।

न कदाऽपि स्पृशेद्दालां न च देव्यै निवेदयेत् ॥

इति (महाकालसंहिता-) वचनेन ब्राह्मणस्य सर्वदा मैरेयदाननिषेधात् ।
इत्थं च ।

यत्रावश्यं विनिर्दिष्टं मदिरादानमुत्तमम् ।

ब्राह्मणस्ताम्रपात्रे तु गव्यं मद्यं प्रल्पयेत् ॥

इति (भैरवतन्त्रो-)कोऽनुकल्पविधिरपि पूर्वोक्तवीरब्राह्मणपर एव । तदितरस्य
तत्रापि नाधिकारः ।

ब्राह्मणस्त्वनुकल्पं च कृत्वा चाण्डालतामियात् ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

(महाकालसंहितायाम्)

कदा चिदनुकल्पोक्तां दद्याद्देव्यै द्विजः सुराम् ।

उपमद्यानि ते वच्मि तानि देव्यवधारय ॥

आर्द्रकस्य गुडस्यापि समभागे भवेत् सुरा ।

ताम्रपात्रे तथा क्षौद्रं पयो गव्यं तथाऽत्र च ॥

नारिकेलोदकं कांस्ये रीतौ तालरसोऽपि च ।

रसालश्च रसो रङ्गे शङ्के वा पानसो द्रवः ॥

मधूकपुटके द्राक्षा तत्पुष्पं तद्वलेऽपि च ।

चिञ्चारसं पद्मपत्रेऽथ्वत्ये कारकपानकम् ॥

उपमद्यानि चैतानि हादश स्युर्वरानने ।

द्विजो दित्सति चेन्मद्यं दद्यादेतानि नो सुराम् ॥

एतान्यपि न देयानि सात्त्विकैर्धर्मभीरुभिः ।

मद्यं वाऽप्युपमद्यं वा मद्यनाम न गच्छति ॥

पातित्यं किन्तु नामीभिस्तथैव पतितो भवेत् ।

अत्र द्विजपदं ब्राह्मणेतरद्विजपरं न तु ब्राह्मणपरम् । अत एवोक्तं तत्रैव ।

नारिकेलोदकं कांस्ये ताम्रे गव्यं तथा मधु ।

राजन्यवैश्ययोर्दानं न विप्रस्य कदा चन ॥

एवं प्रदानमात्रेण हीनायुर्ब्राह्मणो भवेत्-इति ।

एवं च ।

नानोपचारसम्भारैर्भक्तितः पूजिताऽपि च ।

विना मकारयोगेन नैव तुष्यति कालिका ॥

इत्यादि (कुलरत्नावली-) वचनमपि शूद्रादिकर्तृकाराधनपरं बोद्धव्यम् ।

विप्रादिकर्तृकोपासनायां न सात्त्विकैरेवोचारैस्तस्यास्तुष्टिश्रवणात् । एतत् सर्वं
(महाकालसंहितायां) स्पष्टम् ।

तथा हि ।

वस्तुष्वन्येषु तिष्ठत्सु देवीप्रीतिकरेषु च ।

किमेतया वै सुरया कदन्नमलरूपया ॥

भूतप्रेतपिशाचार्थं पूयमिश्रं* सुरामिषम् ।

तद्ब्राह्मणेन नो देयं देव्यै नात्तव्यमेव च ॥

न चैतया तुष्यति सा बहु वाऽपि घृणायते ।

उद्विग्ना च भवेत् तस्माद्व्याघ्रैव द्विजः सुराम् ॥

हतो वेदो हतो धर्मः परलोको हतः स्वकः ।

कुलं हतं हता जातिर्हतं ब्राह्मण्यमेव च ॥

प्राज्ञमन्येन मूर्खेण पिवताऽज्ञानतः सुराम् ।

* पूयसंज्ञम् इति २-३-५ पु० पा० ।

किं कृतं साधितं किं वा किं च वा समुपार्जितम् ॥
 यदयं हतवान् स्वस्य सर्वं मद्योपसेवनात् ।
 एवमेवाज्ञानमग्नौ मामप्याशु हनिष्यति ॥
 उद्दिग्नेव महामाया भवेत् तदवलोकनात् ।
 कैवर्त्तपुष्कशम्लेच्छरजकान्त्यावसायिनाम् ॥
 चर्मकारनटप्रोथमेदोवेणूपजीविनाम् ।
 सिद्धदुर्गन्धिशुष्कान्नं द्रव्यं मह्यं निवेद्य हि ॥
 सुधावत् पिवतां पुसां कथं विदसु न हि स्पृहा ।
 अन्ये न सन्ति वस्त्वाद्या नैवेद्यकरणाय किम् ॥
 अस्पृश्यं यत् तदानीय मह्यं ददति कौलिकाः ।
 ऋचो यजूंषि सामानि ह्यथर्वाङ्गिरसस्तथा ॥
 वेदेभ्यः कोटिगुणिता महामन्त्रास्तथैव च ।
 ये पावयन्ति देहस्थान् मद्यैराकण्ठपूरितैः ॥
 मामपि प्लावयिष्यन्ति किमाश्चर्यं हि ते जनाः ।
 सात्त्विकैरेव नैवेद्यैः कन्दैः पुष्पैः फलैर्दलैः ॥
 अभावे भावभक्तिभ्यां सत्यं तुष्टा भवाम्यहम् ।
 न मद्यमांसविस्तारैः प्रेतराक्षसभोजनैः ॥
 ब्राह्मणो मानसाः पुत्रा मरीच्यत्र्यङ्गिरोमुखाः ।
 एतेषामन्वयोद्भूताः पुनरन्ये सहस्रशः ॥
 कश्यपश्चैव दुर्वासा दत्तात्रेयश्च चन्द्रमाः ।
 बृहस्पतिर्विश्रवाश्च शक्तिर्दक्षो मृकण्डुजः ॥
 नारदः कपिलो व्यासः कालाग्निर्जमदग्निजः ।
 दाक्षः कविरथर्वा च शाण्डिल्यो गौतमो मनुः ॥
 नाचिकेता भरद्वाजः श्वेताश्वतार एव च ॥

और्वो दधीचिदच्यवनं ऋचीकश्च पराशरः ॥
 शातातपो लोमशश्च जैगीषव्यश्च देवलः ।
 पैठीनसिर्वीतिहव्यः संवत्तोऽगस्तिरासुरिः ॥
 उपमन्युर्मतङ्गश्च तथा वाजस्रवाः कठः ।
 उदालकश्चारुणेय आश्वलायन एव च ॥
 उत्तङ्गश्च यवक्रीतः कात्यायन ऋतश्रवाः ।
 एते चान्ये च मुनयो वेदवेदाङ्गपारगाः ॥
 ईजानाः क्रतुभिः सर्वैः समाप्तवरदक्षिणैः ।
 गृणन्तो निगमं सर्वं कुर्वन्तो दुश्चरं तपः ॥
 ध्यायन्तो निष्कलं ब्रह्म जपन्तो मामकं मनुम् ।
 सर्वदा सात्त्विकैरेवोपचारैः पूजयन्ति माम् ॥
 सदा मय्यर्पितहृदः सदा मद्भावभाविताः ।
 सदा मच्छरणं प्राप्ताः शान्ता दान्ता जितेन्द्रियाः ॥
 वाय्वाहारा निराहारा ऊर्ध्वरेतस एव च ।
 तपोबलाद्भ्रंसयितुं शक्रमप्यलमीदृशाः ॥
 न निवेदितवन्तस्ते किमर्थं मदितां मयि ।
 विज्ञायास्यां महादोषं निन्द्यतां पापहेतुताम् ॥
 गर्हाकरत्वं पातित्यकारित्वं पूतितामपि ।
 परलोकविनाशित्वं तथा नरकहेतुताम् ॥
 विप्रत्वजातिहन्तृत्वं म्लेच्छतुल्यत्वकारिताम् ।
 अतस्तत्पुण्यजुरेवैनां संगृह्य श्रुतिपद्धतिम् ॥
 यद्यस्यां दोषराहित्यं पुण्यकारित्वमेव च ।
 स्यात् तदा ते कथं मह्यं ददुर्नैव सुरां द्विजाः ॥
 धर्मव्यवस्थां ज्ञात्वेत्थमन्येऽपि द्विजजातयः ।

निवेदयिष्यन्ति नैव मह्यं मद्यं कथं चन ॥
 बोधिता अपि शास्त्रार्थैरनादृत्य वचो मम ।
 मोहाद्व्यवहरिष्यन्ति लोभोपहतचेतसः ॥
 ये के चित् तां धर्मराजः शासिष्यति न संशयः ।
 तीव्रैर्दण्डैर्महाघोरनरकादिनिपातनैः ॥
 इति सत्यं पुरा मह्यं प्रोवाच जगदम्बिका ।
 तत्राहमवदं देवि देवीवक्त्रोत्थिताक्षरैः ॥
 अतः परं श्रुत्युदितं धर्ममहाक्यमेव च ।
 देव्याणां च समुल्लङ्घ्य ये दास्यन्ति सुरां द्विजाः ॥
 तेषां शास्त्री महामाया श्रोतव्यं शृण्वतः परम् ।
 द्विजेतरः संप्रदद्यादेव्यै मद्यं सदा रहः ॥
 स्वयं महाप्रसादं च युञ्जीत प्रत्यहं प्रिये ।
 मांसाणि दग्धमीनांश्च सर्वदैव निवेदयेत् ॥
 शुद्रादीनामथैतेषां सद्यस्तुष्यति कालिका ।
 द्विजानां यावती निन्दा कथिता मद्यदानतः ॥
 शूद्राणां तावती ज्ञेया प्रशस्तिर्वरवर्णिनि ।
 अतः शूद्रः प्रयत्नेन देव्यै मद्यं निवेदयेत् ॥
 दीर्घायुष्वमरोगित्वं वाग्मित्वं राजमान्यताम् ।
 पुत्रक्षेत्रकलत्रार्थपरिपूर्णत्वमेव च ॥
 अन्ते स्वर्गादिगमनं शूद्रः प्राप्नोति मद्यतः ।
 श्रूयते यत् फलाधिक्यं तत्रादौ मद्यदानतः ॥
 तद्धि शूद्रपरं ज्ञेयं नैव द्विजपरं प्रिये ।
 स्वयं यदन्नो भवति तदन्ना तस्य देवता ॥
 पितरश्च तदन्ना स्युरित्येवं वैदिकी स्थितिः ।

प्राणिजातिषु सर्वासु मानुष्यमतिदुर्लभम् ॥
 मानुष्येष्वपि देहेषु शूद्रः श्रेष्ठोऽन्त्यजातितः ।
 शूद्राच्छतगुणो वैश्यो वैश्यात् साहस्रिको नृपः ॥
 नृपात् कोटिगुणो विप्रो ज्ञेयः स्वाध्यायतत्परः ।
 अत एव हि सर्गादौ जगत् सृष्ट्वा चराचरम् ॥
 यद्यत् सारतरं वस्तु तद्वद्वाऽदाद्विजातये ।
 वेदाः षडङ्गशास्त्राणि क्षमा सत्यं तपो धृतिः ॥
 शौचं दानं दया धर्मो विवेकः कलभाषिता ।
 त्यागः शान्तिश्च मर्यादा स्वाध्यायोऽध्यात्मचिन्तनम् ॥
 यज्ञाः सर्वहविर्गव्यं पयो मेध्यान्नमेव च ।
 एतेषां विपरीतानि ददौ शूद्रेभ्य एव च ॥
 त्रयाणामपि वर्णानां दासभावमदात् ततः ।
 सर्वशिल्पोपजीवित्वं मन्त्रराहित्यमेव च ॥
 अनाशीस्त्वमशौचत्वमपाङ्गैयत्वमेव च ।
 अस्पृश्यत्वमपाठित्वमसम्भाष्यत्वमेव च ॥
 मद्यमांसोपयोगित्वं तद्विक्रेतृत्वमेव च ।
 देवेभ्यस्तत्प्रदातृत्वं तदुत्पादित्वमेव च ॥
 म्लेच्छादिदेशगमनं तत्संपर्कित्वमेव च ।
 महासाहसकारित्वं वेदाश्रोतृत्वमेव च ॥
 एतस्मात् कारणाद्देवि वेदमर्यादयाऽनया ।
 ब्रवीमि मदिरादानेष्वेषामेवाधिकारिता ॥
 दोषोऽणुरपि नैतेषां देवेभ्यो मद्यदानतः ।
 फलातिरेकता वाऽपि श्रूयते निगमादिषु ॥
 अतः प्रयत्नतः शूद्रो दद्यादेव्यै परिश्रुतम् ।

तामेव वर्जयेद्विप्रः सदा प्राणात्ययेऽपि हि ॥
निशम्यापीदृशान् दोषानथ चेद्दातुमिच्छति ।
स च सा च विजानाति धर्मं वा पापमेव वा ॥

(अगस्त्यसंहितायामपि)

आवां तु पिशितै रक्तैः सुरयाऽपि सुरेश्वरि ।
वर्णाश्रमोचितं धर्ममविचार्य यजन्ति ये ॥
भूतप्रेपिशाचास्ते भवन्ति ब्रह्मराक्षसाः ।

(मेरुतन्त्रे)

अमृतेन सहोत्पन्नं स्थाने मद्यं सुधायते ।
विषेणापि सहोत्पन्नं तेन मद्यं विषायते ॥

तथा ।

गौडी पैथी च माध्वी च सुरा इत्यभिधीयते ।
सा क्षत्रवैश्ययोर्नेष्टा ब्राह्मणस्य तु का कथा-इति ॥

अथ विद्याभेदाः (कालीतन्त्रे) ।

कलीहृदयविद्या च सिद्धिविद्या महोदया ।
पुरा येन यथा जप्त्वा सिद्धिमायुर्दिवौकसः ॥
कामाक्षरं वह्निसंस्थमिन्दिरानादविन्दुभिः ।
मन्त्रराजमिदं ख्यातं दुर्लभं पापचेतसाम् ॥
त्रिगुणा तु विशेषेण सर्वशास्त्रप्रबोधिका ।
अनया सदृशी विद्या न हि सारस्वतप्रदा ॥
आकर्षणवशीकारमारणौच्चाटनं तथा ।
शान्तिपुष्ट्यादिकर्माणि साधयेदनयाऽचिरात्-इत्यादि ॥

तथा ।

ध्यानपूजादिकं सर्वं साधनं च पुरस्कृत्या ।
अनिरुद्धसारस्वत्याः समानं सर्वमोरितम् ॥

(मेरौ)

जपपूजादिकं प्राग्वद्विशेषान्नोगमोक्षदम् ।

(श्रुतिसिद्धान्ते)

स्वबीजं पूर्वमुद्धृत्य कालिके बहिर्गेहिनी ।

एषा षडक्षरी विद्या भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥

(मेरुतन्त्रे)

न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषान्नोगदो मतः ।

तत्रैव ।

क्रीँ हँ हीँ त्र्यक्षरात्माऽयं मन्त्रः काल्याः प्रकीर्तितः ।

प्राग्वज्रपादिकं चास्य विशेषात् सन्ततिप्रदः ॥

कालीबीजं च हूँ मायां हुँ फट् पञ्चाक्षरो मनुः ।

न्यासध्यानादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भूतनाशनम् ॥

क्रीँ हूँ हीँ हुँ फट्पुक्त्वा स्वाहान्तः सप्तवर्णकः ।

मायाद्वन्द्वं कूर्चयुग्ममैन्द्रान्तं मदनत्रयम् ॥

मायाविन्द्वीश्वरयुतं दक्षिणे कालिके पदम् ।

संहारक्रमयोगेन बीजसप्तकमुद्धरेत् ॥

एकविंशत्यक्षरात्मा ताराद्यः कालिकामनुः ।

(मेरुतन्त्रेऽपि)

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि एकविंशतिवर्णकम् ।

ॐ ह्रीँ ह्रीँ हूँ युगं त्रिः क्रीँ दक्षिणे कालिके वदेत् ॥

त्रिः क्रीँ हूँ हूँ शक्तियुग्ममस्य न्यासादि पूर्ववत् ।

विल्वमूले शवारूढो वटमूले तथैव च ॥

लक्षं मनुमिमं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।

पञ्चमं प्रतिनिध्यायं दक्षिणाम्नायसिद्धिदम् ॥

तथा ।

दक्षिणे कालिके स्वाहा मनुरष्टाक्षरः परः ।

न्यासः प्राग्वक्ष्यानमन्नशवरूपशिवस्थिताम् ॥

महाकालरतासक्तां शिवाभिर्दिक्षु वेष्टिताम् ।

तथा ।

पुरश्चर्यादिकं प्राग्वत् प्रयोगानाचरेत् तथा ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि शक्रवर्णमनूत्तमम् ॥

क्रीँ हूँ ह्रीँ दक्षिणे कालिके क्रीँ हूँ ह्रीँ दहनप्रिया ।

यजनं पूर्ववत् प्रोक्तं न्यासध्यानजपादिकम् ॥

विशेषान्नसुरादीनामयमाकर्षणक्षमः ।

हूँ हूँ त्रिः क्रीँ दिश्व लज्जां दक्षिणे कालिके पुनः ॥

हूँ हूँ त्रिः क्रीँ दिश्व लज्जां स्वाहेत्याकृतिवर्णवान् ।

न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषेण वशीकृतिः ॥

जपादेतस्य भवति सर्वमन्यत् तु पूर्वतत् ।

क्रीँ क्रीँ क्रीँ हूँ समुच्चार्य हूँ लज्जाद्वयमुच्चरेत् ॥

दक्षिणे कालिके स्वाहा तिथिवर्णः प्रकीर्तितः ।

मन्त्रराजोऽयमाख्यातः पूर्ववत् स्यादुपासना ॥

विशेषाद्दतराज्यानामयं राज्यप्रदो भवेत् ।

अथैतद्गायत्र्याः पुरश्चरणमुक्तं (सिद्धान्तसंग्रहे)

एवं ध्यात्वा महाकलीं जपेत्तुष्टयम् ।

रक्ताक्तैर्विल्वपत्रैश्च तदशांशेन होमयेत्—इति ॥

अथ महाकालमन्त्रः (शक्तिसङ्ग्रहे)

श्रीशिव उवाच ।

महाकालं समारभ्य नित्यानां निर्णयं शृणु ।

महाकालो महाभीमः प्रलयानलसन्निभः ॥

कालीमायासमुद्भूतः कालीमानसिकः शिवः ।

महाकालः परः शम्भुः परातीतगुणाकरः ॥

तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि येन रक्षेज्जगन्नयम् ।
 कूर्चयुग्मं महाकाल प्रसीदेति पदद्वयम् ॥
 लज्जायुग्मं वह्निजायासंयुक्तः षोडशार्णकः ।
 षोडशार्णा यथा मुख्याः सर्वश्रीचक्रमण्डले ॥
 तथाऽयं सर्वकालीषु महाकालः प्रकीर्तितः ।
 कालिकाऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्दः प्रकीर्तितम् ॥
 देवता तु महाकालः सर्वरूपी निरञ्जनः ।
 कूर्चबीजं तथा माया शक्तिरस्य प्रकीर्तिता ॥
 स्वाहाकीलकमुद्दिष्टं काल्यर्थे विनियोगता ।
 मायया तु षडङ्गानि ध्यानं शृणु वरानने ॥

अथ ध्यानम् ।

कोटिकालानलाभासं चतुर्बाहुं त्रिलोचनम् ।
 श्मशानाष्टकमध्यस्थं मुण्डाष्टकविभूषितम् ॥
 पञ्चप्रेतस्थितं देवं त्रिशूलं डमरुं तथा ।
 खड्गं च खर्परं चैव वामदक्षिणयोगतः ॥
 विभ्रतं सुन्दरं देहं श्मशानभस्मभूषितम् ।
 नानाशवैः क्रीडमानं कालिकां हृदयस्थिताम् ॥
 लालयन्तं रतासक्तं घोरचुम्बनतत्परम् ।
 गृध्रगोमायुसंयुक्तं फेरवीगणसंयुतम् ॥
 जटापटलशोभाढ्यं सर्वशून्यालये स्थितम् ।
 सर्वशून्यं मुण्डभूषं प्रसन्नवदनं शिवम् ॥

भावयेदिति शेषः ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं पूजां विधायाथ लक्षसङ्ख्यं जपेच्छिवे ।

तदशांशेन हवनं करवीरप्रसूनकैः ॥

स्वयम्भूवाऽऽक्तैर्बोजाक्तैः कारणाक्तैश्च वा हुनेत् ।

नित्यं नैमित्तिकं काम्यं कालोवत् सर्वमाचरेत् ॥

अथ महाकालीमन्त्रो (मेरुतत्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि महाकालीमहामन्त्रम् ।

ॐ क्षेँ क्षेँ क्रैँ ततः क्रैँ च पशुं गृहाण चोच्चरेत् ॥

हुँ फट् स्वाहा शक्रवर्णः सिद्धमन्त्र उदाहृतः ।

नास्य मुन्यादिकं न्यासः सिद्धमन्त्रस्य विद्यते ॥

कृष्णतोयेन संपूर्णे घटे चाहूय कालिकाम् ।

ब्राह्म्यादिभिश्च दूतीभिर्युक्तां संपूज्य भक्तितः ॥

अष्टमीं चण्डिकां त्वत्र देवीं ध्यायेद्गृहे पुनः ।

ध्यानं यथा ।

पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ।

शक्तिशूलधनुर्बाणखेटखड्गवराभयान् ॥

दक्षादक्षभुजैर्देवीं बिभ्राणां भोगिभूषणाम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलभ्रं जपेन्मन्त्रं वामाचारेण साधकः ।

पितृमर्दस्य समिधो घृताक्ता जुहुयात् ततः ॥

रज्ज्वा प्रज्वलिते वह्नौ तर्पणादि ततश्चरेत् ।

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री मारयेदचिराद्रिपून् ॥

अथ भद्रकालीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भद्रकाल्याः परं मन्त्रम् ।

हौँ कालीति महाकाली द्विः किणिः फड्वसुप्रिया ॥

चतुर्दशाक्षरो मन्त्रो भद्रकाल्या उदाहृतः ।

पदैः षड्विंशतिः षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

ध्यातव्येयं सदा देवी भद्रकाली भयावहा ।
 क्षुक्षामा कोटराक्षी च नाहं तृप्तेति वादिनि ॥
 मसीमुखी मुक्तकेशी जगद्ग्रसनलालसा ।
 जम्बूफलाभदशना लोलजिह्वा भयङ्करी ॥
 शूलं कपालं च शृणिं ज्वलत्पाशं च बिभ्रती ।
 अशेषं कालिकातन्त्रे यत् प्रोक्तं तदिहापि च ॥
 जपन्यासप्रयोगार्थं यो विशेषः स उच्यते ।
 आराध्य प्रजपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥
 रिष्टमाला विधातव्या जपार्थं सिद्धिमिच्छता ।
 इयं देवी महादेवी शत्रुनिग्रहकारिणी ॥
 यथेष्टचेष्टया चिन्त्या धर्मकामार्थसिद्धिदा ।
 अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भद्रकाल्याः सुगोपितम् ॥
 गृध्रकर्णं विरूपाक्षि लम्बस्तनि महोदरि ।
 उत्पादयोत्पादयेति द्विधोपरि पदं भवेत् ॥
 द्विधा वेत्ति पदं हुँफट् स्वाहा सप्तान्निवर्णकः ।
 पिप्पलादो मुनिः प्रोक्तो निवृच्छन्द उदाहृतम् ॥
 भद्रकाली देवता स्याद्द्विद्विरूपादय हृत स्मृतम् ।
 उपरिभ्यां शिरः प्रोक्तं वेत्तिभ्यां तु शिखा स्मृता ॥
 हुँफट्भ्यां कवचं प्रोक्तं स्वाहयाऽस्त्रमुदीरितम् ।

अथ ध्यानम् ।

अतिरौद्रा महादंष्ट्रा भृशं दीर्घा कृशोदरी ।
 सुवृत्तनयना शूरा दीर्घघोणा मदातुरा ॥
 स्निग्धगम्भीरनिर्घोषा नीलजीमूतसन्निभा ।

भृगुद्यधटसंदीप्ता महारदनभीषणा ॥
 दंष्ट्रोष्ठकोपताम्राक्षी रक्तदीर्घशिरोरुहा ।
 त्रिशूलव्यग्रदोर्दण्डा नरकीटपलाशिनी ॥
 अतिरक्ताम्बरा देवी रक्तमांसासवप्रिया ।
 शिरोमाला भूषिताङ्गी पिवन्ती शोणितासवम् ॥
 नृत्यन्ती च हसन्ती च पिशाचगणसेविता ।
 पिशाचस्कन्धमारूढा भ्रमन्ती वसुधातलम् ॥
 शङ्करस्य मुखोत्पन्ना योगिनी योगवल्लभा ।
 इत्थम्भूता भद्रकाली मातृभिः परिवारिता ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

ध्यात्वा सम्यक् समाराध्य ततो मन्त्रं जपेद्बुधः ।
 अयुतं मन्त्रसिद्ध्यर्थं मातृकान्यासतत्परः ॥
 घृतहोमस्तथा कार्यस्तर्पणादि समाचरेत् ।
 धूमावत्यां च यत् प्रोक्तमनयाऽपि तदाचरेत् ॥

अथ सिद्धिकालीमन्त्रः (कालीतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये महादेवि सिद्धविद्यां महोदयाम् ।
 ईश्वरेण पुरा प्रोक्तां देवीं हृदीशसंज्ञिताम् ॥
 प्रणवं पूर्वमुच्चार्य हृल्लेखाबीजमुद्धरेत् ।
 रतिबीजं समुद्धृत्य पपञ्चमभगान्वितम् ॥
 ठद्वयेन समायुक्तं विद्या राज्ञी प्रकीर्तिता ।
 भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥
 सिद्धिकाली ब्रह्मरूपा देवता भुवनेश्वरी ।
 रतिबीजं बीजमस्या हृल्लेखा शक्तिरुच्यते ॥
 हृल्लेखया षड्दीर्घेण प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

अङ्गषट्कं ततो न्यस्य ध्यात्वा देवीं शिवो भवेत् ॥

ध्यानं यथा ।

खड्गोद्भिन्नेन्दुविम्बस्त्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा

सव्ये पाणौ कपालाद्गलदमृतमयं मुक्तकेशी पिवन्ती ।

दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमयमुकुटाद्यैर्युता दीप्तजिह्वा

पायान्नीलोत्पलाभा रविशशिविलसत्कुण्डलालीढपादा ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्दिशतिसाहस्रं सहस्रैरेव संयुतैः ।

होमयेत् तदशांशेन मृदुपुष्पेण मन्त्रवित् ॥

अथ श्मशानकालीमन्त्रः (स्वतन्त्रतन्त्रे)

श्मशानकालिकामन्त्रं शृणुष्वावहिता शिवे ।

वाणौ मायां ततो लक्ष्मीं कामबीजं ततः परम् ॥

कालिके संपुटत्वेन चतुष्कं बीजमालिखेत् ।

एकादशाणां देवेशि चतुर्वर्गफलप्रदा ॥

ऋषिर्भृगुर्निवृच्छन्दो देवता कालिका परा ।

श्मशानाद्या च वाङ्माया बीजं शक्तिर्महेश्वरि ॥

कीलकं कामबीजं तम्— इति ।

चतुश्चतुस्त्रिचतुस्तु विद्यामन्त्रैः षडङ्ककम् ॥

विन्यस्य ध्यानं कुर्वीत कालिकायां समाहितः ।

अञ्जनाद्रिनिभां देवीं श्मशानालयवासिनीम् ॥

त्रिनेत्रां मुक्तकेशीं च शुष्कमांसातिभीषणाम् ।

पिङ्गाक्षीं वामहस्तेन मद्यपूर्णं कपालकम् ॥

सद्यः कृत्तशिरो दक्षहस्तेन दधतीं शिवाम् ।

स्मितवक्त्रां सदा वाममांसतर्पणतत्पराम् ॥

नानालङ्कारभूषाङ्गीं नग्नां मत्तां सदा शर्वैः ।

इदानीं ते सुगमेन कथयामि द्विजर्षभ ॥
 श्रुतिपूर्वं बीजमुक्त्वा अङ्गुष्ठाभ्यां पदं ततः ।
 शेषे दण्डः समाख्यातः पुनर्बीजद्वयं वदेत् ॥
 तर्जनीभ्यां यदा तत्र दण्ड इत्यभिधीयते ।
 पुनर्बीजद्वयं यत्र भ्यामन्ता मध्यमा ततः ॥
 दण्डः शेषे च विज्ञेयः पुनस्तद्बीजमेव च ।
 अनामिका भ्यामन्ता च ततो दण्डः प्रकीर्तितः ॥
 बीजद्वयात् कनिष्ठाभ्यां पदाद्दण्डबीजं स्मृतम् ।
 बीजद्वयं करतलपृष्ठाभ्यां दण्ड इत्यपि ॥
 इति करन्यासं कृत्वा अङ्गन्यासं चरेत् सुधीः ।
 क्रमेणानेन वै ब्रह्मन् संभवन्यासमाचरेत् ॥
 श्रुतिचव्यौ समाभाष्य हृदयाय पदं ततः ।
 दण्डस्तदनु विप्रर्षे बीजद्वयं तथा परम् ॥
 शिरसे पदतश्चैव दोग्ध्रीबीजं स्मृतं तदा ।
 तद्बीजद्वयमुच्चार्य शिखायै पदमेव च ॥
 इन्द्रबीजं समाख्यातं पुनर्बीजद्वयं वदेत् ।
 कवचाय पदाच्चैव दोग्ध्रीबीजं हि नारद ॥
 बीजे तथा समुच्चार्य नेत्रत्रयाय वौषडिति ।
 षडङ्गन्यासमित्युक्तमर्चयां कायशोधनम् ॥

अथ ध्यानम् ।

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि तन्निबोध अजात्मज ।
 श्वेतां श्वेतशवारूढां नृमुण्डकृतकुण्डलाम् ॥
 पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ।
 व्याघ्रचर्मवृतकटीं शुष्कावयवभूषिताम् ॥

आबद्धयोगपट्टां च नरास्थिकृतभूषणाम् ।
 हस्तैः षोडशभिर्दीप्तां विस्त्रस्तघनकुन्तलाम् ॥
 खड्गं बाणं तथा शूलं चक्रं शक्तिं गदामपि ।
 जपमालां कर्तृकां च बिभ्रतीं दक्षिणैर्भुजैः ॥
 फलकं कार्मुकं नागपाशं परशुमेव च ।
 डमरुं फेरुपोतं च नरमुण्डकपालकम् ॥
 उद्धहन्तीं करैर्वामैर्दीघसर्वाङ्गभूषणाम् ।
 एतं ज्ञानं नवाक्षर्याः । षोडशार्णविद्यायास्तु ध्यानान्तरमुक्तं तत्रैव ।
 महातेजोमयी लक्ष्मी रश्मिकोट्ययुतप्रभा ।
 पञ्चवक्त्रा दशभुजा त्रिपञ्चनयनैर्युता ॥
 श्वेतवर्णनिभा देवी महाप्रेतोपरिस्थिता ।
 मातृकाष्टकमध्यस्था सिद्धियोगनिषेविता ॥
 दारितास्या लेलिहाना ज्वालालुप्तजगत्रयी ।
 उच्छ्रासोच्छ्वासवेगेन चालयन् कुलपर्वतान् ॥
 क चिद्देशे क चित् कूटे क चित् संहरते क्षणात् ।
 क चित् सृजेत् पालयेच्च स्वतन्त्राद्वा प्रवर्तते ॥
 गोनासाभरणैर्युक्ता उरगेन्द्रविभूषिता ।
 पाशाङ्कुशधरा देवी वराभयकराम्बुजा ॥
 सव्यहस्ते धृतं खड्गं त्रैलोक्यक्षोभकारकम् ।
 वामे खट्वाङ्गमत्युग्रं दक्षिणे शूलमुत्तमम् ॥
 वामे तु कलशं दिव्यं महारत्नप्रपरितम् ।
 एषा प्रत्यङ्गिरा देवी उन्मत्ता व्योमदेहजा ॥
 एकात्मा नैकभेदेन विश्वं व्याप्य व्यवस्थिता ।
 प्रत्यङ्गिरा महादेवी सिद्धिलक्ष्मीर्जयप्रदा ॥

(पद्धतैः)

खट्वाङ्गाङ्कुशपशूलवरकृदभीत्राणपात्रं शिरः

कुम्भासिज्ज्वलितोद्भटैर्भुजवरैराभासमानां शिवाम् ।

रुद्रस्कन्धगतां शरच्छशिनिभां पञ्चाननां सुन्दरीं

पञ्चत्र्यक्षविराजितां भगवतीं श्रीसिद्धिलक्ष्मीं भजे ॥

उक्तयोः श्रीसिद्धिलक्ष्मीमन्त्रयोः पुरश्चरणं तु वक्ष्यमाण—(महाकालसंहितो—) कर्गु-
ह्यापुरश्चरणवज्ज्येयम् ।

तदुक्तं (कालानलतन्त्रे)

यथा कामकला काली गुह्यकाली यथा द्विज ।

यथा छिन्ना यथा तारा वज्रकापालिनी यथा ॥

सिद्धिलक्ष्मीस्तथा देवी विशेषो नास्ति कश्चन ।

एकैव पूजा विज्ञेया प्रयोगाश्च तथा द्विज ॥

अत्रानुक्तं हि यत् किञ्चित् संहितायां च तद्विदुः ।

ग्रन्थगौरवभीत्या च नोक्तमन्यत् त्वयि द्विज ॥

संक्षेपेण सिद्धिलक्ष्म्यास्त्वयि सर्वं प्रकीर्तितम् ।

विस्तृतं च महाकालसंहितायां द्विजोत्तम ॥

जपः पुरश्चरणं च आचारश्चापि नारद ।

महाकालसंहितायां कामकलाभ्यासे प्रकीर्तितः ॥

तेनैव वर्त्मना विप्र सिद्धिलक्ष्म्याऽखिलं* विदुः ।

पौनस्वत्यभयेनात्र निगदामि न नारद ॥

अथ गुह्यकालीमन्त्रः (महाकालसंहितायाम्)

गुह्यकाल्यास्तु मन्त्राणामष्टादश भिदाः प्रिये ।

सर्वागमेषु गोप्यास्ते न प्रकाश्याः कदा चन ॥

मन्त्राणां भेदतो ध्यानभेदाः स्युर्विविधास्तथा ।

* सिद्धिलक्ष्म्याः— अखिलमिति सन्धिस्तान्त्रिकः ।

यत्रभेदा अपि तथा वाहनानां भिदास्तथा ॥
 यो मन्त्रो येन चाभ्यस्तस्तत्राम्नायः प्रकीर्तितः ।
 ब्रह्मणा च वशिष्ठेन रामेण च तथा प्रिये ॥
 हिरण्याक्षानुजेनापि कुबेरेण यमेन च ।
 भरतेन दशास्येन वलिना वासवेन च ॥
 विष्णुनाऽन्यैश्च देवैश्च दैत्येन्द्रैर्विविधैरपि ।
 उपासिता सिद्धिहेतोर्लब्ध्वा सिद्धिश्च भूयसी ॥
 शतवक्त्राऽशीतिवक्त्रा षष्टिवक्त्रा तथैव च ।
 षट्त्रिंशदानना विंशदानना परिकीर्तिता ॥
 तथा विंशतिवक्त्रा च दशवक्त्रा च कालिका ।
 पञ्चवक्त्रा त्रिवक्त्रा च द्विवक्त्रा चैकवक्त्रिका ॥
 या गुह्यकाली तन्मध्ये भरतोपासिता प्रिये ।
 दशवक्त्रा षोडशाणां चतुष्पञ्चाशदोर्युता ॥
 सर्वासां गुह्यकालीनां सा वै मुख्यतमा स्मृता ।
 तामेवादौ व्याहरामि व्याहरिष्ये ततः पराः ॥
 षोडशाक्षरको मन्त्रः कीलितश्चाप्यकीलितः ।
 तत्रादौ कीलितं वच्मि ततो वक्ष्याम्यकीलितम् ॥
 कीलकाकीलकध्यानमेकमेव हि पार्वति ।

मन्त्रोद्धारमाह ।

आदौ वेदादिमुद्धृत्य ततः पस्य द्वितीयकम् ।
 एकारयुक्तं तदधो रेफं विन्दुं च योजयेत् ॥
 सिद्धिशब्दं ततः प्रोच्य करालिं च विनिर्दिशेत् ।
 लज्जां क्रोधमनुस्मृत्य कक्रोणिं वाममुद्धरेत् ॥
 वामद्विन्दुधोवह्नियुक्तं कुर्यात् ततश्च तम् ।

वधूबीजं पुनर्मन्त्रद्वितीयं बीजमुद्धरेत् ॥
हन्मन्त्रो वह्निजाया च मन्त्रोऽयं षोडशाक्षरः ।

प्रकारान्तरमाह ।

अथ वा कामिनीबीजात् पूर्वं क्रोधमनुस्मरेत् ।
इयं हि भरतोपास्या कीलिताऽपि च शापतः ॥

भरतोपासिता षोडशाक्षरी द्विविधा । तत्राद्या कीलिता द्वितीया त्वकीलितेत्यर्थः ।
सप्तदशाक्षरीमाह ।

रामोपास्यामतो वक्ष्येऽक्षरसप्तदशान्विताम् ।
साऽऽपि हारीतमुनिना कीलिता तपसो बलात् ॥
आदौ तस्यैव मन्त्रस्य चतुरोऽर्णान् समुद्धरेत् ।
द्वितीयबीजोपरि च हसखं विनियोजयेत् ॥
एवं तु पञ्चमं बीजं षष्ठं खेन च वर्जितम् ।
सप्तमं हसहीनं च करालि तदनन्तरम् ॥
त्रयोदशैकादशके स्थाने सप्तममक्षरम् ।
पञ्चमं द्वादशस्थाने द्वितीयं च चतुर्दशे ॥
आद्यं पञ्चदशे कुर्याद्वह्निजयान्तगो मनुः ।
हारीतोपासिता ह्येषा च्यवनोपासितां शृणु ॥
षष्ठपञ्चमयोरस्य व्यत्ययः समुदीरितः ।
एतावतैव भवति च्यावनी सुमहाफला ॥

अत्रापि रामोपासिता सप्तदशाक्षरी द्विविधा हारीतोपासिता च्यवनोपासिता चेति । तयोर्मध्ये हारीतोपासितैव कीलिता च्यवनोपासिता तु न कीलितेति बोध्यम् ।

ऋष्यादिकमाह ।

षोडशाक्षरयोर्मन्त्रभेदयोरधुना ब्रुवे ।
ऋष्यादिकं ततः सप्तदश्याश्च कथयामि ते ॥
अथर्वा ऋषिरुद्दिष्टो जगती छन्द उच्यते ।

देवता गुह्यकाली च द्वितीयाणं तु कीलकम् ॥
 शक्तिस्तु दशमं बीजं द्वितीये नवमं भवेत् ।
 पुरुषार्थचतुष्कस्य सिद्धये कामनास्थितिः ॥
 सप्तदश्यास्तु मन्त्रस्य परमैष्टी ऋषिर्मतः ।
 छन्दश्च सप्रतिष्ठाख्यं देवता गुह्यकालिका ॥
 पञ्चमाणं कीलकं स्यात् सप्तमं शक्तिरुच्यते ।
 तदेव विपरीतं हि च्यावनीसमुदीरितम् ॥
 प्रयोगः सर्वसिद्ध्यर्थं जपे प्रोच्चारितो भवेत् ।
 अन्येषां मन्त्रभेदानां यदुद्धारं वदामि ते ॥
 तदा ऋष्यादिकं तेषां कथयिष्यामि पार्वति ।

अथ षडङ्गन्यासस्तत्रैव ।

द्वे पञ्च त्रीणि च द्वे च द्वे पुनर्द्वे पुनस्तथा ।
 वर्णाक्षराणां भारत्यास्तत्तत्स्थाने प्रविन्यसेत् ॥
 तावन्तोऽर्णाः सप्रणवास्तत्र तत्र स्थले न्यसेत् ।
 यादृशी च्यावनी मन्त्रवर्णावल्यानुतिष्ठति ॥
 तारयोर्मध्यवर्तीनि देवीवर्णानि तानि हि ।
 न्यस्येत् स्थानेषु तेष्वेव हारीतोपसिते मनौ ।

ध्यानमाह ।

भरतोपासिता या च रामोपास्या च या स्मृता ।
 ध्यानं तयोरेकमेव कथ्यमानं मया शृणु ॥
 ध्यायेद्देवीप्रभावोत्थप्रोच्छलद्रक्तवारिधिम ।
 उचुङ्गोचुङ्गकल्लोलप्रपरितदिगन्तरम् ॥
 तत्र द्वीपं रक्तमांसपूरितं रक्तवालुकम् ।
 नवकोटिकच्चामुण्डाकोटिभैरववर्णितम् ॥

तन्मध्ये मण्डलं ध्यायेद्योजनायुतविस्तृतम् ।
 भैरवीकोटिघटितं प्राकारं तत्र चिन्तयेत् ॥
 एकं श्मशानं तन्मध्ये शतयोजनविस्तृतम् ।
 चिन्तयेत् प्रोच्छलद्द्विज्वालाव्याप्तर्धमण्डलम् ॥
 योगिनीकोटिविहितकरतालिकचेष्टितम् ।
 नारात्रनन्दमुण्डस्वकृत्ततोरणमालिकम् ॥
 तदन्तःस्थापिनीं कालीं ध्यायेन्निश्चलमानसः ।
 रत्नसिंहासनं दिव्यं हीरमुक्तादिनिर्मितम् ॥
 धारयन्तं चतुष्कोणे युगं वेदं विचिन्तयेत् ।
 सत्ययुगं च ऋग्वेदं शुक्लवर्णं च पूर्वगम् ॥
 त्रेतायुगं यजुर्वेदं पीतवर्णं च दक्षगम् ।
 द्वापरं सामवेदं च रक्तं पश्चिमदिग्गतम् ॥
 अथर्ववेदं च कलिं श्याममुत्तरदिग्गतम् ।
 उपवेदस्य शुभ्रस्य मूर्ध्नि सिंहासनं स्थितम् ॥
 तस्य सिंहासनस्योर्ध्वमन्यत् सिंहासनं महत् ।
 स्वस्वास्त्रवाहनयुतैर्दिगष्टपतिभिर्वृतम् ॥
 देव्याः सिंहासनधराँस्ताँश्च ध्यायेदतन्द्रितः ।
 स्वां स्वां दिशमवष्टभ्य स्थितान् परमशोभितान् ॥
 इन्द्रं पीतं सवज्रं च स्थितमैरावतोपरि ।
 पावकं रक्तवर्णं च छागस्थं शक्तिपाणिकम् ॥
 यमं कृष्णं कासरस्थं दण्डहस्तं भयानकम् ।
 निर्ऋतिं धूम्रवर्णं च खड्गहस्तं तुरङ्गगम् ॥
 वरुणं पाशहस्तं च शुभ्रं मकरवाहनम् ।
 श्यामं वायुं ध्वजधरं हरिणोपरि संस्थितम् ॥

गदाधरं कुबेरं च कुङ्कुमाभं नरे स्थितम् ।
 ईशानं शुभ्रवर्णं च शूलहस्तं वृषे स्थितम् ॥
 सिंहासनं तृतीयं च पञ्चप्रेतैर्धृतं प्रिये ।
 ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ॥
 एते पञ्चमहाप्रेताः स्थिताः सिंहासनादधः ।
 पीतः श्यामस्तथा रक्तो धूम्रः श्वेतः क्रमादिमे ॥
 दण्डं चक्रं च शक्तिं च शूलं खट्वाङ्गमेव च ।
 धारयन्तो मुखे न्यस्ततर्जनीकास्त्रिलोचनाः ॥
 केशरिद्विपकोलाश्च फेत्काररवभीषणाः ।
 ऊर्ध्वं पीठं ततो ध्यायेद्भैरवाख्यं भयानकम् ॥
 खर्वं स्थूलतरं घोरं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम् ।
 पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं च कीकशाभरणान्वितम् ॥
 खट्वाङ्गं कर्तृकां दक्षे कपालं डमरुं तथा ।
 धारयन्तं मुण्डमालायुतं दंष्ट्राग्रभीषणम् ॥
 तदूर्ध्वं षोडशदलं पद्मं यज्ञोपकल्पितम् ।
 ज्योतिष्टोमोऽग्निष्टोमो वाजपेयश्च षोडशी ॥
 चयनं पुण्डरीकं च राजसयोऽश्वमेधकः ।
 बार्हस्पत्यं विश्वजिच्च गोमेधो नरमेधकः ॥
 सौत्रामण्यर्धसावित्री सूर्यकान्तोऽचलम्भिदः ।
 एतादृशैः षोडशभिर्दलैः पद्मं प्रकल्पितम् ॥
 तस्योपरि ततो ध्यायेच्छिवासनमनुत्तमम् ।
 विन्दुनादयुतं नीलं शशाङ्गकृतलाञ्छनम् ॥
 महार्घरत्नाभरणं त्रिनेत्रं भीमदर्शनम् ।
 वज्रवर्णं शस्त्रस्पर्शं पद्मपृष्ठं शिवोत्तमम् ॥

पिङ्गोद्यैकजटाभारं द्विभुजं नागहारिणम् ।
 वसानं चर्म वैयाघ्रं शूलखट्वाङ्गधारिणम् ॥
 अष्टपत्राम्बुजं तस्योपरिष्ठान्नवमासनम् ।
 धर्मो ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च चतुर्दिशि ॥
 यशो विवेकः कामश्च मोक्षश्चेति विदिग्दिशि ।
 एवमष्टदलाभोजोपविष्टां गुह्यकालिकाम् ॥
 ध्यायेन्नीलोत्पलश्यामामिन्द्रनीलसमद्युतिम् ।
 घनाघनतनुद्योतां स्निग्धदूर्वादलद्युतिम् ॥
 ज्ञानरश्मिच्छटाटोपज्योतिर्मण्डलमध्यगाम् ।
 दशवक्त्रां गुह्यकालीं सप्तविंशतिलोचनाम् ॥
 द्विद्विनेत्रयुतां वक्त्रे वामदक्षिणसंमुखे ।
 सप्तस्वन्येषु वक्त्रेषु त्रित्रिलोचनसंयुताम् ॥
 ऊर्ध्ववक्त्रं द्वीपकाख्यं चण्डयोगेश्वरीति हि ।
 तस्याधः केशरिमुखं श्वेतवर्णं विभीषणम् ॥
 तस्याधः फेरुवक्त्रं च कृष्णं त्रैलोक्यडामरम् ।
 वानरास्यं ततो वामे रक्तवर्णं महोज्ज्वलम् ॥
 नरास्यं तदधो जेयं किमीराभं महोत्कटम् ।
 ऋक्षवक्त्रं भवेदक्षे धूम्रवर्णं भयानकम् ॥
 गारुडास्यं ततो वामे पिङ्गवर्णं सुचञ्चुकम् ।
 दक्षिणे मकरास्यं च हरिताभं प्रकीर्तितम् ॥
 गजास्यं वामतः प्रोक्तं गौरवक्त्रं स्रवन्मदम् ।
 हयास्यं दक्षिणे काल्याः श्यामवर्णं विचिन्तियेत् ॥
 महादंष्ट्राकरालानि दारुणस्वनवन्ति च ।
 अट्टाट्टहासयुक्तानि स्रवद्रक्तानि सर्वदा ॥

लेलिहानविनिष्क्रान्तललज्जिह्वान्वितानि च ।
 अहर्निशं कम्पमानान्यास्यानि दधतीं शिवाम् ॥
 भीमनिर्हादिनीं भीमां भ्रूभङ्गकुटिलाननाम् ।
 पिङ्गलोर्ध्वजटाजूटां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥
 नानारत्नविनिर्माणसमुण्डस्वर्णभूषणाम् ।
 स्ववद्रक्तनृमुण्डास्वकृतनक्षत्रमालिकाम् ॥
 आकण्ठगुल्फलम्बिन्याऽलङ्कृतां मुण्डमालया ।
 श्वेतास्थिगुलिकाहारग्रैवेयकमहोज्ज्वलाम् ॥
 शवदीर्घाङ्गुलीपङ्क्तिमण्डितोरःस्थलस्थिराम् ।
 कठोरपिङ्गलोचुङ्गवक्षोजयुगलान्विताम् ॥
 महामारकतथाववेदिश्रोणिपरिष्कृताम् ।
 विशालजघनाभोगामतिक्षीणकटिस्थलाम् ॥
 अब्रनद्धार्भकशिरोवलत्किङ्किणिमण्डिताम् ।
 चतुष्पञ्चाशता दोष्णां भूषितां जगदम्बिकाम् ॥
 रत्नमालां कपालं च चर्म पाशं तथैव च ।
 शक्तिं खट्वाङ्गमुण्डं च भुशुण्डीं धनुरेव च ॥
 चक्रं घण्टां ततो बालप्रेतं शैलमतः परम् ।
 नरकं कालनकुलौ सर्पमुन्मादवंशिकाम् ॥
 मुद्गरं वह्निकुण्डं च डमरुं डिण्डिमं तथा ।
 भिन्दिपालं च मुशलं पाशं पट्टिशमेव च ॥
 शतघ्नीं च शिवापोतं वामहस्तेषु बिभ्रतीम् ।
 अथ दक्षभुजे रत्नमालां कर्त्रीमसिं तथा ॥
 तर्जनीमङ्गुशं दण्डं रत्नकुम्भं त्रिशूलकम् ।
 पञ्चपाशुपतान् बाणान् शोषकोन्मादमूर्च्छकान् ॥

संहारकान् मृत्युकरानेवं नामप्रधारिणः ।
 कुन्तं च पारिजातं च छुरिकां तोमरं तथा ॥
 पुष्पमालां डिण्डिमं च गृध्रं चैव कमण्डलुम् ।
 मांसखण्डं श्रुवं बीजपूरं श्रुचं तथैव च ॥
 परशुं च गदां यष्टीं मुष्टिं कुणपलालनम् ।
 धारयन्तीं महारौघीं जगत्संहारकारिणीम् ॥
 जवापुष्पाभनागेन्द्रकृतनूपरयुग्मकाम् ।
 पाटलोरगनिर्माणलसदङ्गदशोभिताम् ॥
 धूसराहिकृतस्फीतकटिसूत्रावलम्बिनीम् ।
 सुपाण्डुरभुजङ्गेन्द्रकृतताटङ्गशोभिताम् ॥
 श्वेतदर्वीकरानद्धजटामुकुटमण्डिताम् ।
 वैयाघ्रचर्मवसनां ह्रीपिचमोत्तरोयकाम् ॥
 किङ्किणीजालशोभाढ्यां वोरघण्टानिवादिनीम् ।
 नूपुरारावललितां घर्घराशब्दभीषणाम् ॥
 कटकाङ्गदकेयूरनरास्थिकृतशोभनाम् ।
 रक्तपद्ममयीं मालां पादपद्मावलम्बिनीम् ॥
 काञ्चीकटारकप्रेङ्खत्कटिमध्यविराजिताम् ।
 ब्रह्मसूत्रोज्ज्वलकण्ठयोगपट्टोत्तरीयकाम् ॥
 सौम्योग्रभूषणैर्युक्तां नागाष्टकविराजिताम् ।
 रत्नकुण्डलकर्णश्रीपञ्चकालानलस्थिताम् ॥
 पद्मोपरिस्थितां देवीं नृत्यमानां सदोदिताम् ।
 पद्मासनसुखासीनां सर्वदेवाधिदेवताम् ॥
 मुक्तहुंकारजिह्वाग्रं चालयन्तीं विचिन्तयेत् ।
 त्रिकोटिशक्तिनामुण्डानवकोटिभिरन्विताम् ॥

महायोगिनीकोटोनामष्टादशभिरुज्जिताम् ।
 चरन्तीं च हसन्तीं च डाकिनीषष्टिकोटिभिः ॥
 भैरव्यशीतिकोटीभिः परिवारैश्च वेष्टिताम् ।
 कोटिकालानलज्वालान्यक्कारोद्यत्कलेवराम् ॥
 महाप्रलयकोट्यर्कविद्युद्वुद्धसन्निभाम् ।
 दुर्निरीक्षां महाभीमां सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥
 शत्रुपक्षक्षयकरीं देत्यदानवसूदिनीम् ।
 निर्विकारां निराभासां कटस्थां चिद्द्विलासिनीम् ॥
 अद्वैतां परमानन्दां नित्यां शुद्धां निरञ्जनाम् ।
 सृष्टिः स्थितिश्च संहारोऽनाख्या भासा पदाभिदाम् ॥
 वेदान्तवेद्यां कैवल्यरूपां निर्वाणकारिणीम् ।
 गुणातीतामात्मरूपप्रबोधातीतगोचराम् ॥
 एवं ध्येया महाकाली प्रोज्झन्ननवयौवना ।
 पञ्चवक्त्रस्य मध्यस्थां गुह्यकाली परेश्वरी ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

पर्वते वा नदीकूले शून्यागारे शिवालये ।
 पीठे चतुष्पथे कुर्यात् पुरश्चरणमुत्तमम् ॥
 नियमास्तत्र भूयांसः प्रकर्त्तव्याः प्रयत्नतः ।
 अवैधकरणात् सिद्धिहानिः स्यान्नात्र संशयः ॥
 त्रिकालमाचरेत् स्नानं हविष्यं भक्षयेन्निशि ।
 स्वमन्त्रं चाक्षसूत्रं च गुरोरपि न दर्शयेत् ॥
 लज्जेदुष्टप्रवादं च परीवादं च वर्जयेत् ।
 तथा दुर्जनसंसर्गान् स्त्रीशूद्रालापनं तथा ॥
 वस्त्रं कुशाशनं व्याघ्रचर्म चापि नृमण्डकम् ।

आसनं च महादेवि प्रशस्तश्चोत्तरामुखः ॥
 शुद्धस्फटिकरुद्राक्षनृमुण्डास्थिविनिर्मिताम् ।
 जपमालां शुभां विद्धि प्रशस्तामुत्तरोत्तराम् ॥
 अनेनोक्तविधानेन लक्षसङ्ख्यं जपेन्मनुम् ।
 होमं दशांशतः कुर्यात् तर्पणं चाभिषेचनम् ॥
 ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत् प्रिये ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

षोडशाणां महाविद्या देवानामपि दुर्लभा ।
 कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्महद्भिर्भक्तिनोदितैः ॥
 येन लब्धा कुलेशानि सद्गुरोर्मुखपङ्कजात् ।
 स धन्यः सर्वलोकेषु पूज्यस्त्रिभुवनौकसाम् ॥
 नातः परतरा विद्या त्रिषु लोकेषु विद्यते ।
 अतः सर्वप्रयत्नेन विद्येयं षोडशाक्षरी ॥
 जप्तव्या साधकश्रेष्ठैर्ध्यातव्या गुह्यकालिका ।
 येनेयं साधिता विद्या स एव स्यात् सदाशिवः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

दशवक्त्रा तु या प्रोक्ता गुह्यकाली मया तव ।
 प्रकृतिः सा परिज्ञेया कालीनां जगदम्बिका ॥
 अन्या विकृतयः प्रोक्ताः कार्यकारणभेदतः ।

तथा ।

सैव ज्ञेया वरारोहे निर्गुणब्रह्मरूपिणी ।
 जगत् सर्वं वशे तस्या वश्या कस्यापि सा न च ॥
 विश्वं सर्वं सृजति सा कोऽपि सृजति तां न हि ।
 सा पालयति संसारं तां पालयति कोऽपि न ॥

तां न संहरते कोऽपि सा सर्वं संहरत्यदः ।
 तदाज्ञयाऽनिलो वाति सूर्यस्तपति तद्भयात् ॥
 तद्भीत्याऽग्निः पचत्यन्नं मृत्युश्चरति तद्भयात् ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च सेन्द्राश्चैव दिवौकसः ।
 ऋषयश्च मरीच्याद्यास्तामेव समुपासते ॥

अथ कामकलाकालीमन्त्रः (महाकालसंहितायाम्)

श्रीदेव्युवाच ।

परात् पर परेशान शशाङ्ककृतशेखर ।
 योगादियोगिन् सर्वज्ञ सर्वभूतदयापर ॥
 त्वत्तः श्रुता मया मन्त्राः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः ।
 विधिवत् पूजनं चापि न्यासावरणकक्रमैः ॥
 तारा च छिन्नमस्ता च तथा त्रिपुरसुन्दरी ।
 बाला च वगला चापि त्रिपुरा भैरवी तथा ॥
 काली दक्षिणकाली च कुब्जिका विवरीश्वरी ।
 अघोरा राजमातङ्गी सिद्धिलक्ष्मीस्त्वरुन्धती ॥
 अश्वारूढा भोगवती नित्यक्लिन्ना च कुम्कुटी ।
 कौमारी चापि वाराही चामुण्डा चण्डिकाऽपि च ॥
 भुवनेशी तथोच्छिष्टचाण्डाली चण्डघण्टिका ।
 कालसंकर्षिणी चापि गुह्यकाली तथाऽपरा ॥
 एताश्चान्याश्च वै देव्यः समन्त्राः कथितास्त्वयाः ।
 किन्तु कामकलाकालीं नोक्तवानसि मे प्रभो ॥
 तत् किं मय्यपि गोप्यं ते प्रायशः परमेश्वर ।
 न हीदृशं त्रिलोकेषु तव किं चन विद्यते ॥

यदकथ्यं मयि भवेदपि प्राणाधिकाधिकम् ।
 तत् किं गोपयसि प्राज्ञ मयीदं दैवतं महत् ॥
 यद्यस्मि ते दयापात्रं मान्याऽस्मि स्नेहभाजनम् ।
 अनुग्राह्याऽस्मि कान्ताऽस्मि तदेमां वद साम्प्रतम् ॥
 देवीं कामकलाकालीं समन्त्रध्यानपूर्विकाम् ।

श्रीमहाकाल उवाच ।

धन्याऽस्यनुगृहीताऽसि तथा देव्यैव सर्वथा ।
 यत् ते बुद्धिः समुत्पन्ना तां देवीं प्रति भामिनि ॥
 विधाय शपथं देवि कथयामि तवाग्रतः ।
 न हीदृशं भुक्तिमुक्तिसाधनं भुवि विद्यते ॥
 यथार्थमात्थ देवि त्वं गोप्यत्वं चापि सर्वथा ।
 किन्तु भक्तिविशेषात् ते कथयामि न संशयः ॥
 राज्यं दद्याद्धनं दद्यात् स्त्रियं दद्याच्छिरस्तथा ।
 न तु कामकलाकालीं दद्यात् कस्यापि न क्वचित् ॥
 इन्द्रेणोपासिता पूर्वं देवराज्यमभीप्सिता ।
 वरुणेन कुबेरेण ब्रह्मणा च मया तथा ॥
 रामेण रावणेनापि यमेनापि विवस्वता ।
 चन्द्रेण विष्णुना चापि तथाऽन्यैश्च महर्षिभिः ॥
 सहेलं वा सलीलं वा यस्याः स्मरणमात्रतः ।
 विद्यालक्ष्मीः राज्यलक्ष्मीः कीर्तिलक्ष्मीर्वशे स्थिता ॥
 विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् ।
 राज्यार्थी लभते राज्यं कान्तार्थी कामिनीं शुभाम् ॥
 यशोऽर्थी कीर्त्तिमाप्नोति मुक्त्यर्थी मुक्तिमाप्नुयात् ।
 अपिमाद्यष्टसिद्ध्यर्थी सिद्ध्यष्टकमवाप्नुयात् ॥

तथा ।

द्विसप्ततितमं यावत् पुरुषाः पूर्वजाः स्थिताः ।
तेषां भाग्योदयैः पूर्णैर्विद्येयं यदि लभ्यते ॥
तदा सर्वस्वदानेन गृह्णीयादविचारयन् ।
कृतकृत्यं मन्यमानो गुरोः पादावभिस्पृशन् ॥

तथा ।

एकतः प्राणदानं स्यादेकतश्चैतद्दर्पणम् ।
तुलया विधृतं चेत् स्यादेतद्दानं विशिष्यते ॥

तथा ।

कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्लभ्यते वा न लभ्यते ।
शपथं कुरु देवेशि प्रकाश्येयं न कुत्र चित् ॥
सत्यं सत्यं त्रिसत्यं मे ततो वक्ष्यामि पार्वति ।
नो चेत् तेऽपि न वक्ष्यामि प्रमाणं तत्र सैव मे ॥

देव्युवाच ।

शपे त्वच्चरणाब्जाभ्यां हिमाद्रिं शिरसा शपे ।
शपे स्कन्दैकदन्ताभ्यां यद्येनामन्यतो ब्रुवे ॥
शपेऽथ वा तया देव्या यां मे त्वं कथयिष्यसि ।
प्रकाशयामि यद्येनां सैव मे विमुखी भवेत् ॥

महाकाल उवाच ।

साधु साधु महाभागे प्रतीतिर्मेऽधुना त्वयि ।
अकार्षीः शपथं यस्मात् तस्माद्वक्ष्याम्यसंशयम् ॥
समाहिता सावधाना भव देवि वरानने ।
विधेहि चित्तमेकाग्रं बद्ध्वाऽञ्जलिपुटं प्रिये ॥
कालीं कामकलापूर्वां शृणुष्वनावहिता मम ।

तथा ।

या गुह्यकाली सैवेयं काली कामकलाऽभिधा ।
 मन्त्रभेदाद्व्यानभेदान्नवेत् कामकलात्मिकां ॥
 यथा त्रिभेदा तारा स्यात् सुन्दरी सप्तसप्ततिः ।
 दक्षिणा पञ्चभेदा स्यात् तथेयं गुह्यकालिका ॥
 सप्तधा ध्यानमन्त्राभ्यां जायते भिन्नरूपिणी ।
 यथा पञ्चाक्षरो मन्त्रो देवी चैकजटा स्मृता ॥
 द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो देवी दक्षिणकालिका ।
 तथाऽन्येष्वपि देवेषु मुख्यासु बहुषु प्रिये ॥
 देवी कामकलाकाली मनुरष्टादशाक्षरः ।
 षोडशाणां यथा मुख्या सर्वश्रीचक्रमध्यगा ॥
 तथेयं नवकालीषु सदा मुख्यतमा स्मृता ।
 त्रैलोक्याकर्षणो नाम मन्त्रोऽस्याः परिकीर्तितः ॥
 तस्योद्धारं प्रवक्ष्यामि शृणु यत्नेन पार्वति ।
 श्रुत्वाऽवधारयस्वेमां सर्वकल्याणहेतवे ॥

मन्त्रोद्धारमाह ।

आद्यवर्गाद्यवर्णोऽक्षणा वामेन परिशीलितः ।
 मूर्ध्नि मूर्ध्ना यतृतीययुगधः परिकीर्तितः ॥
 विन्दुवामाक्षिसंयुक्तो वह्निः खपरमस्तकः ।
 वामश्रुत्यर्धचन्द्रेण तृतीयः सपरो भवेत् ॥
 दक्षस्कन्धोर्ध्वदन्ताभ्यां चाक्षरो विन्दुमस्तकः ।
 ओष्ठवर्गद्वितीयो हृपूर्वाधरोष्ठविन्दुयुक् ॥
 षडक्षराणि सम्बोध्य यथानामस्थितिक्रमात् ।
 प्रतिलोमेन चोद्धृत्य तानि बीजानि पञ्च वै ॥

भूतबीजाद्यमारभ्य मारबीजान्तमेव हि ।
 वैश्वानरवधूयुक्तो मन्त्रो ह्यष्टादशाक्षरः ॥
 अस्याः स्मरणमात्रेण यावन्त्यः सन्ति सिद्धयः ।
 स्वयमायान्ति पुरतो जपादीनां च का कथा ॥
 सप्त कामकलाकाल्या मनवः सन्ति गोपिताः ।
 तेषु सर्वेषु मन्त्रेषु मुख्योऽयं परिकीर्तितः ॥
 स्मरणादस्य मन्त्रस्य मूर्च्छिताः सर्वदेवताः ।
 स्तम्भिता वेपमानाश्च उत्तिष्ठन्त्यतिविह्वलाः ॥
 निदेशवर्त्तिनो भूत्वा वर्त्तन्ते चेटका इव ।
 किं बहूक्तेन देवेशि सत्यपूर्वं ब्रवीम्यहम् ॥
 सहस्रवदनेनापि लक्षकोट्याननेन वा ।
 महिमां वर्णितुं शक्यो नास्य वर्षायुतैर्मया ॥
 सामान्यतो विजानीहि यद्यदिच्छति साधकः ।
 तत् तत् करोति सकलं प्रजापतिरिवापरः ॥
 त्रैलोक्याकर्षको नाम मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ।

ऋष्यादिन्यः समाह ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि छन्दश्चर्षिं च बीजकम् ।
 अस्य कामकलाकालीमन्त्रस्याहमृषिर्मतः ॥
 छन्दश्च बृहतीख्यातं देवी चैयं प्रकीर्तिता ।
 आद्यबीजं तु बीजं स्यात् क्रोधानं शक्तिरेव च ॥
 विनियोगोऽस्य सर्वस्य सर्वदा सर्वसिद्धये ।
 षडङ्गं पञ्चबीजैस्तैर्नाम्नाऽप्येकं च कारयेत् ॥
 नामाक्षराणि प्रत्येकं तत्र देयानि पार्वति ।

अथ ध्यानम् ।

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि कुरु चित्तैकतानताम् ।
 उद्यद्धनाघनाश्लिष्यज्जपाकुसुमसन्निभाम् ॥
 मत्तकोकिलनेत्राभां पक्कजम्बूफलप्रभाम् ।
 सुदीर्घप्रबलालम्बिविस्त्रस्तघनमूर्धजाम् ॥
 ज्वलदङ्गारवच्छोणनेत्रत्रितयभूषिताम् ।
 उद्यच्छारदसंपूर्णचन्द्रकोकनदाननाम् ॥
 दीर्घदंष्ट्रायुगोदश्चद्विकरालमुखाम्बुजाम् ।
 वितस्तिमात्रनिष्क्रान्तललजिह्वाभयानकाम् ॥
 व्यात्ताननतया दृश्यद्वात्रिंशदन्तमण्डलाम् ।
 निरन्तरं वेपमानोत्तमाङ्गां घोररूपिणीम् ॥
 अंसासक्तनृमुण्डासृक्पिवन्तीं वक्त्रकन्दरात् ।
 सृक्कद्वन्द्वस्रवद्रक्तस्त्रापितोरोजयुग्मकाम् ॥
 उरोजाम्भोजसंसक्तसम्पतद्रुधिरोच्चयाम् ।
 सश्रीकृतिं धयन्तीं तल्लेलिहानरसज्ञया ॥
 ललाटे घननारासृग्विहितारुणचित्रकाम् ।
 सद्यश्छिन्नगलद्रक्तनृमुण्डकृतकुण्डलाम् ॥
 श्रुतिनद्धकचालम्बिवतंसलसदंसकाम् ।
 स्रवदस्त्रौघया शश्वन्मानव्या मुण्डमालया ॥
 आकण्ठगुल्फलम्बिन्याऽलङ्कृतां केशबद्धया ।
 श्वेतास्थिगुलिकाहारग्रैवेयकमहोज्ज्वलाम् ॥
 शवदीर्घाङ्गुलिपङ्क्तिमण्डितोरःस्थलस्थिराम् ।
 कठोरपीवरोत्तुङ्गवक्षोजयुगलान्विताम् ॥
 महामारकतयाववेदिश्रोणिपरिष्कृताम् ।

विशालजघनाभोगामतिक्षीणकटिस्थलाम् ॥
 अघ्ननद्धार्भकशिरोवलत्किङ्किणीमण्डिताम् ।
 सुपीनषोडशभुजां महाशङ्खाश्वदङ्गदाम् ॥
 शवानां धमनीपुञ्जैर्वेष्टितैः कृतकङ्कणाम् ।
 ग्रथितैः शवकेशैः स्वग्दामभिः कटिसूत्रिणीम् ॥
 शवपोतकरश्रेणीग्रथनैः कृतमेखलाम् ।
 शोभमानाङ्गुलीमांसमेदोमज्जाङ्गुलीयकैः ॥
 अंसिं त्रिशूलं चक्रं च शरमङ्गुशमेव च ।
 ललानं च तथा कर्त्रीमक्षमालां च दक्षिणे ॥
 पाशं च परशुं नागं चापं मुद्गरमेव च ।
 शिवापोतं खर्परं च वसासृज्ज्योदसाऽन्वितम् ॥
 लम्बत्कचं नृमुण्डं च धारयन्तीं स्ववामतः ।
 विलसन्नूपुरां देवीं ग्रथितैः शवपञ्जरैः ॥
 श्मशानप्रज्वलद्घोरचिताग्निज्वालमध्यगाम् ।
 अधोमुखमहादीर्घप्रसुप्तशवपृष्ठगाम् ॥
 वमन्मुखानलज्वालाजालव्याप्तदिगन्तराम् ।
 प्रोत्थायैव हि तिष्ठन्तीं प्रत्यालीढपदक्रमात् ॥
 वामदक्षिणसंस्थाभ्यां नदन्तीभ्यां मुहुर्मुहुः ।
 शिवाभ्यां घोररूपाभ्यां वमन्तीभ्यां महानलम् ॥
 विद्युदङ्गारवर्णाभ्यां वेष्टितां परमेश्वरीम् ।
 सर्वदेवानुलगाभ्यां पश्यन्तीभ्यां महेश्वरीम् ॥
 अतीव भीषमाणाभ्यां शिवाभ्यां शोभितां मुहुः ।
 कपालसंस्थं मस्तिष्कं ददतीं च तयोर्द्वयोः ॥
 दिगम्बरां मुक्तकेशीमदृष्टासमयानकाम् ।

सप्तधा बद्धनारात्रयोगपट्टविभूषिताम् ॥
 संहारभैरवेणैव सार्धं संभोगमिच्छतीम् ।
 अतिकामातुरां कालीं हसन्तीं खर्वविप्रहाम् ॥
 कोटिकालानलज्वालान्यक्कारोद्यत्कलेवराम् ।
 महाप्रलयकोट्यर्कविद्युदर्वुदसन्निभाम् ॥
 कल्पान्तकारिणीं कालीं महाभैरवरूपिणीम् ।
 महाभीमां दुर्निरीक्षां सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥
 शत्रुपक्षक्षयकरीं दैत्यदानवसूदनीम् ।
 चिन्तयेदोदृशीं देवीं कालीं कामकलाभिधाम् ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि पौरश्चरणिकं विधिम् ।
 एकस्मिन् पत्रविहिते सिद्धिस्तात्कालिकी भवेत् ॥
 भूमिशुद्धिर्द्रव्यशुद्धिः पूर्वैव कथिता मया ।
 यमाश्च नियमा ये स्युः पुरश्चरणकर्मणि ॥
 सर्वानेव प्रयुञ्जीत सततं भक्तितत्परः ।
 कृतनित्यक्रियः प्रातः कृतपूजाविधिः शुचिः ॥
 नरास्थि निखनेद्भमावस्त्रमन्त्रमुदीरयन् ।
 तारं क्रोधोऽनु ह्रीं पाशस्मरभूतान् समुद्धरेत् ॥
 सिद्धिमुच्चार्य देहीति युग्मं वह्मयङ्गनां वदेत् ।

भूतबीजं फोमिति ।

तथा ।

तदुपर्येव चास्तीर्य स्वासनं सुष्ठु कल्पितम् ।
 नृमुण्डमग्रतः कृत्वा नरास्थिजपमालाया ॥
 लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।

अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं तथैव च ॥
 दशांशं होमयेन्मन्त्री तर्पयेदभिषेचयेत् ।
 होमे सन्तर्पणे चैव पूजावत् कथितो विधिः ॥
 पूजायां वा प्रयोगे वा होमे वा तर्पणेऽथ वा ।
 गुह्यकालीविधानेन सर्वं कार्यं शुचिस्मिते ॥
 अत्रानुक्तं विधानं यत् तत्रत्यं तत् प्रकल्पयेत् ।
 तत्राप्यनुक्तं यत् किञ्चित् तत्रोक्तो दक्षिणाविधिः ॥

इति प्रथममहाविद्याप्रकरणम् ।

अथ द्वितीयविद्यायाः (फेत्कारिणीतन्त्रे)

कैलाशशिखरासीनं चन्द्रखण्डविराजितम् ।
 वक्षःस्थले समासीना पृच्छति स्म नगात्मजा ॥
 कथमीशान सार्वज्ञ मलभैस्ते तपोधनाः ।
 कां विद्यां प्राप्य कवयो भारतादि प्रचक्रिरे ॥
 श्रुत्वा नगात्मजावाक्यं विहस्य परमेश्वरः ।
 प्राह प्रियां परिष्वज्य साधु साध्विति पूजयन् ॥
 शृणु साध्वि महाविद्यामज्ञानेन्धनदाहिनीम् ।
 यामवाप्य महात्मानो धर्मकामार्थमुक्तिषु ॥
 नासाध्यं मेनिरे किञ्चित् कवयः शुद्धबुद्धयः ।
 वादे सदसि या वाचः स्तम्भिनी प्रतिवादिनाम् ॥
 विद्याहानिकरी देवि विदुषां वलिदानतः ।
 हास्याय या सदस्यानामशुद्धमपि जल्पयेत् ॥
 वादिनं चापि राजानं मन्त्रिणं वशमानयेत् ।
 जल्पयेद्वादिनमित्यन्वयः ।
 मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण जपान् सर्वज्ञतां नयेत् ॥

मन्त्रोद्धारणमाह ।

सपरं प्रथमं दत्त्वा चतुर्थस्वरभूषितम् ।
रेफारूढं स्फुरद्दीप्तमिन्दुविन्दुसमन्वितम् ॥
प्रकारं च ततो दद्याच्चतुर्थेनैव भूषितम् ।
दीर्घोकारसमायुक्तं हकारं योजयेत् ततः ॥
फट्कारं च ततो दद्यात् संपूर्णः सिद्धमन्त्रतः ।

सपरो हकारः । शेषं स्पष्टम् ।

(मत्स्यसूक्ते)

अथ वक्ष्ये महादेव्या मन्त्रोद्धारमनुत्तमम् ।
यच्च ज्ञात्वा नरो भाति वाचस्पतिरिवापरः ॥
मायाबीजं समुद्धृत्य तवर्गप्रथमं तथा ।
रतिविन्दुवह्नियुतं द्वितीयं बीजमुत्तमम् ॥
कूर्चबीजं तृतीयं तु फट्कारस्तदनन्तरम् ।
सम्पूर्णसिद्धमन्त्रस्तु रश्मिपञ्चकसंयुतः ॥

पञ्चरश्मिः प्रणवः ।

तदुक्तं (तारार्णवे)

अनन्तरं समुद्धृत्य मायोत्तरमनुं ततः ।
पपञ्चमः समायुक्तं पञ्चरश्मिः प्रकीर्तितः ॥

अनुत्तरमकारः । मायोत्तरमुकारः । पपञ्चमो मकारः ।

(तत्त्वबोधे)

तारं लज्जां ब्रकामेशो हुँ फडित्युग्रतारिका ।
माया त्रीँ हूँ मथास्त्रान्तमित्येकजटयाऽर्चयेत् ॥
अस्त्रहीनमिदं नीलसरस्वत्या विनिर्दिशेत् ।

कामेशो ईकारः ।

त्र्यक्षरोऽसौ महामन्त्रः फट्कारान्तो हृदि स्थितः ।
पञ्चरश्मिसमायुक्तोऽथाज्ञानेन्धनदाहकः ॥

(मत्स्यसूक्ते)

लजाबीजं बधूबीजं कूर्चबीजं तथा हि फट् ।
एवं पञ्चाक्षरी विद्या पञ्चभूतप्रकाशिनी ॥

तथा ।

तारास्त्ररहिता त्र्यर्णा महानोलसरस्वती ।

कुल्लुकेति समाख्याता त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥

(ताराण्ये)

वशिष्ठाराधिता चोग्रा न शीघ्रफलदा यतः ।

अतस्तेनैव मुनिना शापो दत्तः सुदारुणः ॥

ततः प्रभृति विद्येयं फलदात्री न कस्य चित् ।

शक्तिबीजं त्रपान्तस्थबीजोपरि नियोजितम् ॥

ततः प्रभृति विद्येयं वधूरिव यशस्विनी ।

फलिनी सर्वविद्यानां जयिनी जयकाङ्क्षिणाम् ॥

विषक्षयकरी विद्या अमृतत्वप्रदायिनी ।

मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण विजयी भुवि जायते ॥

मूको भवति वांगीशो गोष्पतिर्जायते नरः ।

शक्तिबीजमिति । शक्तिबीजं सकारः । त्रपान्तस्थबीजं त्रोल्लारः । तेन स्त्रीमिति
बधूबीजं भवति । शापस्तु कृष्णावतारपर्यन्तमेव ।

जाते कृष्णावतारे तु पुनः शापात् प्रमुच्यते ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

मन्त्रार्थमाह (साधनसमुच्चये)

प्रणवाद्ब्रह्मरूपा सा सोऽहं तत्त्वस्वरूपिणी ।

व्योम्ना प्रकाशमानत्वं प्रसमानत्वमग्निना ॥

तयोर्विसर्ग ईकारो विन्दुना तात्रिकी मता ।

तकारः सर्वपापघ्नो रेफस्तत्त्वप्रकाशकः ॥

विन्दुमाली महाबीजं शब्दब्रह्मप्रकाशकम् ।
कर्त्तुं प्रबोधरूपं स्यादस्त्वं जाड्यविनाशकम् ॥
एवं यो वेत्ति शुद्धात्मा स तु साक्षान्महेश्वरः ।

(मत्स्यसूक्ते)

श्रीबीजाद्या यदा विद्या तदा श्रीः सर्वतो मुखी ।
एषैव हि महाविद्या भायाद्या सकलेष्टदा ॥
वाग्भवाद्या महावाक्यस्वरूपा सर्ववाङ्मयी ।

तथा ।

गुटिकासिद्धिवेतालपातालवटयक्षिणी ।
परपुरप्रवेशश्च आज्ञासिद्धिः प्रजायते ॥
जिह्वायां चिन्तनादेव त्रिकालज्ञो भवेद्भुवम् ।
यस्तु विद्यामभेदेन चिन्तयेत् साधकोत्तमः ॥
जीवन्मुक्तो विमुक्तश्च अन्ते सोऽपि भवेद्भुवम् ।

(ब्रह्मसंहितायां फेत्कारिण्यां) च ।

क्षिप्रप्रसादाजगतां सदा नीलसरस्वती ।
विशेषतः कलियुगे सत्प्रसादान्नविष्यति ॥
सिद्धमन्त्रो यदा मन्त्री बालिशस्यापि मूर्धनि ।
करं दत्त्वा दिशत्याशु सोऽपि श्लोकान् पठेत् पुनः ॥

दिशति श्लोकं कुर्वित्याज्ञापयति ।

तथा ।

मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण अनुभावद्वयं भवेत् ।
तात्कालिकी च कविता परैरनविभाव्यता ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः (मेरुतन्त्रे)

मुनिरक्षोभ्यसंज्ञोऽस्या बृहतीछन्द ईरितम् ।
तारादेवी ह्रीं च बीजं हूँ शक्तिश्चास्य कीर्तिता ॥

(मन्त्रचूडामणौ)

अक्षोभ्य ऋषिरेतस्या बृहतीछन्द ईरितम् ।
नीलसरस्वती देवी त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥
हूँ बीजमस्त्रं शक्तिः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदा ।

दामोदरमिश्रकृतसंग्रहे ।

अक्षोभ्य ऋषिरेतस्या बृहतीछन्द ईरितम् ।
नीलसरस्वती देवी त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥
हूँ बीजमन्त्रः शक्तिः स्यान्माया स्त्रीं कीलकं स्मृतम् ।
विनियोगो भवेद्देवि चतुर्वर्गफलाप्तये ।

उग्रतारा देवतेति (मन्त्रचूडामणौ)

अथ कराङ्गन्यासौ । तत्रादौ उग्रतारायाः (ताराकल्पे)

षड्दीर्घमायाबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥

नीलसरस्वत्यास्तु (सिद्धसारस्वते)

अखिलवाग्रूपिणीं प्रोच्य हृदाय नमो वदेत् ।
अंखण्डवाग्रूपिणीं च शिरसे वह्निवल्गभा ॥
ब्रह्मवाग्रूपिणीमुक्त्वा शिखायै वषडित्ययि ।
विष्णुवाग्रूपिणीमुक्त्वा कवचाय हुमुच्चरेत् ॥
रुद्रवाग्रूपिणीं नेत्रत्रयाय वौषडित्यपि ।
सर्ववाग्रूपिणीमुक्त्वा अस्त्राय फडिति स्मरेत् ॥
षड्दीर्घमायया बीजं बीजान्ते तानि योजयेत् ।

एकजटायाः (तन्त्रचूडामणौ)

बीजान्ते एकजटायै हृदयं परिकीर्तितम् ।
तारिण्यै शिरसे तद्वद्वज्रोदके शिखां तथा ॥
उग्रजटे च कवचे महापरिसरे तथा ।

पिङ्गोग्रैकजटे तद्वन्नेत्रास्त्रे परिकीर्त्तिते ॥

न्यासोऽयमुग्रतारैकजटयोर्विरुद्ध इति साम्प्रदायिकः ।

अथ ध्यानम् (गन्धर्वतन्त्रे)

श्मशानं तत्र संचिन्त्य तत्र कल्पद्रुमं स्मरेत् ।

तन्मूले मणिपीठं च नानामणिविभूषितम् ॥

शिवाभिर्बहुमांसास्थिमोदमालाभिरन्ततः ।

चतुर्दिक्षु शवामुण्डाश्चिताङ्गारास्थिभूषिताः ॥

तन्मध्ये भावयेद्देवीं यथोक्तध्यानयोगतः ।

(नीलतन्त्रे)

प्रत्यालीढपदां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम् ।

खर्वां लम्बोदरीं भीमां व्याघ्रचर्मवृतां कटौ ॥

नवयौवनसंपन्नां पञ्चमुद्राविभूषिताम् ।

चतुर्भुजां ललज्जिह्वां महाभीमां वरप्रदाम् ॥

खड्गकर्त्रीधरां सव्ये वामे मुण्डोत्पलान्विताम् ।

पिङ्गोग्रैकजटां ध्यायेन्मौलावक्षोभ्यभूषिताम् ॥

बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रयभूषिताम् ।

प्रज्वलत्पितृभूमध्यगतां दंष्ट्राकरालिनीम् ॥

सात्रेशस्मेरवदनामस्थ्यालङ्कारभूषिताम् ।

विश्वव्यापकतोयान्तः श्वेतपद्मोपरिस्थिताम् ॥

(श्यामारहस्यादौ)

खड्गकर्त्रीसमायुक्तसव्येतरभुजद्वयाम् ।

कपालोत्पलसंयुक्तसव्यपाणियुगान्विताम्—इति पाठः ॥

(तन्त्रान्तरे)

खड्गकर्त्रीधरां देवीं कपालोत्पलधारिणीम्—इति पाठः ।

(मन्त्रचूडामणौ)

तस्योपरिगृहे देवीं खर्वीं नीलमणिप्रभाम् ।
 लम्बोदरीं व्याघ्रचर्मसमावृतनितम्बिनीम् ॥
 पीनोन्नतपयोभारां रक्तवर्चुललोचनाम् ।
 ललज्जिह्वां महाभीमां दंष्ट्राकोटिसमुज्ज्वलाम् ॥
 नीलोत्पललसन्मालां बद्धजूटां भयङ्करीम् ।
 श्वेतास्थिपट्टिकायुक्तकपालपञ्चशोभिताम् ॥
 ललाटे रक्तनागेन कृतकर्णावतंसकाम् ।
 अतिशुभ्रमहानागकृतहारमहोज्ज्वलाम् ॥
 दूर्वादलश्यामनागकृतयज्ञोपवीतिनीम् ।
 चतुर्भुजां रक्तमांसखण्डमण्डितमुष्टिना ॥
 जटाजूटाक्षसूत्रेण शोभितां तीक्ष्णधारया ।
 खड्गेन दक्षिणस्योर्ध्वे शोभितां वीरनादिनीम् ॥
 तदधःस्थाद्बीजवृन्तकर्त्रिकालङ्कृतां पराम् ।
 वामोर्ध्वे रक्तनालेन दिगम्बरमनोहराम् ॥
 दधतीं नीलपद्मं च तदधःस्थात् कपालकम् ।
 जगतां जाड्यसंयुक्तं दधतीं कुन्दसन्निभम् ॥
 धूम्राभनागसंदोहकृतकेयूरसत्वराम् ।
 सुवर्णवर्णनागेन कङ्कणोज्ज्वलपाणिकाम् ॥
 शुभ्रवर्णमहादेवकृतसद्विमलासनम् ।
 निर्यन्त्रणभिया तदत् संकुचत्प्रपदात्मिकाम् ॥
 शवपादद्वयारूढवामपादां महोन्मुखीम् ।
 कुन्दाभनागसंशोभिकटिसत्रां त्रिलोचनाम् ॥
 अष्टप्रक्तेन नागेन कृतनूपुरपल्लवाम् ।

सद्यश्छिन्नगलतद्रक्तमुण्डै रक्तविभूषणैः ॥
 अन्योन्यकेशग्रथितैः पादपद्मविलम्बितैः ।
 पञ्चाशद्भिर्महामालाशोभितां परमेश्वरीम् ॥
 ज्वलच्चितामध्यसंस्थां द्वीपिचर्मोत्तरांशुकाम् ।
 अक्षोभ्यनागसम्बद्धजटाजूटां वरप्रदाम् ॥
 एवम्भूतां महादेवीमात्मानं यागवस्तु च ।
 विज्ञापयेन्महादेवपण्डितो ह्ये महाकविः ॥

(तारोपनिषदि)

विरुद्धवाक्यार्थशरीरमण्डले
 नवाम्बुदाभां गुह्यमुन्नतोदरीम् ।
 अतीव खर्वां नवयौवनस्था-
 मधःस्थशार्दूलककृत्तिमूर्धजाम् ॥
 अनैक्यमाहत्य शवोपरिस्थितां
 शवार्थमालीढपरीतमध्यमाम् ।
 विशीर्णवर्णां नृशिरःस्रजोद्भवां
 त्रयीविवर्त्तारुणलोचनत्रयाम् ॥
 अभेदपिङ्गैकजटाविराजितां
 विभूषणाच्छिन्नसितास्थिभीषणाम् ।
 महाष्टसिद्धिप्रकराहिभूषणा-
 मद्वादृहासैर्जगतामभीतिदाम् ॥
 जटास्वनन्तः श्रवसोश्च तक्षको
 महाहिपद्मो हृदि हारभूषणाम् ।
 तथैव कर्कोटकृतोपवीतिकां
 सुमेखलायामथ देववासुकिः ॥

सशङ्खपालः किलकङ्कणो मतः
 पदेषु पद्मः किलनूपुरश्रियम् ।
 भुजेषु नागः कुलिकोऽङ्गदो मतो
 भुजोऽर्धमालामहता स्थितिः स्थिता ॥
 सितश्च रक्तो धवलश्च मेचक-
 स्तथैव नागोऽथ सितश्च पाण्डरः ।
 भुजङ्गमानामिह वर्णजातयो
 भवन्ति सर्वे मुनिभिर्ज्वलच्चिताम् ॥
 कपालकर्त्रीग्रथितोग्रमूर्धजां
 सनालमिन्दीवरकान्तिमालाम् ।
 विकोषखङ्गं सततं च दक्षिणे
 स्वपौरुषोत्थैर्दधतीं भुजैः सदा ॥
 पदार्थदंष्ट्राद्वयपञ्चमुद्रया
 विराजमानामसितोत्पलस्रजम् ।
 विचिन्तयेत् तां च कवित्वकारिणी-
 मन्यागतार्थं प्रजपेच्च तारिणीम् ॥
 (फेत्कारिणीतन्त्रेऽपि)

प्रत्यालीढपदार्पिताङ्घ्रिशवहृद्धोरादृहासा वरा
 खङ्गेन्दोवरकर्तृखर्परभुजा हूँकारबीजोद्भवा ।
 खर्वा नीलविशालपिङ्गलजटाजूटोग्रनागैर्वृता
 जाड्यं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम् ॥
 प्रत्यालीढलक्षणं तु (संगीतरत्नाकरे)
 वामो यत्र निषण्णोरुरन्तरे पूर्वमानतः ।
 दक्षिणं चरणं ज्ञायते पञ्चतालप्रसारितम् ॥

असौ द्वावपि तद्विन्द्यादालीढं तु सदैवतम् ।

आलाढाङ्गविपर्यासात् प्रत्यालीढमुदाहृतम् ॥

तालं वितस्तिः । असौ चक्रौ । मौलावक्षोभ्यभूषितामिति । अत्राक्षोभ्यो नागरूपः ।

अक्षोभ्यो देवीमूर्धन्यस्त्रिमूर्त्तिर्नागरूपधृगिति (भावचूडामणि-) वचनात् ।

अथ पुरश्चरणविधिः । तत्रादौ मन्त्रध्यानमुक्तं (साधनसमुच्चये)

मूलचक्रे च हृल्लेखां सूर्यकोटिसमप्रभाम् ।

स्वाधिष्ठाने पीतवर्णं द्वितीयं च विभावयेत् ॥

नाभौ जीमूतसंकाशं कूर्चबीजं महाप्रभम् ।

अस्त्वबीजं हृदि ध्यायेत् कालाग्निसदृशप्रभम् ॥

मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं सर्वां विद्यां विभावयेत् ।

सूर्यकोटिप्रतीकाशां योगिनां दृष्टिगोचराम् ॥

तदुक्तं (तारातन्त्रे)

स्वेच्छाचारपरो मन्त्री पुरश्चरणसिद्धये ।

रहस्यमालामादाय लक्षमेकं जपेत् सदा ॥

(सुरेन्द्रसंहितायाम्)

लक्षमात्रं जपेन्मन्त्रं दशांशमसितोत्पलैः ।

आज्याक्तैर्जुहुयान्मन्त्री तद्दशांशेन तर्पयेत् ॥

कालागुरुद्रवोपेतैर्विमलैर्गन्धवारिभिः ।

तर्पयेच्च परां देवीं तत्प्रकारमिहोच्यते ॥

जले चावाह्य विधिवत् पाद्याद्यैरुपचारकैः ।

संतर्प्य विधिवद्देवीं परिवारान् सकृत् सकृत् ॥

देवीबुद्ध्या स्वमान्मानं संपूज्य साधकोत्तमः ।

तारिणीं सिञ्चयामीति जलं मूर्ध्नि विनिःक्षिपेत् ॥

कुम्भाख्यमुद्रया देवि नमोऽन्तेनाभिषेचनम् ।

(घोरचूडामणौ)

चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् सुधीः ।

पद्मैस्त्रिमधुरोपेतैर्वाक्पतिर्जायते नरः ॥

(तारणवे)

एवं ध्यात्वा हविष्याशी जपेल्लक्षचतुष्टयम् ।

रहस्यमालामादाय जपेद्वा लक्षमेव च ॥

(मेरुतन्त्रे)

रतं कुर्वन्नदन् भक्ष्यमनेकं दधि मध्वपि ।

मधु मांसं च ताम्बूलं जपेल्लक्षचतुष्टयम् ॥

दशांशं जुहुयाद्रक्तपद्मैः क्षीराज्यलोलितैः ।

शवसुण्डं पूरयित्वा जपस्थाने जपं चरेत् ॥

नारीं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् महानिशि वलिं हरेत् ।

न कार्यः सुश्रुवां द्वेषो यत्नतः परिपजयेत् ॥

जपे न कालनियमो न स्थितौ सर्वदा जपेत् ।

श्मशाने शून्यसदने देवागारेऽथ निर्जने ॥

पर्वते वनमध्ये वा शवमारुह्य मन्त्रवित् ।

समर शत्रुनिहतं यद्वा षाण्मासिकं शिशुम् ॥

विद्यां संसाधयेच्छीघ्रं साधितैवं प्रसिध्यति ।

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् कर्तुमर्हति ॥

अथैतद्विद्याभेदास्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि दैत्यानां वरसिद्धये ।

ब्रह्मणोपासितां तारां वल्यादिभिरूपासितम् ॥

ॐ त्रीँ ह्रीँ हूँ समुच्चार्य ह्रीँ हुँ फडनगवर्णकः ।

मुनिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दस्तारा च देवता ॥

न्यासास्तु पूर्ववत् कुर्याच्छानमस्या निरूप्यते ॥

श्वेताम्बरां चन्द्रकान्तिं चन्द्रर्धकृतशेखराम् ॥
 कर्त्तरीं च कपालं च कराभ्यां दधतीं भजेत् ।
 नानालङ्कारशोभाढ्यां त्रीक्षणां पद्मसंस्थिताम् ॥
 जपपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ।
 मधुयुक्परमान्नेन होमाद्विद्यानिधिर्भवेत् ॥
 रक्तां वश्ये स्वर्णवर्णीं स्तम्भने मारणेऽसिताम् ।
 उच्चाटने धूम्रवर्णीं शान्तौ श्वेतां स्मरेदिमाम् ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि तारकस्य वराय तु ।
 ब्रह्मणोपासितां तारां द्वादशाणीं सुदुर्लभाम् ॥
 वाचं लज्जां रमां कामं हसरा औसमन्विताः ।
 विसर्गाढ्याः पञ्चमं तु कूटमेतदुदीरितम् ॥
 हुँ उग्रतारे हुँ फट् मन्त्रः प्रोक्तो जपादिकम् ।
 सर्वं पूर्ववदेवास्य कलौ प्रत्ययकारिणी ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा समुपासिताम् ।
 हिरण्यकसिपोदीतुं वरं सप्तार्णसंमिताम् ॥
 प्रणवं कवचं मायां क्लौं प्राक् कूटं च पञ्चमम् ।
 हुँ फडन्तः सर्वमस्या न्यासाद्यं पूर्ववद्भवेत् ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि हरिणा या ह्युपासिता ।
 बौद्धमार्गप्रचारार्थं सिद्धिदा द्वादशाक्षरी ॥
 उपासिता ब्रह्मणा या तस्याः कूटे तु पञ्चमे ।
 सौख्यत्वा साधिता विद्या द्वादशाणांऽतिबुद्धिदा ॥
 यत्प्रभावादिवो दासः काश्या उच्चाटितः पुरा ।
 तस्यास्तु पूर्ववज्जेयं न्यासध्यानजपादिकम् ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि सप्तार्णीं रामसेविताम् ।

लक्ष्मीप्रभृति नारायणं तेन मत्तः सदा हली ॥
 ब्रह्मोपासितसप्ताणां मध्ये कूटं तु पञ्चमम् ।
 तत् त्यक्त्वा सौं स्तत्र चोक्त्वा बलरामेण सेविता ॥
 शत्रुक्षयकरी चेयं तथा वाक्सिद्धिकारिणी ।
 ध्यानपूजादिकं प्राग्वत् प्रयोगादिकमेव च ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि नारायणसुसेविता ।
 पञ्चाणां यत्प्रभावेण दैत्यानां कदनं कृतम् ॥
 त्रीं हुँ फट् ह्रीं वाग्भवं च पञ्चाणां सर्वसिद्धिदा ।
 असां त्रयाणां तु मुनिर्विष्णुः प्राग्वज्जपादिकम् ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि मया या समुपासिता ।
 दत्ता च रविणाऽदित्यै सा विद्या तु षडक्षरी ॥
 ॐ ह्रीं हूँ ह्रीं हुँ फडिति मुनिः सोऽहं च पूर्ववत् ।
 जेयं न्यासादिकं सर्वं प्रयोगादि च पूर्ववत् ॥
 अथान्यं संप्रवक्ष्यामि चास्याः पञ्चाक्षरं मनुम् ।
 जलन्धरवधार्थं तु मया सिद्धं कृतं सुराः ॥
 ह्रीं हुँ मायां हुँ फडिति मनुः पञ्चाक्षरो मतः ।
 तन्त्रान्तरेऽपि ।

वधूबीजं च कवचं मायां कूर्चं तथाऽस्त्रकम् ।
 सार्धपञ्चाक्षरो मन्त्रो द्वितीयः परिकीर्तितः ॥
 (मेरुतन्त्रे)

मया पञ्चमुखैर्जप्तो दक्षमार्गेण भो सुराः ।
 देवांशेषु च विप्रेषु तथा धर्मपरेषु च ॥
 यमानां नियमानां च तन्त्रस्था नान्यदेवताः ।
 वाममार्गाराधितास्तु कार्यं साधयितुं क्षमाः ॥

दक्षिणाराधिता देवा रणसाहाय्यकारकाः ।
 तेजोनिधीन् रिपून् हत्वा नयन्ति ब्रह्मशाश्वतम् ॥
 क्षत्रियाणां क्षयार्थं तु मया रामाय चार्पिता ।
 पञ्चामृतं सुरास्थाने मांसस्थाने च सूरणम् ॥
 मत्स्यस्थाने खण्डो बोध्यो धर्मपत्न्यां रतं रतम् ।
 अन्यत् पूर्ववदेव स्याद्बुद्धमेतत् प्रकाशितम् ॥
 लुब्धस्तारां न सेवेत लोकद्वयपरिक्षयात् ।
 अस्याः पूजादिकं प्राग्वद्विशेषोऽत्र निरूपितः ॥
 तारायाः सद्गुरोः सिद्धिः स्त्रीरते भ्रान्तता भवेत् ।
 अथातः संप्रवक्ष्यामि महातारामनुं सुराः ॥
 सिद्धिर्मागद्वयेनापि वर्णावर्णाधिकारतः ।
 श्रीं ह्रीं ह्रूं नमस्तारायै महापदमुच्चरेत् ॥
 तारायै सकलेत्युक्त्वा उस्वरान् तारय द्वयम् ।
 तारद्वयं वह्निजाया द्वात्रिंशाणो मनुर्मतः ॥
 न्यासपूजाजपाद्यं तु प्राग्वत् सर्वं समाचरेत् ।

(तारिणीतन्त्रे)

ईश्वर उवच ।

श्रूयतां शैलतनये जाड्यनाशकरो पूरा ।
 चतुर्वर्गफला विद्या मन्त्रसिद्धिप्रदायिका ॥
 वर्गाद्यं वह्निसंयुक्तं वामाक्षिपरिभूषितम् ।
 नादविन्दुसमायुक्तं वसुसिद्धिप्रदायकम् ॥
 पुनश्चतुर्मुखं देवि रकारेण विभूषितम् ।
 स्वरेणैव चतुर्थेन चन्द्रखण्डेन च प्रिये ॥
 लाञ्छितं वै महाबीजं चतुर्वर्गफलप्रदम् ।

ततः कृष्णे पदं चोक्त्वा ततो देवीपदं स्मृतम् ॥
 ह्रींकारं च ततो दद्यात् स्वपूर्वमुद्धरेत् ततः ।
 इकारेण च रेफेण मकारेण च भूषितम् ॥
 ततो वाग्भवमुच्चार्य मन्त्रमेनं समुद्धरेत् ।
 नवाक्षरो मनुर्देवि तारिण्याः समुदीरितः ॥
 इयमेव महाविद्या स्वर्गे मर्त्ये सुदुर्लभा ।
 अष्टसिद्धिप्रदा देवि चतुर्वर्गफलप्रदा ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः

शक्तिरस्य ऋषिः प्रोक्तो बृहतोछन्द ईरितम् ।
 तारिणी देवता प्रोक्ता ह्रींकारं बीजमुच्यते ॥
 वाग्भवं शक्तिरित्युक्तमिति ऋष्यादिकं चरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

कृष्णां लम्बोदरीं भीमां नागकुण्डलशोभिताम् ।
 रक्तमुखीं ललज्जिह्वां रक्ताम्बरधरां कटौ ॥
 पीनोन्नतस्तनीमुग्रां महानागेन वेष्टिताम् ।
 शवस्योपरि देवेशि तस्योपरि कपालके ॥
 नासाग्रध्याननिरतां महाघोरां वरप्रदाम् ।
 चतुर्भुजां दीर्घकेशीं दक्षिणस्योर्ध्वबाहुना ॥
 विभ्रतौ नलिनीमेकां वामोर्ध्वे पानपात्रकम् ।
 वराभयधरां देवीमधस्ताद्दक्षवामयोः ॥
 पिवन्तीं रौधिरीं धारां पानपात्रे सदाशिवे ।
 सर्वसिद्धिप्रदां देवीं नित्यां गिरिनिवासिनीम् ॥
 लोचनत्रयसंयुक्तां नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
 दीर्घनासां दीर्घजङ्घा दीर्घाङ्गी दीर्घजिह्विकाम् ॥

चन्द्रसूर्याग्निभेदेन त्रिलोचनसमन्विताम् ।
 शत्रुनाशकरीं देवीं महाभीमां वरप्रदाम् ॥
 व्याघ्रचर्मशिरोबद्धां जगद्भयविभाविताम् ।
 साधकानां सुखं कर्त्रीं सर्वलोकभयङ्करीम् ॥
 एवम्भूतां महादेवीं तारिणीं प्रणमाम्यहम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं संयुजयित्वा च एभिर्द्रव्यैर्महेश्वरि ।
 लक्ष्मेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥

अथाक्षोभ्यमन्त्रः । (ब्रह्मसंहितायाम्)

अक्षोभ्यस्य मनुं त्यक्त्वा देवीं तारां जपेद्यदि ।
 सिद्धिहानिर्भवेत् तस्य रौरवं नरकं व्रजेत् ॥
 अक्षोभ्यस्य मनुं विप्र कवचं सारमुत्तमम् ।
 अतिगुह्यं महाध्यानं सर्वध्यानेषु चोत्तमम् ॥
 अग्रे मनुं प्रवक्ष्यामि ध्यानं चैव ततः परम् ।
 कवचं च ततः पश्चात् कथयामि क्रमेण तु ॥
 अनुत्तरं समुद्धृत्य पपञ्चमविभूषितम् ।
 अक्षोभ्येति च स्वाहेति रमाद्यन्तं महामनुः ॥
 स्वयम्-ऋषिश्च संप्रोक्तो विराट्छन्द उदीरितम् ।
 अक्षोभ्यो देवता प्रोक्तस्त्रिमूर्तिर्नागरूपधृक् ॥
 विनियोगस्तु नियतं पुरुषार्थचतुष्टये ।
 अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वसौभाग्यदायकम् ॥
 सहस्रादित्यसंकाशं नागरूपधरं शुभम् ।
 विद्युत्कोटिसमं वक्त्रं वह्निभास्वरलोचनम् ॥
 सार्धत्रिवलयोपेतं जटाकोट्यग्रसंस्थितम् ।

महालावण्यसंयुक्तं सुरासुरनमस्कृतम् ॥

सूर्यविद्युःसमाभासं महामणिशिखोपरि ।

एतद्रूपं महाकायं देवैरपि सुपूजितम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

अक्षोभ्यं पूजयित्वाऽऽदौ तारां संपूजयेत् सुधीः ।

तथा ।

पुरश्चर्यादिकं चास्य तारिणीवत् समाचरेत् ।

इति ताराप्रकरणम् ।

अथ श्रीविद्या ।

तत्रादौ कामराजविद्या (चन्द्रपीठे)

स्मरो भगं विन्दुमती लपरा वाग्भवं मतम् ।

शिवो जीवः स्मरः शम्भुर्लपरा कामकूटकम् ॥

भृगुः कामः क्षमा माया कामराजाभिधा मता ।

कूटत्रयस्य वाग्भवादिसंज्ञा च तत्रैवाक्ता ।

प्रथमं वाग्भवं कूटं द्वितीयं कामकूटकम् ।

तृतीयं शक्तिकूटं स्यात् कूटत्रयतनुर्मनुः ॥

अथ लोपासुद्राख्या विद्या (ज्ञानार्णवे)

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लोपासुद्राभिधां पराम् ।

कामराजाख्यविद्यायाः शक्तिं तुर्यां च सुन्दरीम् ॥

हित्वा मुखे शिवेन्द्राख्या लोपासुद्रा प्रकाशिता ।

कामराजाख्यविद्याया वाग्भवे एकारमीकारं च विहायादौ हकारसकारौ वक्ष्यामि । इयमगस्त्योपासिता ।

अथ षोडशी (योगिनीतन्त्रे)

श्रीबीजमाया स्मरयोनिशक्ति-

स्तारं च माया कमलाऽथ विद्या ।

शक्त्यादिवीजैश्च विलोमतोक्त्या

श्रीषोडशीयं च शिवोपदिष्टा ॥

तन्त्रान्तरे ।

श्रीबीजं शक्तिबीजं च कामबीजं च वाग्भवम् । श्री ह्रीं क्लीं ह्रीं सौः
बालान्तसंस्थितं बीजं प्रणवं च ततः परम् ॥ ॐ
शक्तिबीजं रमां चैव विद्यां च परमेश्वरि । ह्रीं श्रीं कः ५६ ५४
लोपां वा कामराजं वा त्रिकूटामथ वा पराम् ॥ (विष्णवे) /
विन्यस्य प्रणवाद्यानि बीजानि पञ्च सुन्दरि ।
विपरीतक्रमेणैव विन्यसेत् षोडशीं पराम् ॥

(मायातन्त्रेऽपि)

लक्ष्मीः परा मदनयोनियुता च शक्ति- श्री ह्रीं क्लीं ह्रीं सौः
स्तारः परा च कमलाऽप्यथ मूलविद्या । श्रीं ह्रीं श्रीं (७५०)
शक्त्यादिभिश्च विपरीततया प्रदिष्टा (विष्णवे)
श्रीमन्नराज उदितः परदेवतायाः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

अतः परतरा विद्या न भूता न भविष्यति ।
केनापि नैव शस्येयं न च केनापि कीलिता ॥

(ज्ञानार्णवे)

वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
वर्णितुं नैव शक्येयं श्रीविद्या षोडशाक्षरी ॥
ब्रह्मविद्या स्वरूपा हि भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
एकोच्चारेण देवेशि वाजपेयस्य कोटयः ॥
अश्वमेधसहस्राणि प्रादक्षिण्यं भूवस्तथा ।
काश्यादितीर्थयात्राः स्युः सार्धकोटित्रयान्विताः ॥
तुलां नायान्ति देवेशि नात्र कर्मा विचारणा ।
एकोच्चारेण गिरिजे किं पुनर्ब्रह्मकेवलम् ॥
षोडशाणीं महाविद्या न प्रकाश्या कदा चन ।

गोपितव्या त्वया भद्रे स्वयोनिरिव पार्वति ॥
 अपि प्रियतमे देयं सुतदारधनादिकम् ।
 राज्यं देयं शिरो देयं न देया षोडशाक्षरी ॥
 सप्तलक्षं महाविद्यास्तत्रादौ कथिताः प्रिये ।
 सारात् सारतरा चेयं महाविद्या सुगोपिता ॥

अथ ऋष्यादिन्यासस्तत्रैव ।

ऋषिरस्य महेशानि दक्षिणामूर्तिरव्ययः ।
 पङ्क्तिश्छन्दः समाख्यातं देवी त्रिपुरसुन्दरी ॥
 वाग्भवं बीजमित्युक्तं शक्तिस्तु शक्तिकूटकम् ।
 कामराजः कीलकं स्यादृष्यादिन्यास ईरितः ॥
 वाग्भवादीनां बीजादिरूपत्वे हेतुरुक्तो (दक्षिणामूर्तिसंहितायाम्)
 निःसरन्ति महामन्त्रा महान्निर्विस्फुलिङ्गवत् ।
 तथैव मातृका वर्णा निःसृता वाग्भवाः प्रिये ॥
 अत एवास्य देवस्य वाग्भवं बीजमुच्यते ।
 योषित् पुरुषरूपेण स्फुरन्ती विश्वमातृका ॥
 महामोहेन देवेशि कीलयन्तो जगन्नयम् ।
 अतस्तत्कीलकं देवि तेन सौभाग्यगर्भिता ॥
 पालयन्ती जगत् सर्वं तेनेयं शक्तिरुच्यते ।

अथ कराङ्गन्यासस्तन्वान्तरे ।

ॐ ॐ सौ रिति प्रोक्तं बीजं त्रिविधमुत्तमम् ।
 एतद्बीजं हिरावृत्य मध्यमाद्यङ्गुलोषु च ॥
 शुद्धिं करस्य कुर्वीत तलयोः पृष्ठयोरपि ।
 चतुर्थी नतिसंयुक्ता नाममन्त्रैः पृथक् पृथक् ॥
 मध्यमाङ्गामिका चैव कनिष्ठाङ्गुष्ठतर्जनी ।

क्रमेण नाम चाख्यातमङ्गुलीनां महेश्वरि ॥

(नवरत्नेश्वरे)

सर्वज्ञता नित्यसुतृप्तता च अनादिबोधश्च स्वतन्त्रता च ।

अलुप्तशक्तित्वमनन्तता च षडाहुरङ्गानि शिवे शिवाद्याः ॥

अत्र बहुविधन्यासजालं (ज्ञानार्णवादौ) द्रष्टव्यम् ।

अथ ध्यानम् ।

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।

पाशाङ्कुशधनुर्बाणधारयन्तीं शिवां श्रये ॥

(सिद्धान्तसंग्रहे महाकालसंहितायां) च ।

उद्यच्छन्द्रोदयक्षुब्धरक्तपीयूषवारिधेः ।

मध्ये हेममयी भूमी रत्नमाणिक्यमण्डिता ॥

तन्मध्ये नन्दनोद्यानं मदनोन्मादनं महत् ।

नित्याभ्युदितपूर्णैन्दुज्योत्स्नाजालविराजितम् ॥

सदा सह वसन्तेन कामदेवेन रक्षितम् ।

कदम्बचूतपुन्नागनागकेशरचम्पकैः ॥

वकुलैः पारिजातैश्च सर्वर्तुकुसुमोज्ज्वलैः ।

झङ्कारमुखरैर्भृङ्गैः कूजद्भिः कोकिलैः शुकैः ॥

नानावर्णैरथान्यैश्च द्विजसङ्घैर्निषेवितम् ।

शिखिकारण्डहंसाद्यैर्नानापक्षिभिरावृतम् ॥

नानापुष्पलताकीर्णैः शोभितं वृक्षखण्डकैः ।

पर्यन्तदीर्घिकोत्फल्लकमलोत्पलसम्भवैः ॥

रजोभिर्धूसरैः सम्यक् सेवितं मलयानिलैः ।

ध्यात्वैवं नन्दनोद्यानं तदन्तः प्राङ्गणं स्मरेत् ॥

शुद्धकाञ्चनसंकाशवसुधाभिरलङ्कृतम् ।

प्राङ्गणं चिन्तयित्वेत्यं सुरसिद्धनिषेवितम् ॥

तन्मध्ये मण्डपं ध्यायेद्व्याप्तब्रह्माण्डमण्डलम् ।
 सहस्रादित्यसंकाशं चतुरस्रं सुशोभितम् ॥
 रत्नतेजःप्रभापुञ्जपिञ्जरीकृतदिङ्मुखम् ।
 मध्यस्तम्भविनिर्मुक्तं कोणस्तम्भसमन्वितम् ॥
 महामाणिक्यवैदूर्यरत्नकाञ्चनभूषितम् ।
 मुक्तादामवितानाढ्यं रत्नसोपानमण्डितम् ॥
 मन्दवायुसमाक्रान्तं गन्धधूपतरङ्गितम् ।
 रत्नचामरघण्टादिवितानैरुपशोभितम् ॥
 जातीचम्पकपुन्नागकेतकीमल्लिकादिभिः ।
 रक्तोत्पलसिताम्भोजमाधवीभिः सुपुष्पकैः ॥
 बद्धाभिश्चित्रमालाभिः सर्वत्र समलङ्कितम् ।
 तिर्यगूर्ध्वलसद्रक्तपुत्तलीकोटिमण्डितम् ॥
 नानारत्नादिभिर्दिव्यैर्निर्मितं विश्वकर्मणा ।
 तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम् ॥
 स्वर्णादिरत्नभूमिं च वालुकां काञ्चनप्रभाम् ।
 उद्यदादित्यसंकाशं व्याप्तब्रह्माण्डमण्डपम् ॥
 शतयोजनविस्तीर्णं ज्योतिर्मन्दिरमुत्तमम् ।
 चतुर्द्वारसमायुक्तं हेमप्राकारमण्डितम् ॥
 रत्नोपकृष्टिसंशोभिकपाटाष्टकसंयुतम् ।
 नवरत्नसमाकृष्टतुङ्गगोपुरतोरणम् ॥
 हेमदण्डशिखालम्बिध्वजावलिपरिष्कृतम् ।
 मध्यकोणस्थितस्तम्भनवरत्नसमन्वितम् ॥
 महामाणिक्यवैदूर्यरत्नचामरशोभितम् ।
 कल्पवृक्षे गिरेः पार्श्वे छत्रं तन्मण्डपोपरि ॥

सुवर्णसूत्रै रचितं तन्मध्ये रत्नमण्डपम् ।
 तन्मध्ये स्फुरितं ध्यायेत् त्रिशृङ्गं ज्योतिरुत्तमम् ॥
 तस्य मध्ये महाचक्रं पीयूषपरिपूरितम् ।
 रत्नसिंहासनं तस्या वेद्या मध्ये स्मरेच्छुभम् ॥
 विरिञ्चिविष्णुरुद्रेशरूपपादचतुष्टयम् ।
 सदाशिवमयं साक्षात् तस्मिन् परशिवात्मकम् ॥
 पुष्पपर्यङ्गतन्मध्ये श्रीमदुद्यानपीठके ।
 पर्यङ्गबन्धविलसत्स्वस्तिकासनशालिनीम् ॥
 ध्यायेत् परशिवाङ्गस्थां पद्ममध्योज्ज्वलाकृतिम् ।
 त्रिपुरां सुन्दरीं देवीं बालार्ककिरणारुणाम् ॥
 जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमोपमाम् ।
 पद्मरागप्रतीकाशां कुङ्कुमारुणसन्निभाम् ॥
 स्फुरन्मुकुटमाणिक्यकिङ्किणीजालमण्डिताम् ।
 कालालिकुलसंकाशकुटिलालकपल्लवाम् ॥
 प्रत्यगारुणसंकाशवदनाम्भोजमण्डिताम् ।
 किञ्चिदर्थेन्दुकुटिलललाटमृदुपट्टिकाम् ॥
 पिनाकधनुराकारभ्रूलतां परमेश्वरीम् ।
 आनन्दमुदितोल्लासलीलां दोलितलोचनाम् ॥
 स्फुरन्मयूखसङ्घातविलसद्धेमकुण्डलाम् ।
 खगण्डमण्डलाभोगजितेन्द्रमृतमण्डलाम् ॥
 विश्वकर्मविनिर्माणसूत्रविस्पष्टनासिकाम् ।
 ताम्रविद्रुमविम्बाभरक्तोष्ठीममृतोपमाम् ॥
 दाडिमीबीजपङ्क्त्याभदन्तपङ्क्तिविराजिताम् ।
 स्मितमाधुर्यविजितमाधुर्यसत्तागराम् ॥

अनौपम्यगुणोपेतचिवुकोदेशशोभिताम् ।
 कम्बुग्रीवां महादेवीं मृणालसदृशैर्भुजैः ॥
 रक्तोत्पलदलाकारसुकुमारकरां भुजाम् ।
 कराम्बुजनखज्योतिर्विद्योतितनभस्तलाम् ॥
 मुक्ताहारलतोपेतसमुन्नतपयोधराम् ।
 त्रिवलीवलयामुक्तमध्यदेशसुशोभिताम् ॥
 लावण्यसरिदावर्त्तनिघ्ननाभिविभूषिताम् ।
 अनर्घ्यरत्नघटितकाञ्चीयुतनितम्बिनीम् ॥
 नितम्बविम्बद्विरदरोमराजिवराङ्कुशाम् ।
 कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुमीश्वरीम् ॥
 लावण्यकुसुमाकारजानुमण्डलबन्धुराम् ।
 लावण्यकदलीतुल्यजङ्घायुगलमण्डिताम् ॥
 गूढगुल्फपदद्वन्द्वप्रपदाजितकच्छपाम् ।
 तनुं दीर्घाङ्गुलीच्छन्नखराजिविराजिताम् ॥
 ब्रह्मविष्णुशिरोरत्ननिघृष्टचरणाम्बुजाम् ।
 शीतांशुशतसंकाशकान्तिसंतानहासिनीम् ॥
 लौहित्यजितसिन्दूरजपादाडिमरागिणीम् ।
 रक्तवस्त्रपरीधानां पाशाङ्कुशकरोद्यताम् ॥
 रक्तपद्मनिविष्टां तु रक्ताभरणभूषिताम् ।
 जगदाह्लादजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम् ॥
 चतुर्भुजां त्रिनेत्रां तु पञ्चबाणधनुर्धराम् ।
 कर्पूरशकलोन्मिश्रताम्बूलपूरिताननाम् ॥
 महामृगमदोदामकुङ्कुमारुणविग्रहाम् ।
 सर्वशृङ्गास्वेषाढ्यां सर्वोभरणभूषिताम् ॥

जगदानन्दजननीं जगद्रक्षणकारिणीम् ।

जगदाकर्षणकरीं जगत्कारणरूपिणीम् ॥

सर्वलक्ष्मीमयीं नित्यां सर्वशक्तिमयीं भजे ।

अथ दीपिनोविद्या तत्रैव ।

वाङ्मायाकमलाबीजं वाग्भवाद्ये नियोजयेत् ।

तारं लक्ष्मीं च वाग्बीजं मन्मथं भुवनेश्वरीम् ॥

तज्जप्त्वा च ततः पश्चाद्वाग्भवाख्यं समुच्चरेत् ।

प्रणवं भुवनेशानीं रमां कामं च वाग्भवम् ॥

कामराजं ततो जप्त्वा त्रैलोक्यक्षोभकारकम् ।

ॐकारं चापि वाग्बीजं रमां मन्मथमायया ॥

स्वप्नावतीं महादेवि जपेत् तत्र समाहितः ।

प्रणवं चाधरं कामं रमां च भुवनेश्वरीम् ॥

मधुमतीं ततो जप्त्वा मायाश्रीकूर्चबीजकम् ।

प्रणवाद्यं च देवेशि हंसबीजपुटीकृतम् ॥

एतद्बीजं समुच्चार्य शक्तिकूटं ततो जपेत् ।

जपनियमस्तु ।

जपेदादौ जपेत् पश्चात् सप्त वाराननुक्रमात् ।

कामराजादिबीजानां दीपनं चैव कारयेत् ॥

अथ पुरश्चरणविधिः (वामकेश्वरतन्त्रे)

तत्र स्थित्वा जपेच्छृङ्गं साक्षाद्देवीस्वरूपधृक् ।

किंशुकैर्हवनं कुर्याद्दशांशं च वरानने ॥

कुसुम्भकुसुमैर्वाऽपि मधुरत्रयमिश्रितैः ।

(सिद्धान्तसारेऽपि)

लक्ष्मात्रं जपेद्विद्यां हविष्याशी जितेन्द्रियः ।

होमं कुर्याद्दशांशेन किंशुकैर्मधुराप्लुतैः ॥

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् कर्तुमर्हति-इति ।

अथ त्रिपुरभैरवमन्त्रः (वामकेश्वरे)

माया लक्ष्मीस्तथा हंसः प्रासादबीजमेव च ।

वह्निजायान्तको मन्त्रो भवेत् त्रैपुरभैरवः ॥

षडङ्गमूलमन्त्रेण वलिपूजादिकं तथा ।

अथ ध्यानम् ।

एकवक्त्रं त्रिनयनं चतुर्बाहुसमन्वितम् ।

दक्षिणे चाङ्कुशं खड्गं वामे खेटकपाशकौ ॥

धारयन्तं रक्तवर्णं वृषासनगतं विभुम् ।

ऊर्ध्वकेशं हारहारं कपालमालयाऽन्वितम् ॥

एवंविधं महादेवि ध्यायेत् त्रिपुरभैरवम् ।

अस्य पुरश्चरणं षोडशीपुरश्चरणसमानम् ।

अथ बालामन्त्रः (त्रिपुरासारसमुच्चये)

अथ त्रिलोकार्चितशासनाया

वक्ष्यामि बीजत्रयमम्बिकायाः ।

गोप्तव्यमेतत् कुलधर्मविद्धि-

रमुष्य हेतोर्निजसिद्ध्ये च ॥

कान्तादिभूतपदगं कगतार्धचन्द्रं

दन्तान्तपूर्वजलधिस्थितवर्णयुक्तम् ।

एतज्जपं नरवरो भुवि वाग्भवाख्यं

वाचां सुधारसमुचां लभते स सिद्धिम् ॥

कान्तान्तं कुलपूर्वपञ्चमयुतं नेत्रान्तदण्डान्वितं

कामाख्यं गदितं जपान्मनुरयं साक्षाजगत्क्षोभकृत् ।

दन्तान्तेन युतं सदण्डसकलं संमोहनाख्यं कुलं

सिध्यत्यस्य गुणाष्टकं खचरतासिद्धिश्च नित्यं जपात् ॥

ऋषिर्दक्षिणामूर्तिसंज्ञो महात्मा

भवेच्छन्द एतस्य मन्त्रस्य पङ्क्तिः ।

सरस्वत्यचिन्त्यप्रभावा प्रदिष्टा

बुधैर्देवता देववृन्दार्चिताङ्घ्रिः ॥

अमुष्य मन्त्रस्य रदान्तयुक्तं बीजं सदण्डं नकुलीशपूर्वम् ।

शक्तिस्तु सा खण्डलकर्णपूर्वसहार्धजैवातृकमाननान्तम् ॥

(मेरुतन्त्रे तु)

बालाबीजं वाग्भवं स्यात् तार्त्तीयं शक्तिरुच्यते ।

कीलकं कामराजः स्याद्द्विरावृत्या षडङ्गकम्—इत्युक्तम् ॥

(त्रिपुरासारसमुच्चये)

वर्णः शुक्लो मुनिभिस्त्रिभुवनमहितस्य मन्त्रराजस्य ।

आगमपारगमतिभिर्गान्धारोऽस्य स्वरः गदितः ॥

विद्यामूलोत्पत्तिरेषा मयोक्ता

ज्ञातव्येयं सर्वथा सिद्धिकामैः ।

देव्या शप्ता येन विद्येयमाद्या

पूर्वं तेन प्राणहीनाऽभवत् सा ॥

ज्ञातव्येत्यनेन तु जप्तव्येति सूचितम् ।

देव्या शप्तेत्यनेन च निषेधहेतुर्दर्शितः । शापनिर्मुक्तिप्रकारस्तु तत्रैवाक्तः ।

शिवशक्तिबीजमत एव शम्भुना

निहितं तयोरुपरि पूर्वबीजयोः ।

अकुलं कुलोपरि च मध्यसाधरे

दहनं ततः प्रभृति सोर्जिताऽभवत् ॥

संज्ञामेदमाह ।

भैरवीयमुदिता कुलपूर्वा देशिकैर्यदि भवेत् कुलपूर्वा ।

सैव शीघ्रफलदा भुवि विद्येत्युच्यते पशुजनेष्वतिगोप्या ॥

अकुलं हकारस्तपूर्वा चेद्भैरवी । कुलं सकारस्तपूर्वा चेद्विद्येत्युच्यते इत्यर्थः ।
आद्यन्तबीजयेर्वीहोवाभावाद्दृश्यमाणत्रिपुरभैरवोविद्यावैलक्षण्यमस्या बोद्धव्यम् ।

अस्या ध्यानमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

अभयं पुस्तकं बालां वरं च दधतीं करैः ।

अरुणामरुणाब्जस्थां रक्तवस्त्रां द्विजेशकाम् ॥

तन्त्रान्तरे तु ।

संस्मरेत् त्रिपुरां बालां शरच्चन्द्रसमप्रभाम्-इति ।

शुक्लवर्णयमुक्ता ।

(त्रिपुरासारसमुच्चये)

पाशाङ्कुशाभयवरोद्यतपाणिपद्माम्... इत्यायुधविशेष उक्तः ।

अथ पुरश्चरणं (ज्ञानार्णवे)

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं हवनं चरेत् ।

तर्पणादि ततः कुर्यात् सर्वसौभाग्यभागभवेत्-इति ॥

इति श्रीविद्याप्रकरणम् ।

अथ भुवनेश्वरोविद्या (शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये जगद्धात्रोमधुना भुवनेश्वरीम् ।

ब्रह्मादयोऽपि यां ज्ञात्वा लेभिरे श्रियमूर्जिताम् ॥

नकुलोशोऽग्निमारूढो वामनेत्रार्धचन्द्रवान् ।

बीजं तस्याः समाख्यातं सेवितं सिद्धिकाङ्क्षिभिः ॥

ऋषिः शक्तिर्भवेच्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।

कथिता सुरसङ्घेन सेविता भुवनेश्वरी ॥

षड्दीर्घयुक्तबीजेन कुर्यादङ्गानि षट् क्रमात् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यदिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।

स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशापाशाभीतिकरां प्रभजेद्भुवनेश्वरीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

प्रजपेन्मन्त्रविन्मन्त्रं द्वात्रिंशल्लक्षमानतः ।

त्रिखादुयुक्तैर्जुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा बीजत्रयात्मकम् ।

मन्त्रं समुद्धरेन्मन्त्री त्रिवर्गफलसाधनम् ॥

षड्दोर्घभाजा मध्येन वाग्भवाद्येन कल्पयेत् ।

षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तानि मन्त्रवित् ॥

अथ ध्यानम् ।

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्-

तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ।

पाणिभ्यां मणिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं

सौम्यां रत्नघटस्थसव्यचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

✓ रविलक्षं जपेन्मन्त्रं पायसैर्मधुराप्लुतैः ।

दशांशं जुहुयान्मन्त्री पीठे प्रागीरिते यजेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्बीजपुटिता माया विद्येयं त्र्यक्षरी मता ।

मध्येन दीर्घयुक्तेन वाक्पुटेन प्रकल्पयेत् ॥

अङ्गानि जातियुक्तानि क्रमेण मनुवित्तमः ।

अथ ध्यानम् ।

श्यामाङ्गी शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं

रत्नाढ्यं चषकं परं भयहरं संबिभ्रतीं शाश्वतीम् ।

मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां नेत्रत्रयोल्लासिनीं

वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तदशांशतः ।

पालाशपुष्पैः स्वाद्वक्तैः पुष्पैर्वा राजवृक्षकैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अनन्तो विन्दुसंयुक्तो मायाब्रह्माग्नितारवान् ।

पाशादिस्त्र्यक्षरो मन्त्रः सर्ववश्यफलप्रदः ॥

ऋष्याद्याः पूर्वमुक्ताः स्युर्बीजेनाङ्गक्रिया मता ।

अथ ध्यानम् ।

वराङ्कुशौ पाशमभीतिमुद्रां करैर्वहन्तीं कमलासनस्थाम् ।

बालार्ककोटिप्रतिमां त्रिनेत्रां भजेऽहमाद्यां भुवनेश्वरीं ताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हविष्यभुग्जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।

षट्सहस्रं प्रजुहुयाज्जपान्ते मन्त्रवित्तमः ॥

दधिक्षौद्रघृताक्ताभिः समिद्धिः क्षीरभूरूहाम् ।

तत्सङ्ख्यया तिलैः शुद्धैः पयोऽक्तैर्जुहुयात् ततः ॥

अस्याः पुमान्महादेवः । तन्मन्त्रः पञ्चाक्षरस्तत्प्रकरण एवोक्तः ।

इति भुवनेश्वरोविद्याप्रकरणम् ।

अथ भैरवीविद्या ।

तत्रादौ त्रिपुरभैरवीविद्या प्रोक्ता (शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये परां विद्यां त्रिपुरामतिगोपिताम् ।

यां ज्ञात्वा सिद्धसंज्ञानामधिपो जायते नरः ॥

वियद्भृगुहुताशस्थो भौतिको विन्दुशेखरः ।

वियत् तदादिकेन्द्राग्निस्थितं वामाक्षिविन्दुमतम् ॥

आकाशभृगुवह्निस्थो मनुः सर्गेन्दुखण्डवान् ।

वामभवं प्रथमं बीजं कामबीजं द्वितीयकम् ॥

तृतीयं शक्तिबीजाख्यं त्रिभिर्बीजैरितीरिता ।
 पञ्चकूटात्मिका विद्या वेद्या त्रैपुरभैरवी ॥
 ऋषिः स्यादक्षिणामूर्तिश्छन्दः पङ्क्तिः समीरितम् ।
 देवता देशिकैरुक्ता देवी त्रिपुरभैरवी ॥

तथा ।

षड्दीर्घयुक्तेनाद्येन बीजेनाङ्गक्रिया मता ।
 न्यासान्तराणि विस्तरमयादुपेक्षितानि पुरश्चरणस्यैवात्र निरूपणीयत्वात् ।
 अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
 रक्तालितपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् ।
 हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्बक्कारविन्दश्रियं
 देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दीक्षां प्राप्य जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
 पुष्पैर्भानुसहस्राणि जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षजैः ॥
 त्रिमध्वक्तैः प्रसूनैर्वा करवीरसमुद्भवैः ।

तत्त्वलक्षं लक्षत्रयम् ।

अथ चैतन्यभैरवोमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

चैतन्यभैरवीमन्त्रस्त्यक्षरः कथ्यतेऽधुना ।
 सहावैकारसंयुक्तौ प्रथमं बीजमीरितम् ॥
 सकला ह्रीं समायुक्ता द्वितीयं बीजमुच्यते ।
 सहारा ओसमायुक्ता विसर्गान्तास्तृतीयकम् ॥

अत्र त्रिभिर्बीजैर्द्विरावृत्त्या षडङ्गन्यासः कार्यः ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम् ।
 मुकुटोर्ध्वलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बराश्रिताम् ॥

पाशाङ्कुशधरां नित्यां वामहस्तकपालिनीम् ।
वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघनस्तनीम् ॥
एवं ध्यात्वा यजेद्देवीं पूर्वसिंहासने स्थिताम् ।
पुरश्चर्यादिकं प्राग्वत् प्रयोगाँश्चापि साधयेत् ॥

प्राग्वदिति त्रिपुरभैरवीवत् ।
अथ भुवनेश्वरभैरवीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भुवनेश्वरभैरवीम् ।
हसवैकारसंयुक्तौ प्रथमं बीजमीरितम् ॥
हसकला ह्रीं समेता द्वितीयं बीजमुच्यते ।
हसवौकारसंयुक्तौ विसर्गान्तं तृतीयकम् ॥
षड्दीर्घान्वितमध्येन बीजेनोक्तं षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमप्रभाम् ।
चन्द्ररेखाजटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससम् ॥
नानालङ्कारशुभगां पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
पाशाङ्कुशवराभीतीर्दधानां च शिवां श्रये ॥
चैतन्यभैरवीवत् स्याद्यद्यन्तोक्तमिहार्थवत् ।

अस्याः पुरश्चरणं तु त्रिपुरभैरवीपुरश्चरणवद्बोध्यम् ।

अथ कमलेश्वरीभैरवी तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भैरवीं कमलेश्वरीम् ।
हसस्थाने सहेत्युक्त्वा सर्वं मन्त्रादि पूर्ववत् ॥
राज्ञा ज्ञाता ततः शप्ता तुहिनागोऽभवन्नदी ।
त्यक्तस्तया वाममार्गो राजभीत्या तु मत्कृते ॥
यतो लब्धं तया दुःखं कलौ ख्यातिं गमिष्यति ।
प्रमण्डेषु च देवेषु प्रत्यक्षेयं भविष्यति ॥

अवर्णाश्चापि वर्णाश्च भविष्यन्ति वरप्रदाः ।
 त्यक्त्वा मपञ्चकं पूजां कृत्वा ये जपतत्पराः ॥
 अस्यास्तीरे पुरश्चर्या नवकात् संप्रसीदति ।
 भुवनेशी भैरवी तु कृत्वा रूपान्तरं मम ॥
 कार्यार्थं बहवः शिष्याः कौलिका वामिनः कृताः ।
 तस्या ध्यानाद्यर्चनादि प्राग्वदक्षिणमार्गतः ॥

अथ संपत्प्रदाभैरवी (ज्ञानार्णवे)

यथाऽसौ त्रिपुरा बाला तथा त्रिपुरभैरवी ।
 संपत्प्रदा नाम तस्याः शृणु निर्मलमानसे ॥
 शिवश्चन्द्रो वह्निसंस्थो वाग्भवं तदनन्तरम् ।
 कामबीजं तथा देवि शिवचन्द्रान्वितं ततः ॥
 पृथ्वीबीजं तु वह्नाढ्यं तार्त्तीयं शृणु वल्लभे ।
 शक्तिबीजे महेशानि शिववह्नी नियोजयेत् ॥
 कुमार्याः परमेशानि हित्वा सर्गं तु वैन्दवम् ।
 त्रिपुराभैरवी देवी महासंपत्प्रदा प्रिये ॥

त्रिपुरभैरवी विसर्गरहिता संपत्प्रदा भवति ।

न्यासपूजादिकं सर्वं त्रिपुराभैरवीसमम् ।

ध्यानं यथा ।

आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रकलाजटाम् ।
 किरीटरत्नविलसच्चित्रचित्रितमौक्तिकाम् ॥
 गलद्रुधिरपङ्काढ्यमुण्डमालाविराजिताम् ।
 नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम् ॥
 मुक्ताहारलताराजत्पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
 रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम् ॥

पुस्तकं चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम् ।

वरदानरतां नित्यां महासंपत्प्रदां स्मरेत् ॥

अस्याः पुरश्चरणमपि पूर्ववद्बोध्यम् ।

अथ कौलेशभैरवी तत्रैव ।

संपत्प्रदाभैरवीर्वाद्बुद्धि कौलेशभैरवीम् ।

हसराद्यैव देवेशि त्रिषु बीजेषु पार्वति ॥

इयं तु सहराद्या स्याद्बुध्यानपूजादिकं तथा ।

त्रिपुरभैरवीवदिति शेषः । आदिपदात् पुरश्चरणस्यापि संग्रहः ।

अथ कामेश्वरभैरवी तत्रैव ।

कामेश्वरी च रुद्राणां पूर्वसिंहासने स्थिता ।

एतस्या एव विद्याया बीजद्वयमुदाहृतम् ॥

तदन्ते परमेशानि नित्यक्लिप्ते मदद्रवे ।

एतस्या एव तार्त्तीयं रुद्राणां परमेश्वरि ॥

ध्यानपूजादिकं देवि चैतन्यावत् समीरितम् ।

एवं पुरश्चरणमपि ।

अथ षट्कूटाभैरवी (ज्ञानाण्वि)

डाकिनीराकिनीबीजे लाकिनीकाकिनीयुगम् ।

शाकिनीहाकिनीबीजे आहृत्य सुरसुन्दरि ॥

आद्यमैकारसंयुक्तमन्यदीकारमण्डितम् ।

शक्रस्वरान्वितं देवि तार्त्तीयं बीजमालिखेत् ॥

विन्दुनादकलाक्रान्तं तृतीयं शैलसम्भवे ।

द्विरावृत्त्या षडङ्गानि विधाय परमेश्वरि ॥

पुरश्चरणं तु पूर्ववत् ।

अथ नित्याभैरवी तत्रैव ।

एतस्या एव विद्यायाः षडङ्गाः क्रमशः स्थिताः ।

विपरीतान् वद प्रौढे विद्येयं भोगमोक्षदा ॥

न्यासपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ।

अथ रुद्रभैरवी तत्रैव ।

शिवचन्द्रौ मादनान्तं पान्तं वह्निसमन्वितम् ।

शक्तिभिन्नं विन्दुनादकलाढ्यं वाग्भवं प्रिये ॥

संपत्प्रदाया भैरव्याः कामबीजं तदेव हि ।

सदाशिवस्य बीजं तु महासिंहासनस्य च ॥

सदाशिवबीजं प्रेतबीजम्

एषा विद्या महेशानि वर्णितुं नैव शक्यते ।

ऋष्यादिन्यासस्त्रिपुरभैरवीवत् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम् ।

नानालङ्कारशुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम् ॥

वमद्बुधिरमुण्डालीकलितां रक्तवाससम् ।

त्रिशूलं डमरुं खड्गं तथा खेटकमेव च ॥

पिनाकं च शरान् देवीं पाशाङ्कुशयुगं क्रमात् ।

पुस्तकं चाक्षमालां च शिवसिंहासनस्थिताम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

न्यासपूजादिकं सर्वं त्रिपुराभैरवीसमम् ।

एवं पुरश्चरणमपि । अत्र भैरवो वटुकस्तमन्त्रपुरश्चरणं शिवप्रकरणे प्रोक्तम् ।

इति भैरवीप्रकरणम् ।

अथ छिन्नमस्ताविद्या ।

(विश्वसारे यामले च)

प्रचण्डचण्डिकां वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम् ।

यस्याः प्रसादमात्रेण शिव एव भवेन्नरः ॥

अपुत्रो लभते पुत्रसधनो धनमानुयात् ।

कवित्वं च सुपाण्डित्यं लभते नात्र संशयः ॥

मन्त्रोद्धारमाह ।

लक्ष्मीं लज्जां ततो मायां मात्राद्वादशिकामथ ।

वज्रवैरोचनीये च माये फट्स्वाहया युते ॥

लक्ष्मीबीजं यदाऽऽद्यं स्यात् तदा श्रीः सर्वतोमुखी ।

लज्जाबीजेन चाद्येन वश्यतां यान्ति योषितः ॥

मायाबीजेन चाद्येन महापातकनाशनम् ।

मात्राद्वादशिकाबीजमाद्यं स्यान्मुक्तिदायकम् ॥

अत्र लज्जापदं कामबीजपरम् ।

तथा चेत्कम् ।

अत्र लज्जापदं देवि कामबीजपरं भवेत् ।

महाकालमतं प्रोक्तं मन्त्रोद्धारं शुभावहम्-इति ॥

मन्त्रोद्धारश्लोकस्थलज्जापदस्य तु मायाबीजपरत्वेऽपि न क्षतिः ।

श्रीबीजानन्तरं क्व चित् कामबीजस्य क्व चिन्मायाद्वयस्य च दर्शनात् । मायापदस्य क्व चित् कूर्चपरत्वमपि दृश्यते ।

सविन्दुवामश्रुतियुग्वियन्माया प्रकीर्तिता-इति ।

मात्राद्वादशिका वाग्भवम् ।

(विश्वसारे)

ताराद्या षोडशी चान्या भवेत् सप्तदशाक्षरी ।

एषा विद्या महाविद्या भुक्तिमुक्तिकरी सदा ॥

तदुक्तं (मेरुतन्त्रे)

प्रणवं च रमां लज्जां बीजद्वन्द्वं च वाग्भवम् ।

वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट्स्वाहा घनाक्षरः ॥

भैरवोऽस्य मुनिः प्रोक्तः सम्राट्छन्द उदाहृतम् ।

छिन्नमस्ता भवेद्देवी वाममार्गेण सिद्धिदा ॥

(यामलादौ)

आसामृषिभैरवोऽहं नाम्ना तु क्रोधभूपतिः ।
सम्राट्छन्दो देवता च छिन्नमस्ता प्रकीर्तिता ॥
मायाबीजं स्वाहा शक्तिः कथिता ब्रह्मयोनिना ।
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥

(मेरौ)

ओं खड्गाय हृदाख्यातमौ सुखङ्गाय मस्तकम् ।
ऊँ वज्राय शिखा प्रोक्ता ऐँ पाशाय तनुच्छदम् ॥
औमङ्कुशाय नेत्रं स्यादश्वासुरक्षयाय च ।
हूँ हूँ नवाणोऽस्त्रमन्त्रः सर्वे स्युः प्रणवादिकाः ॥
स्वाहान्ताः सर्व एवैते ततो ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानं यथा ।

भास्वन्मण्डमध्यस्थां विपरीतरतस्थितौ ।
रतिकां सारूढां विकीर्णसकलालकाम् ॥
वामे करे निजशिरश्छिन्नं संदधतीं पुनः ।
गलान्निर्गतमस्त्रं च पिवन्तीं तन्मुखेन च ॥
डाकिनीवर्णिनीभ्यां च सखीभ्यां परिवारिताम् ।

अथ मन्त्रान्तरम् (महाकालसंहितायाम्)

अथातश्छिन्नमस्ताया मन्त्रं ते व्याहराम्यहम् ।
जिघृक्षयाऽपि यस्य स्युः साधकस्याष्ट सिद्धयः ॥
नातः परतरा का चिदुग्रा देवी भविष्यति ।
तस्मादसक्तैर्मनुजैर्न ग्राह्येयं कथं चन ॥
सिद्धिर्वा मृत्युरपि वा द्वयोरेकतरं भवेत् ।
प्रणवं च रमाबीजं लज्जां वाग्भवमेव च ॥
वज्रवैरोचनीये च इत्येवं तत उद्धरेत् ।

क्रोधद्वयं ततश्चास्त्रं स्वाहान्तः षोडशाक्षरः ॥

अस्य न्यासादिकं पूर्ववत् कार्यम् ।

अथ ध्यानम्

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि तत्र चेतो निवेशय ।
 खनाभौ नीरजं ध्यायेत् शुद्धं विकशितं सितम् ॥
 तत्पद्मकोशमध्ये तु मण्डलं चण्डरोचिषः ।
 जपाकुलुमसङ्काशं रक्तबन्धूकसन्निभम् ॥
 रजःसत्त्वतमोरेखायोनिमण्डलसन्निभम् ।
 मध्ये तस्या महादेवीं सूर्यकोटिसमप्रभाम् ॥
 छिन्नमस्तां करे वामे धारयन्तीं स्वमस्तकम् ।
 प्रसारितमुखीं भीमां लेलिहानोग्रजिह्विकाम् ॥
 पिवन्तीं रक्तधारां च निजकण्ठसमुद्भवाम् ।
 विकीर्णकेशपाशां तां नानापुष्पसमन्विताम् ॥
 दक्षिणे च करे कर्त्रीं मुण्डमालाविभूषिताम् ।
 दिगम्बरां महाघोरां प्रत्यालीढपदस्थिताम् ॥
 अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
 सदा षोडशवर्षीयां पीनोन्नतपयोधराम् ॥
 नागाङ्गदां नागकाञ्चीं नागनूपुरसंयुताम् ।
 नागकुण्डलसंयुक्तामष्टनागसमन्विताम् ॥
 विपरीतरतासत्करतिकामोपरिस्थिताम् ।
 डाकिनीवर्णिनीयुक्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
 दक्षिणे वर्णिनीं ध्यायेद्वामपार्श्वे तु डाकिनीम् ।
 वर्णिनीं लोहितश्यामां मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ॥
 कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ।

देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम् ॥
 अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
 डाकिनीं वामपार्श्वे तु कल्पान्तज्वलनोपमाम्* ॥
 विद्युच्छटाभनयनां दन्तपङ्क्तिवलाकिनीम् ।
 दंष्ट्राकरालवदनां पीनोत्तुङ्गपयोधराम् ॥
 महाघोरां महादेवीं मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ।
 लम्बोदरीं कालरात्रीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ॥
 लेलिहानमहाजिह्वां मुण्डमालाविभूषिताम् ।
 कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
 देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम् ।
 करस्थितकपालेन भीषणेनातिभीषणाम् ॥
 आभ्यां निषेव्यमाणां तु ध्यायेद्देवीं विचक्षणः ।
 दुर्निरीक्षां चेतसाऽपि सर्वकामफलप्रदाम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (यामले)

भुवनेशीं कामबीजं कूर्चबीजं च वाग्भवम् ।
 भुवनेशीं कूर्चबीजं वाग्भवं तदनन्तरम् ॥
 वज्रवैरोचनीये च हुँ फट् स्वाहा ततः परम् ।

मन्त्रान्तरम् ।

हृल्लेखावाग्भवं कूर्चं वाग्भवं कूर्चमेव च ।
 अस्त्रान्ता छिन्नमस्ता या महाविद्या प्रकीर्तिता ॥
 यस्याश्च सदृशी विद्या जगत्स्वपि न विद्यते ।
 षड्वर्णोऽयं मनुः साक्षान्मोक्षदो नात्र संशयः ॥

एतदुभयस्य ऋष्यादिकरषडङ्गन्यासः पूर्ववत् कार्यः ।

* जलदोपमामिति पाठः ।

ध्याने विशेषो यथा ।

अस्या ध्यानमहं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने ।
 प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्रिकां
 दिग्वह्नां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिवन्तीं मुदा ।
 नागाबद्धशिरोमणित्रिनयनां हृद्युत्पलालङ्कृतां
 रत्यासक्तमनोभवोपरिदृढां ध्यायेज्जपासन्निभाम् ॥
 दक्षे चातिसिता विमुक्तचिकुरा कर्त्रीं तथा खर्परं
 हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवा नाम्नाऽपि सा वर्णिनी ।
 देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिवन्ती मुदा
 नागाबद्धशिरोमणिर्मनुविदा ध्येया तथा सा सुरैः ॥
 वामे कृष्णतनुस्तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं
 प्रत्यालीढपदा कबन्धविगलद्रक्तं पिवन्ती मुदा ।
 सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी
 शक्तिः साऽपि परात् परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वज्रवैरोचनीये च कूर्चयुग्मं सफट् ठठः ।
 ताराद्यैषा महाविद्या सर्वतेजोऽपहारिणी ॥
 न्यासध्यानादिकं सर्वं षोडशीवत् समाचरेत् ।

मन्त्रान्तरम् ।

वियच्छ्रोत्रयुतं विन्दुनादयुक्तं ततः प्रिये ।
 एकाक्षरी महाविद्या त्रैलोक्यवशकारिणी ॥
 द्विठान्तैषा महाविद्या त्रैलोक्यमोहकारिणी ।
 ताराद्या च भवत्येषा चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
 न्यासध्यानादिकं सर्वं पूर्ववत् परिकीर्तितम् ।

अथ पुरश्चरणं (विश्वसारे)

लक्षमेकं जपं कुर्यात् पुरश्चरणकर्मणि ।

महाविद्याविषये च जपं लक्षप्रमाणकम् ॥

सर्वत्र सर्वतन्त्रेषु कथितं पद्मयोनिना ।

(रुद्रयामलेऽपि)

पुरश्चर्यां जपेच्छक्षं दशांशं जुहुयात् ततः ।

घृताक्तैर्विल्वकाष्ठैश्च होमकर्म समाचरेत् ॥

उदुम्बरसमिद्धिर्वा पालाशैर्वा समाचरेत् ।

अपामार्गसमिद्धिर्वा* होतव्यं मन्त्रसिद्धये ॥

(यामलान्तरेऽपि)

देवीं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं लक्षसङ्ख्यं हविष्यभुक् ।

जुहुयात् तद्दशांशेन विल्वकाष्ठैर्घृतप्लुतैः ॥

(वाराहीतन्त्रे तु)

शून्यामारे श्मशाने च वृषशून्ये शिवालये ।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं ततः सिद्धिर्भवेद्भुवम्-इत्युक्तम् ॥

(गन्धर्वतन्त्रेऽपि)

दिवसे ब्रह्मचर्येण रात्रौ तु स्त्रीसहायवान् ।

मपञ्चकं पुरस्कृत्य महाशङ्खाक्षमालया ॥

जपेच्छक्षत्रयं देवि युगानुरूपतः कलौ ।

शतसाहस्रकं चान्यजपेच्छ्रद्धापरो नरः ॥

समाप्ते च त्रिलक्षे तु होमकर्म समाचरेत् ।

कलौ पापसमाकीर्णे सत्यधर्मविवर्जिते ॥

चतुर्गुणा क्रिया जप्या तेन सिद्धिर्न संशयः ।

दिवसे दक्षिणाचारेण रात्रौ वामाचारेण च पुरश्चरणविधिः कौलिकविषयः ।

* अपामार्गैः शमीभिर्वा इति २ पु० पा० ।

(मेरुतन्त्रे)

एवं पञ्चा प्रकर्त्तव्या जपेष्टक्षचतुष्टयम् ।

पालाशैर्विल्वजैर्वाऽपि जुहुयात् कुसुमैः फलैः ॥

तर्पणादि तत कुर्यादेवं सिद्धो भवेन्मनुः ।

अत्र (विश्वसारो-) कपोडशाक्षरमन्त्रस्य पुरश्चरणमेकलक्षजपस्तन्त्रान्तरोक्तमन्त्रा-
न्तराणां लक्षत्रयजपः । (मेरुतन्त्रो-) कसप्तदशाक्षरमन्त्रस्य लक्षचतुष्टयपरिमितो जप
इति वदन्ति ।

(भूतभैरवे)

आदौ जप्त्वा भैरवस्य क्रोधस्यास्य मनं जपेत् ॥

अस्थिमालां समादाय वज्रवैरोचनीमनुम् ।

क्रोधभैरवमन्त्रस्तत्रैवोक्तः ।

अथ क्रोधमनुं वक्ष्ये असाध्यं येन सिध्यति ।

बीजं हालाहलं गृह्य क्रोधबीजमतः परम् ॥

भयङ्करार्णमाभाष्यासिताङ्गं क्षतजस्विषम् ।

प्रलयाग्निमहाज्वालामाभाष्य मनुमुद्धरेत् ॥

एवमुच्चारितः क्रोधः स्वयमेव प्रसिध्यति ।

ततस्तु क्रोधमन्त्रेण षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥

विषं वज्रयुतं बोधिं महाकालं न्यसेच्छृदि ।

विषं हरयुगं वज्रकूर्चाद्यं विन्यसेच्छिरः ॥

हालाहलं देहयुतं वज्रकालं न्यसेच्छिखाम् ।

विषमस्त्रयुतं वज्रमायुधं कवचं न्यसेत् ॥

ताराबीजयुतं वज्रं महाकालाय नेत्रयोः ।

विषं हनयुतं गृह्य दहगृह्य परान्वितम् ॥

क्रोधं वज्रयुतं तद्वत् सर्वदुष्टानथापरम् ।

ततो मारय वज्रास्त्रं दिग्बन्धान्तं षडङ्गकम् ॥

ध्यानमाह ।

तत्र मध्ये न्यसेद्भीमं तप्तज्वालासमाकुलम् ।
 साट्टहासं महारौद्रं भिन्नाञ्जनचयोपमम् ॥
 प्रत्यालीढं चतुर्बाहुं दक्षिणे *वज्रधारिणम् ।
 तर्जनीं वामहस्तेन तोक्ष्णदंष्ट्राकरालिनम् ॥
 कपालरत्नमुकुटं त्रैलोक्यस्य विनायकम् ।
 आदित्यकोटिसंकाशमष्टनागविभूषितम् ॥
 अपराजितपदाक्रान्तमुद्रावान् बलविष्टिभिः ।
 अनामिकाद्वयं बद्ध्वा आकुञ्च्य तर्जनीद्वयम् ॥
 कनिष्ठां मध्यमां चैव ज्येष्ठाङ्गुष्ठेन च क्रमात् ।
 एवं मुद्राधरो भीमस्त्रैलोक्यासाध्यसाधकः ॥

अस्य मन्त्रस्य पुरश्चरणं तु प्रचण्डचण्डिकापुरश्चरणवत् ।

जपहोमविधानं च शिवशक्त्योः समं विदुः—इति वचनात् ।

इति छिन्नमस्ताप्रकरणम् ।

अथ धूमावतीविद्या ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

दान्तौ सवामकर्णेन्दुधूमावत्यग्निगेहिनी ।
 अष्टाक्षरी महाविद्या भजतां सर्वसिद्धिदा ॥

(मेरुतन्त्रे)

पिप्पलादो मुनिश्छन्दो निवृज्येष्ठाऽस्य देवता ।

* वज्रधारिणम् इति ४ पु० प्रा० ।

† रमा कामस्तथा लज्जा वाग्भवं वज्रवैपदम् ।
 रोचनीये लज्जाद्वन्द्वं मन्त्रः स्वाहासमन्वितः ॥
 इयं सा षोडशी प्रोक्ता सर्वकामफलप्रदा ।
 कथिताः सकला विद्याः सारात् सारतराः शुभाः ॥
 २ पु० इदं श्लोकद्वयमधिकं दृश्यते ।

षड्दीर्घविन्दुयुक्तेन धकारेण षडङ्गकम् ॥
 आद्यबीजद्वयान्तस्थैः षट्कर्णैर्न्यासमाचरेत् ।
 अङ्गुष्ठादौ षडङ्गेषु पुनर्देवीं विचिन्तयेत् ॥

ध्यानं यथा ।

विवर्णां चञ्चला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा ।
 विमुक्तकुन्तला दीर्घा विधवा विरलद्विजा ॥
 काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा ।
 शूर्पहस्ताऽतिरुक्षाक्षी धूतहस्ता त्वरान्विता ॥
 प्रवृद्धरोमा तु भृशं जटिला कुटिलेक्षणा ।
 क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं सदा कलहतत्परा ॥
 एवंविधां सदा ध्यायेत् ततः कर्म समाचरेत् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेत् कृष्णचतुर्दश्यां शून्यागारे दिवा निशि ।
 उपवासपरश्चैवमेकाहात् सिद्धिमाप्नुयात् ॥
 यद्वा श्मशाने विपिने जपेच्छक्षं तु वाग्यतः ।
 सोष्णीष आर्द्रवासाश्च तेन मन्त्रः प्रसिध्यति ॥
 होमश्चात्र धृतेनैव तर्पणादि ततश्चरेत् ।
 अथ वा प्रजपेच्छक्षं श्मशाने विगताम्बरः ॥
 निशाभोजी दशाङ्गेन तिलैर्हवनमाचरेत् ।

अथ मन्त्रान्तरं तन्त्रान्तरे ।

धूँ बीजत्रितयं प्रोच्य धुर्युग्मं समुच्चरेत् ।
 धूमावतीपदं प्रोच्य क्रौंस्वाहा फट्समन्विता ॥
 मन्त्रः प्राथमिकः प्रोक्तो द्वितीयं शृणु सादरम् ।
 प्रणवं धूम्रबीजं च धूमावतिपदं वदेत् ॥

देवदत्तो धावतीति स्वाहान्तो मनुराडयम् ।
 ऋषिः क्षपणकः ख्यातो गायत्री छन्द ईरितम् ॥
 धूमावती देवता च धूँबीजं बीजमीरितम् ।
 स्वाहा शक्तिः समुच्चाटे विनियोगः प्रकीर्तितः ॥
 धाँषट्कैस्तु षडङ्गानि ध्यानं शृणु वरानने ।
 काकारूढाऽतिकृष्णाभा भिन्नदन्ता विरागिणी ॥
 मुक्तकेशी सुधूम्राक्षी क्षुत्तृषार्त्ता रयातुरा ।
 चञ्चला चातिकामार्त्ता क्लिष्टा पुष्टा पिशङ्गिका ॥
 मलिना श्रमणी रक्ता व्यक्तगन्धा विरोधिनी ।
 धूतशूर्पाग्रहस्ता च ध्येया धूमावती परा ॥

पुरश्चरणमाह ।

लक्षं जपेन्महेशानि जगदुच्चाटनं चरेत् ।

अथाघोरमन्त्रः (शारदायाम्)

अथाभिधास्ये विधिवदघोरास्त्रमनूत्तमम् ।

यस्य संस्मरणादेव सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥

“हुमन्तः स्तम्भने मन्त्रः क्रोमाकृष्टौ समासने ।

वषडन्तः संवरणे नमोऽन्तो विषमासने ॥

ग्रहचौररिपुध्वंसे हुँ क्रोमन्तो विधीयते ।

शक्तान्तश्चाखिलेष्टास्यै क्षौमन्तो मारणे भवेत् ॥

फडन्तो भूतसंहारे मन्त्रोऽयं कल्पपादपः ।

(ईश्वरकल्पे) तु प्रस्फुरद्वयं बन्धद्वयं च । अयं मन्त्र एकचत्वारिंशदक्षर उद्धृतः
 (पदार्थादर्शटोकायाम्) ”

मायास्फुरद्वयं भूयः प्रस्फुरद्वितयं ततः ।

घोरघोरतरेत्यन्ते तनुरूपपदं पुनः ॥

“ ” एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः केवलध्वन्यपुस्तकेषु नोपलभ्यते ।

चटयुग्मं तदन्ते स्यात् प्रचट द्वितयं ततः ।
 कहयुग्मं वमद्वन्द्वं* ततो बन्धयुगं पुनः ॥
 घातयद्वितयं वर्म फडन्तः समुदाहृतः ।
 एवं पञ्चाशदणोऽयमघोरास्त्रमहामनुः ॥
 अघोरोऽस्य मुनिः प्रोक्तश्छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम् ।
 अघोररुद्रः संदिष्टो देवता मन्त्रवित्तमैः ॥
 हृदयं पञ्चभिः प्रोक्तं शिरः षड्गिरुदाहृतम् ।
 शिखा दशभिराख्याता तावद्भिः कवचं मतम् ॥
 वसुवर्णैः स्मृतं नेत्रमाशाणैरङ्गमीरितम् ।

ध्यानम् ।

सजलघनसमाभं भीमदंष्ट्रं त्रिनेत्रं
 भुजगधरमघोरं रक्तवस्त्राङ्गरागम् ।
 परशुडमरुखङ्गाखेटकं बाणचापौ
 त्रिशिखनरकपाले बिभ्रतं भावयामि ॥

अथास्य पुरश्चरणं तत्रैव ।

लक्ष्मेकं जपेन्मन्त्रं घृतसिक्तैस्त्रिलैः शुभैः ।
 तदशांशं प्रजुहुयान्मन्त्री मन्त्रस्य सिद्ध्ये ॥

इति धूमावतीप्रकरणम् ।

अथ वगलामुखीविद्या ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि स्तम्भनीं वगलामुखीम् ।
 तारं मायां समुच्चार्य वदेच्च वगलामुखि ॥
 तदग्रे सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ।
 स्तम्भयेति पदं जिह्वां कीलयेति ततः परम् ॥

* वहयुग्मं वदद्वन्द्वम् इति २ पु० पा० ।

बुद्धिं विनाशय ह्रीं ॐ स्वाहा षट्त्रिंशवर्णकः ।
 नारायणो मुनिस्त्रिष्टुप्छन्दश्च वगलामुखी ॥
 देवी बीजं तु हृल्लेखा स्वाहा शक्तिः समीरिता ।
 विनियोगोऽस्य विख्यातः पुरुषार्थचतुष्टये ॥
 हृल्लेखा हृदयं प्रोक्तं शिरश्च वगलामुखी ।
 शिखा तु सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ॥
 स्तम्भयेति च वमोक्तं जिह्वां कीलय नेत्रकम् ।
 बुद्धिं विनाशयास्त्वं स्यात् षडङ्गन्यास ईरितः ॥

अथ ध्यानम् ।

गम्भीरां च मदोन्मत्तां तप्तकाञ्चनसन्निभाम् ।
 चतुर्भुजां त्रिनयनां कमलासनसंस्थिताम् ॥
 मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वां च वज्रकम् ।
 पीताम्बरधरां सान्द्रवृत्तपीनपयोधराम् ॥
 हेमकुण्डलभूषां च पीतचन्द्रार्धशेखराम् ।
 पीतभूषणभूषां च स्वर्णसिंहासनस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हरिद्राग्रथिता माला पीताम्बरधरः स्वयम् ।
 पीतासनः स्मरेत् पीतमयुतं जपमाचरेत् ॥
 दशांशेन कृतो होमः पीतद्रव्यैः प्रतर्पयेत् ।
 सर्वं पीतोपचारेण मन्त्रः सिद्ध्यति मन्त्रिणः ॥

वज्रयोगिनीमिश्रकृतसंग्रहे तु ।

पीताम्बरधरो भूत्वा पूर्वाशाभिमुखस्थितः ।
 लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हरिद्राग्रन्थिमालया ॥
 ब्रह्मचर्ययुतो नित्यं प्रयतो ध्यानतत्परः ।

प्रियङ्गुपायसेनापि पीतपुष्पैश्च होमयेत्—इत्युक्तम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (यामले)

वह्निहीनेन्द्रयुग्माया वगलामुखि सर्वयुक् ।
 दुष्टानां वाचमित्युक्त्वा मुखं स्तम्भय कीर्त्तयेत् ॥
 जिह्वां कीलय बुद्धिं च विनाशाय पदं वदेत् ।
 पूर्वबीजं ततस्तारं वह्निजायावधिर्भवेत् ॥
 ताराधिका चतुस्त्रिंशदक्षरा वगलामुखी ।
 नारायणो* मुनिश्छन्दः पङ्क्तिः श्रीवगलामुखी ॥
 देवता मन्त्रं बीजं शक्तिः पावकसुन्दरी ।
 सर्वशत्रुमुखस्तम्भे विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥
 षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गन्यास ईरितः ।

अथ ध्यानम् ।

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदी-
 सिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ।
 पीताम्बरां कनकभूषणमाल्यशोभां
 देवीं भजामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ॥
 जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् ।
 †पदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ॥
 अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

जपमाला च देवेशि हरिद्राग्रन्थिस्तम्भवा ।
 पीतासनसमारूढः पीतध्यानपरायणः ॥

* नारदोऽस्य मुनिरिति क्वचित् पाठः ।

† पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीम् इत्यपि पाठो बहुत्र श्रूयते ।

‡ गदाभिघातेन इति २ पु० पा० ।

पीतपुष्पार्चनं नित्यमयुतं जपमाचरेत् ।

तदशांशकृतो होमः पीतद्रव्यैः सुशोभनैः ॥

अस्याः पुमान् मृत्युञ्जयस्तन्मन्त्रपुरश्चरणं च शिवप्रकरणं पञ्चोक्तम् ।

इति षण्णालामुखीप्रकरणम् ।

अथ मातङ्गीविद्या ।

(यामले)

अथ वक्ष्ये महादेवीं मातङ्गीं सर्वसिद्धिदाम् ।

अस्याः सेवनमात्रेण वाक्सिद्धिं लभते ध्रुवम् ॥

प्रणवं च ततो मायां कामबीजं च कर्चकम् ।

मातङ्गी डेयुता चास्त्वं वह्निजायावधिमनुः ॥

ऋषिः स्यादक्षिणामूर्तिर्विराट्छन्द उदीरितम् ।

मातङ्गी देवता देवी सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥

अङ्गन्यासकरन्यासौ कुर्यान्मन्त्री समाहितः ।

षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

श्यामाङ्गीं शशिखरां त्रिनयनां सद्रत्नसिंहासने

संस्थां रत्नविचित्रभूषणयुतां संक्षीणमध्यस्थलाम् ।

आपोनस्तनमण्डलां स्मितमुखीं ध्यायेद्दधन्तीं क्रमाद्-

वेदैर्बाहुभिरङ्कुशासिलतिके पाशं तथा खेडकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

पुरश्चरणकाले तु षट्सहस्रं जपेन्मनुम् ।

तदशांशं हुनेदाज्यैः शर्करामधुभिः सह ॥

ब्रह्मतर्पणैः काष्ठैः साधकः शक्तिभिः सह ।

एवं पुरस्क्रियां कृत्वा प्रयोगविधिमाचरेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (मेरुतन्त्रे)

अथोच्छिष्टां प्रवक्ष्यामि मातङ्गीं गोकुवर्णकाम् ।
 नम उच्छिष्टचाण्डालि मातङ्गीति पदं वदेत् ॥
 सर्ववशङ्करि स्वाहा मन्त्रोऽयं मोहयेज्जगत् ।
 छन्दो निवृत् सगायत्रं मुनी नारदतुम्बुरौ ॥
 देवता चात्र मातङ्गी द्वित्रित्रित्रिरसाक्षिभिः ।
 अङ्गानि स्युर्मन्त्रवर्णैस्ततो ध्यायेद्धृदम्बुजे ॥

ध्यानं यथा ।

कृष्णाम्बरां यावकार्द्रचरणामुन्नतस्तनीम् ।
 मुक्ताप्रवालमालाढ्यां शङ्खकुण्डलधारिणीम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि मातङ्गीमन्त्रमद्भुतम् ।
 कामिनी रञ्जिनी स्वाहाऽष्टाक्षरोऽयमुदीरितः ॥
 ऋषिः संमोहनश्छन्दो निवृत् प्रोक्ताऽस्य देवता ।
 सर्वसंमोहिनी चाङ्गं द्विरावृत्तिपदैर्भवेत् ॥

अथ ध्यानम्

श्यामाङ्गीं वल्लकों दोर्भ्यां वादयन्तीं सुभूषणाम् ।
 चन्द्रावतंसां विविधैर्गायनैर्मोहतीं जगत् ॥

अन्तयोः पुरश्चरणम् ।

प्रजपेद्युतद्वन्द्वं दशांशं जुहुयात् ततः ।
 मधूकजैस्त्रिमध्वक्तैः सर्वं संमोहयेज्जगत् ॥

अथ राजमातङ्गीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि चतुष्पञ्चाशदक्षरम् ।
 ॐ ह्रीं नमश्च ब्रह्मश्रीराजिते राजपजिते ॥
 जये न विजये गौर्यषे गान्धारिषदं वदेत् ।

त्रिभुवनवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषेति च ॥
 वशङ्करि सुसु दुदु घेघे वावाऽग्निगेहिनी ।
 अजो मुनिस्तथा छन्दो निवृद्धायत्रमीरितम् ॥
 देवता राजमातङ्गी षडङ्गादि तु मायया ।

अथ ध्यानम् ।

“अमृतोदधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोहरे ।
 स्वर्णप्राकारसंवीते मणिरत्नविनिर्मिते ॥
 कदम्बविल्वकद्वारे कल्पवृक्षोपशोभिते ।
 वेदिमध्ये सुखास्तीर्णे रत्नसिंहासने शुभे ” ॥
 अष्टपत्रं महापद्मं केशराढ्यं सकर्णिकम् ।
 तन्मध्ये तु त्रिकोणं स्यादष्टपत्रं ततो बहिः ॥
 पुनः षोडशपत्रं स्यात् तद्बाह्ये स्याच्चतुर्दलम् ।
 वेदास्त्रं सचतुर्द्वारं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम् ॥
 तस्य मध्ये सुखासीनां श्यामवर्णां शुचिस्मिताम् ।
 कदम्बमालाभरणां पूजितां च सुरासुरैः ॥
 प्रलम्बालकसंयुक्तां चन्द्ररेखावतंसिकाम् ।
 ललाटे तिलकोपेतामीषत्प्रहसिताननाम् ॥
 किञ्चित्स्वेदाम्बुमधुरललाटफलकोज्ज्वलाम् ।
 वलीतरङ्गमध्याभां रोमराजीविराजिताम् ॥
 सर्वाभरणसंयुक्तां मुक्ताहारविभूषिताम् ।
 नानामणिगणोन्नद्धकटिसूत्रैरलङ्किताम् ॥
 वलयै रत्नखचितैः केयूरैर्मणिभूषितैः ।

“ १ पतञ्जलान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तकेऽधिकं उपलभ्यते ।

भूषितां द्विभुजां बालां मदाधूर्णितलोचनाम् ॥
 आपोनमण्डलाभोगसमुन्नतपयोधराम् ।
 प्रलम्बवर्णाभरणां कर्णोत्तंसविराजिताम् ॥
 तमालनीलां तरुणीं मधुमत्तां मतङ्गिनीम् ।
 चतुःषष्टिकलारूपां पार्श्वस्थशुकसारिकाम् ॥
 कोटिबालार्कसंकाशां जपाकुसुमसन्निभाम् ।
 एवं वा पीतवर्णीं वा ध्यायेन्मातङ्गिनीं पराम् ॥

“अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं होमयेत् तद्दशांशतः ।

बन्धूककुसुमैर्मन्त्री मधुरत्रयलोलितैः” ॥

अथ सुमुखीमन्त्रः (गुह्यातन्त्रे)

शृणु मन्त्रं महादेवि यथावत् कथयामि ते ।
 दद्यादुच्छिष्टशब्दं तु तथा चाण्डालिनीति च ॥
 सुमुखीति ततो देवीं कीर्तयेत् तदनन्तरम् ।
 महापिशाचिनी तस्मान्मायाबीजमनन्तरम् ॥
 विन्दुनादसमायुक्तं ठकारत्रितयं ततः ।
 सविसर्गं महादेवि सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥
 इयं विद्या महाविद्या सर्वपापप्रणाशिनी ।
 स्वर्गदा मोक्षदा विद्या सर्वसौभाग्यदा* तथा ॥
 सदोच्छिष्टमुखो भूत्वा स्मरेद्देवीं जयप्रदाम् ।
 तदाऽऽचान्तो भवेद्देवि विनैवाचमने कृते ॥
 दुर्भगा सुभगा नूनं दुःखिता सुखिनी भवेत् ।

“ ” एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

* राज्यसौभाग्यदा इति २-४ पृ० पा० ।

बन्ध्याऽपि लभते पुत्रं शतहायनजीवनम् ॥
 दुर्बलो बलमाप्नोति मूर्खो विद्यामवाप्नुयात् ।
 यां यां प्रार्थयते सिद्धिं हठात् तां तामवाप्नुयात् ॥
 विधानं चात्र वक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ।
 नारिदोषो न वा विघ्नो नाशौचं नियमो न च ॥
 यस्य तिष्ठति मन्त्रोऽयं न च विघ्नैः स बाध्यते ।

तथा ।

अजो मुनिः समाख्यातश्छन्दो गायत्रमस्य तु ।
 देवता सुमुखी प्रोक्ता मायया तु षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

शवोपरिसमासीनां रक्तास्वरपरिच्छदाम् ।
 रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुञ्जाहारविभूषिताम् ॥
 षोडशाब्दां च युवतीं पीनोन्नतपयोधराम् ।
 कपालकर्त्रिकाहस्तां परज्योतिःस्वरूपिणीम् ॥
 वामदक्षिणयोगेन ध्यायेन्मन्त्रविदुत्तमः ।
 उच्छिष्टेन वलिं दत्वा जपेत् तद्गतमानसः ॥
 उच्छिष्टेनैव कर्त्तव्यो जपोऽस्याः सिद्धिमिच्छता ।
 उच्छिष्टजपमानस्य जायन्ते सर्वसिद्धयः ॥

अस्य मन्त्रस्य पुरश्चरणमष्टसहस्रजपः ।

येषां जपे च होमे च..... इत्यादिपूर्वोक्तवचनात् ।

अथ वक्ष्यमातङ्गीमन्त्रः (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि वक्ष्यमातङ्गिकामनुम् ।
 ॐ५ राजमुखि राजाधिमुखि वक्ष्यमुखीति च ॥
 मायां श्रीं ह्रीं देवदेवि महादेवि ततो वदेत् ।
 देवाधिदेवि सर्वेति जनस्य मुखमुच्चरेत् ॥

मम वशं कुरु द्वन्द्वं स्वाहान्तोऽङ्गकृतार्णकः ।
 दिक्सप्तकृतदेवेषुमन्त्राणैरङ्गकल्पनम् ॥
 विज्ञेयं राजमातङ्गीतुल्यं पूजाजपादिकम् ।
 प्रयोगाँश्चापि जानीयाद्विशेषाद्वशकृत् त्वियम् ॥

मन्त्रान्तरमाह ।

माया नमो हिलिद्वन्द्वं चण्डमातङ्गिनीति च ।
 स्वाहेति तिथिवर्णोऽस्या न्यासपूजादिकं भवेत् ॥
 राजमातङ्गिकातुल्यं जपश्चायुतसङ्ख्यकः ।
 घृतपायसहोमश्च प्रयोगाद्यं च पूर्ववत् ॥

अथ कर्णमातङ्गीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि कर्णमातङ्गिकामनुम् ।
 वाग्भवं हृदयं चाथ श्रीमातङ्गिपदं वदेत् ॥
 अमोघे सत्यवादिनि मम कर्णेपदं ततः ।
 अवतरपदं द्वेधा सत्यं कथय युग्मकम् ॥
 एहोहि श्रोँ च मातङ्ग्यै नमस्त्यब्ध्यर्णको मनुः ।
 अङ्गानि वाग्भवेनात्र पूजाद्यं च कृताकृतम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपः पायसाद्यैः होमः सिद्धो भवेन्मनुः ।
 कर्णे तु कथयेद्देवी पृच्छकस्य शुभाशुभम् ॥
 इति मातङ्गीप्रकरणम् ।

अथ लक्ष्मीविद्या ।

(शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये श्रियो मन्त्रान् श्रीसौभाग्यफलप्रदान् ।
 यस्याः कटाक्षमात्रेण त्रैलोक्यमपि वर्धते ॥
 वान्तं वह्निसमारूढं वामनेत्रेन्दुसंयुतम् ।

बीजमेतच्छ्रूयः प्रोक्तं चिन्तारत्नमिवापरम् ॥

ऋषिर्भृगुर्निवृच्छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।

षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-

र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैराषिच्यमानां श्रियम् ।

विभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां

क्षौमाबद्धनितम्बविम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

भानुलक्षं जपेन्मन्त्रो दीक्षितो विजितेन्द्रियः ।

श्रियमभ्यर्चयेन्नित्यं सुगन्धिकुसुमादिभिः ॥

तत्सहस्रं च जुहुयात् कमलैर्मधुरोक्षितैः ।

जपान्ते जुहुयान्मन्त्री तिलैर्वा मधुरान्वितैः ॥

वैल्वैः फलैर्वा जुहुयात् त्रिभिर्वा साधकोत्तमः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्भवं वनिता विष्णोर्माया मकरकेतनः ।

चतुर्बीजात्मको मन्त्रश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥

अङ्गानि कुर्याद्दीर्घार्धै रमाबीजेन तन्त्रवित् ।

अथ ध्यानम् ।

माणिक्यप्रतिमप्रभां हिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजै-

र्हस्ताग्राहितरत्नकुम्भसलिलैराषिच्यमानां सदा ।

हस्ताब्जैर्वरदानमब्जयुगलाभीतीर्दधानां हरेः

कान्तां काङ्क्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजाननाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

भानुलक्षं हविष्याशी जपेदन्ते सरोरुहैः ।

जुहुयादरुणैः फुल्लैस्तत्सहस्रं जितेन्द्रियः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

दीर्घायादिविसर्गान्तो ब्रह्मा भानुर्वसुन्धरा ।

वान्ते सिन्यै प्रिया वह्नेर्मनुः प्रोक्तो दशाक्षरः ॥

ऋषिर्दक्षो विराट् छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।

देव्यै हृदयमाख्यातं पद्मिन्यै शिर ईरितम् ॥

विष्णुपत्न्यै शिखा प्रोक्ता वरदायै तनुच्छदम् ।

अस्त्वं कमलरूपिण्यै नमोऽन्ताः प्रणवादिकाः ॥

अङ्गमन्त्राः समुद्दिष्टा ध्यायेद्देवीमन्यधीः ।

अथ ध्यानम् ।

आसीना सरसीरुहे सितमुखी हस्ताम्बुजैर्बिभ्रती

दानं पद्मयुगाभयं च वपुषा सौदामिनीवल्लभा ।

मुक्तादामविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासिनी

पायादः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्ती हरिम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दशलक्षं जपेदेनं मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः ।

दशांशं जुहुयान्मन्त्री मधुराक्तैः सरोरुहैः ॥

अथ महालक्ष्मीमन्त्रस्तत्रैव ।

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा मकरकेतनः ।

तात्तीयं च जगत्पाश्र्वौ वह्निबीजसमुज्ज्वलः ॥

अर्घ्योशाढ्यो भृगुस्त्यै हन्मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।

महालक्ष्म्याः समुद्दिष्टस्ताराद्यः सर्वसिद्धिदः ॥

ऋषिर्विद्या समुद्दिष्टो गायत्री छन्द ईरितम् ।

देवता जगतामादिर्महालक्ष्मीः समीरिता ॥

हस्तौ संशोध्य मन्त्रेण तारादि हृदयान्तिकम् ।

बीजानां पञ्चकं न्यस्येदङ्गुलीषु यथाक्रमम् ॥
 मन्त्रशेषं न्यसेन्मन्त्री तलयोरुभयोरपि ।
 मूर्धादि चरणं यावन्मन्त्रेण व्यापकं चरेत् ॥
 मूर्धाक्षिवक्षोगुह्याङ्गैः पञ्च बीजानि विन्यसेत् ।
 शेषान् न्यसेत् सप्तवर्णान् हृदये सप्तधातुषु ॥
 अङ्गानि पञ्चभिर्बीजैरस्त्वं शिष्टाक्षरैर्भवेत् ।
 ज्ञानैश्वर्यादिभिर्युक्तैश्चतुर्थ्यन्तैः सजातिभिः ॥
 ज्ञानमैश्वर्यशक्तिं च बलवीर्यं स्वतेजसा ।
 ज्ञानैश्वर्यादयः प्रोक्ताः षट् क्रमादङ्गयोजिताः ॥

ध्यानमाह ।

एवं न्यस्तशरीरोऽसौ स्मरेदुद्यानमद्भुतम् ।
 चम्पकाशोकपुन्नागपाटलैरुपशोभितम् ॥
 लवङ्गमाधवीविल्वदेवदारुनमेरुभिः ।
 मन्दारपारिजाताद्यैः कल्पवृक्षैः सुपुष्पितैः ॥
 चन्दनैः कर्णिकारैश्च मातुलङ्गैः सवज्जुलैः ।
 दाडिमीलकुचाङ्गोलैः पूगैः कुरवकैरपि ॥
 कदलीकुन्दमन्दारनारिकेलैरलङ्कृतम् ।
 अन्यैः सुगन्धिपुष्पाद्यैर्वृक्षखण्डैश्च मण्डितम् ॥
 मालतीमल्लिकाजातिकेतकीशतपत्रकैः ।
 यावन्तीतुलसीनन्द्यावर्त्तैर्दमनकैरपि ॥
 सर्वत्तुङ्कुसुमोपेतैर्नमस्त्रिरुपशोभितम् ।
 मन्दमारुतसम्भिन्नं कुसुमामोददिङ्मुखम् ॥
 तस्य मध्ये सदा फुल्लैः कुसुमोत्पलपङ्कजैः ।
 सौगन्धिकैश्च कल्लारैर्नवैः कुवल्यैरपि ॥

हंससारसकारण्डभ्रमरैश्चक्रनामभिः ।
 अन्यैः कलकलाराविविहङ्गैरुपशोभिते ॥
 महासरसि तन्मध्ये पुलिनेऽतिमनोहरे ।
 परितः पारिजाताद्यमण्डितं मणिकुट्टिमम् ॥
 उद्यदादित्यसंकाशभास्वरं शशिशीतलम् ।
 चतुर्द्वारसमायुक्तं हेमप्राकारशोभितम् ॥
 रत्नोपक्लृप्तसंशोभिकपाटाष्टकसंयुतम् ।
 नवरत्नसमाक्लृप्तं तुङ्गगोपुरतोरणम् ॥
 हेमदण्डं शिखालम्बि ध्वजावलिपुरस्कृतम् ।
 नवरत्नसमाबद्धस्तम्भराजिविराजितम् ॥
 सहस्रदीपसंयुक्तदीपदण्डविराजितम् ।
 तप्तहाटकसंक्लृप्तवातायनमनोहरम् ॥
 नानारत्नांशुकोद्धुसुवर्णशतकोटिभिः ।
 किङ्किणीमालिकायुक्तपताकाभिरलङ्घितम् ॥
 जातरूपमयै रत्नविचित्रैरतिविस्तृतैः ।
 माणिक्यवज्रवैदूर्यस्वर्णमालावलीयुतैः ॥
 अन्तरान्तरसम्बद्धरत्नैर्दृष्टिमनोहरैः ।
 विचित्रैश्चित्रबद्धैश्च वितानैरुपशोभितम् ॥
 सर्वरत्नसमायुक्तं द्वेमकुट्टिममुज्ज्वलम् ।
 केतकोमालतीजातीचम्पकोत्पलकेसरैः ॥
 मल्लिकातुलसीवाशानन्द्यावर्तकदम्बकैः ।
 एतै रम्यैश्च कुसुमैरलङ्घितमहीतलम् ॥
 अब्जकाश्मीरकस्तूरीमृगनाभितमालकैः ।

चन्दनागुरुकपूर्वरामोदितदिगन्तरम् ॥

एवं सञ्चिन्त्य मनसा मण्डपं सुमनोहरम् ।

तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम् ॥

तस्याधस्तात् स्मरेन्मन्त्री रत्नसिंहासनं महत् ।

तस्मिन् सञ्चिन्तयेद्देवीं महालक्ष्मीं मनोहराम् ॥

बालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलसत्कोटीरहारोज्ज्वलां

रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतांशालैः करैर्मञ्जरीम् ।

पद्मौ कौस्तुभरत्नमप्यविरतं सम्बिभ्रतीं सुस्मितां

फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत् परां देवताम् ॥

शिञ्जन्मञ्जीरसंशोभिपादाम्भोजविराजिताम् ।

नवरत्नगणाकीर्णकाञ्चीदामविभूषिताम् ॥

मुक्तामाणिक्यवैदूर्यसम्बद्धोदरबन्धनाम् ।

विभ्राजमानां मध्येन वलित्रितयशोभिताम् ॥

जाह्नवीसलिलावर्त्तशोभिनाभिविभूषिताम् ।

पटीरपङ्ककपूर्वकुङ्कुमालङ्कृतस्तनीम् ॥

वारिवाहविनिर्मुक्तमुक्तादामगरीयसीम् ।

बिभ्रतीमुत्तरासङ्गं दुकूलपरिकल्पितम् ॥

तप्तकाञ्चनसम्बद्धवैदूर्याङ्गदभूषणाम् ।

पद्मरागस्फुरत्स्वर्णकङ्कणाढ्यकराम्बुजाम् ॥

माणिक्यशकलाबद्धमुद्रिकाभिरलङ्किताम् ।

तप्तहाटकसंक्लृप्तमालाग्रैवेयशोभिताम् ॥

विचित्रविविधाकल्पां कम्बुसंकाशकन्धराम् ।

उद्यद्दिनकराकारमणिताटङ्गमण्डिताम् ॥

रत्नाङ्कितलसत्स्वर्णकर्णपूरोपशोभिताम् ।
 जपाविद्रुमलावण्यललिताधरपल्लवाम् ॥
 दाडिमीफलबीजाभदन्तपङ्क्तिविभूषिताम् ।
 कलङ्ककार्श्यनिर्मुक्तशरच्चन्द्रनिभाननाम् ॥
 पुण्डरीकदलाकारनयनत्रयशोभिताम् ।
 भ्रूलताजितकन्दर्पवरकामुक्विभ्रमाम् ॥
 विकशत्तिलपुष्पश्रीविजयोद्यतनासिकाम् ।
 ललाटकान्तिविभवविजितार्धसुधाकराम् ॥
 सान्द्रसौरभसंपन्नकस्तूरीतिलकाङ्किताम् ।
 मत्तालिमालाविलसदलकाढ्यमुखाम्बुजाम् ॥
 पारिजातप्रसूनश्रीवाहिधमिल्लबन्धनाम् ।
 अनर्घरत्नघटितमुक्ताटङ्कितमस्तकाम् ॥
 सर्वलावण्यवसतिं भवनं विभ्रमश्रियः ।
 तेजसां जन्मभूमिं तां महालक्ष्मीं विचिन्तयेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा ततो देवीं हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
 भानुलक्षं जपेन्मन्त्री दशांशं जुहुयात् तिलैः ॥
 जुहुयात् श्रीफलैः पद्मैः प्रत्येकमयुतं ततः ।
 तर्पयेत् सलिलैः शुद्धैः सुगन्धैरयुतद्वयम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

जपेद्भास्करलक्षं च नियताशी यतव्रतः ।
 तद्दशांशं प्रजुहुयाद्दधृतैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥
 पद्मै रमाद्रुमफलैः प्रत्येकमयुतं हुनेत् ।
 सुशीतैः शुचिभिस्तोयैस्तर्पयेद्युतद्वयम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

शम्भुपत्नी श्रिया रुद्धा कमौ भगवती महीं ।
 ब्रह्माऽऽदित्यो धरा दीर्घा लकारो भगवान् मरुत् ॥
 प्रसीदयुगलं भूयः श्रीरुद्धा भुवनेश्वरी ।
 महालक्ष्मी नमोऽन्तः स्यात् प्रणवादिरयं मनुः ॥
 सप्तविंशत्यक्षराढ्यः प्रोक्तः सर्वसमृद्धिदः ।
 कमले हृदयं प्रोक्तं शिरः स्यात् कमलालये ॥
 शिखां प्रसीद तेनैव कवचं चतुरक्षरैः ।
 अस्त्रमेतैः पदैः कुर्याच्छ्रीबीजपुटितैः पृथक् ॥

अथ ध्यानम् ।

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतीं सौन्दर्यवारां निधिं
 कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम् ।
 हस्ताब्जैर्वसुपात्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्तीं परा-
 मावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत् प्रियां शार्ङ्गिणः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेत् फलैर्विल्वैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः ।
 दशांशं संस्कृते वह्नौ प्राक्प्रोक्तेनैव वर्त्मना ॥

तत्रान्तरे ।

मन्दाक्षमिन्दिरारुद्धं त्र्यक्षरोऽयं महामनुः ।
 हृदन्तः पञ्चवर्णोऽस्य सर्वमेकार्णवद्भवेत् ॥

अथ साम्राज्यलक्ष्मीमन्त्रः (मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये गणेशेन काशीराज्याप्तये मम ।
 शाम्बादित्यस्य रक्षोदिग्भागे लक्ष्मीरुपासिता ॥
 साम्राज्यलक्ष्मीर्विख्याता गतराज्यप्रदायिनी ।
 लक्ष्मीविनायकस्तत्र प्रसिद्धोऽसौ गजाननः ॥

दक्षिणेनैव मार्गेण तस्याः सिद्धिर्न वामतः ।
 सकारं च हकारं च कलरा वर्णपञ्चकम् ॥
 ईकारस्वरसंयुक्तं प्रथमं कूटमुच्यते ।
 हं बीजं तु द्वितीयं स्यात् प्रोक्तोऽयं द्व्यक्षरो मनुः ॥
 ऋषिर्हरिश्च गायत्री छन्दो लक्ष्मीश्च मोहिनी ।
 साम्राज्यदा देवतोक्ता कूटं बीजं प्रकीर्तितम् ॥
 शक्तिः श्रीं च षडङ्गानि षड्विदीर्धैः समाचरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

अतशीपुष्पसंकाशां रत्नभूषणभूषिताम् ।
 शङ्खचक्रगदापद्मशार्ङ्गबाणधरां करैः ॥
 षड्विः कराभ्यां देवेशीं वरदाभयशोभिताम् ।
 एवमष्टभुजां ध्यात्वा त्रिलक्षं प्रजपेत् सुधीः ॥
 तदशांगेन पद्मैस्तु हुनेत् साम्राज्यसिद्धये ।
 एवमाराधयेत्तु लक्ष्मीं साम्राज्यं स्यादसंशयम् ॥

नारायणमन्त्रस्तु तत्प्रकरण एवोक्तः ।

इति लक्ष्मीविद्याप्रकरणम् ।

अथ नीलक्रमादयः ।

(शक्तिसङ्गमवीरतन्त्रसारसंग्रहेषु)

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि रहस्यातिरहस्यकम् ।
 दशानामपि विद्यानां दश वै ये क्रमाः प्रभो ॥
 पुरैव कथिताः स्वामिंस्तान् क्रमान् वद संप्रति ।
 शिव उवाच ।

रहस्यातिरहस्यं च कथ्यते तव भक्तिः ।

महानीलक्रमेणैव कालिका सिद्धिदायिनी ॥

महानीलक्रमो देवि द्विविधः परिकीर्तितः ।
 सकलो निष्कलश्चेति तं क्रमं शृणु पार्वति ॥
 खड्गहस्तः शिरोन्यस्तः सर्वदा मुक्तकुन्तलः ।
 सदा मांसासवोच्छासी विजयाघूर्णलोचनः ॥
 सिन्दूरतिलकं भाले पाणौ तु मदिरारसम् ।
 रात्रौ पर्यटनं चैव रात्रौ शक्तेः प्रपूजनम् ॥
 योनिचुम्बनकं कर्म शक्तेरालिङ्गनं तथा ।
 न करोति नरो यस्तु स कथं तव पूजकः ॥
 ताम्बूलयोनिचक्रं च मुण्डमालां शवासनम् ।
 सिन्दूरं खड्गकं चैव संविदासवयो रसम् ॥
 एतान् विहाय यः कश्चित् कालीं साधितुमुद्यतः ।
 इह क्षोभमवाप्नोति परत्र नरकं व्रजेत् ॥
 कोट्यर्बुदयुगैर्देवि न हि सिध्यति कालिका ।
 सिन्दूरविन्दुभ्रूमध्ये स्वयम्भूमुनिपत्रकम् ॥
 रक्तचन्दनकं वाऽपि त्रिपुण्ड्रं च ततोपरि ।
 कुर्वन् दले कज्जलस्य विन्दुर्देवो महेश्वरि ॥
 महानीलक्रमे देवि तिलकः परिकीर्तितः ।
 श्मशानशायी मांसाशी संविदानन्दमानसः ॥
 स्त्रियं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् सर्वकालं जपं चरेत् ।
 वेश्यारतः श्मशानस्थो मृदुचूडकसंयुतः ॥
 दन्ताक्षमालया देवि गजदन्तेन मेरुणा ।
 मालां कृत्वा जपेद्देवि सदा ताम्बूलचर्वकः ॥
 कपालमालाभरणो रामाचुम्बनतत्परः ।

शक्त्यानन्दो नेत्रयुगे मुखे हाला गृहाङ्गणे ॥
 वेश्या बालाकरे माला शक्तिलीला भगाम्बुजे ।
 योनिसञ्चुम्बनं कृत्वा सर्वकाले जपं चरेत् ॥
 शक्तेर्भगं नमस्कार्यं सर्वमेतच्चराचरम् ।
 अधिकारी प्रहृष्टात्मा स्त्रीभक्तो विजितेन्द्रियः ॥
 ईदृग्विधो नरो देवि महानीलक्रमो मतः ।
 राजदन्तमयी माला हिरदोष्प्राश्वसम्भवा ॥
 अशक्तानां निष्कलः स्यात् तं क्रमं शृणु पार्वति ।
 पीताया दुग्धकं पित्वा सच्चिदानन्दमानसः ॥
 स्फाटिकीं मालिकां कृत्वा विहारे जपमाचरेत् ।
 दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न च ॥
 न जपे कालनियमो महामन्त्रस्य साधने ।
 यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तत्र धर्मस्तु तादृशः ॥
 भ्रान्तिस्तत्र न कर्तव्या स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ।
 मृदु कोमलकं देवि चूडकं वाऽप्यचूडकम् ॥
 शवं वीरासनं कृत्वा योनित्वगासनं च वा ।
 कामरूपासनं देवि सुरतासनमेव च ॥
 सिन्दूरासनकं देवि पर्वतासनमेव च ।
 प्रयोगासनकं देवि महाप्रयोगासनं तथा ॥
 श्रीमुण्डसुरतं वाऽपि श्रीवीरसुरतं च वा ।
 पञ्चवीरासनं देवि सुरेन्द्रादिदिशां क्रमात् ॥

इति नीलक्रमः ।

अथ महाचीनक्रमस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि महाचीनक्रमं परम् ।

शिव उवाच ।

महाचीनक्रमो देवि कथ्यते सांप्रतं मया ।

महाचीनक्रमेणैव तारा शीघ्रफलप्रदा ॥

ब्रह्मचीनो वीरचीनो दिव्यचीनस्तृतीयकः ।

महाचीनो निष्कलश्च चीनः पञ्चविधो मतः ॥

महाचीनक्रमो देवि द्विविधः परिकीर्तितः ।

सकलो निष्कलश्चेति सकलो बौद्धगोचरः ॥

निष्कलो ब्राह्मणानां च द्वितीयः परिकीर्तितः ।

तथा ।

स्नानादि मानसं शौचं मानसः प्रकरो जपः ।

पूजनं मानसं दिव्यं मानसं तर्पणादिकम् ॥

मानसो नियमः प्रोक्तो मानसं दन्तधावनम् ।

सर्व एव शुभः कालो नाशुभो विद्यते क्वचित् ॥

न विशेषो दिवा रात्रौ न सन्ध्यायां महानिशि ।

शुद्धिं न कारयेदत्र निर्विकल्पं मनश्चरेत् ॥

नात्र शुद्धेरपेक्षाऽस्ति न चामेध्यादिदूषणम् ।

य एवं चिन्तयेन्मन्त्रं सर्वकामसमृद्धिदम् ॥

गद्यपद्यमयी वाणी सभायां तस्य जायते ।

तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रमो मताः ॥

राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः ।

सर्वदा पूजयेद्देवीमस्त्रातः कृतभोजनः ॥

महानिश्यशुचौ देशे वलिं मन्त्रेण दापयेत् ।
 स्त्रीद्वेषो नैव कर्त्तव्यो विशेषात् पूजनं स्त्रियः ॥
 जपस्थाने महाशङ्खं निवेश्योर्ध्वं जपं चरेत् ।
 स्त्रियं गच्छन् स्पृशन् पश्यन् यत्र कुत्राप्यचूडके ॥
 भुक्त्वा ताम्बूलमन्याँश्च भक्ष्यद्रव्यान् यथारुचि ।
 मांसं मत्स्यं दधि क्षौद्रं संविदासवयो रसम् ॥
 भोज्यान्यशेषभक्ष्याणि दत्वा भुक्त्वाऽऽचरेज्जपम् ।
 दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न च ॥
 न जपे कालनियमो नार्चादिषु वलिष्वपि ।
 स्वेच्छानियम उक्तोऽत्र महामन्त्रस्य साधने ॥
 वस्त्रासनं गेहदेहस्पर्शास्पर्शादिवारिणा ।
 तैलं संलाप्य देवेशि ताम्बूलं भक्ष्यन् सदा ॥
 नानाम्बराणि सन्धार्य देहं वस्त्रेण मार्जयेत् ।
 एवं स्नानं चरेद्देवि सर्वदा तद्गताशयः ॥
 केशान् संवर्धयेद्देवि सर्वदा तैलभूषितः ।
 नाधर्मो विद्यते सुश्रु किं तु धर्मो महान् भवेत् ॥
 स्वेच्छाचारोऽत्र कथितः प्रचरेद्धृष्टमानसः ।
 कृतार्थमन्यमानस्तु सन्तोष्य निजमानसम् ॥
 हरेर्नाम न गृहीयान्न स्पृशेत् तुलसीदलम् ।
 वर्जयेद्विल्वपत्रं च मरुं यत्नेन वर्जयेत् ॥
 नान्यचिन्ता प्रकर्त्तव्या नान्यनिन्दा कदा चन ।
 नान्यमन्त्रं जपेद्देवि निर्विकल्पः सदा भवेत् ॥
 सद्यो मद्यं पिवेद्देवि मातङ्गीभिर्विहारवान् ।
 योनिं चुम्बन्निहन् पश्यन् जपं कुर्यादनन्यधीः ॥

योनौ विचिन्त्य जप्तव्यं सिद्धिर्वत्सरमात्रतः ।
 अन्यथा नैव सिद्धिः स्यात् प्रजप्तैरपि कोटिभिः ॥
 पुरश्चरणलक्षैश्च होमादीनां च कोटिभिः ।
 श्रूयुग्मे कुन्तले देवि सिन्दूरं तदनन्तरम् ॥
 कुचन्दनं त्रिपुण्ड्रं च पङ्कजं वा सकेशरम् ।
 मुण्डमाला गले धार्या कपालं पाणिसङ्गतम् ॥
 इत्याचारपरो नित्यं महाचीनक्रमी भवेत् ।
 कर्णनेत्रान्तरस्थो यो महाशङ्खः प्रकीर्तितः ॥
 पञ्चाशन्मणिभिर्माला गोनरेभास्थिसम्भवा ।
 मालां कुर्यान्महेशानि चाष्टसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
 सैव तारा महेशानि नात्र कार्या विचारणा ।
 यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तत्र धर्मस्तु तादृशः ॥
 कृतार्थस्तेन जायेत स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ।

(स्वच्छन्दमैरवतन्त्रे)

न शौचादिक्रियाः कार्याः स्मृतिशास्त्रप्रचोदिताः ।
 एका लिङ्गे गुदे पञ्च इत्याद्या याः प्रकीर्तिताः ॥
 न ताः कार्याः साधकेन्द्रैः यदीच्छेच्चिरजीवितम् ।

(सिद्धान्तसंग्रहेऽपि)

न देशकालनियमो भक्ष्यादिनियमो न हि ।
 शौचादिनियमो नास्ति महामन्त्रस्य साधने ॥
 दिवसे वा तथा रात्रौ रात्रिशेषे निशामुखे ।
 मांसं भुक्त्वाऽसवं पीत्वा स्त्रियं गत्वा चरेज्जपम् ॥

(शक्तिसङ्गमे)

सकलस्तु मया प्रोक्तो निष्कलं शृणु पार्वति ।

मणिबन्धादधः पाणिं पादौ गुल्फादधः शिवे ॥
 मुखं प्रक्षालयेद्देवि चीनस्नानमिदं भवेत् ।
 जानुभ्यामवनीं गत्वा भूमौ मस्तकमानयेत् ॥
 चीनमार्गे नमस्कारः कीर्तितस्तु मया तव ।
 पूर्वक्रमस्य देवेशि क्रमः प्रतिनिधिर्मया ॥
 स्नानदानादिकं कृत्वा तथा पूजादिकं प्रिये ।
 तथा म्लानो न मे देहो न च पापं ममास्ति वै ॥
 किं स्नानं कस्य चित् स्नानमस्नातः कृतभोजनः ।
 सर्वमेव हृदम्भोजे मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥
 मयि जाता मन्त्रसिद्धिर्मम देवा वरप्रदाः ।
 तेजोरूपं जगत्सर्वं तारिणी तत्स्वरूपधृक् ॥
 तच्चेजसा स्वस्थदेहं संभाव्य जपमाचरेत् ।
 भावनावशमापन्नो भवेद्योगी महाकविः ॥
 गुडार्द्रकरसेनैव सुरा तु ब्राह्मणस्य च ।
 तदभावे जलं देवि संभाव्य पूजनं चरेत् ॥
 तन्नावहृदयासन्नः सदा तद्गतमानसः ।
 हृन्दभावं परित्यज्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
 ब्रह्मा चैव वशिष्ठश्च तथाऽन्ये च ऋषीश्वराः ।
 निष्कलक्रममार्गेण भजन्ति सततं शिवे ॥
 ताराभक्ता महेशानि ब्राह्मणाः परिकीर्तिताः ।
 ब्रह्मविद्या महाविद्या सर्वत्र दुर्लभा कलौ ॥
 रहस्यातिरहस्यं च गोप्तव्यं पशुसंकटे ।

इति महाचीनक्रमः ।

अथ दिव्यचीनक्रमस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

छिन्नमस्ताविधौ देवि क्रमं मे ब्रूहि सत्वरम् ।

शिव उवाच ।

दिव्यचीनक्रमेणैव छिन्नमस्ता वरप्रदा ।

क्रमद्वयं महेशानि पूर्वमेव प्रकाशितम् ॥

एतस्यास्तिलको देवि भ्रूमध्ये च कुचन्दनम् ।

तदन्ते रोचनापत्रैस्त्रिपुण्ड्रं दिव्यवर्णकैः ॥

श्मशानभस्मविन्दुं तु तन्मध्ये दापयेत् प्रिये ।

मुखे मुखं प्रदत्वा तु सर्वकालं जपेच्छिवे ॥

योनिचक्रं समालोक्य यत् किञ्चित् कुरुते नरः ।

तत् तदक्षयमाप्नोति छिन्नाविद्याप्रसादतः ॥

दिक्पालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न हि ।

पाताले कुहरे दुर्गे पर्वते तटिनीतटे ॥

अन्तरिक्षे तथा भूमौ सर्वत्र जपमाचरेत् ।

विशेषः कथितो देवि शक्तितत्त्वस्य पालकः ॥

इति दिव्यचीनक्रमः ।

अथ गन्धर्वक्रमः ।

देव्युवाच ।

गन्धर्वाख्यं क्रमं देव कथयस्व मयि प्रभो ।

शिव उवाच ।

गन्धर्वाख्यक्रमेणैव सुन्दरी सिद्धिदायिनी ।

गन्धर्वाख्यक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ॥

भ्रूमध्ये कुङ्कुमं देवि तन्मध्ये मालयागुरु ।

अष्टगन्धत्रिपुण्ड्रस्य मध्ये कस्तूरिकान्वितम् ॥
 सुगन्धिद्वेतलौहित्यपुष्पैः संभूषितो नरः ।
 अष्टगन्धस्य धूपेन नानासौगन्ध्यभूषितः ॥
 रक्तमाल्याम्बरधरो मुक्ताहारोपशोभितः ।
 पूर्णाभिषिक्ते शिरसि तेन तत्र न मुण्डनम् ॥
 सदा चोष्णोदकैः स्नायात् तदभावे यथोदकैः ।
 गृहं चित्रैस्तु संचित्रं दर्पणोदरसन्निभम् ॥
 वितानध्वजभूषाढ्यं घण्टानादोपशोभितम् ।
 पञ्चवादित्रसंयुक्तं नानाघोषसमन्वितम् ॥
 अन्तःसूक्ष्मास्वरैर्युक्तं स्वर्णपात्रादिरञ्जितम् ।
 ग्रैवेयवलयान्जुल्यभूषणैर्भूषितः सदा ॥
 नानामधुरभोज्यैश्च दुग्धपानैरनेककैः ।
 नानाभोगेन युक्तोऽयं गन्धर्वाख्यक्रमो भवेत् ॥

इति गन्धर्वक्रमः ।

अथ भैरवक्रमः ।

इति संक्षेपतः प्रोक्तं भैरवाख्यं शृणु क्रमम् ।
 स्वपुष्पक्रमयोगेन भैरवी भुवि दुर्लभा ॥
 स्वपुष्पाख्यक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ।
 तरुणीं सुन्दरीं रम्यां तारुण्यामृतविग्रहाम् ॥
 सदा रते साभिलाषां मैथुनोद्यतमानसाम् ।
 मन्त्रयन्त्रसमायुक्तां समानीय महेश्वरि ॥
 नम्रां तां च विधायादौ स्वयं नम्रो जपं चरेत् ।
 परस्परालोकनं च कर्तव्यं च परस्परम् ॥

अविकारी यदा देवि साधनाहो न चान्यथा ।
 विकारे भावमाने च साधको नश्यति क्षणात् ॥
 साऽपि चेद्देवदेवेशि सविकारा यदा भवेत् ।
 पुष्पिणीमनुना देवि बलात् पुष्पं समानयेत् ॥
 द्राविणीमनुना देवि बलाद्दृष्ट्या द्रवं नयेत् ।
 केलिदोषवशाद्देवि नायं योगो भविष्यति ॥
 तस्मात् पाशवकल्पेन बाला शस्ताऽधुना शिवे ।
 बालायामुभयाचारो दक्षिणो मुख्य एव हि ॥

तथा ।

शीघ्रं च सिद्धिकामश्चेद्गवाक्षं योगमभ्यसेत् ।
 यत्र स्त्रीणां समूहोऽस्ति नदीनदसमुद्रके ॥
 यत्र स्नानं प्रकुर्वन्ति गवाक्षं तत्र कारयेत् ।
 तमालोक्य प्रयत्नेन जपं कुर्यान्निरन्तरम् ॥
 इति संक्षेपतः प्रोक्तं तिलकं शृणु पार्वति ।
 वामहस्ततले यन्त्रं विलिख्य यत्नतः शिवे ॥
 अवशिष्टेन तिलकं कारयेत् परमेश्वरि ।
 भाले कस्तूरिकाविन्दुं मुनिपत्रं कुचन्दम् ॥
 तन्मध्ये श्वेतविन्दुं च केशादिपूर्ववद्भवेत् ।
 दशविद्याविधौ देवि केशवर्धनमीरितम् ॥

इति भैरवक्रमः ।

अथ कमलाक्रमः ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि कमलाक्रमनिर्णयम् ।

शिव उवाच ।

भ्रूमध्ये घुसृणुं देवि सिन्दूरं तदनन्तरम् ।

श्वेतं त्रिपुण्ड्रं देवेशि तन्मध्ये केशरं शिवे ॥
 स्नातः शुक्लाम्बरधरस्त्रिसन्ध्यं स्नानमाचरेत् ।
 हविष्याशी भूमिशायी मधुरान्नप्रियो नरः ॥
 भृगुवासरपर्यन्तं द्वितीयं भृगुवासरम् ।
 प्रत्यहं पूजयेद् देवि नानावादित्रनिस्वनैः ॥
 दिनषोडशपर्यन्तं प्रत्यहं तु समाचरेत् ।
 पुनस्तद्दिनमारभ्य तद्दिनान्तं महेश्वरि ॥
 पूजयेत् प्रयतो नित्यं देवताभावतत्परः ।
 प्रदक्षिणा प्रकर्त्तव्या कलाभावक्रमेण च ॥
 दीपास्तत्र प्रदातव्याः कलावृद्धिक्रमेण च ।
 ब्राह्मणान् भोजयेन्नित्यं कलाभावक्रमेण च ॥
 इत्याचारपरः श्रीमान् विष्णुरूपो नरो भवेत् ।
 राजचिह्नानि सर्वाणि प्रयतः पूजयेत् सदा ॥
 सर्वसाम्राज्यलक्ष्म्यास्तु नाथो भूयान्न संशयः ।
 धनदा तस्य गेहस्था राजा च किङ्करो भवेत् ॥
 इति कमलाक्रमः ।

अथ ब्रह्ममार्गक्रमः ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि ब्रह्ममार्गक्रमं शिव ।
 शिव उवाच ।

वेद्यायाः कज्जलं देयं सिन्दूरेण त्रिपुण्ड्रकम् ।
 हरिद्रा भ्रूयुगे देया श्वेतपत्रं समाचरेत् ॥
 रक्तविन्दुं च तन्मध्ये सर्वदा तद्गतो भवेत् ।
 भोजने शयने रात्रौ मैथुनं सर्वदा भवेत् ॥

उच्छिष्टहस्तो देवेशि उच्छिष्टेन वलिं हरेत् ।
 शक्त्युच्छिष्टं परोच्छिष्टं भोजनं सार्वकालिकम् ॥
 जपं कुर्यान्महेशानि रात्रावेव जपं चरेत् ।
 ताम्बूलभक्षी मांसाशी भुक्त्वा चार्चं च कारयेत् ॥
 उच्छिष्टहस्तः प्रजपेद्ब्रह्ममार्गः प्रकीर्तितः ।

इति ब्रह्ममार्गक्रमः ।

अथ महाराजक्रमः ।

देव्युवाच ।

महाराजक्रमं देव कथयस्व मम प्रभो ।

शिव उवाच ।

महाराजक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ।
 नानाविचित्रसोपानमण्डिते चित्रमण्डपे ॥
 सौधाट्टालकसंशोभिवितानध्वजशोभिते ।
 नानोपवनसंयुक्ते हंसमायूरशोभिते ॥
 नानाविचित्रशब्देन गजवाजिविराजिते ।
 सर्वतो भद्रसंयुक्ते नानाभरणभूषिते ॥
 धूपामोदसमायुक्ते चित्रदीपैरलङ्किते ।
 रत्नसिंहासने रम्ये रत्नाभरणभूषिते ॥
 जातीत्रम्पकपुन्नागकेतकीगन्धशोभिते ।
 कर्पूरागुरुकस्तूरीरोचनाकुङ्कुमैर्युते ॥
 जटामांस्यादिसौगन्धलेपनैः परिभूषितः ।
 घण्टादिनादसंयुक्तः सर्वदा शुद्धमानसः ॥
 आनन्दमग्नहृदयो दिव्यवस्त्रैरलङ्कितः ।
 दिव्यमालाम्बरधरो दिव्यभूषाविभूषितः ॥

ताम्बूलपूर्णवदनो देवेन्द्र इव राजितः ।
 वेदपात्रैर्नृत्यपात्रैर्भोगपात्रैर्निनादितः ॥
 नृत्यगीतैश्च वादित्रैश्चतुर्विंशतिवादकैः ।
 सङ्गीतरागतालैश्च ध्वनिभिश्च निनादितः ॥
 नानादेशीयभाषाभिर्गद्यपद्यैरलङ्कृतः ।
 नानाविचित्रभूषाभिर्भूषितः साधकोत्तमः ॥
 समस्तराजचर्याभिर्मोहयन्नाजनायिकाः ।
 श्रीमहाराजमातङ्गी सर्वदेवप्रमोहिनी ॥
 तस्यास्तु तिलकं देवि कथ्यते शृणु पार्वति ।
 कुचन्दनं च भ्रूमध्ये गुरुसारस्तदन्तरे ॥
 कस्तूरिकात्रिपुण्ड्रं च तन्मध्ये केशरं शिवे ।
 महाराजक्रमो देवि कथितस्तु मया तव ॥
 अथ वा देवदेवेशि स्वयं गानपरो भवेत् ।

इति महाराजक्रमः ।

अथ दिव्यभावक्रमः ।

देव्युवाच ।

वद श्रीभुवनेशान्याः क्रमं परमदुर्लभम् ।
 शिव उवाच ।

दिव्यभावक्रमेणैव भुवना शीघ्रसिद्धिदा ।
 हकारः शिवरूपः स्याद्रकारः पापनाशकः ॥
 ईकारः कामरूपः स्यान्माया तेन प्रकीर्तिता ।
 ब्रह्माण्डमेतदेवेशि मायया वेष्टितं भवेत् ॥
 यस्या मायां विना देवि न किञ्चित् प्रतिभासते ।
 यन्नासरहितं किञ्चिन्न च तन्नासते क्वचित् ॥

यद्भासासहितं देवि जयदेतत् प्रभासते ।
 यां विना तु महेशानि जगज्जडसमं भवेत् ॥
 एवं क्रमेण देवेशि सदा तद्वत्तमानसः ।
 त्रैलोक्यविजयी भूयान्नात्र कार्षी विचारणा ॥
 एतस्यास्तिलकं देवि कथ्यते यत्नतः शृणु ।
 श्वेतचन्दनविन्दुं तु भ्रूमध्ये तु प्रलापयेत् ॥
 गन्धसारं तदन्ते स्यात् त्रिपुण्ड्रं दिव्यवर्णकैः ।
 रक्ताक्षतांश्च तन्मध्ये तेन सिद्धीश्वरो भवेत् ॥

इति दिव्यभावक्रमः ।

अथ धूम्रक्रमः ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि धूमावल्याः क्रमं शिव ।
 शिव उवाच ।

धूमावल्याः क्रमो देवि कथ्यते शृणु पार्वति ।
 भ्रूमध्ये कज्जलं देवि भस्मविन्दुस्तदन्तरे ॥
 त्रिपुण्ड्रं च ललाटे स्याच्छ्वभस्म तदन्तरे ।
 कृष्णवस्त्रास्वरधरः कृष्णगन्धविभूषितः ॥
 गन्धपुष्पेण संयुक्तः श्मशानासनसङ्गतः ।
 धूम्रवर्णं जगत् सर्वं मन्त्री धूम्रमयो भवेत् ॥
 काकपिच्छं चासनं स्यात् कृष्णद्रव्यं प्रधारयेत् ।
 ब्रह्मचारी मिताहारो निर्विकल्पो जितेन्द्रियः ॥
 सत्यवादी दृढाचारो भूषायी कुशविष्टरः ।
 स्नानं त्रिषवणं कुर्यादुच्चाटनपरायणः ॥
 स्वचित्तं काकवत् कृत्वा जगदुच्चाटयेद्भुवम् ।

इत्याचारूपरो भूयाद्धूम्रक्रमंगतो भवेत् ॥

इति धूम्रक्रमः ।

अथ सौभाग्यक्रमस्तत्रैव ।

सौभाग्यार्चाक्रमेणैव वगला शीघ्रसिद्धिदा ।
 पीताम्बरधरो मन्त्री पीतभूषणभूषितः ॥
 पीतमाल्याम्बरधरः पीतगोहे समास्थितः ।
 पीतद्रव्योपभोगी च पीतासनसमन्वितः ॥
 पीतहोमो पीतपुष्पी पीतशक्तिसमन्वितः ।
 रोचनां भ्रुवि संदद्यात् कुङ्कुमं मुनिपत्रकम् ॥
 हरिद्रया त्रिपुण्ड्रं च तन्मध्ये खादिरं शिवे ।
 हरिचन्दनधूपेन धूपितः परमेश्वरि ॥
 सर्वाङ्गसुन्दरीं रम्यां सर्वावयवशोभिताम् ।
 नवोढां पुष्पिणीं चैव प्रार्थयेद्विप्रकन्यकाम् ॥
 अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां कुमारिकाम् ।
 अथ वा भौमवारे वा निशायां भृगुवासरे ॥
 सुवासितेन तैलेन कुर्यादभ्यञ्जनं तथा ।
 तूलिकातल्पमानीय आस्तीर्योदङ्मुखस्तदा ॥
 तस्योपरि समास्तीर्य समन्त्रैर्जातिचम्पकैः ।
 कर्पूरं चैव कस्तूरीमिश्रितं चन्दनं तथा ॥
 सर्वाङ्गे लेपनं कुर्याच्छ्रीसूक्तेन बुद्धिमान् ।
 पर्यङ्गोपरि तां कन्यां चन्दनेन विलेपिताम् ॥
 ध्रुवाद्यैरिति मन्त्रेण कन्यां दक्षिणतो मुखी ।
 उन्मुखीं शयने कुर्याच्छ्रीसूक्तेन कुमारिकाम् ॥

तस्याः पादौ प्रसार्याथ गुप्तेनार्चनमाचरेत् ।
 न्यस्त्वा षोढाद्वयं चैव वगलापञ्चकं न्यसेत् ॥
 कन्यां चैव न्यसेद्देवं तत्तदङ्गानि संस्मरेत् ।
 अनन्यजपुरं चैव मार्जयेन्मूलविद्यया ॥
 गन्धद्वारेति मन्त्रेण कुर्यात् कस्तूरिलेपनम् ।
 मूलमन्त्रेण चैतन्यपुष्पमालां समर्पयेत् ॥
 निवेदयेद्द्रव्यशुद्धिं ततश्च जपमाचरेत् ।
 प्रयोगः सिद्धिदः पुंसां मन्त्रसिद्धिकरः परः ॥
 एतत्क्रमं विना देवि प्रयोगो न भवेत् क्वचित् ।
 तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सिद्ध्यर्थी देवि भूतले ॥
 अभिमानाष्टकं त्यक्त्वा त्यक्त्वा वै दूषणत्रयम् ।
 त्यक्त्वा पञ्चेन्द्रियासक्तिं सौभाग्यक्रममाचरेत् ॥

इति सौभाग्यक्रमः ।

अथ दिव्यवीरपशुभावाः ।

(भावचूडामणौ)

देव्युवाच ।

भावस्तु त्रिविधो देव दिव्यवीरपशुक्रमात् ।
 गुरवस्त्रिविधाश्चात्र तथैव मन्त्रदेवताः ॥
 शक्तिमन्त्रो महादेव विशेषान्मन्त्रसिद्धिदः ।
 आद्यभावो महादेव श्रेयान् सर्वसमृद्धिदः ॥
 द्वितीयो मध्यमश्चैव तृतीयः सर्वनिन्दितः ।

सर्वनिन्दित इति ब्राह्मणेतरविषयः । ब्राह्मणस्य तु पशुभावान्यभावश्रयणे निन्दा-
 श्रवणात् ।

तथा ।

लक्षजापात् तथा होमात् कायक्लेशादिविस्तरैः ।

न भावेन विना देव तन्ममन्त्राः फलप्रदाः ॥
 किं वीरसाधनेनैव विश्वदृष्टिकुलाकुलैः ।
 किं पीठपूजनेनैव किं कन्याभोजनादिभिः ॥
 स्वयोषित्प्रीतिदानेन किं परेषां तथैव च ।
 किं जितेन्द्रियभावेन किं कुलाचारकर्मणा ॥
 यदि भावविशुद्धात्मा न स्यात् कुलपरायणः ।
 भावेन लभते मुक्तिं भावेन कुलवर्धनम् ॥
 भावेन कुलवृद्धिः स्याद्भावेन कुलशोभनम् ।
 किं न्यासविस्तरेणैव किं तत्तच्छुद्धिविस्तरैः ॥
 किं तथा पूजनेनैव यदि भावो न जायते ।
 केन वा पूज्यते विद्या न चेत् केन न जप्यते ॥
 फलाभावश्च देवेश भावाभावात् प्रजायते ।

तथा ।

प्रथमो दिव्यभावस्तु कथ्यते शृणु सादरम् ।
 यद्वर्णदेवता यत्र तत्तेजःपुञ्जपूरितम् ॥
 तेजोमयं जगत् सर्वं विभाव्य मूर्तिकल्पनम् ।
 तत्तन्मूर्तिमये मन्त्रे स्वेन स्वेनैव वा पुनः ॥
 आत्मानं तन्मयं दृष्ट्वा सर्वभावं तथैव च ।
 तत्सर्वं योषिति ध्यात्वा चिन्तयेद्यतमानसः ॥
 अशेषकुलसंपन्ना नानाजातिसमुद्भवा ।
 नानादेशोद्भवा वाऽपि गुणलावण्यसंयुता ॥
 द्वितीयवत्सरादूर्ध्वं यावत् स्यादष्टमाब्दकम् ।
 तावत् कुमारी विजेया मन्त्रयन्त्रफलप्रदा ॥
 कुमारीपजनाच्चैव कुमारीभोजनादपि ।

एकद्विज्यादिबीजानां फलदा नात्र संशयः ॥
 ताभ्यः पुष्पं फलं वाऽपि अनुलेपादिकं तथा ।
 वलिप्रियं च नैवेद्यं दत्त्वा तद्भावापरितः ॥
 दत्त्वा तदङ्ग आत्मानं वलिभावे विचेष्टितम् ।
 ताभिः प्रायः कथालापं क्रीडाकौतूहलादिकम् ॥
 यथातथं तत्प्रियकृत् कृत्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ।
 तस्मात् षोडशपर्यन्तं युवतीति प्रवक्ष्यते ॥
 तत्र भावप्रकाशश्चेत् सद्भावः परमो मतः ।
 रक्षितव्याः प्रयत्नेन अक्षतास्ता न कारयेत् ॥
 एष ते कथितो देव दिव्यभावः सुखावहः ।
 न देयो यस्य कस्यापि पशोर्गोप्यः प्रयत्नतः ॥

इति दिव्यभावः ।

अथ वीरभावस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

वीरभावो महादेव कथ्यते शृणु भैरव ।
 निर्द्वन्द्वमानसो भूत्वा हृदा कामकला तनुः ॥
 निशासु पूजा प्रवरा हेतुयुक्ता तथैव हि ।
 निजं कुलं समाधाय स्वयं भैरवरूपधृक् ॥
 कुलं च भैरवीरूपं तद्वात्रे न्यासविस्तरम् ।
 विन्यसेत् केवलं न्यासं नवयोन्यात्मकं तथा ॥

नवयोन्यात्मकमिति श्रीविद्यापरम् ।

प्रसूनतूलिकामध्ये पुष्पप्रकरसंयुते ।
 नानागन्धसमाकीर्णं कुलद्रव्येण यत्रकम् ॥
 लिखित्वा पूजयेच्छक्तौ घटस्थापनपूर्वकम् ।

स्वामभागे षट्कोणं तन्मध्ये ब्रह्मरन्ध्रकम् ॥
 लिखित्वा तत्र कुम्भं वै सौवर्णं राजतं तथा ।
 ताम्रं भूमिमयं वाऽपि महालोहविवर्जितम् ॥
 स्थापयेत् कुलशाधारं कुम्भं सुगन्धिवासितम् ।
 हेतुद्रव्यं ब्राह्मणादिभेदतः संप्रपूरयेत् ॥

ब्राह्मणादिभेदत इति क्षीराज्यमध्वासवरूपं ब्राह्मणादिभिः पूरणीयमित्यर्थः । एवं
 च वोरब्राह्मणस्य हेतुस्थाने क्षोरमेव च । पशोस्तु तदपि नेति बोध्यम् ।

तत्र यन्त्रं विलिख्यादौ यद्यत् कुलसमुद्भवम् ।
 ध्यात्वेष्टदेवतां तत्र जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥
 धेनुयोनी प्रदर्श्याथ प्रसृतं तद्विचेष्टितम् ।
 दृष्ट्वाऽमृतं स्वपात्रं वै नृत्यन्ति योगिनीगणाः ॥
 नृत्यन्ति भैरवाः सर्वे नृत्यन्ति मातरोऽपि च ।
 इन्द्रादयः सुराः सर्वे नृत्यन्ति मधुलोलुपाः ॥
 ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या नृत्यन्ति हर्षतत्पराः ।
 अर्घभाण्डं त्रिधा कृत्वा गुरवे चैकभागकम् ॥
 एवं कुलाय वै दत्त्वा एकेन देवतर्पणम् ।
 पीत्वा कुलरसं नानावस्त्रालङ्कारभूषणम् ॥
 साक्षाद्यदि गुरुर्न स्यात् तदा तोये विसर्जयेत् ।
 आनन्दरूपवान् भूत्वा पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
 तत्तत्कल्पविधानेन तत्तद्यत्नेन पूजयेत् ।
 विसर्जनं विधायान्ते स्वकुले योजयेत् ततः ॥
 तद्विम्बरसपानेन अमृतं भक्ष्यते मया ।
 तच्चक्रोररसास्वादे सम्मदो मम जायते ॥
 तत्कुलग्रहणादेव मेरुशृङ्गावरोहणम् ।

लताल्लिङ्गनमात्रेण सुधाधौतकलेवरः ॥
 मूलयोगे कृते तत्र जपेदष्टसहस्रकम् ।
 नित्यजाप्ये च होमे च यत्र सङ्ख्या न चोदिता ॥
 तत्रेयं गणना प्रोक्ता अष्टोत्तरसहस्रकम् ।
 जलपूतं हविर्द्रव्यं गृहीत्वा तर्पयेत् ततः ॥
 विधाय तर्पणं देव प्रदक्षिणमनुव्रजेत् ।
 स्तुत्वा प्रणम्य कल्पोक्तस्तवेन स्तावयेत् ततः ॥
 इति वीरकुलं देव देववन्द्यं मनोहरम् ।

(कालीकल्पे)

रात्रौ पर्यटनं चैव रात्रौ शक्तिं प्रपूजयेत् ।
 अकृत्वा कथमीशान मद्भक्तः कौलिको भवेत् ॥

(मेरुतन्त्रे)

कुलं तु गोपयेद्देवि नारिकेलरसाम्बुवत् ।
 गुरुं प्रकाशयेद्धीमान् मन्त्रं यत्नेन गोपयेत् ॥

(कुलार्णवे)

वेदशास्त्रपुराणानि स्पष्टा वेश्याङ्गना इव ।
 इयं तु शाम्भवी विद्या गुप्ता कुलवधूरिव ॥
 सुगुप्तं कौलिकाचारमनुगृह्णन्ति देवताः ।
 वाञ्छासिद्धिं प्रयच्छन्ति नाशयन्ति प्रकाशनात् ॥

(मेरौ)

न दिवा सेवयेन्नारीं तद्योनिं न निरीक्षयेत् ।
 स्त्रियं शतापराधां वा पुष्पेणापि न ताडयेत् ॥
 दोषान् न गणयेत् स्त्रीणां गुणानेव प्रकाशयेत् ।

तथा ।

कन्याः कुमारिका नग्ना उन्मत्ता अपि योषितः ।

न निन्देत जुगुप्सेत न हसेन्नावमानयेत् ॥
 एकवृक्षं श्मशानं च समूहं योषितामपि ।
 नारीं च रक्तवसनां दृष्ट्वा वन्देत भक्तिः ॥

तथा ।

तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः कुलवृक्षेषु सर्वदा ।
 तत्पत्रेषु न भोक्तव्यमर्कपत्रे विशेषतः ॥
 न स्वपेत् कुलवृक्षाधो न चोपद्रवमाचरेत् ।
 दृष्ट्वा भक्त्या नमस्कुर्याच्छेदयेन्न कदा च न ॥
 श्लेष्मान्तककरझार्कनिम्बाश्वत्थकदम्बकाः ।
 विल्वो वटोऽदुम्बरश्च चिञ्चा चेति दश स्मृताः ॥
 प्रायश्चित्तं भृगोः पातं सन्यासं व्रतधारणम् ।
 तीर्थयात्राभिगमनं कौलः पञ्च विवर्जयेत् ॥

प्रायश्चित्तादिकं तन्त्रोक्तमिदम् ।

(रौद्रे)

वीरभावं महेशानि सर्वथा न प्रकाशयेत् ।

(वीरचूडामणौ)

पूजाकाले महेशानि यदि कोऽप्यत्र गच्छति ।
 दर्शयेद्देणावीं मुद्रां विष्णुन्यासं तथा स्तवम् ॥
 अन्तः शाक्ता बहिः शैवाः सभायां वैष्णवा मताः ।
 नानारूपधरा वीरा विचरन्ति महीतले ॥

(भावचूडामणौ)

यद्देशे विद्यते वीरस्तत्कुलं वाऽपि भैरव ।
 न च मारीभयं तत्र न च राजभयादिकम् ॥
 सुमङ्गलं सदा तत्र धनपुत्रविवर्धनम् ।
 लक्ष्मीस्तत्र महादेव सुस्थिरा भवति ध्रुवम् ॥

मन्त्रः स्वप्नप्रबोधिण्या अवश्यं वृक्षमूलके ।
 योजनीयः प्रयत्नेन न च विघ्नः प्रजायते ॥
 नान्यवीरस्य तद्योग्यं ग्रहणैर्देवतैरपि ।
 योगिनीभिर्न लुप्तं च तन्न पापेन लिप्यते ॥
 यत्र तत्र कुजे वारे श्मशानगमने कृते ।
 पूजाफलं भवेत् तत्र सप्तवासरसम्मितम् ॥
 चतुर्दश्यां गते तत्र पक्षपूजाफलं भवेत् ।
 न गच्छेन्नार्यतः स्थाने पशुरेव न संशयः ॥
 नास्त्यस्मादधिकं देव इति चिन्तापरायणः ।
 मदेन द्रव्यभोक्ता च भवेत् कुलपरायणः ॥
 साधके क्षोभमापन्ने मम क्षोभः प्रजायते ।
 तस्माद्यत्नाद्दीस्वरो भवेद्भोगयुतः सुखी ॥
 भोगेन मोक्षमाप्नोति भोगेन कुलसाधनम् ।
 विना हेतुमनास्वाद्य क्षोभयुक्तो महेश्वर ॥
 न पूजा मम संपर्कं न ध्यानमनुचिन्तनम् ।
 तस्मान्भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
 नात्र प्रच्युतिदोषोऽस्ति नापरं दोषभूषणम् ।
 यद्यह्वदति निद्राति यत् करोति यदर्चति ॥
 तत्सर्वं कुलरूपं च ध्यात्वा च विहरेत् सुखी ।
 एकाकी निर्जने देशे श्मशाने पर्वते वने ॥
 शून्यगोह्ने नदीतीरे निःसङ्गो विहरेन्मुदा ।
 वीराणां जपकालस्तु सर्वकालः प्रशस्यते ॥
 सर्वदेशे सर्वपीठे कर्त्तव्यं च न संशयः ।

यदि विप्रो भवेद्भ्रष्टः कुलधर्मपरायणः ॥
 तदा तेन विधानेन कर्त्तव्यं कुलतोषणम् ।
 अपरापुष्पगर्भे तु कुलस्थानं मनोहरम् ॥
 सर्वदेवमुखं तत्र महाकामकलात्मकम् ।
 ह्यारिकुसुमे देवः स्वयमस्ति सदाशिवः ॥
 तन्मध्ये लघुमादाय पुष्पमध्ये तु चन्दनम् ।
 रक्तं वा कुसुमं दत्वा ध्यात्वाऽऽत्मानं शिवात्मकम् ॥
 योजयेच्छिवशक्त्योस्तु ऐक्यं संभावयेद्धिया ।
 क्षणं विचिन्त्य तत्रैव संपूज्य परमेश्वरीम् ॥
 जप्त्वा तदेव कुण्डाख्यं द्रव्यं परमदुर्लभम् ।
 यत्रापराजितापुष्पं जपापुष्पं च भैरव ॥
 करवीरे रक्तशुक्ले द्रोणपुष्पं च तिष्ठति ।
 तत्र देवी वसेन्नित्यं तद्यन्त्रे पूजयेन्मम ॥
 दत्ते चैव जपापुष्पे पट्टवस्त्रफलं लभेत् ।
 ब्रह्महत्यादिकं पापं क्षणान्नश्यति निश्चितम् ॥
 अपरायास्तु माहात्म्यं वक्तुं न हि महेश्वर ।
 वीरसाधनकार्यं च कर्त्तव्यं वीरपुरुषैः ॥
 दिव्यैरपि च कर्त्तव्यं पशुभिर्न च पामरैः ।
 वरं पामरकार्यं च न पशोरिति निश्चितम् ॥
 यद्यन्न मत् पुरा प्रोक्तं संकेतं मन्त्रसाधने ।
 अञ्जनं गुटिकादिं च कुर्याद्दीरो महाबलः ॥
 दिव्ये वीरे न भेदोऽस्ति यद्भेदं तत् तु कथ्यते ।
 शान्तो विनीतो मधुरः कलालावप्यसंयुतः ॥

दिव्यस्तु देववत् प्रायो वीरश्चोद्धतमानसः ।

(कुलरत्नावल्याम्)

दिव्यवीरौ सुरेशानि शक्तिसेवापरायणौ ।

वामिकौलिकभेदाभ्यां प्रत्येकं द्विविधौ स्मृतौ ॥

(भावचूडामणौ)

विभूतिभूषणैर्वाऽपि चन्दनैर्वा विलेपितः ।

आकारगोपनो वाऽपि त्यक्तो वा कुलभैरव ॥

रक्तचन्दनदिग्धो वा वैष्णवो वाऽप्यवैष्णवः ।

अपमाने तु पूजायां हृष्टः पुष्टः सदा भवेत् ॥

देवनिन्दापरो वाऽपि तत्र पूजापरोऽपि वा ।

पूजा च तत्तद्रहितः कुलाकुलमते स्थितः ॥

निजभावसमायुक्तो देववद्विरहेत् क्षितौ ।

स्वकुलान्ते पुरश्चर्या कार्या रात्रौ न चान्यथा ॥

वेदहीने द्विजे देव यथा न श्रुतिसंकथा ।

विष्णुभक्तिं विना देवीभक्तिर्न प्रभवेद्यथा ॥

शाक्तज्ञानं विना मुक्तौ यथा हास्याय कल्पते ।

गुरुं विना यथा तन्त्रे नाधिकारः कथं चन ॥

पतिहीना यथा नारी सर्वकर्मविवर्जिता ।

कुलं विना देवविधौ कदाऽपि मम साधने ॥

नाधिकारीति कौलेय तस्मान्नावपरो भवेत् ।

अविनीतं कुलं यस्य स क कथं मम पूजकः ॥

तस्माद्यत्नात् तथा कार्यं यथा स्याद्विनयान्वितम् ।

भावाभावे कुले शास्त्रे नाधिकारः कथं चन ॥

तेन भावविशुद्धश्च साधकः कौलिको भवेत् ।

इति वीरभावक्रमः ।

अथ पशुभावस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

पशुभावं प्रवक्ष्यामि शृणु वत्स समाहितः ।

यथाविधि पशोर्विद्यां गृहीत्वा भावतत्परः ॥

प्रथमं पूर्वसेवार्थं यत्नतः शुद्धिमाचरेत् ।

नमस्य भोजनं कुर्यान् न स्त्रियं मनसा स्मरेत् ॥

न परद्रव्यलोभी स्यान्न भोगे मानसं भजेत् ।

सिन्धुतीरे पर्वते वा कानने च सुरालये ॥

विल्वमूले विविक्ते च पुण्यक्षेत्रे च शोभने ।

न शूद्रदर्शनं कुर्यात् कौटिल्यं यत्नतस्त्यजेत् ॥

देवता शुभवर्णा तु ध्यातव्या सुसमाहितैः ।

त्रिसन्ध्यं देवपूजा तु त्रिसन्ध्यं जपमाचरेत् ॥

रात्रौ मन्त्रं च मालाश्च स्पृशेन्नैव कदा चन ।

न मन्त्रमुच्चरेद्भुक्त्वा मौनी स्यात् सर्वकर्मसु ॥

पर्वकाले स्त्रियं नैव गच्छेत् साधकसत्तमः ।

पुष्पं गन्धं जलं चैव स्वयमानीप पजयेत् ॥

मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठौ परिवर्जयेत् ।

ऋतुकालं विना चापि न गच्छेत् स्त्रियमादरात् ॥

पुराणश्रवणे श्रद्धा वेदवेदार्थतत्परः ।

न रात्रौ भोजयेद्दिद्वान् ताम्बूलं परमेश्वर ॥

गुरुणा यद्यदादिष्टं तत्सर्वं यत्नतश्चरेत् ।

खजातकुसुमं चैव हेतुद्रव्यं च भैरव ॥

स्पृष्ट्वा तथा समाग्राय पञ्चगव्येन शुध्यति ।

रक्तवस्त्रं न गृहीयाद्देवीभक्तिपरायणः ॥

विष्णुतन्त्रेषु कल्याणि तदनुष्ठानमेव च ।
कार्यं वीरकथालापं न कुर्याद्वीरवन्दिते ॥
नित्यश्राद्धं गयाश्राद्धं सन्ध्यावन्दनमेव च ।
तीर्थस्नानं पीठदेशगमनं धर्मतत्परः ॥

(मेरुतन्त्रे)

देवस्थाने गुरुस्थाने श्मशाने च चतुष्पथे ।
पादुकासनविण्मूत्रमैथुनानि विवर्जयेत् ॥
प्रमत्तामन्त्यजां कन्यां पुष्पितां पतितस्तनीम् ।
विरूपां वा मुक्तकेशीं कामार्त्तीं च न निन्दयेत् ॥
कन्यायोनौ पशुक्रीडां दिग्वस्त्रां प्रकटस्तनीम् ।
नालोकयेत् परद्रव्यं परदाराँश्च वर्जयेत् ॥
धान्यगोगुरुदेवाग्निकुशपुस्तकसंमुखम् ।
नैव प्रसारयेत् पादौ न चैतानि विलङ्घयेत् ॥
आलस्यमदसंमोहशापपैशून्यविग्रहान् ।
असूयामात्मसन्मानं परिनिन्दाश्च वर्जयेत् ॥

(भावचूडामणौ)

भावस्तु मानसो धर्मः शाब्दः स हि कथं भवेत् ।
तस्मान्भावो न वक्तव्यो दिङ्मात्रं समुदाहृतम् ॥
यथेक्षुगुडमाधुर्यमशनैर्ज्ञायते प्रभो ।
तथा भावविभावस्तु मनसा परिभाव्यते ॥

तन्त्रान्तरे ।

उत्तमो दिव्यभावः स्याद्वीरभावस्तु मध्यमः ।
पशुभावोऽवरः प्रोक्तो भावमेकं समाश्रयेत् ॥

इति पशुभावक्रमः ।

अथ संप्रदायः ।

(सिद्धान्तसंग्रहे)

संप्रदायानथो वच्मि गौडकाश्मोरकेरलान् ।
 सर्वार्थसिद्धिसंकल्पपूजापुष्पार्पणादनु ॥
 नैवेद्यान्ते च हवनं ताम्बूलान्ते वलिर्मतः ।
 पूजनं वामहस्तेन दक्षहस्तेन तर्पणम् ॥
 साक्षाद्दानं मकारणे हृदि देव्या विसर्जनम् ।
 गौडाक्षसंप्रदायोऽयं सेवितो वामिभिः सदा ॥
 विनियोगादर्चनार्थं वलिः पीठार्चनादनु ।
 होमः पञ्चोपचारान्ते दक्षिणार्चनतर्पणे ॥
 गव्यं तु ताम्रपात्रस्थं वारुणी स्याद्घृतं विना ।
 लवणार्द्रकपिण्याकपलाण्डुमाषपञ्चकम् ॥
 लशुनं च महादेवि मांसप्रतिनिधिः स्मृतः ।
 मत्स्याभावे तु क्रमुकं ताम्बूलं यद्यदामिषम् ॥
 गुडाभावे तण्डुलं वा भर्जितं चणकादिकम् ।
 विलिखेत् पञ्चमाभावे शक्तिबीजं त्रिकोणकम् ॥
 वामोरौ साधको रक्तं चन्दनेन विधानवित् ।
 शक्तिं संपूज्य तत्रैव तद्वायत्रीं शतं जपेत् ॥
 स्वयम्भूकुसुमाभावे रक्तचन्दनकं क्षिपेत् ।
 हयारिकुसुमं शम्भुः शक्तिः प्रोक्ताऽपराजिता ॥
 तयोः समेलनोत्पन्नं गृह्णीयाच्च कुलामृतम् ।

तथा ।

ताघ्रे गव्यादिपिण्याकं गृह्णन् पायसं पयः ।
 एते तत्त्वानुकल्पाश्च सहस्रारे विसर्जनम् ॥

काश्मीरसंप्रदायोऽसौ विज्ञेयः कौलिकप्रियः ।

पिण्याकं तिलकलकः । गृञ्जनं लशुनम् ।

तथा ।

सङ्कल्पो देवताप्रीत्यै तत्त्वानां भावनैव हि ।

आत्मा विद्या शिवः सर्वः पूर्णश्चेति क्रमेण च ॥

पूजा पञ्चोपचारान्ते पूजान्ते च वलिर्भवेत् ।

पूजनं दक्षहस्तेन वामहस्तेन तर्पणम् ॥

होमः समस्तकर्मान्ते हृद्येवोद्दासनं स्मृतम् ।

केरलारव्यः संप्रदायो मुनिभिः समुपासितः ॥

इति संप्रदायक्रमः ।

विभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैचित्रचित्रामृत-

स्रोतःशालिनि संनिबन्धनसरित्संभेदमभ्यर्हितम् ।

सन्मुक्तोपमयुक्तिभाजि नवमो रम्यस्तरङ्गोऽगमत्

सर्वोर्वीपतिनाथनिर्मितपुरश्चर्यार्णवेऽस्मिन् नवे ॥

इति श्रीमन्महाराजधिराजश्रीप्रतापसिंहसाहविरचिते पुरश्चर्यार्णवे दशमहाविद्या-
पुरश्चरणनिरूपणं नाम नवमस्तरङ्गः ।

अथ सरस्वत्यादिमन्त्रास्तत्पुरश्चर- णविशेषाश्च प्रदर्शयन्ते ।

तथा च (शारदायाम्)

अद्रिर्वरुणसंरुद्धो दवाग्वादिनि ठह्वयम् ।

वागीश्वर्या दशाणोऽयं मन्त्रो वाग्विभवप्रदः ॥

ऋषिः कण्वो विराट्छन्दो देवता वाक् समीरिता ।

शिरःश्रवणदृङ्नासावदनान्धुगुदेष्विमान् ॥

न्यासाणान् प्राग्वदङ्गानि मातृकोक्तानि कल्पयेत् ।

अथ ध्यानम् ।

तरुणशकलमिन्दोर्बिभ्रती शुभ्रकान्तिः

कुचभरनमिताङ्गी संनिषण्णा सिताब्जे ।

निजकरकमलोद्यल्लेखनीपुस्तकश्रीः

सकलविभवसिद्धयै पातु वाग्देवता नः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दशलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् ततः ।

पुण्डरीकैः पयोऽभ्यक्तैस्तिलैर्वा मधुरासुतैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

हृदयान्ते भगवति वदशब्दयुगं ततः ।

वाग्देवि वह्निजायान्तं वाग्भवाद्यं समुद्धरेत् ॥

मनुं षोडशवर्णाढ्यं वागैश्वर्यफलप्रदम् ।

मनोः षड्भिः पदैः कुर्यात् षडङ्गं जातिसंयुतैः ॥

अथ ध्यानम् ।

शुभ्रां शुभ्रविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां

व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः ।
बिभ्राणां कमलासनां कुचनतां वाग्देवतां सुस्मितां
वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हविष्याशी जपेत् सम्यग्वसुलक्षमनन्यधीः ।
दशांशं जुहुयादन्ते तिलैराज्यपरिप्लुतैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तारो माया धरो विन्दुः शक्तिस्तारं सरस्वती ।
डेन्ता नत्यन्तिको मन्त्रः प्रोक्त एकादशाक्षरः ॥
ब्रह्मरन्ध्रे श्रुवोर्मध्ये नवरन्ध्रेषु च क्रमात् ।
मन्त्रवर्णान् न्यसेन्मन्त्री वाग्भवेनाङ्गकल्पना ॥

अथ ध्यानम् ।

वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभां
चन्द्रार्धाङ्कितमस्तकां निजकरैः सम्बिभ्रतीमादरात् ।
वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च तुङ्गस्तनीं
दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं हंसाधिरूढां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्द्वादशलक्षाणि तत्सहस्रं सिताम्बुजैः ।
नागचम्पकपुष्पैर्वा जुहुयात् साधकोत्तमः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाचस्पतेऽमृते भूयः प्लुवः प्लुवेति कीर्त्तयेत् ।
वागाढ्यो मुनिभिः प्रोक्तो रुद्रसङ्ख्याक्षरो मनुः ॥
कुर्यादङ्गानि विधिवद्वागाद्यैः पञ्चभिः पदैः ।

अथ ध्यानम् ।

आसीना कमले करैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकं

विभ्राणा तरुणेन्दुबद्धमुकुटा मुक्तेन्दुकुन्दप्रभा ।
भालोन्मोलितलोचना कुचभराक्रान्ता भवद्भूतये
भूयाद्वागधिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानाऽनिशम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रुद्रलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्द्यूतैः ।
मातृकाकल्पिते पीठे पूजयेत् तां यथा पुरा ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तोयस्थं शयनं विष्णोः सकेवलचतुर्मुखम् ।
विन्दुर्घीशयुतो वह्निविन्दुसद्योऽम्बुमान् भृगुः ॥
उक्तानि त्रीणि बीजानि सद्भिः सारस्वतार्थिनाम् ।
अङ्गानि कल्पयेद्बीजैर्द्विरुक्तैर्जातिसंयुतैः ॥

अथ ध्यानम् ।

मुक्ताहारावदातां शिरसि शशिकलालङ्घितां बाहुभिः स्वै-
र्व्याख्यां वर्णाक्षमालां मणिमयकलशं पुस्तकं चोद्वहन्तीम् ।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभरविनमन्मध्यदेशामधीशां
वाचामोडे चिराय त्रिभुवननमितां पुण्डरीके निषण्णाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
पायसेनाज्यसिक्तेन संस्कृते हव्यवाहने ॥

अथ चिन्तामणिसरस्वतीमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथादौ संप्रवक्ष्यामि चिन्तामणिसरस्वतीम् ।
तारं माया च हसरानैकाराढ्यान् सविन्दुकान् ॥
पुनर्मायां च तारं च वदेत् डेन्तां सरस्वतीम् ।
हृदयान्तो भवाणोऽयं मन्त्रस्तु परिकीर्तितः ॥
त्रिण्डुपञ्चन्दो मुनिः कण्वश्चिन्तामणिसरस्वती ।

देवता ह्रसै च बीजं स्यात् ह्रीं शक्तिस्त्वङ्गकल्पने ॥
स्वरसंपुटितैः कादिवर्गैः स्यादङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

हंसारूढां मौक्तिकाभां मन्दहास्येन्दुशेखराम् ।
वीणामृतघटाक्षस्रग्दीप्तहस्तां कजस्थिजाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् । 'जपेद्द्वादशलक्षक'मित्युक्त्वा-

सिताब्जै रविसाहस्रं हुनेद्वाऽथ च चम्पकैः ।

अथ पारिजातसरस्वतीमन्त्रः (दक्षिणामूर्तिसंहितायाम्)

संपत्प्रदाया भैरव्या वाग्भवं बीजमालिखेत् ।
तारेण परया देवी संपुटोक्त्य मन्त्रवित् ॥
सरस्वत्यै हृदन्तोऽयं रुद्राणो मनुरीरितः ।
ऋषिस्तदक्षिणामूर्तिर्गायत्री छन्द ईरितम् ॥
पारिजातेश्वरी वाणी देवता परिकीर्तिता ।
तृतीयं च द्वितीयं च बीजं शक्तिश्च तारकम् ॥
कीलकं परमेशानि महासारस्वतप्रदम् ।
षड्दीर्घस्वरसंभिन्नबीजेनाङ्गानि विन्यसेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

हंसारूढा वर्हसितहारेन्दुकुन्दावदाता
वाणी मन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुरेखा ।
विद्यावीणामृतमयघटाक्षस्रजादीप्तहस्ता
शुभ्राब्जस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात् ॥

अथ पुरश्चरणं तन्त्रान्तरे ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तदशांशं ततो हुनेत् ।
किंशुकैश्चम्पकैर्वाऽपि तिलाज्यमधुलोलितैः ॥
नवाक्षरोऽपि यो मन्त्रस्तत्रादौ प्रणवस्ततः ।

संपत्प्रदावाग्भवस्ततोऽलज्जाबोजमिति ।

(शारदायाम्)

एवमुक्तेषु मन्त्रेषु दीक्षितो यतमानसः ।
 एकं यो भजते भक्त्या स भवेद्भुक्तिमुक्तिभाक् ॥
 सुसितैर्गन्धकुसुमैः पूजा सारस्वते विधौ ।
 दूर्वाबीजाङ्कुरं पुष्पं राजवृक्षसमुद्भवम् ॥
 उत्पलानि प्रशस्तानि सिन्धुवाराङ्कुराणि च ।
 भजन् सरस्वतीं नित्यमेतानि परिवर्जयेत् ॥
 आम्रातं गृञ्जनं विम्बं करञ्जं लशुनं तथा ।
 तैलं पलाण्डुं पिण्याकं साङ्गाष्टमपि भोजने ॥
 सर्वं पर्युषितं त्याज्यं सदा सारस्वतार्थिना ।
 नाचरेन्निशि ताम्बूलं स्त्रियं गच्छेद्दिवा न च ॥
 न सन्ध्ययोः स्वपेजातु नाशुचिः किञ्चिदुच्चरेत् ।
 प्रदोषे तु भवेन्मौनी दिग्वस्तां न विलोकयेत् ॥
 न पुष्पितां स्त्रियं गच्छेन्न निन्देद्दामलोचनाम् ।
 न मृषा वचनं ब्रूयान्नाक्रमेत् पुस्तकं सुधीः ॥
 अक्षराढ्यानि पत्राणि नोपेक्षेत न लङ्घयेत् ।
 चतुर्दश्यष्टमीपर्वप्रतिपद्ग्रहणेषु च ॥
 संक्रमेषु च सर्वेषु विद्यां नैव पठेन्नरः ।
 व्याख्याने संत्यजेन्निद्रामालस्यं जम्भणां बुधः ॥
 क्रोधं निष्ठीवनं तद्वस्त्रीचाङ्गस्पर्शनं तथा ।
 मनुष्यसर्पमार्जारमण्डूकनकुलादयः ॥
 अन्तरा यदि गच्छेयुस्तदा व्याख्यां परित्यजेत् ।
 निशासु दीपभ्रंशे च पाठं सद्यः परित्यजेत् ॥

ज्ञात्वा दोषानिमान् सम्यग्भवत्या यो भारतो भजेत् ।
वाचां सिद्धिमवाप्नोति वाचस्पतिरिवापरः ॥

इति सरस्वतीप्रकरणम् ।

अथ त्वरितामन्त्रः ।

तत्रैव ।

ततोऽभिधास्ये त्वरितां त्वरितं फलदायिनीम् ।
तारो माया वर्मबीजमृद्धिरीशस्वरन्विता ॥
कूर्मस्तदन्तो भगवान् क्षत्रीं दीर्घतनुच्छदम् ।
संवर्त्तो भगवान् माया फडन्तो द्वादशाक्षरः ॥
मुनिरर्जुन आख्यातो विराट् छन्दः समीरितम् ।
त्वरिता देवता प्रोक्ता पुरुषार्थफलप्रदा ॥

तथा ।

कूर्माद्यैः पञ्चभिर्वर्णैः पूर्वपूर्वविवर्जितैः ।
द्वाभ्यां द्वाभ्यां षडङ्गानि कल्पयेत् साधकोत्तमः ॥

अथ ध्यानम् ।

श्यामां वर्हिकलापशेखरयुतामाबद्धपर्णांशुकां
गुञ्जाहारलसत्पयोधरभरामष्टाहिपान् बिभ्रतीम् ।
ताटङ्गाङ्गदमेखलां गुणरणन्मञ्जीरतां प्रापितां
कैरीतीं वरदाभयोद्यतकरां देवीं त्रिनेत्रां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं संजप्य मन्त्रज्ञो मन्त्रमेनं जितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयाद्वैल्वैर्मधुराक्तैः समिद्वरैः ॥

तथा ।

एवं सिद्धमनुर्मन्वी नारोनरनरेश्वरैः ।
मान्यते वत्सरादवांग्लक्ष्म्या जितधनेश्वरः ॥

इति त्वरितामन्त्रः ।

अथ नित्यक्लिष्टामन्त्रस्तत्रैव ।

तारो माया वाग्भवान्ते नित्यक्लिष्टे मदद्रवे ।
वाङ्माया वह्निजायान्तो मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ॥
द्वाभ्यां द्वाभ्यां पुनर्द्वाभ्यां द्वाभ्यां पञ्चभिरक्षरैः ।
वाचं विना समस्तेनाप्यङ्गषट्कमथाचरेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

द्वीपं त्रिकोणविपुलं सुरद्रुममनोहरम् ।
कूजत्कोकिलनादाढ्यं मन्दमारुतसेवितम् ॥
भृङ्गपुष्पलताकीर्णमुद्यच्चन्द्रदिवाकरम् ।
स्मृत्वा सुधाब्धिमध्यस्थं तस्मिन् माणिक्यमण्डपे ॥
रत्नसिंहासने न्यस्तत्रिकोणोज्ज्वलकर्णिके ।
पद्मे संचिन्तयेद्देवीं साक्षात् त्रैलोक्यमोहिनीम् ॥
नित्यां भजे बालशशाङ्गचूडां
पाशाङ्कुशौ कल्पलतां कपालम् ।
हस्तैर्वहन्तीमरुणां त्रिनेत्रा-
मास्फालयन्तीं कलवच्छकीं ताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रमाज्येन जुहुयात् ततः ।
दशांशमिति शेषः ।

इति नित्यक्लिष्टामन्त्रः ।

अथान्नपूर्णामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि अन्नपूर्णामहामनुम् ।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमः प्रोक्त्वा भगवति पदं वदेत् ॥
माहेश्वरि चान्नपूर्णं स्वाहा विंशतिवर्णकः ।

छन्दोऽनुष्टुप्मुनिर्ब्रह्मा ह्यन्नपूर्णा च देवता ॥
हो बीजं चापि शक्तिः श्रीं कीलकं ह्रीं प्रकीर्तितम् ।
षडदीर्घयुक्तहृल्लेखा षडङ्गेषु प्रकीर्तिता ॥

अथ ध्यानम् ।

तप्तकाञ्चनसंकाशां बालेन्दुकृतशेखराम् ।
नवरत्नप्रभादीप्तमुकुटां कुङ्कुमारुणाम् ॥
चित्रवस्त्रपरीधानां मोनाक्षीं कलशस्तनीम् ।
नृत्यन्तमीशमनिशं दृष्ट्वाऽऽनन्दमयीं पराम् ॥
सानन्दमुखलोलाक्षीं मेखलाढ्यनितम्बिनीम् ।
अन्नदानरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यां नमस्कृताम् ॥
दुग्धान्नभरितं पात्रं सरत्नं वामहस्तके ।
दक्षिणे तु करे देव्या दवीं ध्यायेत् सुवर्णजाम् ॥

पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेत् सनियमस्तदशांशेन होमयेत् ।
रम्यपायससर्पिभ्यामेवं भवति सिद्धिदा ॥

अथ मन्त्रान्तरं (शारदायाम्)

माया हृद्भगवत्यन्ते माहेश्वरि पदं ततः ।
अन्नपूर्णं ठयुगलं मनुः सप्तदशाक्षरः ॥
अङ्गानि मायया कुर्यात् ततो देवीं विचिन्तयेत् ।

अथ ध्यानम् ।

रक्तां विचित्रवसनां नवचन्द्रचूडा-
मन्नप्रदाननिरतां स्तनभारनम्राम् ।
नृत्यन्तमिन्दुशकलाभरणं विलोक्य
हृष्टां भजे भगवतो भवदुःखहर्त्रीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

यथाविधि जपेन्मन्त्रं वसुयुग्मसहस्रकम् ।

साज्येनान्नेन जुहुयात् तदशांशमनन्तरैः ॥

इत्यन्नपूर्णमन्त्रः ।

अथ प्रत्यङ्गिरामन्त्रः ।

(मेघतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि परकृत्यानिवारिणीम् ।

देवीं प्रत्यङ्गिरां नाम सर्वापद्धिनिवारिणीम् ॥

ॐ अँ कँ चँ तथा टँ तँ पँ ह्रँ भौँ ह्रीँ समुच्चरेत् ।

ह्रँस उक्त्वा हुँ तथाऽस्त्वं स्वाहान्तं षोडशाक्षरः ॥

मुनिर्विधाता छन्दोष्णिग्देवताः षट् प्रकीर्त्तिताः ।

महावायुर्महापृथ्वी महाकाशस्तथैव च ॥

महासमुद्रनामा च महापर्वत एव च ।

महाग्निश्चेति हुँ बीजं ह्रीँ शक्तिः परिकीर्त्तिता ॥

लज्जया तु षडङ्गानि षड्दीर्घान्वितयाऽऽचरेत् ।

मन्त्रदेवीं स्ततो मन्त्री ध्यायेत् सुस्थिरमानसः ॥

अथ ध्यानम् ।

नानारत्नार्चिराक्रान्तं वृक्षाम्भःस्त्रवणैर्युतम् ।

व्याघ्रादिपशुभिर्व्याप्तं सानुयुक्तं गिरिं स्मरेत् ॥

मत्स्यकूर्मादिवीजाढ्यं नवरत्नसमन्वितम् ।

घनच्छायं सकल्लोलमकूपारं विचिन्तयेत् ॥

ज्वालावलीसमाक्रान्तं जगत्रितयमद्भुतम् ।

पीतवर्णं महाबहिं संस्मरेच्छत्रुशान्तये ॥

त्वरा समुत्थरावौघमलिनं रुद्धभूदिवम् ।

पवनं संस्मरेद्दिश्वजीवनं प्राणरूपतः ॥
 नदीपर्वतवृक्षादिकलितायाससंकुला ।
 आधारभूता जगतो ध्येया पृथ्वीह मन्त्रिणा ॥
 सूर्यादिग्रहनक्षत्रकालचक्रसमन्वितम् ।
 निर्मलं गगनं ध्यायेत् प्राणिनामाश्रयः पदम् ॥

पुरश्चरणमाह ।

एवं षडदेवता ध्यात्वा सहस्राणि तु षोडश ।
 जपेन्मन्त्रं दशांशेन षडद्रव्यैर्होममाचरेत् ॥
 ब्रीहयस्तण्डुला आज्यं सर्षपाश्च यवास्तिलाः ।
 एतैर्हुत्वा यथाभागं पीठे पूर्वोदिते यजेत् ॥

अथ मालामन्त्रस्तत्रैव ।

अथ प्रत्यङ्गिरामालामन्त्रः सिद्धः प्रकीर्त्यते ।
 ॐ ह्रीं नमः कृष्णवाससेशतेविश्वसहस्रहिम् ॥
 सिनि सहस्रवदने महाबले पराजिते ।
 प्रत्यङ्गिरे परस्मैन्यपरकर्मपदं वदेत् ॥
 विध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनीति ततो वदेत् ।
 सर्वभूतेति दमनि सर्वदेवान् वदेत् ततः ॥
 बन्धयुग्मं सर्वविद्या द्विदिल्लिन्धि क्षोभयद्वयम् ।
 परयन्त्राणीति वदेत् स्फोटयद्वितयं ततः ॥
 सर्वशृङ्खलाँस्त्रोटय त्रोटय ज्वल चोच्चरेत् ।
 ज्वालाजिह्वे करालेति वदने प्रत्यमुच्चरेत् ॥
 गिरे ह्रीं नम इत्येष सपादशतवर्णवान् ।
 ब्रह्माऽनुष्टुप्मुनिश्छन्दो देवी प्रत्यङ्गिरा मता ॥
 बीजशक्ती तारमाये कृत्यानाशेति योजनम् ।

षडङ्गानां विधिश्चात्र षड्दीर्घान्वितमायया ॥

अथ ध्यानम् ।

सिंहारूढातिकृष्णाङ्गीं ज्वालावक्त्रां भयङ्कराम् ।

शूलखड्गकरां वस्त्रे दधतीं नूतने भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं तिलराजिकाः ।

हुत्वा सिद्धमनुर्मन्वी प्रयोगेषु शतं जपेत् ॥

ग्रहभूतादिकारिष्टं सिञ्चेन्मन्त्रं जपन् जलैः ।

विनाशयेत् परकृतं यन्त्रमन्त्रादिसाधनम् ॥

“अथ मन्त्रान्तरं (सिद्धान्तसंग्रहे)

ॐ यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव ।

तां ब्रह्मणाऽपनिर्नुग्नप्रत्यक् कर्त्तारमिच्छतु ॥

ह्रौं मुन्याद्या विनियोगान्ता मलामन्त्रवदस्य तु ।

षडङ्गानि च पादेन पादार्धैश्चरणेन च ॥

कुर्याद्वेदादिषड्दीर्घह्रस्वापुटितेन च ।

शिरोधूमध्यवदनगलबाहुद्वयेष्वथ ॥

हृन्नाभिपार्श्वकट्यन्धुपादेषु पदशो न्यसेत् ।

व्यापकन्तं समस्तेन कृत्वा ध्यायेन्महेश्वरीम् ॥

खड्गचर्मधरां कृष्णां मुक्तकेशीं विवाससम् ।

दंष्ट्राकरालवदनां भीषाभां सर्वभूषणाम् ॥

प्रसन्तीं वैरिणं ध्यायेत् प्रेरितां शिवतेजसा ।”

पुरश्चरणमाह ।

अयुतं प्रजपेदेनं मन्त्री प्रयतमानसः ।

“ ” एतच्चिद्धान्तर्गतः पाठः ४ पु० अधिको दृश्यते ।

दशांशं जुहुयात् पश्चादपामार्गेधमराजिकाम् ॥
 सर्पिषा च समायुक्तां ततः सिद्धो भवेन्मनुः ।
 प्रयोगेषु जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं बुधः ॥
 तावतैव तु होमेन परकृत्या विनश्यति ।

इति प्रत्यङ्गिरामन्त्रः ।

अथ कुब्जिकामन्त्रः ।

(कुलालिकाज्ञायतन्त्रे)

श्रीकुब्जिकोवाच ।

कथं तु लघ्विकानाथ वद मन्त्रपदान्विताम् ।
 सर्वज्ञां सर्वदा देव लक्षणेन समन्विताम् ॥
 उवाच भैरवो ह्येवं लघ्विकां शृणु लघ्विके ।
 किन्तु त्वया न वक्तव्या यावन्नादेशितः शिशुः ॥
 चचेवीति प्रथमं पदं णिकिणिकि द्वितीयकम् ।
 छौँ छौँ पदं तृतीयं च खिमुर्घोअचतुर्थकम् ॥
 मेनणअडेति पञ्चमं ह्रौँ ह्रौँ ह्रीँ षष्ठकं पदम् ।
 यै काब्जिकुश्रो सप्तमं त्यैवगभ मोनाष्टमम् ॥
 एषा सा समयया देवी द्वात्रिंशाक्षरमालिनी ।
 पञ्चप्रणवमाद्यन्तनियुक्ता लक्षणान्विता ॥
 आदिकूटावसाने च द्विचत्वारिंशमालिनी ।
 विलोमेनोच्चरेद्देवि गुरुवक्त्रोपदेशतः ॥
 रेफसहस्रिदं कूटं विद्यायाः सप्तमं स्मृतम् ।
 श्रीलोपे सन्नियोक्तव्यं जीवितं कुब्जिके मम ॥
 स्वमनीषिकातोऽन्यथा सविद्धिष्टोमरोचिभिः ।
 गुप्तं गुप्ततरं कार्यं योगिनीहृदयनन्दनम् ॥

यस्माद्भस्मारमित्येवं सर्वस्वं योगिनीकुले ।
 अथ चेत् सर्वपीठेषु मातेयं समयात्मिका ॥
 अस्याः स्मरणमात्रेण विह्वलं तु जगन्नयम् ।
 जायते नात्र संदेह इति माता सुरक्षिता ॥
 हृदयाद्यस्त्रपर्यन्तमेकोच्चारेण सुव्रते ।
 सिद्धिमार्गे यथा ब्रूमि विलोमेन विलोमतः ॥

यस्मात्तु यैर्वाणाकक्रो च्चेवि णिकिणिकि ययात्रत्रने केरि-
 ताहंमजलकु छाँ छीँ यचावकयैपारूहुबखीमुरघोअ मे नणजड
 यैखाशि खेशिरर्वव ह्रीँ ह्राँ ह्रौँ सेरशि यैपादीलकु यैकाब्जिकुश्री य-
 यादह यैलामत्कहृत्यैवगभ मोन ।

पञ्चादशाक्षरं हृदयं शिरश्चैव त्रयोदश ।
 शिखारुद्रक्षरा जेया कवचैकोनविंशतिः ॥
 तिथिसङ्ख्या भवेन्नेत्रमस्त्रं चैव चतुर्दश ।
 पञ्चप्रणव आद्यन्तो यथा विद्या तथाऽन्तिमा ॥
 एतत्कौलिकभाषायां कथितं ते सप्रत्ययम् ।
 सस्फुटं गुरुवक्त्रस्थं विलोमस्थं न सिध्यति ॥
 कौलिकेऽदः समाख्यातं सिद्धमार्गे सुदुर्लभम् ।

अथ ध्यानं (परातन्त्रे)

वृषभे संस्थितं देवं खवर्णरूपशोभितम् ।
 एकवक्त्रं त्रिनेत्रं च भुजाष्टादशधारिणम् ॥
 परशुं डमरुं बाणं खड्गमङ्कुशवज्रकम् ।
 शङ्खं च वेणुवाद्यं च वरदं दक्षिणे करे ॥
 वामे खट्वाङ्गशूलं च धनुः फलकपाशकम् ।

घण्टां कपालं वेणुं च अभयं भयनाशनम् ॥
 पट्टेन बन्धितं जालुवामोरुस्था च कुब्जिका ।
 एकवक्त्रा त्रिनेत्रा च करुणावरवर्णिता ॥
 द्विभुजा वरदा देवी सिंहस्थाऽभयसव्यसु ।
 नानाभरणभूषाङ्गी खण्डेन्दुकृतशेखरा ॥
 वर्वरा केशपाशेन चारुपोतघनस्तनी ।
 एवं येध्या कुजा माता पश्चिमाश्रयनायिका ॥

अथ पुरश्चरणम् । (कुलालिकाम्नायतन्त्रे)

अक्षराक्षरसन्तानं योजयेच्छक्षसङ्ख्यया ।
 लघ्वीशगुणतुल्योऽसौ हर्ता कर्ता स्वयं प्रभुः ॥
 खेचरीणां पदं सो हि पश्यति ह्यविचारतः ।
 निराचारेण योगेन चिन्तयन्तो महेश्वरोम् ॥

इति कुब्जिकामन्त्रः ।

अथ गङ्गामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये रुद्रशोर्षनिवासिन्याः परान् मनून् ।
 तारो नमः शिवायै च नारायण्यै पदं वदेत् ॥
 दशहरायै गङ्गायै स्वाहान्तो विंशदर्शकः ।
 व्यासो मुनिः कृतिश्छन्दो गङ्गा देवी प्रकीर्तिता ॥
 त्रिवह्निवेदबाणाग्निनेत्रवर्णैः षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वाभरणभूषिताम् ।
 रत्नकुम्भसिताम्भोजवरदाभयसत्कराम् ॥
 चामरैर्बीजमानां च श्वेतच्छत्रोपशोभिताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेदशांशेन जुहुयात् सघृतैस्त्रिलैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि वामाचाराघनाशनम् ।

बहिर्यजनकर्तारः शिद्धाः स्युर्यत्प्रभावतः ॥

तारो नमो भगवति वाग्भवं च हिलिद्वयम् ।

मिलिद्वयं च गङ्गे मां पावयद्वितयं वदेत् ॥

स्वाहान्तस्तारको वर्णो मनुः पापप्रणाशनः ।

ईश्वरोऽस्य मुनिश्छन्दोऽमितं गङ्गा च देवता ॥

रामवेदाङ्गवह्यङ्गनेत्राणैरङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

रक्ताम्बरां रक्तवर्णीं शूलकुम्भवराभयान् ।

करैः संदधतीं स्मेरां कच्छपस्थां सुरादिभिः ॥

तद्रूपाभिः स्वपापस्य नाशाय सुनिषेविताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेद्धोमः प्रोक्तः पद्मैर्दशांशतः ।

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री मरुदादिकनिर्जले ॥

देशे गत्वा जलार्थं तु पुरश्चर्यां समाचरेत् ।

होमादिसर्वं निर्वृत्य गङ्गामावाहयेत् ततः ॥

तत्र कूपादिकं कृत्वा भवेत् तदमृतोपमम् ।

कल्पस्थायितयाऽगार्धं समस्तगदनाशनम् ॥

तथा ।

इयमादिमसप्तार्णं त्यक्त्वोक्ता तु नखाक्षरी ।

प्राग्वन्मुन्यादिकं बाणवेदत्रित्रिवाहुभिः ॥

मन्त्राणैः स्युः षडङ्गानि पुरश्चर्यार्णलक्षकम् ।

होमद्रव्यादिकं प्राग्वत् सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥
प्रयोगं जलमध्ये तु स्थित्वा जप्त्वाऽयुतं मनुम् ।
त्र्यहादवर्षाकालेऽपि वृष्टिर्भवति भूयसी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तारो हिलिमिलिद्वन्द्वे गङ्गे देवि नमो मनुः ।
तिथिवर्णोऽस्य मुन्यादिः पूजा पूर्ववदीरिता ॥
त्रिद्वित्र्यक्षिकृताब्ध्यर्णैः षडङ्गविधिरीरितः ।
एतस्य भजनाज्जन्तोर्नातीर्थे मरणं भवेत् ॥

पुनर्मन्त्रान्तरमाह ।

तारो लज्जा रमा हार्दं ततो भगवती पदम् ।
सम्बुध्यन्तं गङ्गदयिते नमो हूँ तथाऽस्त्वक्रम् ॥
अष्टादशार्णमन्त्रोऽयं मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ।
इति गङ्गामन्त्रः ।

अथ मणिकर्णिकामन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मणिकर्णीमनुहयम् ।
तरो वाक् ह्रीँ रमा कामस्तारोऽयं मणिकर्णिके ॥
नम उँ तिथिवर्णोऽयं मन्त्रः परमदुर्लभः ।
मुनिर्व्यासोऽतिशक्करी छन्दः स्यान्मणिकर्णिका ॥
देवता चन्द्रनेत्राक्षिद्वीषुत्र्यर्णैः षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

बीजपूरं दक्षहस्ते वामेन्दीवरमालिका ।
बद्धाञ्जलिः श्वेतवस्त्रा त्र्यक्षा चन्द्रनिभानना ॥
पश्चिमाभिमुखी स्मेरा पद्मस्था पद्ममालिका ।
नानालङ्कारभूषाढ्या ध्येया श्रीमणिकर्णिका ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।

पुण्डरीकैस्त्रिमध्वक्तैर्यजेत् तां गङ्गाया समम् ॥

इति मणिकर्णिकामन्त्रः ।

अथ वाग्मतीमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वाग्मत्याश्च मनुद्वयम् ।

वाग्बीजं प्रथमो मन्त्रो नारदोऽस्य मतो मुनिः ॥

छन्दोऽनुष्टुब्देवता तु वाग्मती परिकीर्त्तिता ।

बीजपूर्वैश्च षड्दीर्घैः षडङ्गविधिरीरितः ॥

अथ ध्यानम् ।

श्वेतम्बरां श्वेतवर्णां श्वेतगन्धानुलेपनाम् ।

सुधाकुम्भं च पद्मं च वीणां पुस्तकमेव च ॥

करैर्दधन्तीं मीनस्थां मुक्ताभरणभूषिताम् ।

एवं ध्यात्वा कर्णिकायां यजेद्देवो षडस्रके ॥

रुद्रधारां मणिमतीं फल्गुं विष्णुमतीं तथा ।

प्रभावतीं भानुमतीं भूपुरे तु दिगीश्वरान् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं पञ्चखाद्यैस्तथा हूनेत् ।

तर्पणादि ततः कृत्वा सिद्धो मन्त्रः प्रजायते ॥

सद्योजातस्य बालस्य जिह्वायां बीजमालिखेत् ।

मधुना स्वर्णलेखन्या सोऽष्टवर्षः कविर्भवेत् ॥

वाग्मत्यां वाऽथ गङ्गायां पुरश्चर्यां करोति यः ।

द्वितीयामप्रतिग्राहो भिक्षाशी चाथ मौनवान् ॥

ब्रह्मचारी भूमिशायी श्वेताम्बधरः शुचिः ।

वाक्सिद्धिं लभतेऽवश्यं दाता भोक्ता त्वयाचकः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

रमात्रपावाग्बीजानि वदेद्दृष्ट्वा च वाग्मती ।

नमो ममेति च पदे धारणां च ततो धियम् ॥

वाचमद्भुतां प्रदेहि स्वाहान्तस्तत्त्ववर्णकः ।

मुन्यादिकं तथा पूजा पुरश्चर्या च पूर्ववत् ॥

इति वाग्मतीमन्त्रः ।

अथ चन्द्रमन्त्रः ।

(शारदायाम्)

अथोच्यते चन्द्रमसो मनुः सर्वसमृद्धिदः ।

खड्गीशस्थो भृगुर्विन्दुमनुः खरसमन्वितः ॥

सोमाय हृदयान्तोऽयं मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ।

ऋषिरुक्तो भृगुश्छन्दः पङ्क्तिः सोमोऽस्य देवता ॥

दीर्घभाजा खर्वीजेन मनोरङ्गक्रिया मता ।

अथ ध्यानम् ।

कर्पूरस्फटिकावदातमनिशं पर्णेन्दुविम्बाननं

मुक्तादामविभूषितेन वपुषा निर्मूलयन्तं तमः ।

हस्ताभ्यां कुमुदं वरं च दधतं नीलालकोद्भासितं

स्वस्थाङ्गस्थमृगोदिताश्रयगुणं सोमं सुधाब्धिं भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रसलक्षं जपेन्मन्त्रं साधको विजितेन्द्रियः ।

तत्सहस्रं प्रजुहुयात् पायसेन ससर्पिषा ॥

अथ मन्त्रान्तरं (मेखतत्रे) ।

ॐ आँ श्रीँ श्रुँ सविन्दुः स सोमायेत्यग्निगेहिनी ।

Handwritten notes in Devanagari script, likely a commentary or additional instructions related to the mantras.

दशाक्षरश्चन्द्रमन्त्रो जप्यश्चायं नृपायुतम् ॥

होमादिकप्रयोगाँश्च सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।

इति चन्द्रमन्त्रः ।

अथ भौममन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथ भौममनुं वक्ष्ये सर्वरोगनिवारणम् ।

ॐ च अङ्गारको डेऽन्तो हृदन्तश्चाष्टवर्णकः ॥

ऋष्याद्या ब्रह्मगायत्री भूमिपुत्राः प्रकर्त्तिताः ।

अङ्गषट्कं त्वस्य मनोर्निजबीजेन संमतम् ॥

अथ ध्यानम् ।

नमाम्यङ्गारकं रक्तं रक्ताम्बरविभूषणम् ।

जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षाष्टकं जपः प्रोक्तः खदिरोद्भवकैर्हुनेत् ।

साज्यैः संतर्पणं रक्तचन्दनाद्यैः समाचरेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भूमिमन्त्रस्य सिद्धिदम् ।

ॐ हाँ हँसः खँ ख इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥

मुनिर्विरूपो गायत्री छन्दो देवो धरात्मजः ।

षड्विर्णैः षडङ्गानि मनोः कुर्वीत साधकः ॥

अथ ध्यानम् ।

जवाकुसुमसंकाशं शक्तिं शूलं गदां वरम् ।

मेषसंस्थं रक्तवस्त्रं तं वन्देऽहं धरात्मजम् ॥

अस्य पुरश्चरणं षडलक्षजपः ।

रसलक्षं जपेद्धोमं समिद्धिः खदिरस्य च ।

इति तत्रैवेतिव्यात् ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ क्राँ क्रीँ क्रौँ सविन्दुः सकुजायेत्यग्निगेहिनी ।

दशाक्षरो भौममन्त्रो जप्यश्चायं नवायुतः ॥

पुनर्मन्त्रान्तरमाह ।

ॐ श्रीँ ह्रीँ ह्रीँ समुच्चार्य डेऽन्तो भौमो हृदन्तकः ।

दशाक्षरो मनुः प्रोक्तो विरूपाक्षो मुनिर्मतः ॥

गायत्री छन्द उदितं देवता मङ्गलो भवेत् ।

ह्रीँ बीजं श्रीँ च शक्तिः स्यात् कीलकं ह्रीँ प्रकर्त्तितम् ॥

कालादिकं समुच्चार्य नियोग ऋणनाशने ।

षड्दीर्घयुक्तबीजेन अङ्गुल्यादिषडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

ततो ध्यायेद्रक्तवर्णं रक्तमाल्यांशुकावृतम् ।

कण्ठे कमलमालाढ्यं करयोः शक्तिशूलकम् ॥

मङ्गलानां मङ्गलं च सर्वकामफलप्रदम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा जपेच्छक्षं जुहुयात् करवीरजैः ।

जवाप्रसूनैः पुरुभिर्मधुरत्रितयान्वितैः ॥

रक्तचन्दनगन्धाढ्यैर्यजेदरुणभूषणम् ।

विधिना भूमितनयं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥

इति कुजमन्त्रः ।

अथ भौममन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि बुधमन्त्रं महान्नुतम् ।

बुं डेऽन्तं बुधशब्दं च हृदयान्तः षडङ्गकः ॥

बुधमन्त्रोऽस्य मुन्याद्या ब्रह्मपङ्क्तिबुधा मताः ।

षडङ्गानि स्वबीजेन विन्यस्यैवं विचिन्तयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

वन्दे बुधं सदा देवं पीताम्बरसुभूषणम् ।

जानुस्थवामहस्ताब्जं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

प्रजपेद्वर्णसाहस्रं दशांशं जुहुयाद्द्यूतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ ब्राँ ब्रीँ ब्रूँ सविन्दुः सबुधायेत्यग्निगेहिनी ।

दशाक्षरः सौम्यमन्त्रो जपो लक्षैकसङ्ख्यया ॥

इति बुधमन्त्रः ।

अथ बृहस्पतिमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि गुरुमन्त्रं गुरुत्वकृत् ।

ब्रूँ बृहस्पतये हृच्च मन्त्रश्चाष्टाक्षरो मतः ॥

छन्दोऽनुष्टुबमुनिर्ब्रह्मा देवः प्रोक्तो बृहस्पतिः ।

ब्रूँ बीजं पतये शक्तिर्बीजेनैवाङ्गकल्पनम् ॥

अथ ध्यानम् ।

सुवर्णाभं पीतवस्त्रं रक्तस्वर्णाम्बरादिकम् ।

किरन्तं दक्षहस्तेन तद्राशिं वामपाणिना ॥

स्पृशन्तं सम्यगपरं विपणौ कनकादिकम् ।

नानालङ्कारशोभाढ्यं विद्यासागरपारगम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपित्वाऽशीतिसाहस्रं हुत्वा धेनुवृतेन वा ।

धर्माधर्मादिपीठे तं पूजयेदङ्गदिश्यकैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ ज्राँ ज्रीँ ज्रूँ सविन्दुः सचतुर्थ्यन्तो बृहस्पतिः ।

वह्निस्त्रीविश्ववर्णोऽयं जप्यः पञ्चदशायुतम् ॥

इति बृहस्पतिमन्त्रः ।

अथ शुक्रमन्त्रः ।

तत्रैव ।

वस्त्रं मे देहि शुक्राय हृदयान्तः शुमादिकः ।

एकादशाक्षरो मन्त्रो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥

ब्रह्मा मुनिर्देवता तु शुक्रो दैत्यादिपूजितः ।

षड्भिः पदैः षडङ्गानि ततो देवं विचिन्तयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

शुक्रं नमाम्यापणस्थं मुक्ताभरणभूषणम् ।

स्वर्णवासोरत्नधाराविमुग्धान्तःकरद्वयम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं जुहुयाद्घृतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ हौं ह्रीं ह्रौं सविन्दुः सशुक्रायेत्यग्निगेहिनी ।

दशाक्षरः शुक्रमन्त्रो जप्योऽयं द्वादशायुतम् ॥

उदुम्बरसमिद्भिश्च होमयेत् सकलापदः ।

भूपैः कृता विनश्यन्ति स्त्रीसौख्यमुपजायते ॥

इति शुक्रमन्त्रः ।

अथ शनैश्चरमन्त्रः ।

तत्रैव ।

शनैश्चराय हृदयं शमाद्यश्चाष्टवर्णकः ।

मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रशनैश्चरसमाह्वयाः ॥

षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि समाचरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे शनैश्चरं वक्रदंष्ट्रं नीलविभूषणम् ।

वामजानुस्थितं वामकरं दक्षे वरं दधत् ॥

‘ (मार्त्तण्डभैरवतन्त्रे)

नीलाद्रिशोभाश्चितदिव्यमूर्तिः खड्गी त्रिदण्डी शरचापहस्तः ।

शम्भुर्महाकालशनिः पुरारिर्जयत्यशेषासुरनाशकारी ॥

इति ध्यानान्तरमुक्तम् ।

अथ पुरश्चरणं (मेरौ)

जपेदक्षरसाहस्रं तदशांशं हुनेद्घृतैः ।

षडङ्गग्रहदिक्पालसायुधैः परिपूजनम् ॥

न शनैश्चरभक्तानामापदो न दरिद्रता ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ प्राँ प्रीँ प्रौँ स इत्युक्त्वा शनैश्चरपदं वदेत् ।

डेऽन्तं स्वाहा द्वादशाणौ जपः प्रयुतसंमतः ॥

हुनेच्छमीसमिद्भिश्च क्लीवाः सर्वेऽस्य वश्यगाः ।

इति शनैश्चरमन्त्रः ।

अथ राहुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अपरं तु मनुं वक्ष्ये राहवे नम उच्चरेत् ।

राँ पूर्वकः षडणौऽयं वर्णैरेवाङ्गकल्पनम् ॥

मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रराहवः परिकीर्तिताः ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे राहुं धूम्रवर्णं सर्वकायं कृताञ्जलिम् ।

विकृतास्यं रक्तनेत्रं धूम्रालङ्कार*मन्वहम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्वर्णसहस्रं तु होमयेद्घृतेन च ।

‘ एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तक एवोपलभ्यते ।

* मण्डितम्-इति २-३-४ पु० पा० ।

ग्रहाशाधिपशस्त्वैश्च पूजावृत्तिरुदीरिता ॥

राहोरुपासको भूपः संग्रामे विजयी भवेत् ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ साँ सोँ सौँ सविन्दुः सराहवे त्वग्निगेहिनी ।

दशाक्षरो राहुमन्त्रो जप्यश्चायं दशायुतः ॥

दूर्वाभिर्होमयित्वा च द्विजान् संतर्प्य सिध्यते ।

इति राहुमन्त्रः ।

अथ केतुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

केँ केतवे हृदित्येवं केतुमन्त्रः षडर्णकः ।

ब्रह्मा मुनिर्मतदछन्दः पङ्क्तिः केतुश्च देवता ॥

केँ बीजं वेँ तु शक्तिः स्याद्बीजेनैव षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे केतुं कृष्णवर्णं कृष्णवस्त्रविभूषितम् ।

वामोरुन्यस्ततश्चस्तं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेदक्षरसाहस्रं तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ प्राँ प्रीँ प्रौँ सविन्दुः सकेतवे वह्निगेहिनी ।

दशाक्षरः केतुमन्त्रो जप्योऽयं द्वादशायुतम् ॥

होमः कुशैः प्रकर्त्तव्यो घृताक्तैस्तर्पणादि च ।

उपासकानामेतस्य केतवोऽग्रे चलन्ति हि ॥

इति केतुमन्त्रः ।

अथ ग्रहमातृकामन्त्राः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि ग्रहमातृसुसाधनम् ।

ग्रहमातरि तुष्टायां किं ग्रहैर्दुरितैरपि ॥
 ग्रहमातरि तुष्टायां सुग्रहैः किं प्रयोजनम् ।
 मङ्गला पिङ्गला धन्या भ्रामरी भद्रिका तथा ॥
 उल्का सिद्धा संकटा च विकटा गर्भपालिका ।
 रुद्रनक्षत्रतश्चाष्टौ जन्मधिष्ण्यक्रमाद्दशाः ॥
 फलं नामानुरूपं स्यादेकोपचयतो द्वयोः ।
 पिङ्गला सूर्यजननी महाधिव्याधिकारिणी ॥
 तुष्टा चेच्छत्रुवर्गस्य रुष्टा कुर्याच्च साधके ।
 ब्जे बीजं तु समुच्चार्य पिङ्गले वैरिवारिणि ॥
 प्रसीद फडिति प्रोक्तस्त्रयोऽग्निशक्तिवर्णकः ।
 दीर्घषट्कयुजा पूर्वबीजेन च षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

पिङ्गवर्णीं पिङ्गकेशीं पिङ्गनेत्रां धनुःशरान् ।
 हस्ताभ्यां दधतीं पद्मयुगलं तां भजाम्यहम् ॥
 अथ पूजाविधिं वक्ष्ये सर्वासामेव तन्त्रतः ।
 जवापुष्पाणि शस्तानि धूपो गुग्गुलुसम्भवः ॥
 घृतप्रदीपो मधुरा नैवेद्याः पायसादयः ।
 अलङ्कारास्तथा रक्तास्तथा वस्त्राणि चन्दनम् ॥
 स्वर्णालङ्कारणैश्चापि सद्द्रव्यैर्बहुपञ्चकैः ।
 तर्पयेत् परमेशानि तत्तन्मन्त्रैः सहस्रधा ॥
 सुवर्णपत्रे निच्छिद्रे हस्तायामे मनोरमे ।
 कृत्वा यन्त्रं तथोक्तं तु योगिनीं तत्र पूजयेत् ॥
 तत्तन्मन्त्रवरं जप्त्वा विघ्नशान्त्यै सहस्रशः ।

सप्ताहेन प्रजायेत त्रिविधोत्पातवारणम् ॥
 ततश्च कुण्डं विधिवत् कृत्वा च चतुरस्रकम् ।
 अथ वा स्थण्डिले शुद्धे सुलिप्ते गोमयाम्बुभिः ॥
 चतुर्हस्तप्रमाणेन योजयेत् स्थिरमानसः ।
 योगिन्यग्निं तु संस्थाप्य कृत्वा पूर्वोदिताः क्रियाः ॥
 अन्यासां दशवारं तु विरुद्धायाः सहस्रधा ।
 विल्वपत्रैस्तत्फलैश्च कमलैर्नागकेशरैः ॥
 जुहुयात् पायसान्नेन तथैव कुलवस्तुना ।
 सहस्रमयुतं वाऽपि लक्षं वा कामनाक्रमात् ॥
 अथ पूजां प्रवक्ष्यामि मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ।
 इच्छां ज्ञानं क्रियां शक्तिं त्रिषु कोणेषु पूजयेत् ॥
 मन्मथान् पञ्च तदधः पञ्चकोणेषु पूजयेत् ।
 षडङ्गं पूजयेत् पश्चादष्टपत्रेऽन्ययोगिनीः ॥
 तद्वाह्यभूपुरे लोकपालानस्त्राणि पूजयेत् ।
 पूजाप्रकारो होमश्च सर्वासामयमेव हि ॥
 विशेषः पुनरत्रास्ति शत्रूच्छेदाभिचारके ।
 खड्गचर्मधरामुग्रां ध्यायेत् षडभुजधारिणीम् ॥
 गरुडासनमासीनां वैरिनिग्रहकारिकाम् ।
 लक्षमेकं प्रजप्यादौ जपेच्छक्षं हि तर्पयेत् ॥
 सर्वशत्रुविनाशः स्याद्दुःखं नाप्नोति कुत्र चित् ।
 अथातः संप्रवक्ष्यामि चन्द्रमातुश्च साधनम् ॥
 मायाद्यो वह्निजायान्तो मङ्गले मङ्गलालये ।
 एकादशाक्षरो मन्त्रो मङ्गलायाः प्रकीर्तितः ॥

कृत्वाऽऽद्येन षडङ्गानि दीर्घषट्कयुजा तथा ।
 ध्यायेदेनां त्रिनयनामुद्यदादित्यसन्निभाम् ॥
 दरस्मेरमुखाम्भोजां सिन्दूरसुन्दुराधराम् ।
 पद्मद्वयं धनुर्बाणान् दधतीं भुजपल्लवैः ॥
 सगुञ्जन्मञ्जुमञ्जीरकाश्चीगुणविराजिताम् ।
 एवं ध्यात्वा महेशानि पूर्ववत् परिपूजयेत् ॥
 ततो लब्धमनुं जप्त्वा तारमायापुरःसरम् ।
 योगिनीक्षेत्रवटुकगणाधिपवलिं हरेत् ॥
 सर्वासामेव पूजान्ते मङ्गलैव प्रसीदति ।

अथ पुरश्चरणमाह ।

योगिन्यास्तु प्रसादार्थं वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ।
 दुर्योगिन्यनुकूलार्थं जपेत् तत्सङ्ख्यकायुतम् ॥
 अदृष्टप्रतिबद्धस्य शुभायास्तु फलस्य च ।
 प्राप्तये प्रजपेत् तावत्सहस्रं प्रत्यहं जपम् ॥
 प्रकर्त्तव्यो वर्णशतं यावद्बुधा तु योगिनी ।
 तुष्टाया वर्णदशकं रोगिणं चाभिमन्त्रयेत् ॥
 वर्णतुल्येन मन्त्रेण यस्याः सेवापरो भवेत् ।
 तस्याः पीडानिवृत्तिः स्याद्दर्णाभ्यन्तर्गतैर्दिनेः ॥
 एवं विधिर्नवानां तु विज्ञेयः सुरसत्तमाः ।
 योगिनी तुल्यफलदा वाममार्गे च दक्षिणे ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि भ्रामरीं भौममातरम् ।
 क्षीं भ्रामरि पदं चोक्त्वा जय तान्मे अधीश्वरि ॥
 भ्रामय क्लीं षोडशाणो मन्त्रोऽस्याः परिकीर्त्तितः ।

पिङ्गलावत् सर्वमस्याः सिद्धये शर्करान् दश ॥
 मन्त्रयित्वाऽनया मार्गे दशदिक्षु च संत्यजेत् ।
 प्रातस्ततो ब्रजेन्मार्गं मार्गस्थाः सर्व एव हि ॥
 सर्वे मोहं समायान्ति व्याघ्राः सर्पाश्च तस्कराः ।
 शुल्किनो दुष्टभूपाश्च नित्यमेवं समाचरेत् ॥
 उपानत्कतले यस्य लिखित्वा नाम च ब्रजेत् ।
 योजनैकं जपेन्मन्त्रं स भ्रमेच्छ वसुन्धराम् ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि भद्रिकां बुधमातरम् ।
 मूँ बीजं तोयभूयोगाज्जातमादौ समुच्चरेत् ॥
 भद्रिके मे मम भद्रं देहीति च पदं पुनः ।
 वदेच्च परभद्राणि नाशय हितयं ततः ॥
 स्वाहान्तो जिनवर्णोऽयं भद्रिकाया मनुर्मतः ।
 षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥
 मङ्गलावच्छुभानां स्याद्भयानं दुष्फलदायिनी ।
 पिङ्गलावत् समुद्दिष्टं जपाद्यं प्रोक्तवर्त्मना ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि धन्याख्यां गुरुमातरम् ।
 श्रीधनदे समुच्चार्य धन्ये स्वाहाऽष्टवर्णकः ॥
 षड्दीर्घाढ्याद्यबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ।
 नास्ति धन्यासमा का चिदिह लोके फलप्रदा ॥
 पुरश्चर्यात्रयं कृत्वा प्राग्जन्मार्जितपातकम् ।
 संस्तम्भ्य धन्या ददते धन्यत्वं साधकाय तु ॥
 बृहस्पतीश्वरात् पश्चात् काश्यां धन्यां विलोकयेत् ।
 पुरश्चर्यां तत्र कृत्वा वैश्यो धन्यः प्रजायते ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि सिद्धां शुक्रस्य मातरम् ।
 ह्रीं सिद्धे मे सर्वमानं समुक्त्वा साधयद्वयम् ॥
 हृदयान्तो मित्रवर्णः सिद्धाया मनुरीरितः ।
 बीजेनैव षडङ्गानि जपाद्यं प्रोक्तवच्चरेत् ॥
 नास्ति सिद्धोपासकानां कर्मासिद्धिस्तु कुत्र चित् ।
 उपासका ये सिद्धायाः येनाम्नायेन जायते ॥
 तदाम्नायकदेवानां पाकेऽस्याः सर्वमेव हि ।
 षट्कर्म सिद्ध्यते तस्य मनोराराधनं विना ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि चोक्त्वा मन्दस्य मातरम् ।
 ॐ मम रोगं नाशय भञ्जयैकादशाक्षरः ॥
 सर्वरोगापहो मन्त्रो मार्जनात् सप्तयस्त्रतः ।
 उल्कामन्त्रो यस्य सिद्धो न गदास्तस्य मन्दिरे ॥
 शीतलायां महामार्यां महिषं लक्षणान्वितम् ।
 उल्काप्रीत्यै तमुत्सृज्य नगरे भ्रामयेत् पुनः ॥
 नानावायैः परिवृतं वस्त्रादिभिरलङ्घितम् ।
 उत्सृजेत् तं यमाशायामुपद्रवशमो भवेत् ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि संकटां राहुमातरम् ।
 ह्रीं संकटे च रोगं मे परमं नाशयद्वयम् ॥
 षोडशार्णस्तु मन्त्रोऽयं सर्वदुःखापनोदनः ।
 काराग्रहे जपेच्छक्षं बन्धमोक्षः प्रजायते ॥
 वीरेश्वरादुदक् काश्यां संकटा यत्र संस्थिता ।
 तत्र षोडशलक्षाणि जप्त्वा होमस्तु दूर्वया ॥
 तस्य सिद्धो भवेन्मन्त्रस्तन्मुखाद्यदि निःसरेत् ।

अमुकस्यामुकं कष्टं गतं तद्धतमेव हि ॥
 अथातः संप्रवक्ष्यामि विकटां केतुमातरम् ।
 तारो नमो भगवति विकटे वीरपालिके ॥
 प्रसीदयुगलं मन्त्रः प्रकृत्यर्णः प्रकीर्तितः ।
 काश्यां वीरेश्वरासन्ना पश्चिमे विकटा स्थिता ॥
 तत्र मन्त्रमिमं जप्त्वा ग्रहतप्ताश्च बालकाः ।
 उदरं चापि बन्ध्यायाः प्रसवत्यास्तथा शिरः ॥
 पित्रादिभिस्त्यक्तबालास्तथा मातृविवर्जिताः ।
 साधकस्य करस्पृष्टा नीरोगाश्चिरजीविनः ॥
 इति ग्रहमातृकमन्त्राः ।

अथ दिक्पालमन्त्राः ।

तत्रादौ शक्रमन्त्र उक्तस्तत्रैव ।

इमिन्द्राय नमश्चेति शक्रमन्त्रः षडक्षरः ।
 पङ्क्तिश्छन्दो मुनिर्ब्रह्मा देव इन्द्रः प्रकीर्तितः ॥
 मायेति शक्तिं रिं बीजं बीजेनैव षडङ्गकम् ।

अथ इयानम् ।

पीतवर्णं सहस्राक्षं वज्रपद्मकरं विभुम् ।
 सर्वालङ्कारसंयुक्तं नौमीन्द्रं दिक्पतीश्वरम् ॥

अस्य पुरश्चरणं तत्रैव ।

प्रजपेच्छक्षमेकं तु तिलाज्याभ्यां हुनेत् ततः ।
 एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगं कर्तुमर्हति ॥

अथाग्निमन्त्रः (शारदायाम्)

व्याहृतित्रयमग्नेः स्याज्जातवेद इहावह ।
 सर्वकर्माणि संभाष्य साधयान्निप्रिया ततः ॥
 ताराद्योऽयं मनुः प्रोक्तः पञ्चविंशतिवर्णवान् ।

ऋषिर्भृगुर्भवेच्छन्दो गायत्रं देवताऽनलः ॥
 विभक्तः पञ्चभिः षड्भिश्चतुर्भिः पञ्चभिस्त्रिभिः ।
 द्वाभ्यामङ्गक्रिया प्रोक्ता वर्णैर्मूलमनोः क्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

अंसासक्तसुवर्णमाल्यमरुणस्वक्चन्दनालङ्कृतं
 ज्वालापुञ्जजटाकलापविलसन्मौलिं सुमुक्ताम्बरम् ।
 शक्तिस्वस्तिकदर्भमुष्टिकजपस्रक्स्तुक्स्तुवाभीवरान्
 तदोर्भिर्बिभ्रतमश्रितत्रिनयनं रक्ताभमग्निं भजे ॥

• अथ पुरश्चरणम् ।

गुरोर्लब्धमनुर्मन्त्री चतुर्दश्यामुपोषितः ।
 जपेद्भानुसहस्राणि शुद्धाचारो जितेन्द्रियः ॥
 अमावास्यादिने विप्रान् भोजयेन्मधुरोत्तरैः ।
 भक्ष्यैर्भोज्यैर्यथाशक्ति दद्यात् तेभ्योऽत्र दक्षिणाम् ॥
 भुक्त्वा भोगं समानीय होमद्रव्याणि शोधयेत् ।
 अपरं दिनमारभ्य होमं कुर्यादतन्द्रितः ॥
 क्रमाद्वटसमिद्धीहितिलराजीहविर्घृतैः ।
 प्रत्येकमष्टोत्तरशतं जुहुयादनिशं सुधीः ॥
 दशाहमेवं निर्वर्त्य विधानेन विधानवित् ।
 दत्त्वा पूर्णाहुतिं सम्यगेकादश्यां द्विजोत्तमान् ॥
 संपूज्य तर्पयेद्विस्तैर्यथाविभवमादरात् ।
 गुरवे दक्षिणां दद्यादरुणां गां पयस्विनीम् ॥
 वासांसि धनधान्यादि दत्त्वा संप्रीणयेद्गुरुम् ।

अथ यमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

ॐ क्रौं ह्रीं आँ च तद्बीजं डेऽन्तं वैवस्वतं वदेत् ।

धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमो वदेत् ॥
 चतुर्विंशतिवर्णोऽयं यममन्त्रोऽखिलेष्टदः ।
 सिद्धीष्विष्वङ्गयुग्माणैः षडङ्गानि स्मरेद्यमम् ॥
 मेघश्यामं प्रसन्नास्यं नानालङ्कारसंयुतम् ।
 महिषस्थं दण्डधरं संस्तुतं पितृभिर्वृतम् ॥
 नानारूपधरैर्दूतैः श्वेतवस्त्रं भजेद्यमम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेदाज्यान्वितैस्तिलैः ।

अथ तैर्ऋतमन्त्रस्तत्रैव ।

ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षाधिपतये पदं वदेत् ।
 धूम्रवर्णाय खड्गेति हस्ताय प्रेतवाहनः ॥
 डेऽन्तस्ततश्च हृदयं त्रिंशद्वर्णो मनुर्मतः ।
 ॐ क्षमाद्यैर्हृदन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ॥

ध्यानम् ।

किरीटिनं च पिङ्गाक्षं धूम्राभं प्रेतवाहनम् ।
 नानारक्षोगणैः सेव्यं खड्गचर्मधरं भजे ॥

पुरश्चरणं तत्रैव ।

जपेत् त्रिंशत्सहस्राणि गुञ्जाज्याभ्यां हुनेत् पुनः ।

अथ वरुणमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं वरुणदैवतम् ।
 तारं वं वरुणायैति जलाधिपतये वदेत् ॥
 वदेच्च शुक्रवर्णाय पाशहस्ताय संवदेत् ।
 मकरेति वाहनाय नम एकत्रिवर्णकः ॥
 त्रिष्टुप्लन्दो वशिष्टर्षिर्देवता वरुणो मतः ।
 ॐ वमाद्यैर्नमोऽन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ॥

ध्यानम् ।

श्वेतांशुकं दधद्धस्तैः पाशाङ्कुशवराभयान् ।
स्वच्छारविन्दवसतिर्मुक्ताभरणभूषितः ॥
तुन्दिलश्च प्रसन्नास्यो वरुणो निधिदोऽस्तु मे ।

पुरश्चरणम् ।

जपेद्दर्णसहस्रं तु होमः पद्माक्षकैर्मतः ।

अथ वायुमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वायुमन्त्रं महाद्भुतम् ।
तारं यँ वायवे प्राणाधिपतये पदं वदेत् ॥
कृष्णवर्णायाङ्कुशेति हस्ताय मृगवाहना- ।
य नमो गोद्विवर्णोऽयं वायोर्मन्त्र उदोरितः ॥
गणकोऽस्य मुनिश्छन्दो निवृद्वायुश्च देवता ।
पञ्चाङ्गानि मनोरस्य ॐ यँ बीजादिकैः पदैः ॥

ध्यानम् ।

कृष्णवर्णं धावमानं मृगस्थं वेगवन्तरम् ।
पाशाङ्कुशकरं प्रेतकृत्यापरिमलान्वितम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्दर्णसहस्राणि लाजाज्याभ्यां च होमयेत् ।
सिद्धमन्त्रस्तु तत्कालं भवेद्भूमौ बलाधिकः ॥

अथ कुबेरमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि राजराजमनून् शुभान् ।
यक्षाय च कुबेराय वदेद्वैश्रवणाय च ॥
धनधान्याधिपतये धनधान्यपदं वदेत् ।
समृद्धिं मे देहि वदेद्वापयाग्निप्रियान्तकः ॥
पञ्चत्रिंशद्दर्णमितो विश्रवा मुनिरीरितः ।

छन्दस्तु बृहती त्र्यब्धीष्वष्टाष्टाङ्गैः षडङ्गकम् ॥
ध्यानम् ।

गारुत्मतनिभं शान्तं मुकुटादिविभूषितम् ।
वरं गदां च दधतं तुन्दिलं यक्षसेवितम् ॥

पुरश्चरणम् ।

लक्ष्मेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् तिलैः ।
धर्मादिपीठे प्रयजेदङ्गलोकेशहेतिभिः ॥
शिवालये जपेन्मन्त्रमयुतं धनवृद्धये ।
विल्वमूलोपविष्टेन जप्तो लक्षं धनर्द्धिदः ॥
अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये ॐ श्रीं ॐ ह्रीं समुच्चरेत् ।
श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीं क्लीं च वित्तेश्वराय नम इत्यपि ॥
षोडशाणोऽस्य मुन्यादि प्राग्वत् त्रिद्विदिनेत्रकैः ।
पञ्चाक्षिभ्यां षडङ्गं स्याद्ध्ययानपूजादि पूर्ववत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये कुबेरस्य गजाक्षरम् ।
तारो वैश्रवणायेति स्वाहा पञ्चाङ्गमत्र तु ॥
स्वाहान्तैः प्रणवाद्यैस्तु पञ्चभिर्मन्त्रवर्णकैः ।

ध्यानमाह ।

धनपूर्णं स्वर्णकुम्भं तथा रत्नकरण्डकम् ।
हस्ताभ्यां बिभ्रतं स्वर्णकरपादं च तुन्दिलम् ॥
धराधस्ताद्रत्नपीठोपविष्टं सस्मिताननम् ।

पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेद्धोमः पूजा प्राग्वन्महाधनी ।
सेवनादस्य भवति यक्षिण्याद्यास्तथा वशाः ॥

अथेशानमन्त्रस्तत्रैव ।

प्रणवं हंसमुच्चार्य ईशानाय वदेत् ततः ।

विद्याधिपतये चेति स्फटिकेति वदेत् ततः ॥
 वर्णाय शूलहस्ताय डेऽन्तश्च वृषवाहनः ।
 नमोऽन्त एकत्रिंशद्भिर्वर्णैर्मन्त्र उदाहृतः ॥
 ॐ हमाद्यैर्नमोऽन्तैश्च पञ्चाङ्ग पञ्चभिः पदैः ।
 शक्तीनां मनवो ये च ता विद्याः परिकीर्त्तिताः ॥
 पुरुषाणां च ते मन्त्रा विद्यास्तु पुरुषं विना ।
 भवन्ति नैव फलदा यथा नारो नरं विना ॥
 पुसां योगो यत्र नोक्तस्तत्रेशानं प्रयोजयेत् ।

अस्य पुरश्चरणमष्टसहस्रजपस्तन्त्रान्तरे प्रोक्तः ।

अथ ब्रह्ममन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मणो मन्त्रमुत्तमम् ।
 तारं पाशं ब्रह्मणे च लोकाधिपतये वदेत् ॥
 रक्तवर्णायोर्ध्वलोकपालकाय वदेत् ततः ।
 पद्महस्ताय च पदं डेऽन्तं स्याद्धंसवाहनः ॥
 नमोऽन्तो बाणरामाणो मन्त्रोऽयं परिकीर्त्तितः ।
 तारपाशादिकैः षड्भिः पदैरङ्गहृदन्तकैः ॥
 नास्य पूजा तु मच्छापाज्जपोऽस्य परिकीर्त्तितः ।
 वर्णलक्षजपादेव निग्रहानुग्रहक्षमः ॥
 दशपत्रे यजेदेनं प्रागीशान्तर्दले सुराः ।
 न तत्र मम शापोऽस्ति शापः केवलपूजने ॥

अथानन्तमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि शेषस्य मनुमद्भुतम् ।
 तारं मायामनन्ताय नागाधिपतये वदेत् ॥
 गौरवर्णायतलादिसप्तलोकेश्वराय च ।

चक्रहस्ताय गरुडवाहनाय नमोऽन्तकः ॥
 एवं चत्वारिंशदणो मन्त्रोऽनन्तस्य कोर्त्तितः ।
 मन्त्रं प्रतिचतुर्दश्यां चतुर्दशशतं जपेत् ॥
 दुग्धं हुनेदिन्द्रविप्रान् भोजयेच्च चतुर्दश ।
 कुर्याच्चतुर्दशीं भक्त्या धनधान्ययुतो भवेत् ॥
 राज्यभ्रष्टो लभेद्राज्यं विद्याकामस्तु पण्डितः ।
 भाद्रशुक्लचतुर्दश्यां विशेषात् पूजनं मतम् ॥

इति दिक्पालप्रकरणम् ।

अथ गायत्रीपुरश्चरणादि ।

(मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्यामि मन्त्रेशीं गायत्रीं वेदमातरम् ।
 यया तु सगुणं ब्रह्म गीयते प्रतिपाद्यते ॥
 निर्गुणं यां विना मुक्तिर्न कस्यापि प्रजायते ।
 महामायास्वरूपायां महाकालः स्वयं यजेत् ॥
 यत्प्रभावादहं त्वं च जातकाल इवापरः ।

सगुणब्रह्मेति । सूर्यमण्डलमध्यस्थगुणत्रयात्मकतेजोरूपमित्यर्थः ।
 तदुक्तं (बृहत्सिद्धान्तसारे)

अदित्यमण्डलगतं यत् तेजस्त्रिगुणात्मकम् ।
 तदेतत् सगुणं ब्रह्म ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्—इति ॥

निर्गुणमिति । गुणत्रयोपाधिरहितमित्यर्थः ।

यां विनेति । गुणब्रह्मामिधानद्वारा निर्गुणब्रह्मप्रतिपादिकाया अस्या एव मुक्तिहे-
 तुत्वादिति भावः ।

(शारदायाम्)

प्रणवाद्या व्याहृतयः सप्त स्युस्तत्पदादिकाः ।
 चतुर्विंशलक्षरात्मा गायत्री शिरसाऽन्विता ॥
 सर्ववेदोद्धृतः सारो मन्त्रोऽयं समुदाहृतः ।

ब्रह्मा देव्यादिगायत्री परमात्मा समीरिताः ॥
 ऋष्याद्याः प्रणवस्यैते मुनिभिः परिकीर्तिताः ।
 यमदग्निभरद्वाजभृगुगौतमकाश्यपान् ॥
 विश्वामित्रवशिष्ठाख्यौ व्याहृतीनामृषीन् विदुः ।
 गायत्र्युष्णिगथानुष्टुब्बृहतीपङ्क्तयः पुनः ॥
 त्रिष्टुब्जगत्यौ छन्दांसि कथितानि मनीषिभिः ।
 सप्तार्चिरनिलं सूर्यो वाक्पतिर्वरुणो वृषः ॥
 विश्वे देवाः क्रमादासां देवताः परिकीर्तिताः ।

(मेरुतन्त्रे)

गायत्र्या मुनिराख्यातो विश्वामित्रोऽतितापसः ।
 गायत्री छन्द इत्युक्तं देवता सविता स्मृता ॥
 तन्त्रान्तरे ।

अग्निर्मुखं शिरो ब्रह्मा हृदिष्णुरलिकं शिवः ।
 साङ्ख्यायनश्च गोत्रं स्यात् त्रैलोक्यं चरणत्रयम् ॥

(शारदायाम्)

शिरसोऽस्या मुनिर्ब्रह्मा छन्दो देव्यादिका स्मृता ।
 गायत्री परमात्मा तु देवता कथिता बुधैः ॥

(मेरुतन्त्रे)

व्याहृतिः सप्तभूराढ्या हन्मुखांसोर्युग्मके ।
 जठरे च क्रमात् न्यसेन्न्यासोऽयं प्रथमः स्मृतः ॥
 पादाङ्गुल्याद्यसन्धौ च सन्धौ स्याद्गुल्फपादयोः ।
 गुल्फजान्वोस्तथा सन्धौ तथा जानूरुसन्धिषु ॥
 लिङ्गे नाभौ च हृदये कण्ठे वर्णान्यसेत् क्रमात् ।
 कराङ्गुलीमूलसन्धौ मणिबन्धे च कूर्परे ॥
 भुजमूले मुखे नासिकायां चापि कपोलयोः ।

नेत्रकर्णभ्रूशिरसि चूडाधोवामकर्णके ॥
 दक्षकर्णे मुखे मस्तके च वर्णान् क्रमान् न्यसेत् ।
 गायत्र्या अक्षरन्यासो द्वितीयः संप्रकीर्तितः ॥
 पदानि दश गायत्र्याः शिरोभ्रूमध्यदृङ्मुखे ।
 कण्ठहृन्नाभिगुह्येषु ज्ञान्वोरङ्गयोरथ न्यसेत् ॥
 शिरोदेशे तु गायत्र्याः शिरोन्यासस्तृतीयकः ।
 हृदयं ब्रह्मणे प्रोक्तं विष्णवे शिर ईरितम् ॥
 शिखा रुद्राय कवचमीश्वराय समीरितम् ।
 नेत्रं सदाशिवायोक्तमस्त्वं सर्वात्मने स्मृतम् ॥
 अयं षडङ्गन्यासस्तु चतुर्थः परिकीर्तितः ।
 पञ्जानुकटिनाभौ च हृदये कण्ठभालयोः ॥
 क्रमाद्व्याहृतयो न्यस्याः परब्रह्मेति शीर्षकम् ।
 पुनर्व्याहृतिन्यासोऽयं पञ्चमः परिकीर्तितः ॥
 तत्सवितुर्हृदयाय वरेण्यं शिरसे तथा ।
 भर्गो देवस्य च शिखा धीमहि कवचं स्मृतम् ॥
 धियो यो नो नेत्रमुक्तमस्त्वं शेषेण कीर्तितम् ।
 अयं न्यासस्तु षष्ठः स्यात् षडेते पापहारकाः ॥
 प्राणायामत्रयं कृत्वा ततो ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानं यथा ।

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
 र्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् ।
 गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकुशाञ्जुभ्रं कपालं गुणं
 शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

ध्यानान्तरमुक्तं तन्त्रान्तरे ।

ब्रह्माणी चतुराननाऽक्षवलयं कुम्भं करैः सुक्स्ववौ
 बिभ्राणारुणकान्तिरिन्दुवदना ऋग्रूपिणी बालिका ।
 हंसारोहणकेलिरम्बरमणोर्विम्बाश्रिताभूषिता
 गायत्री हृदि भाविता भवतु नः सम्पत्समृद्धये सदा ॥
 मध्याह्ने चान्यसन्ध्यायां ध्यानभेदमथ ब्रुवे ।

तथा ।

रुद्राणी नवयौवना त्रिनयना वैयाघ्रचर्माम्बरा
 खट्वाङ्गत्रिशिखाक्षसूत्रवलयाभीतीर्दधानाऽम्बिका ।
 विद्युत्पञ्जजटाकलापविलसद्दालेन्दुमौलिः सदा
 सावित्री वृषवाहनासिततनुर्ध्येया यजरूपिणी ॥
 वृद्धा नीलघनप्रभापरिलसत्पोताम्बराभूषिता
 दिव्यैराभरणैरथाङ्गकमले शङ्खं गदां बिभ्रती ।
 तार्क्षस्कन्धगतासमस्तजगदाराध्या परा वैष्णवी
 ध्येया चैव सरस्वती भगवती सामस्वरूपा सदा ॥

अस्याः पूजायन्त्रमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

पद्ममष्टदलं लेख्यं ह्रीं कारं कर्णिकास्थितम् ।
 द्वौ द्वौ स्वरौ दिग्विदिशं प्रतिपत्रे समालिखेत् ॥
 किञ्चल्लेखेषु तदग्रेषु गायत्र्यर्णीं स्त्रिशस्त्रिशः ।
 तद्वहिर्वृत्तयुगलान्तराले तु समालिखेत् ॥
 ककाराद्यांस्तथोमापोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म- ।
 भूर्भुवः सुवरोमिति यन्त्रे सर्वार्थसिद्धिदम् ॥

(शारदायाम्)

प्राणायामं पुरा कृत्वा गायत्रीं सन्ध्ययोजयेत् ।

सप्तव्याहृतिसंयुक्तां गायत्रीं शिरसाऽन्विताम् ॥

त्रिरुच्चरन् धिया प्राणान् धारयेद्यमानसः ।

प्राणायामोऽयमाख्यातः समस्तदुरितापहः ॥

व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं दीक्षितो जपेत् ।

अथास्याः पूजाविधिः (मेरुतन्त्रे)

ततस्तु पूजयेद्देवीं दशावरणसंयुताम् ।

आदौ संपूज्य देवेशीं कोणाग्रे पूजयेत् ततः ॥

त्रिकोणस्याग्निकोणात् तु प्रादक्षिण्येन देवताः ।

ब्राह्मीं माहेश्वरीं वैष्णवीमिति प्रथमावृत्तिः ॥

तस्याग्रतस्त्वष्ट्रदिक्षु क्रमादष्टौ प्रपूजयेत् ।

आदित्यमुखाँश्च रविं प्रज्ञां भानुं प्रभां तथा ॥

भास्करं चापि सन्ध्यां च द्वितीयावरणं त्विदम् ।

ततोऽर्चयेदष्टदलकेशरेष्वङ्गषट्ककम् ॥

गायत्र्याश्च तृतीयोक्तं दलमध्ये यजेदिमाः ।

प्रल्हादिनीं प्रभां नित्यां विश्वम्भरां विलासिनीम् ॥

प्रभावतीं जयां शान्तां चतुर्थावरणं त्विदम् ।

ततो यजेदलाग्रेषु कान्तिं दुर्गां सरस्वतीम् ॥

विश्वरूपा विशालां च ईशानीं व्यापिनीं क्रमात् ।

विमलां च प्रोक्तमिदं पञ्चमावृत्तिपूजनम् ॥

तदग्रिमे त्वष्टदले एताः पूज्याश्च शक्तयः ।

ततोऽपहारिणीं सूक्ष्मां विश्वयोनिं जयावहाम् ॥

पद्मालयां परां शोभां पद्मरूपां तु षष्ठकम् ।

भवेदावरणं चाग्रे ब्राह्मगाद्याः सप्त मातरः ॥

अष्टमा त्वरुणा प्रोक्ता सप्तमावरणं त्विदम् ।

रविः सितः कुजो राहुः शनिश्चन्द्रो बुधो गुरुः ॥
 अष्टमावरणं चैतच्चतुरस्त्रे दिगष्टके ।
 दिक्पाला नवमे प्रोक्तास्तदस्त्राणि च दिङ्घिते ॥
 एवं सपूजयेद्देवो तस्या मुद्राः प्रदर्शयेत् ।

मुद्रास्तु तत्रैवोक्ताः ।

गायत्र्या अथ वक्ष्यन्ते चतुर्विंशतिमुद्रिकाः ।
 जपादौ दर्शयेत् तासां देवताश्च तथा फलम् ॥
 सुमुखं संहतौ हस्तावुत्तनाकुञ्चिताङ्गुली ।
 प्रल्हादिनी तत्र शक्तिः साधकानन्ददायिनी ॥
 संपुटौ पद्मकोशाभौ करावन्योन्यसंहतौ ।
 तस्य शक्तिर्नित्यविश्वा विश्वस्यापि प्रियङ्करी ॥
 विततं संहतौ हस्तावुत्तानावायताङ्गुली ।
 हृदया नाम तच्छक्तिः सर्वेषां हृदयङ्गमा ॥
 विस्तीर्णं संहतौ पाणी मिथो मुक्ताङ्गुलिद्वयम् ।
 शक्तिस्तु विमला तस्याः प्रभावादनघो भवेत् ॥
 द्विमुखारव्या हस्तयोस्तु सम्मुखं सक्तयोर्द्वयोः ।
 कनिष्ठयोरेव योगः शक्तिस्तस्याः सदा विधा ॥
 त्रिमुखारव्या हस्तयुग्मं संसक्तानामिकाद्वयम् ।
 संयुक्तं शेषमङ्गुल्यो भिन्नाः शक्तिः प्रभाती ॥
 चतुर्मुखा हस्तयुग्मं संसक्तं मध्यमायुतिः ।
 शेषाङ्गुल्यस्तु संभिन्ना लोला शक्तिः प्रकीर्तिता ॥
 मुद्रा पञ्चमुखी तद्वत् तर्जन्योर्यत्र संयुतिः ।
 अपराङ्गुल्यो भिन्नाः शक्तिः शान्तिश्च शान्तिकृत् ॥
 भवेत् षण्मुखमुद्रा सा संपूर्णाङ्गुलियोजनम् ।

कनिष्ठाद्वितयं हित्वा शक्तिर्दुर्गा प्रकीर्तिता ॥
 अधोमुखं नाम मुद्रा न्युब्जौ हस्तावधोमुखौ ।
 आकुञ्चिताग्रौ संयुक्तौ शक्तिरस्याः सरस्वती ॥
 व्यापिकाङ्गलिकं नाम मुद्रा हस्तौ तु तादृशौ ।
 विशेषोऽत्र तु चोत्तानौ विश्वरूपाऽत्र देवता ॥
 शकटं नाम मुद्रा सा बद्धाग्राङ्गुलिकौ करौ ।
 अधोमुखौ बद्धमुष्टी विशाखा शक्तिरत्र तु ॥
 यमपाशं बद्धमुष्टयोः करयोर्ग्रन्थिते यदा ।
 तर्जन्यौ तत्र तलगे वामा ज्ञेयाऽत्र देवता ॥
 ग्रन्थिताख्याऽन्योन्यसन्धिलग्न्याश्चाङ्गुलयो यदि ।
 उत्तानौ चोच्छ्रिताङ्गुष्ठा वामा शक्तिः समीरिता ॥
 सम्मुखोन्मुखमुद्रा तु सम्बद्धोर्ध्वाङ्गुली करौ ।
 दक्षिणाधोमुखो वाम ऊर्ध्वमाप्यायनी भवेत् ॥
 विलम्बा नाम सा मुद्रा चोत्तानोन्नतकोटिकौ ।
 यस्यां करौ तु विमला तस्याः शक्तिः प्रकीर्तिता ॥
 मुष्टिकं तु यदा मुष्टी भवतोऽन्योन्यसंयुते ।
 उत्तानौ तु करौ तत्र शक्तिः प्रोक्ता तमोमयी ॥
 मत्स्यस्तु सम्मुखीभूतौ युक्तानामकनिष्ठिकौ ।
 ऊर्ध्वसंयुक्तवक्राङ्गथः शेषाः शक्तिर्हिरण्यमयी ॥
 कूर्मस्त्वधोमुखो वामस्तादृग्दक्षेण पृष्ठके ।
 समाक्रान्तस्तस्य शक्तिः सूक्ष्मा सूक्ष्मार्थसाधिनी ॥
 वाराही दक्षिणस्योर्ध्वे वाममुत्तानकं करम् ।
 स्थापयित्वाऽधोमुखं तन्नामयेद्विश्वयोनिका ॥

सिंहाक्रान्तं नाम मुद्रा हस्तौ चेदायताङ्गुली ।
 दत्तौ श्रवणयोरूर्ध्वं शक्तिरस्या जयावहा ॥
 महाक्रान्तं नाम मुद्रा प्राग्वदाकृञ्चिताग्रको ।
 करौ कर्णस्थितौ शक्तिः प्रोक्ता पद्मालयाभिधा ॥
 मुद्गरं किं चिदूर्ध्वं तु गतयोर्वामतर्जनी ।
 धृता दक्षिणहस्तेन परा शोभाऽत्र देवता ॥
 पल्लवाख्या भवेन्मुद्रा त्वङ्गुल्यः पल्लवीकृताः ।
 देव्यग्रे दर्शयेच्छक्तिर्गदारूपीति कीर्त्यते ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

चतुर्विंशतिलक्षाणि पुरश्चरणमुच्यते ।
 क्षीरौदनतिलान् दूर्वाः सिद्धौदनसमिद्धराः ॥
 पृथक् सहस्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ।
 तर्पणादि ततः कृत्वा गुरुन् संतोष्य यत्नतः ॥
 प्रयोगानाचरेद्विद्वाँस्तदनुज्ञापुरःसरम् ।

इति गायत्रीपुरश्चरणविधिः ।

अथ व्याहृतीनां व्याख्या ।

(प्रपञ्चसारे)

भूःपदाद्या व्याहृतयो भूशब्दस्तदि वर्तते ।
 तत्पदं सदिति प्रोक्तं षण्मात्रत्वात् तु भूरतः ॥
 भूतत्वात् कारणत्वाच्च भुवःशब्दस्य सङ्गतिः ।
 सर्वश्रीकरणात् स्वार्थतया च स्वरितीरितम् ॥
 महत्त्वाच्च महःशब्दो महस्तेन समीरितः ।
 तदेव सर्वजननात् तस्मात् तु व्याहृतिर्जनः ॥
 तपो ज्ञानतया चैव तथा तापतया स्मृतम् ।

सत्यं परत्वादात्मत्वादनन्तज्ञानतः स्वयम् ॥

व्याहृतीनां प्रणवैक्यमुक्तं तत्रैव ।

प्रणवस्य व्याहृतीनामन्तःसम्बन्ध उच्यते ।

अकारो भ्रूकारस्तु भुवो मार्णः स्वरीरितः ॥

विन्दुर्महस्तथा नादो जनः शक्तिस्तपः स्मृतम् ।

शान्तिः सत्यमिति प्रोक्तं सत् तत् परतरं पदम् ॥

अथ गायत्र्यो व्याख्या पूर्वकं प्रणवस्याहोणां गायत्र्यैक्यमुक्तं तत्रैव ।

प्रणवस्य व्याहृतीनां गायत्र्यैक्यमथोच्यते ।

अत्रापि तत्पदं पूर्वं प्रोक्तं तदनुवर्ण्यते ॥

तद्द्वितीयैकवचनमनेनाखिलवस्तुनः ।

सृष्ट्यादिकारणं तेजोरूपमादित्यमण्डले ॥

अभिधेयं सदानन्दं परं ब्राह्माभिधीयते ।

यत् तत् सवितुरित्युक्तं षष्ठ्येकवचनात्मकम् ॥

धातोरिति समुत्पन्नं प्राणिप्रसववाचकात् ।

सर्वासां प्रीणिजातानामिति प्रसवितुः सदा ॥

वरेण्यं वरणीयत्वात् सेवनीयतया तथा ।

भजनोयतया सर्वैः प्रार्थनीयतया स्मृतम् ॥

पूर्वस्याष्टाक्षरस्यैवं व्याहृतिर्भूरिति स्मृता ।

पापस्य भर्जनान्नर्गो भक्तस्निग्धतया तथा ॥

देवस्य वृष्टिदानादिगुणयुक्तस्य नित्यशः ।

प्रभुत्वेन प्रकाशेन दीप्यमानस्य वा तथा ॥

ध्ये-चिन्तायामतो धातोर्निष्पन्नं धीमहीत्यदः ।

निगमाद्येन * दिव्येन विद्यारूपेण चक्षुषा ॥

* देवेशि इति ४ पु० पा० ।

दृश्यो हिरण्मयो देव आदित्ये नित्यसंस्थितः ।
 हीनतारहितं तेजो यस्य स्यात् स हिरण्मयः ॥
 यः सूक्ष्मः सोऽहमित्येवं चिन्तयामः सदैव हि ।
 द्वितीयाष्टाक्षरस्यैव व्याहृतिर्भुव ईरिता ॥
 धियो बुद्धिर्मनोरस्य च्छान्दसत्वात् समीरितम् ।
 कृतश्च लिङ्गव्यत्यासः सूत्रात् सुप्तिङुपग्रहात् ॥
 यत् तु तेजोनिरुपमं सर्वदेवमयात्मकम् ।
 भजतां पापनाशस्य हेतुभूततयोच्यते ॥
 न इति प्रोक्त आदेशः षष्ठ्यसौ युष्मदस्मदोः ।
 तस्मादस्माकमित्यर्थः प्रार्थनायां प्रचोदयात् ॥
 तृतीयाष्टाक्षरस्यापि व्याहृतिः स्वरितोरिता ।
 एवं दश पदान्यस्यास्त्रयश्चाष्टाक्षराः स्मृताः ॥
 षडक्षराश्च चत्वारः स्युश्चतुर्विंशदक्षराः ।
 इत्थम्भूतं यदेतस्य देवस्य सवितुर्विभोः ॥
 वरेण्यं भजतां पापविनाशनकरं परम् ।
 भगौऽस्माभिरभिध्यातं धियस्तन्नः प्रचोदयात् ॥
 उक्तैवमत्र गायत्री पुनस्तच्छिर उच्यते ।
 आपो ज्योती रस इति सोमाग्न्योस्तेज उच्यते ॥
 तदात्मकं जगत् सर्वं रसस्तेजोद्वयं स्मृतम् ।
 अमृतं तदनाशित्वाद्बृहत्वाद्ब्रह्म गद्यते ॥
 यदानन्दात्मकं ब्रह्म संत्यजानादिलक्षणम् ।
 तद्भूर्भुवः स्वरित्युक्तं सोऽहमित्योमुदाहृतम् ॥
 एतत् तु वेदवत् स्यात् तु वेदस्य शिर उच्यते ।

लक्षणैरिति निर्दिष्टो वेदसारेषु निष्ठितः ॥

फलार्थी फलमाप्नोति मोक्षार्थी मोक्षमृच्छति ।

इति व्याहृतोनां व्याख्या ।

अथ प्रणवमन्त्रः ।

(प्रपञ्चसारे)

अथ प्रणवसंज्ञकं प्रतिवदामि मन्त्रं वरं

सजापमपि सार्चनं सहुतकृप्ति सोपासनम् ।

अशेषदुरितापहं विविधकामकल्पद्रुमं

विमुक्तिफलसिद्धिदं विमलमानसैः सेवितम् ॥

आद्यः स्वरः समेतोऽमरेण सधसप्तमश्च विन्दुयुतः ।

प्रोक्तः स्यात् प्रणवोऽत्र त्रिमात्रिकः सर्वमन्त्रसमवायी ॥

मन्त्रस्यास्य मुनिः प्रजापतिरथ च्छन्दश्च देव्यादिका

गायत्री गदिता जगत्सु परमात्माख्यस्तथा देवता ।

अह्नीवैर्युगमध्यगध्रुवयुतैरङ्गानि कुर्यात् स्वरै-

र्मन्त्री जातियुतैश्च सत्यरहितैर्वा व्याहृतोभिः क्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

विष्णुं भास्वत्किरीटाङ्गदवलयगलाकल्पहारोदराङ्घ्रि-

श्रोणीभूषं सुराजन्मणिमकरमहाकुण्डलामण्डिताङ्गम् ।

हस्तोद्यच्चक्रशङ्खारबुजगदममलं पीतकौशेयवासो-

विद्योतद्भासमुद्यदिनकरसदृशं पद्मसंस्थं नमामि ॥

अस्य पुरश्चरणं कैटिजपः ।

तदुक्तं तत्रैव ।

दीक्षितो मनुमिमं शतलक्षं संजपेत् प्रतिहुनेच्च दशांशम् ।

पायसैर्घृतयुतैश्च तदन्ते विप्रभूरुहभवाः समिधो वा ॥

* भास्वत्कलापा-इति० ४ पु० पा० ।

सर्पिःपायसशालोतिलसमिधाज्यै हि योऽनले जुहुयात् ।
ऐहिकपारत्रिकमपि स तु लभते वाञ्छितं फलं न चिरात् ॥

पूजाविधिसुक्ता-

इत्थं मन्त्रो तारमनुर्जाप्यहुतार्चा-
भेदैरङ्गीकृत्य च युञ्ज्यादपि योगान् ।
यैः संलब्ध्वा चेह समग्रां श्रियमन्ते
विणोर्धाम प्राप्य स योगी लभते सत् ॥
इति प्रणवपुरश्चरणम् ।

अथ वैदिकमृत्युञ्जयमन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

मृत्योर्भयं तु सर्वेषां सर्वदा सर्वकर्मसु ।
तस्मिन् जिते तु देवादिमोक्षान्तं साधयेज्जनः ।
तदर्थं संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं मृत्युञ्जयाभिधम् ॥
उपासना तस्य न स्याद्वंशेऽल्पायुश्च रोगभाक् ।
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ॥
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ।
वशिष्ठोऽस्य मुनिश्छन्दोऽनुष्टुब्देवस्त्रियस्वकः ॥
त्रिचतुर्वसुगोपश्चत्रिभिर्वर्णैः षडङ्गकम् ।

ध्यानमाह ।

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो
द्वाभ्यां तौ दधन्तं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम् ।
अङ्गन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाशसंस्थं शिवं
स्वच्छास्मोजगतं नवेन्दुमकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥
पुरश्चरणम् ।

जपेच्छक्षमिमं मन्त्रमेवं ध्यायेज्जितेन्द्रियः ।

जुहुयादशभिर्द्रव्यैरयुतं घृतसंस्तुतैः ॥

दशद्रव्याणि तत्रैवोक्तानि ।

विल्वं पलाशं खदिरं वटं च तिलसर्षपो ।

पायसं दधि दूर्वां च तथैकेन सहस्रकम् ॥

तर्पयित्वाऽभिषिञ्चयाथ ब्राह्मणाँस्तोषयेद्गुरुम् ।

एवं कृते प्रयोगाहो जायतेऽयं महामनुः ॥

इति वैदिकमृत्युञ्जयपुरश्चरणम्

अथ रुद्राध्यायपुरश्चरणविधिः

तत्रैव ।

श्रीविष्णुरुवाच ।

देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ।

कालस्त्वमसि लोकानां महामाया त्वयं परा ॥

आवयोः के तुष्टिकरा मन्त्राः सूक्तानि तद्दद ।

येन भुक्तिश्च मुक्तिश्च क्लेशो नैव च नैव च ॥

श्रीशिव उवाच ।

विष्णो गोप्यं त्वया पृष्टं न वाच्यं तान्त्रिके द्विजे ।

तन्त्रे मे तामसं रूपं त्वया पृष्टं तु सात्त्विके ॥

भोगमोक्षैकनिलयं चतुर्वेदोत्तमोत्तमम् ।

मन्त्रं स्तोत्रेश्वरं तन्मे जानीहि शतरुद्रियम् ॥

छन्दांस्वनुष्टुबादीनि अघोरोऽस्य मुनिर्मतः ।

देवताऽस्य भवेद्गुद्र आदित्यः परपूरुषः ॥

(पञ्चतैः)

श्रीरुद्रप्रीतये शतरुद्रियजपे विनियोगः ।

अथ कराङ्गन्यासौ तत्रैव ।

ॐ अग्निहोत्रात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ दर्शपौर्णमासात्मने तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ चातुर्मास्यात्मने मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ निरूढपशुबन्धात्मने अनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ ज्योतिष्टोमात्मने कनिष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ चत्वारिंशच्छतसहस्रात्मने करतलपृष्ठाभ्यां नमः ।

एवं हृदयादिन्यासः ।

महान्यासस्तु विस्तरभयादुपेक्षितः ।

अथ ध्यानम् ।

आपातालनभःस्थलान्तभुवनब्रह्माण्डपाविस्फुर-

ज्ज्योतिस्फाटिकलिङ्गमौलिविलसत्पूर्णन्दुवान्तामृतैः ।

आस्तोकाप्लुतमेकमीशमनिशं रुद्रानुवाकान् जपन्

ध्यायेदीप्सितसिद्ध्येऽद्भुतपदं विप्रोऽभिषिञ्चेच्छिवम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

पार्थिवोक्तप्रकारेण लिङ्गपूजां ततश्चरेत् ।

आराधितो मनुष्यैस्त्वं सिद्धैर्देवासुरादिभिः ॥

आराधयामि भक्त्या त्वां मां गृहाण महेश्वर ।

आत्वावहन्तु हरयः सचेतसञ्चेतैरश्वैः सह केतुमद्भिः ।

वाताजलैर्बलवद्भिर्मनोजवैरायाहि शीघ्रं मम हव्याय शर्वो नमः ।

एतु ते रुद्रभावसं तेन परो मूजवतोऽतीहि अवततधन्वा
पिनाकवसः कृत्तिवासा अहिंसन्नः शिवोऽतीहि ।

चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्यं आविवेश ।

प्रसन्नो भव देवेश सुमुखो भव शङ्कर ।

शान्तो भवस्व चात्र त्वं मम चाभिमुखो भव ॥

स्वामिन् सर्वजगन्नाथ यावत् पूजावसानकम् ।
 तावत् त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेऽस्मिन् सन्निधौ भव ॥
 अभिषेकं ततः कुर्यादमृतैः पञ्चभिः क्रमात् ।
 पश्चाच्छुद्धोदकेनाथ ततः पूजनमाचरेत् ॥
 रौद्रीं धारां ततः कुर्यात् प्रोच्यते तद्विधानकम् ।
 नमस्ते रुद्राग्नाविष्णु इत्यध्यायद्वयेन च ॥
 आवर्त्तनमिति प्रोक्तं गङ्गास्नानफलप्रदम् ।
 आवर्त्तनाभिषेकं तु यः कुर्यात् प्रत्यहं नरः ॥
 तस्य दैनन्दिनं पापं दैवजं नाशमाप्नुयात् ।
 सन्ध्यावन्दनतः क्षीणं तच्चेत् प्राग्जन्मजं हरेत् ॥
 एकः पाठो नमस्तस्य अनुवाकः परस्य च ।
 एवं भवा नमस्ते स्युरग्नाविष्णुस्तथैककम् ॥
 इयं रुद्री समाख्याता रौद्रपापनिकृन्तनी ।
 अनया प्रत्यहं यस्तु कुर्याल्लिङ्गेऽभिषेचनम् ॥
 जन्मजन्मकृतं पापं वर्षे वर्षे प्रणश्यति ।
 सप्तजन्मकृते पापे नष्टे लक्ष्मीर्विवर्धते ॥
 वंशश्च स्थिरतामेति यशो याति दिगन्तरम् ।
 सते चास्य यथा रूपं तथा स्तोत्रे प्रणश्यति ॥
 रुद्रीभिरेकादशभिर्लघुरुद्रः प्रकीर्तितः ।
 अनेन सिक्तं यैर्लिङ्गं ते न पश्यन्ति भास्करिम् ॥
 एकादशभिरेतैस्तु महारुद्रः प्रकीर्तितः ।
 निर्धनानां द्विजानां च महापातकनाशनः ॥
 अनेन विहितो होमः सोमयागफलं स्मृतम् ।

अनधिकारादीक्षायां कलौ पक्षस्त्वयं मतः ॥

एकादशमहारुद्रैरतिरुद्रः प्रकीर्तितः ।

तथा ।

शाखायां यस्य तु यथा स्वाध्यायौ पठितावुभौ ।

पठनीयौ तथा तेन शाखाभेदं न कारयेत् ॥

न रुद्रो यस्य शाखायां तैत्तिरीयं पठेत् स तु ।

शाखा तु यजमानस्य ब्राह्मणद्वारतः कृते ॥

अथ वा तैत्तिरीया स्यान्नान्या शाखा प्रयुज्यते ।

शाखामिश्रं कृतं कर्म यजमानं विनाशयेत् ॥

धनलोभात् परार्थं यो विप्रो मामभिषिञ्चति ।

स तु चाण्डालवज्जेयो निर्धनः सप्तजन्मसु ॥

कुटुम्बिना तु यत्नेन धनार्थं यच्च पूजनम् ।

कृते चेज्जपदानाभ्यां तदशांशोऽस्य निष्कृतिः ॥

तथा ।

रुद्रो न यस्य शाखायां परिशिष्टान्वितं स तु ।

पठेद्रुद्रं तैत्तिरीयं लुप्तशाखस्तमेव हि ॥

मन्त्रः प्रयोगसहितो रुद्राध्यायोऽथ वक्ष्यते ।

असंस्कृताय नो वाच्यं तात्रिकाय कदा च न ॥

तत्रादौ ।

ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव-इत्यारभ्य माहिंसीः पुरुषं जगत्-इत्यन्तानां
पुरश्चरणप्रयोगः ।

दशलक्षं जपेद्विद्वानृच एता जितेन्द्रियः ।

लक्षमेकं प्रजुहुयात् प्रत्यृचं योऽञ्जलिप्रभम् ॥

यवगोधूमकं क्षौद्रतिलाज्यदधिसंयुतम् ।

यत्किञ्चित् कार्यमुद्दिश्य तस्य सिद्धिः प्रजायते ॥

एवमेव सहस्रं चेदेकादशदिनं हुनेत् ।
 ग्रामगं बालमरकं नश्यते नात्र संशयः ॥
 कुमारमरकं ग्रामे द्वादशाहेन नश्यति ।
 होमः पञ्चदशाहं तु राष्ट्रोपद्रवनाशनः ॥
 होमाद्दिशतिरात्रेण देशोपद्रवनाशनम् ।
 पृथिव्युपद्रवो नश्येन्मासमात्रेण होमतः ॥
 गवामुपद्रवे जाते गोष्ठमध्ये तदा हुनेत् ।
 वैकङ्कतसमिद्धिर्वाऽयुतं शान्तिः प्रजायते ॥
 अयुतद्वयहोमेन महाशान्तिर्भवेद्भुवम् ।

शिवेन वचसा-इत्यादि ।

जपेद्युतसङ्ख्याकं शापमोक्षः प्रजायते ।
 शिशिरे तु जले प्रातर्लक्षं जप्त्वा सुखी भवेत् ॥

अध्यवोचत्-इति ।

लक्षमेकं पुरश्चर्या होमः स्याच्छ्वेतसर्षपैः ।
 व्याधिसंक्रामणी चेयं प्रयोगान्तरमुच्यते ॥
 सप्ताभिमन्त्रितान् कृत्वा सर्षपानातुरस्य तु ।
 चतुर्दिक्षु क्षिपेद्रक्षा दशदिग्भ्यः प्रजायते ॥
 सप्ताभिमन्त्रितान् कृत्वा पथि गच्छँस्तु सर्षपान् ।
 दशदिक्षु क्षिपेन्नित्यं पथि क्षेमः प्रजायते ॥
 ब्रह्मराक्षसयक्षाद्यैः पिशाचप्रेतभूतकैः ।
 आविष्टसर्षपैस्ताड्यः सप्तवाराभिमन्त्रितैः ॥
 पुनः पुनर्मन्त्रपाठपूर्वकं ते धनार्थिनः ।
 धनं गृहीत्वा गच्छन्ति करे तं द्रुतमेव च ॥

शिखामाक्रम्य च यजेत् ताडयेद्गौरसर्षपैः ।
 रात्रिं समस्तां स्कन्दादिग्रहपीडा विनश्यति ॥
 अनेन मन्त्रयित्वा तु दद्याच्छास्त्रोक्तमौषधम् ।
 तत्कालं तद्गुणाय स्यादन्यथाऽसौ यथाविधि ॥
 अभिमन्त्र्य जलं दद्यात् सर्वसत्त्वभवां रुजम् ।
 हरेत् सर्वग्रहाणां च सर्षपैस्ताडनात् तथा ॥
 सर्वभूतोद्भवां पीडां भस्मधारणतो जयेत् ।
 दिवसे च तथा रात्रौ त्रिशूलमभिमन्त्रयेत् ॥
 सहस्रैकं सहस्रकं क्षिपेन्नागहृदे तु तत् ।
 त्रिशूलं बान्धवोपेता नाशं गच्छन्ति पन्नगाः ॥
 भस्माभिमन्त्रितं कृत्वा पन्नगाक्रान्तमन्दिरे ।
 क्षिपेत् तत्तालशब्देन पन्नगोत्सादनं भवेत् ॥
 असौ यस्ताम्र-इत्यादि ।

उदयास्तमये सूर्यमेताभ्यामुपतिष्ठते ।
 अष्टोत्तरशतं त्र्यब्दमक्षयान्नोद्भवो भवेत् ॥
 सहस्रमभिजप्तेन क्षीरेण स्नापयेच्छिवम् ।
 अब्दैकेन प्रसन्नः स्याद्दधृतस्नानाच्च वर्षणम् ॥
 अतसीनां तु पुष्पाणि हुनेदयुतसङ्ख्यया ।
 अवशो वश्यतां याति सविता वरदो भवेत् ॥
 अर्कवृक्षोद्भवैर्दुग्धैराप्लुतानां तु होमयेत् ।
 अयुतं चार्कसमिधां सक्तुं च सजलं ददेत् ॥
 होमान्ते भगवान् सूर्यो वृष्टिं मुञ्चति नान्यथा ।
 मन्त्रद्वयं तु भजतामिष्टां सिद्धिं प्रयच्छति ॥

नमोऽस्तु नीलग्रीवाय-इत्यादि ।

स्थण्डिलस्योपयुक्तं तु * कृत्वा सघृतपायसम् ।

कृष्णाष्टमौ समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशी ॥

प्रत्यहं स्नापयेत् तावत् सहस्रेणाभिमन्त्रितम् ।

निवेदयेत् तद्देवाय कार्पापणसहस्रकम् ॥

सोद्यमाज्जायते लाभः सिद्धे मन्त्रे न संशयः ।

असिद्धे तु तदर्धं स्यात् सूर्यकान्तदृषद्यपि ॥

निवेदनात् पुनर्लाभो लक्षमेकं पुरस्कृतिः ।

होमस्तु पायसघृतैरनाख्येयः प्रयोगवान् ॥

प्रमुञ्च धन्वस्त्वम्-इत्यादि ।

आभिः षड्विस्त्वायुधानि मन्त्रयेच्च सहस्रकम् ।

बन्धयित्वा तानि रणे गच्छेत् गच्छन्ति शत्रवः ॥

जुहुयादयुतं गर्भकण्टक्या द्वेषकामुकः ।

गुडं मुखेन चोत्थाप्यं शत्रोर्नाम स्मरन् जपेत् ॥

जपाख्यस्यासनेनैव शत्रुमुत्सादयेद्धटात् ।

संपूर्णाहं जपन्नेव नगरं ग्राममेव च ॥

उत्सादयेच्च राजानमहोरात्रं जपन्निति ।

राजपुत्रं दिनार्धेन क्षत्रियं त्रिलवेन च ॥

चतुर्भागेन वैश्यं च षड्भागेनैकजातिकम् ।

पलाशाश्वत्थविल्वानामपामार्गस्य च क्रमात् ॥

विप्रादिवश्यकामस्तु दूधिक्षौद्रघृतान्विताः ।

हुनेदयुतसङ्ख्याकाः समिधः कार्यसिद्ध्ये ॥

* कृशरम्-इति २-३ पु० पा० ।

हीनवर्णान् वशीकर्तुं वरुणार्ककवेतसाम् ।
 साखोटकांश्च जुहुयाद्दृष्ट्वा विप्रादिवृत्तिकान् ॥
 सौगन्धिकान्युत्पलानि कुमुदानि प्रयच्छति ।
 स्वयम्भुलिङ्गे लक्षं तु चन्दनाक्तानि भक्तितः ॥
 राज्यभ्रष्टो भवेद्राजा षड्भिर्मन्त्रैः पृथक् पृथक् ।
 धनार्थी प्राप्नुयाद्वित्तं शक्तुवन्निति पूजयेत् ॥
 लक्षमेकं तिलानां यः पृथङ्मन्त्रैः शिवोपरि ।
 आरोपयेत् स शत्रूणां सदा मूर्धनि तिष्ठति ॥
 अयुतं राजवृक्षस्य समिधो होमयेत् तु यः ।
 रणे राजकुले द्यूते स शत्रुं त्वरितं जयेत् ॥
 गुग्गुलं षट्सहस्रं यो दक्षिणामूर्तिसन्निधौ ।
 यत्कार्यार्थं हुनेत् तस्य सिद्धिः शीघ्रं प्रजायते ॥
 असाध्यस्यापि सिद्धिः स्याद्भुत्वा चाष्टसहस्रकम् ।
 यथा महानसे सिद्धमन्नं च जुहुयात् तथा ॥
 सहस्राष्टकमेतस्य द्रव्यं भवति चाक्षयम् ।
 एका ऋक् परिशिष्टस्य एतस्याग्रे प्रचक्षते ॥
 नमस्ते अस्तु भगवन्—इति ।
 अयुतं यो जपेदेतां घृताक्तैर्विल्वपत्रकैः ।
 प्रतिनामसहस्रं तु हुत्वा स्याल्लोकवन्दितः ॥
 नमो हिरण्यवाहवे—इत्यादि ।
 पुरश्चरणमेतस्य सहस्राष्टकमीरितम् ।
 यः संग्रामगतस्तस्य कौशल्यार्थमिदं जपेत् ॥
 जपप्रभावाच्छस्त्राद्यैः सोऽरिभिर्नैव वाध्यते ।

सुतायार्हन्त्यासपूर्वं पश्चिरिष्टं निगद्यते ॥
 नमो रोहिताय स्थपतये-इति ।
 सहस्रपञ्चकं चास्य पुरश्चरणमुच्यते ।
 एतज्जसुर्भयं नास्ति व्याघ्रचौरादिजं वने ॥
 नमः सहमानाय निव्याधिन-इत्यादि ।
 सहस्राष्टकमेतस्य पुरश्चरणमुच्यते ।
 व्रणादेस्तीव्रपीडाया नाशकोऽस्य जपः स्मृतः ॥
 नम इषुमद्भयो-इत्यादि ।
 सहस्रनवकं तावत् पुरश्चरणमस्य तु ।
 सेनायाश्चतुरङ्गानां शान्तये प्रजपेदिदम् ॥
 नम आव्याधिनीभ्यो-इत्यादि ।
 पुरश्चरणमेतस्य सहस्राणां तु षोडश ।
 दुष्टग्रहवलिं दत्वा जप्त्वा च तं निरामयः ॥
 नमो भवाय च-इत्यादि ।
 पुरश्चर्यायुतं चास्य विभवार्थं प्रयोजयेत् ।
 त्रिसन्ध्यासु पठेदेतद्भवेद्वर्षेण भाग्यवान् ॥
 नमो ग्याय-इत्यादि ।
 सहस्रपञ्चकं तावत् पुरश्चरणमुच्यते ।
 गणस्याग्रत्वमाप्नोति मन्यते च परैरपि ॥
 नमो ज्येष्ठाय च-इत्यादि ।
 सहस्रदशकं तावत् पुरश्चरणमुच्यते ।
 ज्ञातृश्रेष्ठत्वमाप्नोति जप्ते तस्य न संशयः ॥
 नम आशुषेणाय-इत्यादि ।

पुरश्चर्या तु निर्दिष्टा सहस्राणां तु पञ्चकम् ।

जप्त्वा नश्यति खञ्जत्वं पादुकासिद्धिमाप्नुयात् ॥

नमो दुन्दुभ्याय—इत्यादि ।

अयुतद्वितयं चास्य पुरश्चरणमुच्यते ।

संग्रामजयकृच्चायमनुवाकः प्रकोर्तितः ॥

नमः कूप्याय च—इत्यादि ।

षट्सहस्रं पुरश्चर्या ग्रहेणाधिष्ठितो निधिः ।

अभिमन्त्रितमेतेन तोयं तन्निधिमोचकम् ॥

नमः सोमाय च—इत्यादि ।

पुरश्चर्याऽयुतमिता जपेदष्टोत्तरं शतम् ।

त्रिकालं भस्मतोयं च भक्षयेल्लेपयेत् तथा ॥

मासत्रयाद्राजयक्ष्मा किलासश्चित्रमब्दतः ।

नश्येद्देहो भवेद्दिव्यः क्षुद्ररोगा दिनत्रयात् ॥

नमस्तीर्थ्याय च—इत्यादि ।

षट्सहस्रं पुरश्चर्या षण्मासं तीर्थगो जपेत् ।

यथोक्तं तत् तीर्थफलं भुञ्जते चेह जन्मनि ॥

नम इरिण्याय च—इत्यादि ।

सहस्रनवकं तावत् पुरश्चरणमुच्यते ।

धातुवादो राजतस्तु सिध्यते तत्प्रभावतः ॥

अत्रास्ति परिशिष्टस्यानुवाक एक एव हि ।

रजस्याय च चैतस्य नमोऽन्तस्याग्रतः पठेत् ॥

नमो नन्दिकाय च—इत्यादि ।

सहस्राष्टकमेतस्य पुरश्चरणमुच्यते ।

बालग्रहा विनश्यन्ति बर्हिपिच्छौघमार्जनात् ॥

नम ऊर्वाय च—इत्यादि ।

पुरश्चर्यासहस्राणां चतुष्टयमुदाहृतम् ।

अभिमन्त्र्य जलं देयं शोकशान्त्यै तु शोकिने ॥

नमो वः किरिकेभ्य—इत्यादि ।

तिलहोमेनायुतेन कार्षापणसहस्रकम् ।

उद्यमाद्वाऽथ भूपालात् प्राप्नुयाद्वर्षमध्यतः ॥

अपामार्गस्य समिधाऽयुतं हुत्वा रसापतिः ।

सहस्रस्वर्णतुल्यस्य स्वस्य सिद्धिः सकृद्भवेत् ॥

गुग्गुलुप्रतिमां कृत्वा क्षुरेणोत्कर्तयेच्च ताम् ।

जुहुयादष्टसाहस्रं लभेत् कन्यामलङ्कृताम् ॥

एवं कृत्वाऽथ वा होमं धनार्थी जपपूर्वकम् ।

सुवर्णानां तु शतकं प्राप्नुयाद्वर्षमध्यतः ॥

हुनेद्गोसफखण्डानि चैकादशसहस्रकम् ।

घृत्ताक्तानि लभेन्मासाद्वाव एकादशैव हि ॥

पुरश्चरणपूर्वं तु लक्षैकं तिलतण्डुलान् ।

यो हुनेत् तस्य गेहे तु राज्यलक्ष्मीः स्वयं वसेत् ॥

एवं च तिलधान्याभ्यां होमाल्लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ।

शतपुण्यमयीं कृत्वा प्रतिमां राजरूपकाम् ॥

सहस्रं जुहुयाद्राजा वशोऽवश्यं प्रजायते ।

पद्मोत्पलानां लक्षं तु हुत्वा भूयः श्रियं लभेत् ॥

चणकप्रतिमालक्षं होमयेद्गुलैर्वटीम् ।

स्मृतसामन्तराज्यं स प्राप्नोत्येव न चान्यथा ॥

हुनेद्विल्वसमिद्भिस्तु दक्षिणामूर्तिसन्निधौ ।
 लक्षमेकं तदा राष्ट्रं सामन्तस्य लभेद्भुवम् ॥
 महाचतुष्पथे स्थाप्यं लिङ्गं वल्मीकमृद्भवम् ।
 स्नापयेत् पञ्चगव्येन रुद्राध्यायेन मन्त्रयेत् ॥
 मानस्तोकेन मन्त्रेण चाभिषिञ्चेन्निवेद्यकम् ।
 सघृतं पायसं दद्याद्भूतेभ्यश्च तथा वलिम् ॥
 एवं मासत्रयं कृत्वा महदैश्वर्यमाप्नुयात् ।
 पलं वाऽर्घ्यपलं वाऽपि दक्षिणामूर्तिसन्निधौ ॥
 श्वेताम्बरां चूर्णयित्वा स्थापयेत् ताम्रपात्रके ।
 आलोडय कपिलाज्येन प्रदेशिन्याऽभिमन्त्रितम् ॥
 सहस्राष्टकमेतेन मन्त्रेण प्रपिबेदय ।
 भवेत् तस्याप्रतिहतं वाक्यं सर्वत्र निश्चितम् ॥
 उदुम्बरस्य समिधो दध्यक्ताश्चायुतं हुनेत् ।
 स्वामी बहुगवां स स्यात् क्षीयन्ते नास्य धेनवः ॥
 विल्वानां तु घृतक्तानां हुनेदष्टसहस्रकम् ।
 सुवर्णाष्टकमाप्नोति ह्यसिद्धो रजताष्टकम् ॥
 विल्वाभावे त्वामलकं तदभावे उदुम्बरम् ।
 तस्याभावे हैमवती तदभावे विभीतकम् ॥
 श्रीखण्डगोघृताक्तानां पद्मानां लक्षमेककम् ।
 हुनेद्यस्तस्य लक्ष्मीस्तु स्वयमेवोपतिष्ठते ॥
 द्रापे अन्धसस्पते-इत्यादि ।
 अनेन जुहुयादाज्यमयुतान्नियुतावधि ।
 अक्षयाण्यस्य वासांसि भवन्ति च तथा तथा ॥

याते रुद्र-इत्यादि ।

उर्णां ग्राह्या जीवदवेस्तनूस्तनूर्विहाय च ।
 एकादशशरं कुर्यात् सूत्रमेकैकसूत्रकम् ॥
 सहस्रमभिमन्त्र्याथैकादश ग्रन्थयः स्मृताः ।
 एवं संपूज्य तां रज्जुं धूपं दत्त्वा च बन्धयेत् ॥
 वामहस्ते तु गर्भिण्या बद्धं सा सुखतः सुवेत् ।
 दक्षे बालकहस्ते तु सुखं तिष्ठति बालकः ॥
 धनिको बाहुमूले वा कण्ठे वा धारयेदिदम् ।
 कदा चिदुत्तमर्णस्य भयं तस्य न जायते ॥

इमांरुद्राय-इत्यादि ।

अष्टोत्तरसहस्रं तु प्रत्यहं जुहुयात् तिलान् ।
 अयाचितं धनं तेन लोकेभ्य उपलभ्यते ॥
 यश्च दूर्वाप्रवालानां घृताक्तमयुतं हुनेत् ।
 महाज्वरोप्रघातेऽपि मृतकल्पः स जीवति ॥
 माक्षिकपायसाज्याशी अयुतं जुहुयाच्छुचिः ।
 महाग्रहज्वरादिभ्योऽभिचाराच्च प्रमुच्यते ॥
 वैकङ्कतानामयुतं समिधानां घृतैर्हुनेत् ।
 ज्वरादिकभवा पीडा सद्य एव विनश्यति ॥
 द्रव्याद्यर्थं यदा केचिन्मृदुभिरभिभूयते ।
 तदा तुषान् प्रजुहुयादयुतं सुखमेधते ॥
 वैकङ्कतीश्च समिध औदुम्बरीस्त्रिंशस्तथा ।
 अनेन जुहुयाल्लक्षं सर्वशान्तिकरं स्मृतम् ॥
 गवां वाऽन्यपशूनां वा ह्युपघाते तु तत्स्थले ।

अग्निं संस्थाप्य जुहुयाद्वैकङ्कतीर्दधिप्लुताः ॥
 अयुतं तस्य शान्तिः स्यात् पालाशानां तथाऽयुतम् ।
 घृताक्तानां प्रजुहुयान्महाज्वरमुखा ग्रहाः ॥
 राक्षसा भूतवेतालाः प्रेताश्चापि पिशाचकाः ।
 जनं चापि गजं चाश्वं मुक्त्वा गच्छन्ति दूरतः ॥
 जनानां जननं यस्मिन् गेहे भवति भूरिशः ।
 मरणं वाऽथ हानिर्वा तत्र शान्तिरुदीर्यते ॥
 घृताक्तानां तिलानां तु जुहुयादयुतं द्विजः ।
 यस्मिन् देशे महामारी व्याघ्रादीनां भयं च वा ॥
 देवरक्षोभयं यत्र तत्र शान्तिं वदाम्यहम् ।
 पुरस्य मध्यभागे तु वह्निस्थापनमाचरेत् ॥
 चतुर्दिक्षु च सन्नद्धा गुप्ताश्चत्वार एव हि ।
 नराः स्थाप्यास्ततः कर्म सावधानः समाचरेत् ॥
 अष्टोत्तरसहस्रं तु घृताक्तान् जुहुयात् तिलान् ।
 ततोऽर्धरात्रसमये चौदनं सघृतं तिलान् ॥
 पिष्टं माषौदनं चापि कृशरं परमान्नकम् ।
 सुप्ते जनपदे दद्यात् स्थाने स्थाने ततो वलिम् ॥
 पलाशपत्रे रुद्रेभ्यो रक्षोभ्यस्तदनन्तरम् ।
 कुर्यादेवं पक्षमेकं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥

मृडानो रुद्र—इत्यादि ।

सहस्रं प्रजपेत् तोये तीरे संपूजयेच्छिवम् ।
 यावद्दूरे भवेदिष्टस्त्रिधाहावाब्जिलिप्यति ॥
 मानो महान्तम्—इत्यादि ।

परिजनस्य बालानामारोग्यार्थं तिलान् हुनेत् ।
अयुतं शीतलादिभ्य आरोग्यं जायते द्रुतम् ॥

मानस्तोके—इत्यादि ।

मानस्तोकं महाकल्पं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ।
कथयिष्यामि मुनये देवानां कार्यसिद्धये ॥
अतिकृच्छ्रेण कृच्छ्रेण तथा चान्द्रायणेन च ।
आदौ संशोध्य चात्मानं पूतकायो जपं चरेत् ॥
जपन्नेतत् तु भुञ्जीत शाकं वा यावकं पयः ।
भिक्षां वा जपतस्तस्य भवेद्युतसङ्ख्यकम् ॥
सहस्रमात्रं होमः स्यात् प्रयोगाहो भवेन्मनुः ।
प्रयोगान्ते त्वहोरात्रं जपः कार्यो निरन्तरम् ॥
तदशांशेन जुहुयादौदुम्बरीर्घृतान्विताः ।
महाव्याहृतिभिः पश्चात् तावदेवं घृतं हुनेत् ॥
संस्त्रावभागं संप्राश्य प्रयोगैर्न क्षयं व्रजेत् ।
पुनः कर्म प्रकुर्वीत प्रायश्चित्तं पुनः पुनः ॥
स्त्रायाच्च तोक्षणतैलेन सप्तधा मन्त्रितेन च ।
मारणादिप्रयोगानां भवेत् पातकमोचनम् ॥
ब्रह्मवर्चसकामस्तु हुनेदष्टसहस्रकम् ।
घृताक्तानां च समिधामसाध्यः सर्वकर्मसु ॥
पद्मानां तु घृताक्तानां दशरात्रमुपोषितः ।
अयुतं जुहुयाल्लक्ष्मीकामो वा शिवदर्शने ॥
अपामार्गोद्भवानां च तण्डुलानां तथाऽयुतम् ।
हुनेदधिघृताक्तानां सर्वार्थस्य समृद्धये ॥

गोसहस्रस्य लाभाय जुहुयाद्गोसफेन च ।
 आज्याहुतीनां च तथा सहस्राष्टकमादरात् ॥
 उपोषितो दशाहानि हुनेद्विल्वफलानि च ।
 अयुतं च घृताक्तानि लभेदष्टसहस्रकम् ॥
 सिद्धे मन्त्रे सुवर्णानि न सिद्धे रजतानि तु ।
 भार्याऽमुको मे भवतु एतदर्थं हुनेच्छुचिः ॥
 जातीपुष्पाणि चाज्येन मधुना संयुतानि च ।
 कपिला तु यदाऽसूतवृषभा वा सिताऽपि गौः ॥
 आद्यं दुग्धं गृहीत्वाऽस्याः श्रपयेत् तेन वै चरुम् ।
 अष्टोत्तरशतं हुत्वा तथा वाऽष्टसहस्रकम् ॥
 मन्त्रयित्वा चरुं तच्च सपत्नीकः प्रभक्षयेत् ।
 आयुष्मतो वृढान् पुत्रान् जनयेन्नात्र संशयः ॥
 दूर्वाप्रवालान् जुहुयादधिक्षौद्रघृतान्वितान् ।
 आयुःकामोऽष्टसाहस्रं चिरमायुः स विन्दति ॥
 दधिक्षौद्रघृताक्तानां पुष्पाणां कुशकाशयोः ।
 सहस्राण्यष्ट जुहुयादिच्छेत् क्षुद्रान् यदा पशून् ॥
 त्रिरात्रोपोषितो भूत्वा गच्छेन्महाचतुष्पथे ।
 लिप्त्वा भूमिं गोमयेन तद्देव घृतं मुखे ॥
 पूजयित्वा हुनेद्भूमावष्टोत्तरसहस्रकम् ।
 कर्मणाऽनेन नृपतिर्भवेद्दशयो न संशयः ॥
 सप्ताभिमन्त्रितं तीक्ष्णतैलं तेन करद्वयम् ।
 सम्यक् स्नुतस्तेन स्पृष्टो यो ह्यसौ वशगो भवेत् ॥
 ब्रह्मवर्चसकामस्तु दधिक्षौद्रघृतान्विताः ।

विल्वस्य समिधो हुत्वा लक्षं तेजोनिधिर्भवेत् ॥

ओदुम्बरीश्च जुहुयादधिक्षौद्रघृतान्विताः ।

अयुतं चान्नकामस्तु लभेदन्नं तथा बहु ॥

अर्थकामः पलाशस्य समिधो घृतसंयुताः ।

लक्षं हुनेत् तस्य धनमक्षयं जायते सदा ॥

अपामार्गस्य समिधः कटुतैलसमन्विताः ।

हुनेदष्टौ सहस्राणि शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥

उच्चाटनं तु देशादिभ्यः प्रवासनम् ।

सर्वोपद्रवनाशार्थं गृहीत्वा सप्तशर्कराः ।

मन्त्रयित्वा सहस्रं तु चतुर्दिक्षु क्षिपेत् ततः ॥

ऊर्ध्वाधस्तस्य निकटे सर्वोपद्रवनाशनम् ।

एवं कृत्वा व्रजेन्मार्गे चौरव्याघ्रभयं हरेत् ॥

आरात् ते गोघ्न-इत्यादि ।

महाभये समुत्पन्ने व्याघ्रचौरभयादिषु ।

चतस्रर्चः स्मरेच्चित्ते तत्तद्भयविनाशकाः ॥

विकिरि-इत्यादि ।

जपेद्युतसङ्ख्याकं विरोधे तु महाजनैः ।

राज्ञा वोपशमं याति प्रीतिश्चापि प्रजायते ॥

सहस्राणि-इत्यादि ।

यदा तु महतां मृत्युर्नृपतेर्वा उपद्रवः ।

तदा होमं प्रकुर्वीत वैकङ्कतसमिद्धरैः ॥

ओदुम्बरीभिः शाल्मल्या तिलैर्वाऽपि यवैरपि ।

प्रत्येकमेकादशधा चाभिमन्त्र्य ततो वलिम् ॥

कृशरं वा पायसं वा ततो भूतानि चार्चयेत् ।

दद्याद्दिडालमांसस्य वलिं नश्यन्त्युपद्रवाः ॥
 सहस्राणि सहस्रंशो ये रुद्रा-इत्यादि ।
 जपेदेता नव ऋचः परिशिष्टसमन्विताः ।
 भवन्ति भोगदास्तेन हीना ज्ञानप्रदा मताः ॥
 नमो रुद्रेभ्य -इत्यादि ।
 मध्याह्ने चायुतं साज्यान् जुहुयात् तु सकण्टकान् ।
 प्रत्यङ्गिराया मन्त्रस्य कर्म कुर्यादयं मनुः ॥
 मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण नमस्तेऽस्य समापनम् ।
 तैत्तिरीयेऽन्यशाखायां परिशिष्टानि सप्त च ॥
 सद्योजातादयः पञ्च त्र्यम्बकं च यजामहे ।
 तथा च त्वरितो रुद्र एतन्नमकमुच्यते ॥
 अग्नाविष्णु-इत्यादि ।
 नित्यं सन्ध्यावन्दनान्ते तिष्ठन् कालत्रये जपेत् ।
 अष्टोत्तरसहस्रं तु षण्मासं सत्यवाग्भवेत् ॥
 वाजश्च मे प्रसवश्च मे-इत्यादि ।
 एतैः सप्तानुवाकैस्तु एवमानादिपञ्चभिः ।
 आज्याहुतिसहस्रं तु हुत्वा तोये प्रविश्य च ॥
 शतं जपेदक्षिरोगः कदा चिन्नैव जायते ।
 जातस्य च प्रशान्तिः स्यान्नेत्रतेजोऽभिवर्धते ॥
 इध्मश्च मे बर्हिश्च मे-इत्यादि ।
 एतावान् रुद्र आख्यातः सर्वकामफलप्रदः ।
 विस्वरोऽनक्षरः पाठः कृतस्तदोषशान्तये ॥
 इडादेवहः-इत्यादि ।
 परिशिष्टं जपेदेतदेष रुद्रविधिः स्मृतः ।

अभिषिञ्चेत् पौष्टिकार्थं शान्तिकामस्तु होमयेत् ॥
 सिद्धिकामो जपेदेवमक्षराणां तु सङ्ख्यया ।
 इहैव वज्रदेहोऽसौ शिव एव न त्रापरः ॥
 पद तुल्यावृत्तिजपाद्वाक्सिद्धिरुपजायते ।
 वाक्यतुल्यावृत्तिजपात् पापं सर्वं विनश्यति ॥
 ऋचां सङ्ख्याजपात् सर्वं क्षुद्रपापं विनश्यति ।
 अनुवाकसमं जप्त्वा दुष्टग्रहरुजं जयेत् ॥

इति रुद्राध्यायपुरश्चरणप्रयोगः ।

अथ गणेशसूक्तपुरश्चरणम् ।

तत्रैव ।

अथ विष्णो प्रवक्ष्यामि सूक्तं गणपतेः परम् ।
 यत् साधनं विना सर्वमन्त्रा विघ्नैस्तु विघ्निताः ॥
 तस्मादादौ गणेशानं प्रसाद्य पुनराचरेत् ।
 निद्राऽऽलस्यं क्षुधा क्रोधो लोभो मोहो मनोभवः ॥
 गणनाथानर्चकानामेते विघ्नकराः स्मृताः ।
 विधानपूर्वकं तस्मात् तत्सूक्तमुपदिश्यते ॥
 तज्जापकानां कार्याणि स्युरप्रतिहतानि च ।
 द्वादशार्चस्य सूक्तस्य गणेशस्य महात्मनः ॥
 ऋषिर्गुत्समदाख्यो हि गणकः परिकीर्तितः ।
 आद्यानां त्रि-ऋचानां तु छन्दस्त्रिष्टुप् प्रकीर्तितम् ॥
 उत्तराणां नवानां च गायत्रं छन्द उच्यते ।
 महागणपतिश्चास्य दैवतं परिकीर्तितम् ॥
 विनियोगः क्रीर्त्तनीयो यथाकार्यानुसारतः ।

गणानां त्वा गणपतिं-इत्यादि ।

गणानां त्वा निषुसीद त्वेषं गणं तथैव च ।
 अनून इन्द्र विद्महि न हित्वा शूलमेव च ॥
 अङ्गुष्ठाग्रात् समारभ्य करपृष्ठादिषु न्यसेत् ।
 गणानां त्वेति षड्भिश्च हृदयादिषडङ्गकम् ॥
 एवं न्यासद्वयं कृत्वा षड्भिव्यापकं चरेत् ।

न्यासान्तराणि पूजाविधानं चोक्त्वा पुरश्चरणमाह ।

एकविंत्सहस्रं तु सूक्तस्यैषा पुरस्क्रिया ।
 जपादशांशहोमस्तु पायसेन घृतेन तु ॥
 शर्करापञ्चखाद्यैश्च कुसुमैः करवोजैः ।
 त्रित्वपत्रैरिक्षुदण्डैर्दाडिमीकदलीफलैः ॥
 मोदकैर्लडुकैश्चैव घृतपक्वैर्मनोहरैः ।
 अलाभे सर्वद्रव्याणां जुहुयात् तिलसर्पिषा ॥
 होमस्य दशांशेन गोपयोभिश्च तर्पयेत् ।
 अथ वेशुरसेनैव तदभावे गुडोदकम् ॥
 तर्पणस्य दशांशेन मार्जयेच्छुद्धवारिभिः ।
 मार्जनस्य दशांशेन ब्राह्मणान् भोजयेद्बहून् ॥
 पायसैः पञ्चखाद्यैश्च मोदकैः सिद्धलडुकैः ।
 अपूपमण्डकाद्यैश्च सघृतैः शर्करान्वितैः ॥
 सहकाररसैः सार्धं तथा च कदलीफलैः ।
 एवं सिद्धे तु सूक्ते तु यत् फलं तन्निगद्यते ॥
 महदैश्वर्यमतुलं प्रज्ञां विद्यां यशो बलम् ।
 वाविसिद्धिं समवाप्नोति चान्ते ब्रह्मपदं व्रजेत् ॥

इति गणेशसूक्तपुरश्चरणविधिः ।

अथ पुरुषसूक्तविधिः ।

(मेरुतन्त्रे)

वक्ष्ये पुरुषसूक्तस्य विधिं तत्रैव गोपितम् ।
 आनुष्टुबस्य सूक्तस्य त्रिष्टुबं तस्य दैवतम् ॥
 पुरुषो यो जगद्बीजमृषिर्नारायणः स्मृतः ।
 स्नात्वा यथोक्तविधिना प्राङ्मुखः शुद्धमानसः ॥
 प्रथमां विन्यसेदामे द्वितीयां दक्षिणे करे ।
 तृतीयां वामपादे तु चतुर्थीं दक्षिणे न्यसेत् ॥
 वामजानौ पञ्चमीं च षष्ठीं जानुनि दक्षिणे ।
 सप्तमीं वामकट्यां तु अष्टमीं दक्षिणे कटौ ॥
 नवमीं नाभिदेशे तु दशमीं हृदये न्यसेत् ।
 एकादशीं कण्ठदेशे द्वादशीं वामबाहुके ॥
 त्रयोदशीं दक्षभुजे मुखदेशे चतुर्दशीम् ।
 अक्षणोः पञ्चदशीं चैव षोडशीं मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥
 एवं न्यासविधिं कृत्वा पश्चात् पूजां समाचरेत् ।
 अप्सवर्गौ हृदये सूर्यं स्थण्डिले प्रतिमासु च ॥
 षट्स्वतेषु हरेः सम्यगर्चने योग्यतोच्यते ।
 आपो ह्यायतनं तस्य तस्मात् तासु सदा हरिः ॥
 अग्नौ क्रियावतां विष्णुयोगिनां हृदये हरिः ।
 पण्डितानां हरिः सूर्यः स्थण्डिले भावितात्मनाम् ॥
 प्रतिमास्वल्पबुद्धीनां षट्प्रकाराश्च ताः स्मृताः ।
 अकृत्रिमाः कृत्रिमाश्च अचलाश्च चलाचलाः ॥
 निर्जीवाश्च सजीवाश्च तासां वक्ष्यामि लक्षणम् ।
 अकृत्रिमा च द्विविधा शालग्रामोऽतिपावनः ॥

तदभावे द्वारकायाश्चक्रं तद्वच्च पावनम् ।
 कृत्रिमा दशधा प्रोक्ता श्रेष्ठास्ताः पूर्वपूर्वतः ॥
 स्याद्रत्नखचिता त्वाद्या स्वर्णजा रूप्यजाऽपि च ।
 ताम्रजा पीतलोजाता स्फाटिका रक्तशोतजा ॥
 कोष्ठजा मृत्तिकाजाता चित्ररूपेति च क्रमात् ।
 अचलाः क्षेत्ररूपास्तु हरिद्वारं यथा गया ॥
 देवताभिः कृता यास्तु मूर्त्तयस्ताश्चलाचलाः ।
 जगन्नाथो वेङ्कटेशः पाण्डुरङ्गादयस्तु ते ॥
 सजीवा ब्राह्मणा गावो निर्जीवः पिप्पलः स्मृतः ।
 मन्त्रन्यासं पुरा कुर्यात् स्वदेहे देवतासु च ॥
 गायत्र्योङ्कारन्यस्ताङ्गः पूजयेद्विष्णुमव्ययम् ।
 आद्ययाऽऽवाहयेद्देवमृचा तु पुरुषोत्तमम् ॥
 द्वितीययाऽऽसनं दाद्यात् पाद्यं दद्यात् तृतीयया ।
 अर्घ्यं चतुर्थ्या दातव्यं पञ्चम्याऽऽचमनीयकम् ॥
 षष्ठ्या स्नानं प्रकुर्वीत सप्तम्या वस्त्रमेव च ।
 यज्ञोपवीतमष्टम्या नवम्या चानुलेपनम् ॥
 पुष्पं दशम्या दातव्यमेकादश्या तु धूपकम् ।
 द्वादश्या दीपिकं दद्यात् त्रयोदश्या निवेदनम् ॥
 चतुर्दश्या नमस्कारं पञ्चदश्या प्रदक्षिणम् ।
 स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमनीयकम् ॥
 दक्षिणां च यथाशक्त्या षोडश्या तु प्रदापयेत् ।
 ततः प्रदक्षिणं कृत्वा जपं कुर्वन् समाहितः ॥
 यथाशक्तिं जपित्वा तु सूक्तं तस्मै निवेदयेत् ।

देवस्य दक्षिणे पार्श्वे कुण्डं स्थण्डिलमेव च ॥
 कारयेत् प्रथमेनैव द्वितीयेन तु प्रोक्षणम् ।
 तृतीयेनाग्निमादद्याच्चतुर्थेन समिन्धनम् ॥
 पञ्चमेनाज्यश्रयणं चरोश्च श्रयणं तथा ।
 षष्ठेनैवाग्निमध्ये तु कल्पयेत् पद्ममासनम् ॥
 चिन्तयेद्देवदेवेशं कालानलसमप्रभम् ।
 ततो गन्धं च पुष्पं च धूपदोपनिवेदनम् ॥
 अनुज्ञाप्य ततः कुर्यात् सप्तम्यादि यथाक्रमम् ।
 समिधस्तावतीः पूर्वं जुहुयादभिघारिताः ॥
 ततो घृतेन जुहुयाच्चरुणा च ततः पुनः ।
 एवं हुत्वा ततश्चैनमनुज्ञाप्य यथाक्रमम् ॥
 अग्नेर्भगवतस्तस्य समीपे स्तोत्रमुच्चरेत् ।
 नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ॥
 नमोऽस्तु ते हृषीकेश महापुरुषपूर्वज ।
 देवानां दानवानां च सामन्यमधिदैवतम् ॥
 सर्वदा चरणद्वन्द्वं ब्रजामि शरणं तव ।
 एकस्त्वमसि लोकस्य स्वष्टा संहारकस्तथा ॥
 अव्यक्तश्चानुमन्ता च गुणमायासमावृतः ।
 संसारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् ॥
 त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ।
 न ते रूपं न चाकारो नायुधानि च नास्पदम् ॥
 तथाऽपि पुरुषाकारो भक्तानां च प्रकाशने ।
 नैव किञ्चित् परोक्षं ते न प्रत्यक्षोऽसि कस्य चित् ॥

न च किञ्चिदसाध्यं ते न च साध्योऽसि कस्य चित् ।
 कार्याणां कारणं पूर्वं वत्तसां वाच्यमुत्तमम् ॥
 योगिनां परमा सिद्धिः परमं ते पदं विदुः ।
 अहं भूतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन् महाभये ॥
 त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने परमं पदम् ।
 कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत ॥
 शरीरे च गतश्चासि वर्तते मे महद्भयम् ।
 त्वत्पादकमलादन्यत्र मे जन्मान्तरेष्वपि ॥
 विज्ञानं यदिदं प्राप्य यदिदं स्थानमर्जितम् ।
 जन्मान्तरेऽपि मे देव माभूदस्य परिक्षयः ॥
 दुर्गतावपि जातस्य त्वं गतो मे मनोरथः ।
 यदि नाशं न विन्देत तावताऽस्मि कृती सदा ॥
 कामये विष्णुपादौ तु सर्वजन्मसु केवलम् ।
 पुरुषस्य हरेः सूक्तं स्वर्ग्यं धन्यं यशस्करम् ॥
 आत्मज्ञानमिदं पुण्यं योगज्ञानमिदं परम् ।
 एवं स्तुत्वा हव्यवाहं ततः पश्चादिसर्जयेत् ॥
 अनेनैव न निष्पापो जायते मनुजो यदा ।
 प्राग्वद्भुत्वा पावयेत् प्रयोगानारभेत् ततः ॥
 शुक्लपक्षे शुभे वारे सुनक्षत्रे सुगोचरे ।
 दम्पत्योरुपवासः स्यादेकादश्यां सुरालये ॥
 द्वादश्यां पुत्रकामाय चरुं कुर्वीत वैष्णवम् ।
 ऋग्भिः षोडशभिः सम्यगर्चयित्वा जनार्दनम् ॥
 चरुं पुरुषसूक्तेन प्राशयेत् पुत्रकाम्यया ।

प्राप्नुयाद्वैष्णवं पुत्रमचिरात् सन्ततिक्षमम् ॥
 द्वादशो द्वादशोऽसम्यक् पयसा निर्वपेच्चरुम् ।
 यो जुहोति सहस्रं स याति विष्णोः परं पदम् ॥
 मार्गशीर्षादिमासेषु क्रमात् पूज्यश्च केशवः ।
 नारायणो माधवश्च गोविन्दो विष्णुरेव च ॥
 मधुसूदन उक्तस्त्रिविक्रमो दामनस्तथा ।
 श्रीधरश्च हृषीकेशः पद्मनाभो जनार्दनः ॥
 पूजयित्वा जपेत् सूक्तं शतमष्टाधिकं ततः ।
 होमं च पूर्वत् कुर्यात् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥
 अपुत्रा मृतपुत्रा या या च कन्याप्रसूर्भवेत् ।
 तस्या यथा सुपुत्रः स्यात् तमुपायं ब्रवीम्यहम् ॥
 समिधोऽश्वत्थवृक्षस्य प्रत्यर्चं जुहुयाच्छतम् ।
 अष्टाधिकं च सघृतमुपतिष्ठेच्छुताशनम् ॥
 पुनर्विष्णुं पूजयित्वा घृतहोमं समाचरेत् ।
 अष्टोत्तरशतं कुर्यात् प्रत्यर्चं वाग्यतः शुचिः ॥
 संपाताज्यं स्थापयित्वा तन्नार्यैः प्राशनाय च ।
 दद्यात् सा च पतिं विष्णुं नमस्कृत्य प्रभक्षयेत् ॥
 तर्पयेच्च द्विजान् सम्यग्लघ्वाशी संविशेत् क्षपाम् ।
 परं सप्तप्रवर्त्तेनावश्यं गर्भवती भवेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

अरण्ये निवसेन्नित्यं त्रिकालं स्नानमाचरेत् ।
 जपेदष्टोत्तरशतं सूक्तमेतत् त्रिकालकम् ॥
 मासमेकं फलाहारो मासमद्भिश्च तर्पयेत् ।

आदित्यमुपतिष्ठेत मूलेनानेन नित्यशः ॥
 आज्यं हुत्वा दशशतं त्रिभिर्वर्षैर्जपेद्दिने ।
 तद्भक्तस्तन्मना युक्तो दशवर्षाण्यनन्यभाक् ॥
 साक्षात् पश्यति देवं तं नारायणमनामयम् ।

इति पुरुषसूक्तपुरश्चरणम् ।

अथ श्रीसूक्तविधिः ।

तत्रैव ।

अथ सर्वोत्तमं वक्ष्ये श्रीसूक्तं सविधानकम् ।
 कलौ दारिद्र्यनाशाय नान्यत् किञ्चिन्नृणां तथा ॥
 हिरण्यवर्णाम्—इत्यादि ।

हिरण्यवर्णामित्यस्य ऋचो लक्ष्मीमुनिर्मतः ।
 चतुर्दशानां शेषाणामानन्दः कर्मस्तथा ॥
 चिह्नोत्तलक्ष्मीतनयाश्चत्वारो मुनयो मताः ।
 हृदयादिति सृष्ट्यां च छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
 कांसोऽस्मितर्चो बृहती चन्द्रावादित्यवर्णयोः ।
 त्रिष्टुप्छन्द उपैतु मां देवाद्यष्ट—ऋचामपि ॥
 छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं ताम्म आहव इत्यृचः ।
 प्रस्तारः पङ्क्तिरुद्दिष्टो देवते श्रीविभावसू ॥
 व्यञ्जनानि तु बीजानि स्वराः शक्तय ईरिताः ।
 विन्दवः कीलकं प्रोक्तमङ्गुष्ठादिषडङ्गकम् ॥
 हिरण्या च तथा तन्द्रा तृतीया रजतप्रभा ।
 हिरण्यस्रक् हिरण्याक्षा तथा हिरण्यवर्णिका ॥
 एताभिर्देनमोऽन्ताभिः प्रकुर्यादङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

अरुणनलिनसंस्था तद्रजःपुञ्जवर्णा
करकमलधृतेशाभीतियुग्माभुजा च ।
मणिमुकुटविचित्रालङ्कृताकल्पजालै-
र्भवतु भुवनमाता सन्ततं श्रीः श्रिये नः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

परिषिञ्चेत् त्रिशो नित्यं सूक्तैस्तैः स्नानकर्मणि ।
आदित्याभिमुखो जप्याद्यावत् तावच्च तर्पयेत् ॥
शुक्लाद्यां तिथिमारभ्य यावदेकादशी भवेत् ।
तावद्द्वादशसाहस्रं जपेन्निश्चलमानसः ॥
ब्रह्मचर्यरतः शुद्धवस्त्रदन्तादिकः सुधीः ।
पद्मैस्त्रिमधुरोपेतैर्घृताक्तेन पयोऽन्धसा ॥
श्रीसमिद्धिः सर्पिषा च प्रत्येकं त्रिशतं हुनेत् ।
द्वादश्यां द्वादशैवाऽथ सद्विप्राँश्चापि भोजयेत् ॥
तेन सिद्धो भवेन्मन्त्रो नात्र कार्या विचारेणा ।
कुन्दमन्दारकुमुदमालतीपद्मकेतकम् ॥
नन्द्यावर्त्ताह्वयं जाती कल्हारं चम्पकं तथा ।
रक्तोत्पलादिपुष्पाणि लक्ष्म्याश्चातिप्रियाणि हि ॥
त्रिवारमन्वहं मन्त्री जुहुयाच्च यथाविधि ।
षण्मासं यः करोत्येवं स स्याल्लक्ष्मीपतिः स्वयम् ॥

इति श्रीसूक्तपुरश्चरणम् ।

अथ नवग्रहाणां वैदिकमन्त्राः ।

तत्रैव ।

तत्र भास्करमन्त्रस्य हिरण्यस्तूयको मुनिः ।

त्रिष्टुप् छन्दो देवता च सविता परिकीर्तितः ॥

आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च हिरण्ययेन
सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ।

अङ्गुष्ठादिषडङ्गानि षड्दोर्घान्वितयोच्चरेत् ।

भुवनेश्याऽथ मन्त्रस्य पदन्यासं समाचरेत् ॥

श्रोसूक्तोक्त-ऋचास्थाने ततो ध्यायेद्दिवाकरम् ।

ध्यानं यथा ।

पद्मासनं पद्मकरं पद्मगर्भसमुद्युतिम् ।

किरीटिनं सकेयूरं मण्डितं रक्तच्छत्रिणम् ॥

रथारूढं तस्य सव्ये त्वधिदेवाग्न्यधिष्ठितम् ।

प्रत्यधिदेवेश्वरेण सव्ये युक्तं च प्राङ्मुखम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तदशांशतः ।

होमतुल्यो जपः कार्यस्त्वधिप्रत्यधिदैवतः ॥

करवीरादिकुसुमै रक्तचन्दनमिश्रितैः ।

दूर्वाङ्गुरैरक्षतैश्च तर्पणं स्याद्दिनेशितुः ॥

अथ चन्द्रमन्त्रः ।

अथ वक्ष्ये चन्द्रमन्त्रं गौतमोऽस्य मुनिर्मतः ।

गायत्रीछन्द इत्युक्तं सोमो देवः प्रकीर्तितः ॥

अथायस्व समेतु विश्वतः सोमवृष्णि यं भवावाजस्य सङ्गथे ।

षड्दीर्घं विन्दुयुक्तेन सकारेण षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

किरीटिनं श्वेतवस्त्रं दशाश्वं श्वेतभूषणम् ।

पाशपाणिं द्विबाहुं तमत्रिगोत्रसमुद्भवम् ॥

जातं यवनदेशे च श्वेतगन्धानुलेपनम् ।
 अनुष्टुप् छन्दसं चात्रेयर्षं श्वेतातपत्रकम् ॥
 श्वेतध्वजपताकाढ्यं केयूरमणिशोभितम् ।
 स्थिरीकृतं रथारूढमधिदेवततोययुक् ॥
 उमाप्रत्यधिदेवेन वायव्याभिमुखस्थितम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं सर्वश्वेतेष्वयं विधिः ।

अथ भौममन्त्रः ।

भौममन्त्रं प्रवक्ष्यामि विरूपोऽस्य मुनिर्मतः ।
 अङ्गारको देवताऽत्र गायत्री छन्द ईरितम् ॥
 अग्निर्मूर्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयं । अपां रेतां सि-
 जिवति ॥

ॐ बीजेन षडङ्गानि चाङ्गुलीन्यास एव च ।

रुद्रस्थानेषु कर्त्तव्यः पदन्यासो द्वितीयकः ॥

अथ ध्यानम् ।

रक्ताम्बरं रक्तवर्णं रक्तगन्धानुलेपनम् ।
 रक्तपुष्पैः पूज्यमानं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥
 वराभयगदागूलहस्तं मेषोपरिस्थितम् ।
 वशिष्ठगोत्रसम्भूतं यमदय्यार्षकं कुजम् ॥
 जगतीछन्दसं रक्तं रक्तध्वजपताकिनम् ।
 अवन्तीदेशसम्भूतं ध्यात्वा देवं प्रपूजयेत् ॥
 रक्तचन्दनसंमिश्रतण्डुलैस्त्र्यस्रके कृते ।
 अङ्गुले क्षमाधिदेवेन युक्ते षाण्मातुरेण च ॥
 युक्ते प्रत्यधिदेवेन तत्रावाह्यं प्रपूजयेत् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं मधुरत्रयसंयुताः ।

स्वादिर्यः समिधो होमे तर्पणाद्यं च सूर्यवत् ॥

अथ बुधमन्त्रः ।

बुधमन्त्रं प्रवक्ष्यामि बौद्धस्तस्य मुनिर्मतः ।

त्रिष्टुप् छन्दो देवताऽस्य बुधो बुद्धिप्रदो मतः ॥

उद्बुध्यस्वान्ने प्रतिजाग्रद्येन मिष्टयापूते स सृजेचामयं च ।

पुनः कृण्व ॐस्त्वा पितरं युवानमन्वा ता ॐसीत्वयितन्तुमेतम् ॥

बुँब्रीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्य निरूप्यते ।

पीताम्बरं पीतवर्णं पीतगन्धानुलेपनम् ॥

पीतपुष्पैः पुज्यमानं खड्गचर्मगदावरान् ।

हस्तैर्दधन्तं सिंहस्थं चात्रिगोत्रसमुद्भवम् ॥

भारद्वाजार्षकं जातं मगधे च किरीटिनम् ।

बृहतीछन्दसं पीतच्छत्रध्वजपताकिनम् ॥

केयूरमणिशोभाढ्यमधिदेवेन विष्णुना ।

तेन प्रत्यधिदेवेन युक्तं जं चिन्तयाम्यहम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेत् तस्य दशांशतः ।

अपामार्गसमिद्भिश्च तर्पणादि ततश्चरेत् ॥

अथ बृहस्पतिमन्त्रः ।

मन्त्रं बृहस्पतेर्वक्ष्ये मुनिर्बृत्समदो मतः ।

त्रिष्टुप् छन्दो देवपतिवन्दितस्तस्य देवता ॥

बृहस्पते अतियदयो अर्हाद्युमद्भिभाति ऋतुमज्जनेषु यदोदय-
च्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।

बृं बीजेन षडङ्गानि न्यासमन्त्रं समाचरेत् ।

ध्यानमस्य प्रवक्ष्यामि वरदण्डाक्षसूत्रकम् ॥

कमण्डलुं दधच्छस्तैः पीतवर्णं किरीटिनम् ।

वशिष्ठार्षं सिन्धुदेशभवं पीताम्बरावृतम् ॥

अनुष्टुप्छन्दसं चाङ्गिरसगोत्रं किरीटिनम् ।

पीतध्वजपताकाढ्यं पीतच्छत्रानुलेपनम् ॥

केयूराङ्गदशोभाढ्यमधिदेवेन्द्रसंयुतम् ।

ब्रह्मप्रत्यधिदेवेन युतं संचिन्त्य चाह्वयेत् ॥

पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमस्त्विमधुरान्वितैः ।

पिप्पलस्य समिद्भिः स्यात् तर्पणं पीतपञ्चभिः ॥

अथ शुक्रमन्त्रः ।

शुक्रमन्त्रं प्रवक्ष्यामि भारद्वाजो मुनिर्मतः ।

त्रिष्टुप् छन्दो निगदितं दैत्याचार्यस्तु देवता ॥

शुक्रं ते अन्यद्यजतं ते अन्यद्युपुरुषे अहनी द्यौरिवासि ।

विश्वाहि माया अवसि स्वधावो भद्रा ते पूषन्निहरातिरस्तु ॥

शुं बीजेन षडङ्गानि कृत्वा ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानमाह ।

शुक्लाम्बरं शुक्लवर्णं शुक्लगन्धानुलेपनम् ।

शुक्लपुष्पैः पूज्यमानं शौनकार्षं किरीटिनम् ॥

चतुर्भुजं दण्डधरं च साक्षसूत्रकमण्डलुम् ।

पङ्क्तिश्छन्दश्च वरदं तथा कीकरदेशजम् ॥

श्वेतच्छत्रध्वजपताकिनं भार्गवगोत्रजम् ।

सकेयूरं रथारूढं श्वेताभरणभूषितम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेत् त्रिमधुरान्वितैः ।

उदुम्बरसमिन्निश्च तर्पणादि तु चन्द्रवत् ॥

अथ शनिमन्त्रः ।

शनिमन्त्रं प्रवक्ष्यामि सिन्धुद्वीपो मुनिर्मतः ।

गायत्रीछन्द इत्युक्तं देवता तु शनैश्चरः ॥

शन्नो देवीरभीष्टये आपो भवन्तु पीतये शन्नोरभिस्त्ववन्तु नः ।

शं बीजेन षडङ्गानि कुर्याद्दधानं ततश्चरेत् ।

बाणाशनं शूलधरमिन्द्रनीलसमद्युतिम् ॥

सौराष्ट्रदेशजं प्रोक्तं वरदं गृध्रवाहनम् ।

भृग्वर्ष काश्यपे गोत्रे जातं चापि किरीटिनम् ॥

कृष्णाम्बरं कृष्णवर्णं कृष्णगन्धानुलेपनम् ।

गायत्रीछन्दसं कृष्णवर्णाभरणभूषितम् ॥

केयूरिणं मुकुटिनं कृष्णध्वजपताकिनम् ।

प्रजापत्यधिदेवेन सहितं रथमास्थितम् ॥

पद्मप्रत्यधिदेवेन युक्तं ध्यात्वा समर्चयेत् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

सकस्तूर्यथ तैश्चायःकालद्व्यङ्गुलमण्डले ।

होमः समीसमिद्भिः स्यादायसार्धेन तर्पणम् ॥

कृष्णपुष्पैश्चन्दनं तु कालीयं चागुरुर्भवेत् ।

अथ राहुमन्त्रः ।

राहोर्मन्त्रं प्रवक्ष्यामि वामदेवो मुनिर्मतः ।

गायत्री छन्द इत्युक्तं सैहिकेयश्च देवता ॥

कयानश्चित्र आभुवदुती सदा वृधः सखाकया सन्निष्ठया वृता ।

राँ बीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्य निरूप्यते ।
 करालवदनं खड्गचर्मशूलधरं वहन् ॥
 कृणाम्बरं कृणवर्णं कृणगन्धानुलेपनम् ।
 कृणपुष्पैः पूज्यमानं केयूरमुकुटान्वितम् ॥
 पूर्वदेशे समुत्पन्नं क्रूरमाङ्गिरसार्षकम् ।
 पाटलागोत्रसम्भूतमनुष्टुप्छन्दसं ग्रहम् ॥
 कृणच्छत्रं रथारूढं कृणध्वजपताकिनम् ।
 सर्पाधिदैवतं पैत्रकालप्रत्यधिदैवतम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

इत्थं संचिन्त्य नैर्ऋत्ये सूर्याकारे तु मण्डले ।
 द्वादशाङ्गुलविस्तोर्णे चाह्वयेच्छयामलाक्षतैः ॥
 दूर्वाभिर्मधुराक्ताभिस्तस्य होमो विधीयते ।
 तर्पणीयादिभिर्द्रव्यैः कौलिकाँस्तर्पयेद्द्विजान् ॥

अथ केतुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

केतुमन्त्रं प्रवक्ष्यामि मधुच्छन्दो मुनिर्मतः ।
 देवताः केतवः प्रोक्ता गायत्रं छन्द ईरितम् ॥
 केतुं कृणवन्नकेतवे पेशोमर्या अपेशसे समुषङ्गिरजायथाः ।
 केँ बीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्य निरूप्यते ।
 धूम्राक्षिबाहवः पाशधराश्च विकृताननाः ॥
 किरोटिनो गृध्रवाहा मध्यदेशोज्जवा दृढाः ।
 चित्राम्बराश्चित्रवर्णाश्चित्रगन्धानुलेपनाः ॥
 नानाछन्दस्कका गौतमार्षा जैमिनिगोत्रजाः ।
 कृणपिङ्गध्वजपताकिनो मुकुटिनस्तथा ॥

केयूरिणो रथारूढाः शूरा ब्रह्मादिदेवताः ।
चित्रगुप्तप्रत्यधिदेवताश्चात्र विचिन्तयेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं कुशा होमे प्रकीर्त्तिताः ।

मधुरत्रयसंयुक्ताश्चित्रद्रव्यैः प्रतर्पयेत् ॥

इति नवग्रहाणां वैदिकमन्त्राः ।

अथाग्निदुर्गामन्त्रः ।

तत्रैव ।

सर्वार्थसाधकं वक्ष्ये संग्रामविजयप्रदम् ।

जलन्धरवधायाहं यत् स्मरामि शृणुष्व तत् ॥

जातवेदसे सूनवामसोमम रातीयतो निदहाति वेदः स नः
परिषदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ।

त्रिष्टुप् छन्दो मुनिश्चास्य मरीचिः काश्यपो मतः ।

देवता जातवेदोऽग्निः षडङ्गानि समाचरेत् ॥

नवागषट्सप्तनागसप्तभिर्मन्त्रवर्णकैः ।

अथ ध्यानम् ।

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भोषणां
कन्याभिः करवालखेटकलसद्भस्ताभिरासेविताम् ।

हस्तैश्चक्रदरासिखेटविशिखान् पाशाङ्कुशौ तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां स्मरेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

मन्त्रवर्णसहस्राणि जपेद्धोमं पृथक् पृथक् ।

वेदवेदाब्धिसङ्ख्याकं तिलसिद्धार्थचित्रजैः ॥

मूलैश्च समिधाभिश्च वटोदुम्बरपिप्पलैः ।

अर्कलक्षोद्भवैश्चापि घृतेन हविषाऽन्नकैः ॥

सर्वैर्घृताक्तैर्जुहुयात् तिलैश्चान्ते घृताहुतिः ।
ततः संतर्प्य सतिलैः कृत्वा चात्माभिषेचनम् ॥
समाराध्य वरान् देवाँस्तोषयेद्गुरुमात्मनः ।

इत्यग्निदुर्गामन्त्रपुरश्चरणम् ।

वैदिकमन्त्रपुरश्चरणोपयुक्तवैदिकहोमविधिस्तु विस्तरमयाग्नेह लिख्यते ।

अथ होमद्रव्यप्रमाणानि ।

(शारदायाम्)

अथात्र होमद्रव्याणां प्रमाणमभिधीयते ।
कर्षमात्रं घृतं होमे शुक्तिमात्रं पयः स्मृतम् ॥
उक्तानि पञ्च द्रव्याणि तत्समानि मनीषिभिः ।
तत्समं मधुदुग्धान्नमक्षमात्रमुदाहृतम् ॥
दधि प्रसृतिमात्रं स्याल्लाजाः स्युर्मृष्टिसम्मिताः ।
पृथुकास्तत्प्रमाणाः स्युः सक्तवोऽपि तथा मताः ॥
गुडं पलार्धमानं स्यच्छर्कराऽपि तथा मता ।
ग्रासार्धं चरुमानं स्यादिक्षुः पर्वावधिर्मतः ॥
एकैकं पत्रपुष्पाणि तथाऽपूपानि कल्पयेत् ।
कदलीफलनारङ्गफलान्येकैकशो विदुः ॥
मातुलुङ्गं चतुःखण्डं पनसं दशधा कृतम् ।
अष्टधा नारिकेलानि खण्डितानि विदुर्बुधाः ॥
त्रिधा कृतं फलं वैत्वं कपित्थं खण्डितं त्रिधा ।
फलान्यन्यान्यखण्डानि समिधः स्युर्दशाङ्गुलाः ॥
दूर्वात्रयं समुद्दिष्टं गुडुची चतुरङ्गुला ।
व्रीहयो मुष्टिमानाः स्युर्मृद्रमाषयवा अपि ॥
तण्डुलाः स्युश्चतुर्थींशाः कोद्रवा मुष्टिसम्मिताः ।

गोधूमरक्तकलमा विहिता मुष्टिमानतः ॥

तिलाश्चलुकमानाः स्युः सर्षपास्तत्प्रमाणतः ।

शुक्तिप्रमाणं लवणं मरोचान्यपि विंशतिः ॥

पुरं वदरमानं स्याद्रामठं तत्समं स्मृतम् ।

चन्दनागुरुकपूरकस्तूरोकुङ्कुमानि च ॥

तिन्तिडी बीजमानानि समुद्दिष्टानि देशिकैः ।

कर्षादिलक्षणाभ्युक्तानि (सक्रान्दे)

गुञ्जाभिर्दशभिर्माषः शाणो माषचतुष्टयम् ।

द्वौ शाणौ वटकः कोलो वदरं क्षुद्रवस्तथा ॥

तौ द्वौ पाणितलं कर्षः सुवर्णः केवलं ग्रहः ।

पिचुर्विडालपदकं तिन्दोऽक्षश्च तद्द्वयम् ॥

शुक्तिरष्टमिका ते द्वे पलं निष्कचतुर्थिका ।

मुष्टिमात्रं प्रकुञ्चोऽथ द्वे पले प्रसृतिस्तथा—इति ॥

अगस्त्येन तु ।

गुञ्जाभिः पञ्चभिश्चैको माषकः परिकीर्तितः ।

भवेत् षोडशभिर्माषैः सुवर्णः कर्ष एव च ॥

पलं सुवर्णाश्चत्वारः पञ्च वाऽपि प्रकीर्तितम्—इत्युक्तम् ।

एतन्मतेऽशीतिगुञ्जाभिरेकः कर्षः स एव सुवर्णोऽपि । पृथुकाश्चिपीटकाः ।

गुडुची लताविशेषः । पुरं गुग्गुलुः । रामठं हिङ्गु । सोमः शम्भुः ।

अनुके तु हविर्द्रव्ये तिलाज्यं हविरुच्यते ।

अनुके चाञ्जनद्रव्ये घृतमेवाञ्जनं विदुः ॥

सङ्ख्यानुक्तौ सहस्रं स्याद्रव्यानुक्तौ घृतं तथा ।

समिधानुक्तविषये पालाशः परिकीर्तिताः ॥

तथा ।

लाजादिहोमो हस्तेन साङ्गुलेन विधीयते ।

समित्पुष्पफलादीनां होमः स्यान्मृगमुद्रया ॥

द्रवद्रव्यैः श्रुवः प्रोक्तो मन्त्रतन्त्रविशारदैः ।

इति होमद्रव्यप्रमाणानि ।

बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैचित्र्यचित्रामृत-

स्रोतःशालिनि संनिबन्धनसरित्त्वंभेदसम्भ्यर्हितम् ।

सन्मुक्तोपमयुक्तिभाजि दशमो रम्यस्तरङ्गोऽगमत

सर्वोर्वीपतिनेतृनिर्मितपुरश्चर्यार्णवेऽस्मिन् नवे ॥

इति श्रीमन्महाराजधिराजश्रीप्रतापसिंहसाहविरचिते पुरश्चर्यार्णवे सरस्वत्यादि-
मन्त्रपुरश्चरणपूर्वकगायत्र्यादिवैदिकमन्त्रपुरश्चरणनिरूपणं नाम दशमस्तरङ्गः ।

अथ दुर्गामन्त्रभेदास्तत्पुरश्चरणविशेष- षाश्च निरूप्यन्ते ।

तथा च (शारदातिलके)

ततो दुर्गामनुं वक्ष्ये दृष्टादृष्टफलप्रदम् ।

माया त्रिः कर्णबीजाढ्यो भूयोऽसौ सर्गवान् भवेत् ॥

पञ्चान्तकः प्रतिष्ठावान् मारुतो भौतिकासनः ।

तारादिहृदयान्तोऽयं मन्त्रो वस्वक्षरात्मकः ॥

ऋषिश्च नारदश्छन्दो गायत्रं देवता मनोः ।

दुर्गा समीरिता सन्निर्दुरितापन्निवारिणी ॥

नमस्कारवियुक्तेन मूलमन्त्रेण साधकः ।

द्रामाद्यैः सह कुर्वीत षडङ्गानि यथाविधि ॥

मथ ध्यानम् ।

सिंहस्था शशिखेखरामरकतप्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः

शङ्खं चक्रधनुःशराँश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ।

आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरत्नाञ्जीरणन्नूपुरा

दुर्गादुर्गतिहारिणी भवतु वो रत्नोल्लसत्कुण्डला ॥

मथ पुरश्चरणम् ।

वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं तिलैर्मधुरलोलितैः ।

पयोऽन्धसा वा जुहुयात् तत्सहस्रं जितेन्द्रियः ॥

इति दुर्गामन्त्रः ।

अथ महिषमर्दिनीमन्त्रः ।

तत्रैव ।

भान्तं वियत्सनयनं श्वेतो मर्दिनि ठहयम् ।

अष्टाक्षरी समाख्याता विद्या महिषमर्दिनी ॥

अयं मन्त्रो मायाप्रणवाद्यन्यतमबोजाढ्यो नवाक्षरो भवति ।

तदुक्तं (कुलचूडामणिविभ्वसारादौ)

त्रैलोक्यबीजभूतान्ते सम्बोधनपदं ततः ।

सृष्टिसंहारकौ वर्णौ विद्यामहिषमर्दिनी ॥

प्रणवाद्यां अपेक्षित्यां मायाढ्यां वा जपेत् सुधीः ।

बधूबोजादिकां वाऽपि कवचाढ्यां जपेत् तथा ॥

(शारदायाम्)

महिषहिंसिके हुँ फट् हृदयं परिकीर्तितम् ।

महिषशत्रो सार्षि हुँ फट् शिरोऽङ्गं समुदाहृतम् ॥

महिषं द्वेषय द्वन्द्वं हुँ फडन्तः शिखामनुः ।

महिषं हनयुग्मान्ते देवि हुँ फट् तनुच्छदम् ॥

महिषान्ते सूर्दिनि हुँ फडन्तं शस्त्रमीरितम् ।

मन्त्रैरेतैर्जातियुक्तैः पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

गारुडोपलसन्निभां मणिमौलिकुण्डलमण्डितां

नौमि भालविलोचनां महिषोत्तमाङ्गनिषेदुषीम् ।

चक्रशङ्खकृपाणखटकबाणकार्मुकशूलकाँ-

स्तर्जनीमपि बिभ्रतीं निजबाहुभिः शशिशेखराम् ॥

पुरश्चरणम् ।

अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रैस्तिलैः शुभैः ।

सुहुयादिति शेषः ।

इति महिषमर्दिनीमन्त्रः ।

अथ शूलनीमन्त्रः ।

तत्रैव ।

ज्वलज्वलपदस्यान्ते शूलनीति पदं वदेत् ।

दुष्टग्रहं हुमन्त्रान्ते वह्निजायावधिर्मनुः ॥
 पञ्चभिर्दशभिः प्रोक्तो ग्रहशत्रुविनाशनः ।
 ऋषिदीर्घतया प्रोक्तः ककुच्छन्द उदाहृतम् ॥
 शूलिनी देवता प्रोक्ता समस्तसुरवन्दिता ।
 दुर्गे हृद्गदे शीर्षे विन्ध्यवासिनि तच्छिखा ॥
 असुरान्ते मर्दिनी स्याद्युद्धपूर्वप्रिये पुनः ।
 त्राशयद्वितयं वर्म देवसिद्धसुपूजिते ॥
 नन्दिनी स्याद्रक्षयुगं महायोगेश्वरी क्रमात् ।
 शूलिन्याद्या हुँ फडन्ताः पञ्चाङ्गमनवः स्मृताः ॥

अथ ध्यानम् ।

अध्यारूढां मृगेन्द्रं सजलजलधरश्यामलां हस्तपद्मैः
 शूलं बाणं कृपाणीमरिजलजगदाचापपाशान् वहन्तीम् ।
 चन्द्रोत्तंसां त्रिनेत्रां चतसृभिरसिना खेटकान् बिभ्रतोभिः
 कन्याभिः लेख्यमानां प्रतिभटभयदां शूलिनीं भावयामि ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

मनुमेनं जपेन्मन्त्री वर्णलक्षं विचक्षणः ।
 सर्पिषाऽऽज्येन होमस्तु तद्दशांशमितो भवेत् ॥

इति शूलिनोमन्त्रः ।

अथ *वनदुर्गामन्त्रः ।

उत्तिष्ठपदमाभाष्य पुरुषि स्यात् पदं ततः ।
 पितामहः सनेत्रे नः स्वपिषि स्याद्भयं च मे ॥
 समुपस्थितमुच्चार्य यदि शक्यमनन्तरम् ।
 अशक्यं वा पुनस्तन्मे वदेद्भगवतिं ततः ॥

* प्रायः सर्वेषु पुस्तकेषु वनदुर्गेत्यत्र नवदुर्गेत्युपलभ्यते ।

शमयाम्निवधूः सप्तत्रिंशद्वर्णात्मको मनुः ।
 ऋषिरारण्यकदलन्दोऽप्यत्यनुष्टुबुदाहृतम् ॥
 देवता वनदुर्गा स्यात् सर्वदुर्गविमोचनी ।
 षडभिश्चतुर्भिरष्टाभिरष्टाभिः षडभिरिन्द्रियैः ॥
 मन्त्राणैरङ्गकल्पितः स्याज्जातियुक्तैर्यथाक्रमम् ।

अथ ध्यानम् ।

सौवर्णाम्बुजमध्यगां त्रिनयनां सौदामिनोसन्निभां
 शङ्खं चक्रवराभयानि दधतीमिन्दोः कलां बिभ्रतीम् ।
 ग्रैवेयाङ्गदहारकुण्डलधरामाखण्डलाद्यैः स्तुतां
 ध्यायेद्विन्ध्यनिवासिनीं शशिमुखीं पार्श्वस्थपञ्चाननाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा जपेच्छक्षत्रतुष्कं तद्वशांशतः ।
 जुहुयाद्धविषा मन्त्री शालिभिः सर्पिषा तिलैः ॥
 इति वनदुर्गामन्त्रः ।

अथ नवदुर्गात्मकचामुण्डामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि चामुण्डाया महामनुम् ।
 नवदुर्गात्मकं यस्य सेवनाद्भुक्तिमुक्तयः ॥
 सुरथो यत्प्रसादेन राज्यं प्राप्याभवन्मनुः ।
 संसारबन्धनिर्णाशि ज्ञानमाप्तं समाधिना ॥
 मार्कण्डेयपुराणोक्तं चरितत्रितयं स्तवः ।
 जपाद्यस्य फलं दद्यात् तं मनुं वच्मि साम्प्रतम् ॥
 वाग्लज्जाकामबीजानि चामुण्डायै पदं वदेत् ।
 विच्चे नवार्णमन्त्रोऽयं शक्तिमन्त्रोत्तमोत्तमः ॥
 ब्रह्मविष्णुमहेशास्तु मुनयोऽस्य प्रकीर्तिताः ।

गायत्र्युणिगनुष्टुप् च छन्दस्त्रयमुदीरितम् ॥
 देवताऽस्य महाकाली महालक्ष्मीः सरस्वती ।
 नन्दा शाकम्भरी भीमा शक्तित्रयमुदाहृतम् ॥
 तिस्रोऽस्य शक्तयो दुर्गा आमरी रक्तदन्तिका ।
 अग्निवायुभगास्तत्त्वं प्राग्वदृष्यादिकं न्यसेत् ॥

तथा ।

ततः षडङ्गं कुर्वीत विभक्तैर्मूलवर्णकैः ।
 एकनैकेन चैकेन चतुर्भिर्युग्मकेन च ॥
 ममस्तेनैव मन्त्रेण कुर्यादङ्गानि षट् क्रमात् ।

अथ ध्यानम् ।

ततो देवीत्रयं ध्यायेत् कालिकाध्यानमुच्यते ।
 दशास्यां दशपादां च दशहस्तां विधिस्तुताम् ॥
 इन्द्रनीलद्युतिं खड्गं चक्रं शङ्खं शिरः शरान् ।
 दक्षहस्तेषु दधतीं गदां शूलं भुशुण्डिकाम् ॥
 परिधं च धनुर्वामे दधतीं ब्रह्मसंस्तुताम् ।
 मधुकैटभनाशार्थं सालङ्कारां त्रिवीक्षणाम् ॥

तन्त्रान्तरेऽपि ।

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिधान् शूलं भुशुण्डिं शिरः
 शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ।
 नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां
 यामस्तौच्छयिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥
 इति चासुण्डामन्त्रः ।

अथ महालक्ष्मीध्यानम् ।

(मेरुतन्त्रे)

ततो ध्यायेन्महालक्ष्मीं महिषासुरमर्दिनीम् ।

समस्तदेवतातेजोजातां पद्मासनस्थिताम् ॥

अष्टादशभुजामक्षमालां पद्मं च शायकान् ।

खड्गं वज्रं गदां चक्रं दक्षहस्ते कमण्डलुम् ॥

शङ्खं च दधतीं वामे शक्तिं च परशुं धनुः ।

चर्मदण्डौ सुरापात्रं घण्टां पाशं त्रिशूलकम् ॥

अन्यत्रापि ।

अक्षस्रक्परशू गदेषुकुलिशान् पद्मं धनुः कुण्डिकां

दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।

शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां

सेवे गौरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥

अथ सरस्वतीभ्यानम् ।

(मेरुतन्त्रे)

सरस्वतीं ततो ध्यायेच्छरच्चन्द्रसमप्रभाम् ।

शङ्खं च मुशलं चक्रं बाणान् दक्षेषु बिभ्रतीम् ॥

घण्टां शूलं हलं चापं वामहस्तेषु बिभ्रतीम् ।

गौरीदेहसमुद्भूतां नृणामानन्ददायिनीम् ॥

आधारभूतां जगतः शुम्भादिकविमर्दिनीम् ।

अधिष्ठात्रीं तृतीयस्य चरित्रस्य स्मरेत् सदा ॥

तन्त्रान्तरेऽपि ।

घण्टाशूलहलानि शङ्खमुशले चक्रं धनुः शायकं

हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुशुक्लप्रभाम् ।

गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-

पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥

अथ पुराणम् ।

सितपक्षतिमारभ्य चाष्टम्यन्तमिषस्य यः ।

जपेच्छं मनं होमं खाद्यैस्त्रिमधुराप्नुतैः ॥
 प्रत्यहं पूजयेद्देवीं चण्डोमाद्यन्तयोः पठेत् ।
 विप्रान् गुरुन् समाराध्य वाञ्छितं लभते द्रुतम् ॥

अथ जयदुर्गामन्त्रः ।

(शारदायाम्)

तारो दुर्गेयुगं रक्तमन्यद्दान्तौ सलोचनौ ।
 द्विष्टान्ता जयदुर्गेयं विद्या वेद्या दशाक्षरी ॥
 तारादिदुर्गे हृदयं दुर्गे शिर इतीरितम् ।
 दुर्गायै स्याच्छिखा वर्म भूतरक्षिणि कीर्तितम् ॥
 तारादिदुर्गेयुगलं रक्षिण्यस्त्रमुदीरितम् ।

अथ ध्यानम् ।

कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिवद्धेन्दुरेखां
 शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्धहन्तीं त्रिनेत्राम् ।
 सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा परयन्तीं
 ध्यायेद्दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

*बाणलक्षं जपेन्मन्त्रं घृतेन जुहुयात् ततः ।
 दशांशं संस्कृते बहौ ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥

इति दुर्गाप्रकरणम् ।

अथ दुर्गाहोत्सवविधिः प्रदर्श्यते ।

(बृहत्सिद्धान्तसारे)

आश्विनस्य सिते पक्षे नानाविधमहोत्सवैः ।
 प्रसादयेयुः श्रीदुर्गां चतुर्वर्गफलार्थिनः ॥

(कालिकापुराणे)

दुर्गातन्त्रेण मन्त्रेण कुयुर्दुर्गामहोत्सवम् ।

* वर्णलक्षमिति क्वचित् पाठः ।

महानवम्यां शरदि वलिदानं नृपादयः ॥
 आश्विनस्य तु या शुक्ला भवेद्दुर्गाष्टमी तिथिः ।
 मूर्त्तिभेदैर्महादेवी पूजां गृह्णाति भूतये ॥
 कन्यासंस्थे रवौ वत्स शुक्लामारभ्य नन्दकाम् ।
 अयाची त्वथ नक्ताशी एकाशी त्वथ* वाय्वदः ॥
 प्रातःस्नायी जितद्वन्द्वस्तिकालं शिवपूजकः ।

महानवम्यामिति ।

तदुक्तं (देवीपुराणे)

आश्विने शुक्लपक्षे तु सप्तम्यादितिथित्रये ।
 महाशब्दः प्रयोक्तव्यो नान्यत्रेति विनिश्चयः ॥

आरभ्येति । शुक्लं प्रतिपदमारभ्येत्यर्थः । अन्नद इति । ब्राह्मणान् भोजयित्वेत्यर्थः ।
 वाय्वद इति पाठे तु वायुमक्ष इत्यर्थः । जितद्वन्द्व इति । शीतोष्णादिसहिष्णुरित्यर्थः ।
 शिवपूजक इत्यत्र एकशेषो बोद्धव्यः ।

(रुद्रयामले)

एकोत्तराभिवृद्ध्या तु नवमी यावदेव हि ।
 चण्डीपाठं जपेच्चैव जापयेद्वा विधानतः ॥

तथा ।

एवं चतुर्वेदविदो विप्रान् सर्वान् प्रसादयेत् ।
 तेषां च वरणं कार्यं वेदपारायणाय वै ॥

तन्त्वान्तरे ।

वीररात्र्यादिषु श्रेष्ठा महारात्रिर्महेश्वरि ।
 उपोष्य पूजयेत् तेषां दुर्गां दुर्गार्त्तिनाशिनीम् ॥

वीररात्र्यादयः प्रोक्ताः (शक्तिसङ्ग्रहे)

वीररात्रिर्महारात्रिः कालरात्रिस्तथैव च ।
 महारात्रिर्घोररात्रिः क्रोधरात्रिस्तथैव च ॥

* त्वथ वाऽन्नद इति वा० पा० ।

तथैव चाचला रात्रिस्तारात्रिस्तथैव च ।
 शिवरात्रिर्दिव्यरात्रिर्दारुणा च यथाक्रमात् ॥
 कथ्यते परमेशानि शृणु सावहिता भव ।
 चतुर्दश्यां संक्रमे च कुलक्षे कुलवासरैः ॥
 अर्धरात्रे यथायोगो वीररात्रिः प्रकीर्तिता ।
 शुक्लाष्टमी चाश्विनस्य नवरात्रं तु तस्य वै ॥
 महारात्रिर्महेशानि कालरात्रिं शृणु प्रिये ।
 दीपोत्सवचतुर्दश्यां त्वमाया योग एव तु ॥
 कालरात्रिर्महेशानि ताराकालीप्रियङ्गुरी ।
 जन्माष्टमी महेशानि मोहरात्रिः प्रकीर्तिता ॥

तथा ।

चैत्रे मासि नवम्यां च शुक्लपक्षे तु भूसुते ।
 क्रोधरात्रिर्महेशानि तारारूपा भविष्यति ॥
 मासि मार्गशिरे प्राप्ते कृष्णाष्टम्यां महेश्वरि ।
 महाकालस्वरूपा च घोररात्रिः प्रकीर्तिता ॥
 प्राप्ते फाल्गुनके मासे कृष्णैकादशिकां तु या ।
 भृगुभौमयुता चेत् स्यादचलारात्रिरीरिता ॥
 ज्यैष्ठी या दशमी शुद्धा भृगुवासरसंयुता ।
 दशयोगसमायुक्ता तारा चैकादशी यदि ॥
 सा तिथिर्दिव्यरात्रिश्च कीर्तिता परमेश्वरि ।
 ज्यैष्ठो या दशमी शुद्धा दशयोगसमन्विता ॥
 वटुकस्य तिथिः प्रोक्ता वटुकोत्पत्तिकारिणी ।
 अमा भौमसमायुक्ता संक्रमेण समन्विता ॥
 कुल-ऋक्षसमायुक्ता ग्रहणं यदि चेद्भवेत् ।

तारारात्रिस्तु संप्रोक्ता भाग्यादेव तु लभ्यते ॥
 फाल्गुने कृष्णपक्षे तु ह्यर्धरात्रे भृगोः शिवे ।
 शिवरात्रिस्तु संजाता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥
 अमा भृगुसमायुक्ता सूर्यग्रहणयुग्यदि ।
 अपराह्णे यदा योगो मृतसंजीविनी तिथिः ॥
 ज्ञानदानादिहोमान्तमनन्तफलदं भवेत् ।
 अष्टमी चैत्रमासीया संक्रमेण समन्विता ॥
 सिद्धिरात्रिरिति ख्याता ताराकालीसमा कलौ ।
 तृतीया माधवे शुद्धा कुलवारक्षसंयुता ॥
 दारुणा कीर्तिता देवी सर्वसिद्धीश्वरी परा ।

कुलवारादयश्च ।

रविश्चन्द्रो गुरुः सौरिश्चत्वारस्तेऽकुला मताः ।
 भौमशुक्रौ कुलाख्यौ तु बुधवारः कुलाकुलः ॥
 द्वितीया दशमी षष्ठी कुलाकुलमुदाहृतम् ।
 विषमश्चाकुलाः सर्वाः शेषाश्च तिथयः कुलाः ॥
 वारुणाद्राभिजिन्मूलं कुलाकुलमुदाहृतम् ।
 कुलानि समधिष्ण्यानि शेषभान्यकुलानि च ॥

इति (रुद्रायामले) प्रोक्ताः

तथा ।

अष्टमी प्रतिमासं तु कृष्णपक्षस्य पार्वति ।
 भौमयुक्ता तथा ऋक्षयुक्ता वा केवला च वा ॥
 देवीरात्रिरिति ख्याता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।

ऋक्षयुक्ता कुलक्षयुक्ता ।

तथा ।

बुधाष्टमी महेशानि प्रतिमासं तु या भवेत् ।

विष्णुरात्रिरिति ख्याता भाद्रे मासि विशेषतः ॥

तत्रैव (नवरात्रनिर्णये)

नवशक्तिसमायुक्तं नवरात्रं तदुच्यते ।

एकैव देवदेवेशि नवधा परिनिष्ठिता ॥

शयनं बोधनाख्यं च नवरात्रं द्विधा भवेत् ।

शयनं चैत्रमासीयमाश्विनस्थं च बोधनम् ॥

द्वयोस्तु समुपोष्यैव सर्वसिद्धिं लभेन्नरः ।

निराहारी फलाहारी त्वेकभक्तो जलव्रतः ॥

नक्तभोजी हविष्याशी यथाशक्ति समाचरेत् ।

अथ देवीपूजोपयुक्तमण्डपलक्षणं (देवीपुराणे)

ऐशाने पूर्वभागे वा सिद्ध्यर्थं मनसः प्रियम् ।

देवीगृहं प्रकर्त्तव्यं सर्वलक्षणलक्षितम् ॥

दश द्वादश वाऽऽरभ्य यावद्धस्तशतं भवेत् ।

(भविष्योत्तरे)

दुर्गागृहं प्रकर्त्तव्यं चतुरस्रं सुशोभनम् ।

रहस्यं स्वस्तिकाद्यैश्च चर्चितं वस्त्रमण्डितम् ॥

दीपमालापरिक्षिप्तं द्वारदामोपशोभितम् ।

गौरमृद्गोमयाभ्यां च लिप्तं शस्तं समीरितम् ॥

तन्मध्ये वेदिका कार्या चतुर्हस्ता समा शुभा ।

तस्यां सिंहासनं सौम्यं कम्बलाजिनसंयुतम् ॥

तत्र दुर्गां प्रतिष्ठाप्य सर्वलक्षणसंयुताम् ।

सर्वदेवमयीं प्रौढयौवनोन्मादशालिनीम् ॥

भुजैश्चतुर्भीं रुचिरैर्दशभिर्वा विभूषिताम् ।

तप्तहाटकवर्णाङ्गीं त्रिनेत्रां शशिशैखराम् ॥

पीताम्बरपरीधानां नीलकौशेयसंयुताम् ।
 ग्रैवेयहारकेयरत्नपूराभरणान्विताम् ॥
 नानारत्नविचित्रेण मुकुटेन विराजिताम् ।
 अनेककुसुमाकीर्णकपर्देन विराजिताम् ॥
 नितम्बबिम्बसन्नद्धकिङ्किणीक्वणनादिनीम् ।
 शूलचक्रदण्डशक्तिवज्रचापासिधारिणीम् ॥
 घण्टाक्षमालाकरकपानघात्रलसत्कराम् ।
 तदग्रे छिन्नशिरसं महिषं रुधिराप्लुतम् ॥
 निःसृतार्धतनुं कण्ठनालाच्चर्मासिधारिणम् ।
 देवीकरधृतग्रीवं शूलेनोरसि ताडितम् ॥
 दैत्यं करालदंष्ट्रास्यं विद्युत्कपिशमूर्धजम् ।
 नागपाशेन विक्षिप्तं हर्यक्षेणाभिविद्रुतम् ॥
 वमदुधिरवक्त्रेण धुन्वतोऽर्धं शटारुषा ।
 ऊर्ध्वलाङ्गूलदण्डेन देव्यधिष्ठानशोभिना ॥
 सर्वतो मातृचक्रेण सेव्यमानां सुरैस्तथा ।
 पूजयेत् प्रयतो देवीं नरो नियममास्थितः ॥

स्थापने विशेष उक्ते (देवोपुराणे)

याम्यास्या शुभदा दुर्गा पूर्वास्या जयवर्धिनी ।
 पश्चिमाभिमुखो नित्यं न स्थाप्या सौम्यदिङ्मुखी-रति ॥

(मत्स्यपुराणे)-कदशभुजाध्यानं यथा ।

कात्यायन्याः प्रवक्ष्यामि मूर्त्तिं दशभुजां तथा ।
 त्रयाणामपि देवानां धर्मकामार्थकारिणीम् ॥
 जटाजूटसमायुक्तामर्धेन्दुकृतलक्षणाम् ।
 नेत्रत्रयसमायुक्तां पद्मेन्दुसदृशाननाम् ॥

अतसीपुष्पवर्णाभां सुप्रतिष्ठां सुलोचनाम् ।
 नवयौवनसम्पन्नां सर्वाभरणभूषिताम् ॥
 सुचारुदशनां तद्वत्पीनोन्नतपयोधराम् ।
 त्रिभङ्गस्थानसंस्थानां महिषासुरमर्दिनीम् ॥
 त्रिशूलं दक्षिणे दद्यात् खड्गं चक्रं क्रमादधः ।
 तीक्ष्णं बाणं तथा शक्तिं वामतोऽपि निबोधत ॥
 खेटकं पूर्णचापं च पाशमङ्कुशमूर्ध्वतः ।
 घण्टां वा परशुं चापि वामतः सन्निवेशयेत् ॥
 अधस्तान्महिषं तद्वह्निशिरस्कं प्रदर्शयेत् ।
 शिरश्चेदोद्भवं तद्वह्निशिरस्कं खड्गपाणिनम्* ॥
 सपाशं वामहस्तेन धृतकेशं च दुर्गया ।
 वमद्गुधिरवक्त्रं च देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत् ॥
 देव्यास्तु दक्षिणं पादं समं सिंहोपरिस्थितम् ।
 किञ्चिदूर्ध्वं तथा वाममङ्कुष्ठं महिषोपरि ॥
 स्तूयमानं च तद्रूपममरैः सन्निवेशयेत् ।

अथ षोडशमुजाध्यानम् (कालिकापुराणे)

योगनिद्रा महामाया जगद्धात्री जगन्मयी ।
 भुजैः षोडशभिर्युक्ता भद्रकालीति विश्रुता ॥
 क्षीरोदस्योत्तरे तीरे बिभ्रती विपुलां तनुम् ।
 अतसीपुष्पवर्णाभा ज्वलत्काञ्चनकुण्डला ॥
 जटाजूटमखण्डेन्दुमुकुटत्रयभूषिता ।
 नागहारेण सहिता स्वर्णहारविभूषिता ॥

* खड्गपाणिकमित्यत्र खड्गपाणिनमिति सर्वपुस्तकेषूपलभ्यते ।

शूलं खड्गं च शङ्खं च चक्रं बाणं तथैव च ।
 शक्तिं वज्रं च दण्डं च नित्यं दक्षिणबाहुभिः ॥
 बिभ्रती सततं देवी विकाशिनयनोज्ज्वला ।
 खेटकं चर्म चापं च पाशं चाङ्कुशमेव च ॥
 घण्टां परशुं मुशलं बिभ्रती वामपाणिभिः ।
 सिंहस्था नयनै रक्तवर्णैस्त्रिभिरभिज्ज्वला ॥
 शूलेन महिषं भित्त्वा तिष्ठन्ती परमेश्वरी ।
 वामपादेन चाक्रम्य तत्र देवी जगन्मयी ॥

अष्टादशभुजाध्यानं प्रागेवोक्तम् ।

अथ चण्डिकाध्यानं तत्रैव ।

धम्मिल्लसंयतकचा विधोश्चाधोमुखी कलाम् ।
 केशान्ते तिलकस्योर्ध्वे दधती सुमनोहरा ॥
 मणिकुण्डलसंघृष्टगण्डा मुकुटमण्डिता ।
 सज्ज्योतिःकर्णपूराभ्यां कर्णावापर्य सङ्गता ॥
 सुवर्णमणिमाणिक्यनागहारविराजिता ।
 सदा सुगन्धिभिः पद्मैरम्लानैरतिसुन्दरी ॥
 मालां बिभर्त्ति ग्रीवायां रत्नकेयूरधारिणी ।
 मृणालायतवृत्तैस्तु बाहुभिः कोमलैः शुभैः ॥
 राजन्ती कङ्कुकोपेता पीनोन्नतपयोधरा ।
 क्षीणमध्या पीतवस्त्रा त्रिवलीमध्यभूषिता ॥
 शूलं वज्रं च बाणं च खड्गं शक्तिं तथैव च ।
 ऊर्ध्वादिक्रमतो देवी दधती वामपाणिभिः ॥
 सिंहस्योपरि तिष्ठन्ती व्याघ्रचर्मणि कौशिकी ।
 बिभ्रती रूपमतुलं ससुरासुरमोहनम् ॥

अथ सर्वमङ्गलाध्यानं (देवीपुराणे)

ब्रह्मोवाच ।

अवतारे समालेन कथिता सर्वमङ्गला ।

प्रतिमालक्षणं सम्यक् कथयामि यथा भवेत् ॥

सिंहपद्मासना सौम्या जटामुकुटमण्डिता ।

शूलाक्षसूत्रवरदा कमण्डलुकरा शुभा ॥

चतुर्भुजा समाख्याता तथा चाष्टभुजां शृणु ।

वरदं चाभयं खड्गमक्षसूत्रं च दक्षिणे ॥

दर्पणं शूलचापं च चतुर्थे खेटकं भवेत् ।

एवं चाष्टभुजा देवी मङ्गला सर्वमङ्गला ॥

अथ देवीबोधनकालनिर्णयः । तत्रैकस्या एव महिषमर्दिन्या अष्टादशभुजादिध्या-
नभेदेन बोधनकाल उक्तो (महाधर्वणसंहितायाम्)

अष्टादशभुजा दुर्गा उग्रचण्डेति या स्मृता ।

सैवेयं षोडशभुजा भद्रकालीति गीयते ॥

दशभिर्बाहुभिर्युक्ता सैव कात्यायनी स्मृता ।

भिन्नध्याना कल्पभेदान्महिषासुरमर्दिनी ॥

कालभेदे बोधनीया सा दुर्गोत्सवकर्मणि ।

आश्विनासितपक्षे तु दिवा सम्पूज्य भक्तिः ॥

खड्गे नवम्यामाद्र्यामुग्रचण्डां प्रबोधयेत् ।

‘आश्विनासितपक्ष’ इति पौर्णमास्यन्ताश्विनकृष्णपक्ष इत्यर्थः ।

तथा च ।

आर्द्राक्षत्रयुक्तायां पूर्णमास्यन्ताश्विनकृष्णपक्षे नवम्यामुग्रचण्डां दिवा खड्गे संपूज्य
प्रबोधयेदिति वाक्यार्थः ।

(लिङ्गपुराणे देवीपुराणेऽपि)

यद्वा त्वष्टादशभुजां महामायां प्रपूजयेत् ।

कन्यायां कृष्णपक्षे तु पूजयित्वाऽऽर्द्रभेदे दिवा ॥

देवीबोधनकालनिर्णयः ।

नवम्यां बोधयेद्देवीं गीतवादित्रनिःस्वनैः ।
 शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु देवीकेशविमोचनम् ॥
 प्रातरेव तु पञ्चम्यां स्नापयेयुः शुभैर्जलैः ।
 सप्तम्यां पत्रिकापूजा अष्टम्यां चाभ्युपोषणम् ॥
 पूजा च जागरश्चैव नवम्यां विधिवद्वलिः ।
 संप्रेषणं दशम्यां तु क्रीडाकौतुकमङ्गलैः ॥

(महाकालसंहितायामपि)

येऽष्टादशभुजां देवीमुग्रचण्डाभिधां प्रिये ।
 पिपूजयिष्वो मर्त्यास्तदुपासकतामिताः ॥
 तथाऽश्विननवम्यां वै कृष्णायां सुसमाहिताः ।
 करवाले बोधयेयुर्मध्याहे शङ्खनिः स्वनैः—इति ॥

मध्याह्नुस्तु पञ्चधा विभक्तदिनतृतीयांशः ।

अहस्तु प्रथमो भागः प्रातःकाल इति स्मृतः ।
 द्वितीयः सङ्गवः प्रोक्तो मध्याह्नुस्तु तृतीयकः ॥

अपराह्नुश्चतुर्थः स्यात् सायाह्नुः पञ्चमः स्मृतः—इति वचनात् ।

शङ्खनिःस्वनैरित्युपलक्षणम् । शङ्खादिनानाविधवाद्यनिःस्वनैरित्यर्थः ।

अत्र यस्मिन् दिने नवम्यां दिवाद्रात्रालाभस्तत्रैव बोधनं कार्यम् । दिनद्वये नवम्यां दिवाद्रात्रालाभे तु युग्माविधिवत्कयलादष्टमीविद्यायामेव नवम्यां बोधनं कार्यम् । एवमा-
 द्रात्र्या अलाभेऽपि युग्मादरेणैव व्यवस्येति वर्षाक्रियाकौमुदीकृतः ।

वस्तुतस्तु—

मध्याहे शङ्खनिःस्वनैः—इति महाकालवचनान्मध्याह्नस्य बोधनकालत्वप्रतीतेस्तद्या-
 प्यैव निर्णयः ।

कर्मणो यस्य यः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः—इति
 बृहद्याज्ञवल्क्योक्तेः । दिनद्वये मध्याह्नव्याप्तौ तदव्याप्तौ नक्षत्रेण निर्णयः । नक्षत्रस्य
 दिनद्वये प्राप्तावप्राप्तौ च युग्मादरः ।

युग्मावक्यानुक्तानि (निगमे)

युग्माग्नियुगभूतानां षण्मुन्योर्वसुरन्धयोः ।

रुद्रेण द्वादशीयुक्ता चतुर्दश्या च पूर्णिमा ॥
 प्रतिपदा त्वमावास्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम् ।
 व्यस्तमेतन्महादोषं प्रवदन्ति मनीषिणः—इति ।

अत्र युग्मादिरन्धान्ताः शब्दा द्वितीयादिनवम्यन्ततिथिवाचकाः । रुद्र एका-
 दशी । शेषं रूपष्टम् ।

यद्यपि युग्माग्नीत्यादिवाक्यानि शुक्लपक्षपरतयोकानि (निर्णयामृतादौ) पूर्णिमाया
 अमाप्रतिपद्युग्मस्य च कृष्णपक्षेऽस्मन्मवादिति । तथाऽपि पूर्वविद्धैव नवमी पक्षयो-
 रुभयोरपीति माधवोक्तेः ।

कृष्णपक्षेऽपि नवम्यष्टमोयुतैव ग्राह्या ।

निबन्धव्याख्याकृतस्तु । चतुर्दश्या च पूर्णिमा—इत्यत्र त्रयोदश्या चतुर्दशी—इति
 पाठस्य स्मृत्यन्तरे श्रवणादेतानि युग्मवाक्यानि पक्षद्वयपराणीत्याहुः ।

निर्णयसिन्धुकृतेऽपि अमा प्रतिपद्युग्मात् कृष्णपक्षलिङ्गात् पक्षद्वयपरमिदं तत्तद्वि-
 शेषवाक्यैः कृष्णे तिथिविशेषेऽपीकृत इति व्याजहुः ।

पूजयित्वाऽऽर्द्धमे दिवा—इत्यार्द्रानक्षत्रयोगाभिधानं तु नक्षत्रयोगस्य प्रशस्ततया
 सम्भवाभिप्रायम् ।

तथा च मध्याह्नव्यापिन्यां नक्षत्रां सति सम्भवे आर्द्रानक्षत्रयुक्तायां बोधनं कुर्या-
 दिति निष्कर्षः ।

तिथिनक्षत्रयोर्योगे द्वयोरेवानुपालनम् ।

योगाभावे तिथिग्राह्या देव्याः पूजनकर्मणि—इति निर्णयसिन्धु-
 धृतदेवलोकेः ।

तत्तन्नक्षत्रयोगस्तु फलाधिक्याय कल्पते ।

भानामलाभे तु पुनः प्रशस्ता केवला तिथिः—इति महाका-
 लवचनाच्च ।

निर्णयामृतकृतस्तु—

पूजयित्वेति पूजनक्रियायाः समानकर्तृकयोः पूर्वकाल इति क्त्वाप्रत्ययस्य
 नवम्यां बोधयेदिति बोधनक्रियाकालान्नवमीरूपात् पूर्वकालेऽष्टमीरूपे विधानात् क्त्वा-
 प्रत्ययसामर्थ्यादेवाष्टम्यां पूजनं नवम्यां बोधनमित्याहुः ।

पूजयित्वाऽष्टमीदिने—इति * निर्णयसिन्धौ स्थितम् ।

* काचित्कः पाठः—इति ४ पु० पा० ।

यत् तु आर्द्रानक्षत्रयुक्तायामष्टम्यां पूजनं नवम्यां प्रबोध इति मतं तत् तुच्छम् ।

आश्विनासितपक्षस्य नवमी या शिवर्क्षयुक् ।

बोधयित्वेश्वरीं तस्यां शरदर्चनमारभेत्—इति नवम्यामेवार्द्रा-
मक्षत्रयोगस्य महाकालेनाभिहितत्वात् ।

एधमाश्विनकृष्णनवमीमारभ्याश्विनशुक्लत्रयोदशपर्यन्तमुत्सवोऽष्टादशभुजापक्षः ।

अथ षोडशभुजापक्षः । (महाधर्वणसंहितायाम्)

इषे शुक्लप्रतिपदि भुजैः षोडशभिर्युताम् ।

बोधयित्वा भद्रकालीं नवम्यन्तं प्रपूजयेत् ॥

(महाकालसंहितायामपि)

प्रतिपद्येव शुक्लायां बोधयित्वा सुरेश्वरीम् ।

अभ्यर्चयेन्नवाहानि तन्त्रपौराणिकक्रमैः ॥

केवलपौराणिकक्रमेणोत्सवे कर्त्तव्ये तु आश्विनकृष्णचतुर्दश्यामेव षोडशभुजाया
बोधनं कार्यम् ।

तदुक्तं (कौमुद्या लिङ्गपुराणे च) ।

यदा तु षोडशभुजां महामायां प्रपूजयेत् ।

दुर्गातन्त्रेण मन्त्रेण विशेषं तत्र वै शृणु ॥

कन्यायां कृष्णपक्षे तु एकादश्यामुपोषितः ।

द्वादश्यामेकभक्तं च नक्तं कुर्यात् परेऽहनि ॥

चतुर्दश्यां महामायां बोधयित्वा विधानतः ।

गीतवादित्रनिर्घोषैर्नानैवेद्यवेदनैः ॥

अयाचितं बुधः कुर्यादुपवासे परेऽहनि ।

एवमेव व्रतं कुर्याद्यावद्वै नवमी भवेत्—इति ॥

कलशस्थापनं तु प्रतिपद्येवोक्तं (यामले)

प्रतिपद्येव कर्त्तव्यं कलशस्थापनं तथा—इति ।

पृथोपक्षे तु सप्तम्यां कलशस्थापनं वक्ष्यते ।

अथाश्विनशुक्लप्रतिपन्निर्णयते । सा च दुर्गोत्सवोपवासादिषु परधिद्धा ग्राह्या ।

या चाश्वयुजि मासे स्यात् प्रतिपद्भद्रयाऽन्विता ।

शुक्ला समार्चनं तस्यां शतयज्ञफलप्रदम् ॥

इति (देवीपुराणे) परविद्धायाः प्राशस्त्यविधानात् ।

पूर्वविद्धा तु या शुक्ला भवेत् प्रतिपदाश्विनी ।

नवरात्रव्रतं तस्यां न कार्यं शुभमिच्छता ॥

देशभङ्गो भवेत् तत्र दुर्भिक्षं चोपजायते ।

नन्दायां दर्शयुक्तायां यत्र स्यान्मम पूजनम् ॥

इति (मार्कण्डेयदेवीपुराणयोः) पूर्वविद्धानिषेधाच्च ।

(रुद्रयामले)

अमायुक्ता सदा चैव प्रतिपन्निन्दिता मता ।

तत्र न स्थापयेत् कुम्भं दुर्भिक्षं जायते ध्रुवम् ॥

प्रतिपत् सद्वितोया तु कुम्भारोपनकर्मणि ।

(कल्पतरुः)

कुहूकाद्योपसंयुक्तां वर्जयेत् प्रतिपत्तिथिम् ।

राज्यनाशाय सा प्रोक्ता निन्दतं तत्र पूजनम् ॥

(देवीपुराणे)

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि त्रिण्डिकापूजनक्रमम् ।

आश्विनस्य सिते पक्षे प्रतिपत् सुशुभे दिने-इत्युपक्रम्य ॥

शुद्धे तिथौ प्रकर्त्तव्यं प्रतिपच्चोर्व्वगामिनी ।

आद्यास्तु नाडिकास्त्यक्त्वा षोडश द्वादशापि वा ॥

अपराह्णे च कर्त्तव्यं शुद्धसन्ततिकाङ्क्षिभिः ।

अपराह्णे योगिन्याः प्राशस्त्यं तु द्वितीयदिने प्रतिपदोऽभावे बोध्यम् । तत्रैव (उड्डा-
मरतन्त्रे) च देवीवचनम् ।

अमायुक्ता न कर्त्तव्या प्रतिपत् पूजने मम ।

सुहूर्त्तमात्रा कर्त्तव्या द्वितीयादिगुणान्विता ॥

आद्याः षोडश नाडीस्तु लब्ध्वा यः कुरुते नरः ।

कलशस्थापनं तत्र अरिष्टं जायते ध्रुवम् ॥

(शक्तिसङ्ग्रहे)

घटिकाः षोडश त्याज्या आद्याः प्रतिपदस्तु याः ।

कलशस्थापनं कुर्यात् कल्याणं जायते तदा ॥

तथा ।

अमायुक्ता न कर्त्तव्या प्रतिपत् कालिकार्चने ।

(स्कान्दे)

वर्जनीया प्रयत्नेन अमायुक्ता तु पार्थिव ।

द्वितीयादिगुणैर्युक्ता प्रतिपत् सर्वकामदा ॥

(देवीपुराणे) देवीदत्तः ।

यो मां पूजयते भक्त्या द्वितीयादिगुणान्विताम् ।

शरत्प्रतिपदं ज्ञात्वा सोऽश्रुते सुखमव्ययम् ॥

यदि कुर्यादमायुक्तप्रतिपत्स्थापनं मम ।

तस्य शापायुतं दत्त्वा वंशनाशं करोम्यहम् ॥

आग्रहात् कुरुते यस्तु प्रथमे स्थापनं मम ।

तस्य सम्पद्दिनाशः स्याज्ज्येष्ठपुत्रश्च नश्यति ॥

अमायुक्ता न कर्त्तव्या प्रतिपच्चण्डिकार्चने ।

धनार्थिभिर्विशेषेण वंशहानिश्च जायते ॥

न दर्शकलया युक्ता प्रतिपच्चण्डिकार्चने ।

उदये द्विमुहूर्त्ताऽपि ग्राह्या सोदयगामिनी ॥

अन्यत्रापि ।

परविद्धा च या शुद्धा भवेत् प्रतिपदाश्चिनी ।

तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यादमायुक्तां विवर्जयेत्-इति ॥

नन्वेतानि वाक्यानि-

प्रतिपदा त्वमावास्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम्-इति ।

एतद्युग्मवाक्यविरुद्धानिति चेन्न । युग्मवाक्यस्यैतत्प्रतिपदमिन्नप्रतिपद्विषयत्वात् ।

*अत एषोक्तं (देवीपुराणे)

शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।

सा कार्योदयगामिन्यां न तत्र तिथियुग्मता-इति ॥

न च-

संपूज्य नवदुर्गां च नक्तं कुर्यात् समाहितः ।

नवरात्राभिधं कर्म नक्तव्रतमिदं स्मृतम् ॥

इति (स्कान्दात्) अस्य नवरात्रव्रतस्य नक्तव्रतत्वे सिद्धे-

नक्तव्रतेषु सर्वेषु रात्रियोगः प्रशस्यते ।

इति वचनात् पूर्वविद्धैव ग्राह्येति वाच्यम् ।

अनायुक्ता न कर्त्तव्या इत्यादिविशेषवचनैर्निषेधात् ।

किञ्च न केवलं नक्तव्रतमेतत् ।

एवं च विन्ध्यवासिन्यां नवरात्रोपवासतः ।

एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च ॥

पूजनीया जनैर्देवी स्थाने स्थाने पुरे पुरे ।

(हेमाद्रौ भविष्ये) व्रतचतुष्टयस्योक्तत्वात् ‡ ।

अत एषोक्तं कमलाकरभट्टैः पाक्षिकनक्तानुवादोऽयमिति § ।

अत्र केचिद् (वदयामलदेवीपुराणादि-) वचनेषु कलशस्थापनश्रुतेस्तदेव प्रथमदिने निविष्टं न तूपनासादि तस्य प्रतिपदा त्वमावास्या-इति युग्मवादयात् ।

शुक्लपक्षे दशविद्धा इति माध्वशेकश्च पूर्वदिने प्राप्तेऽस्य वाधे प्रमाणाभावादि-
स्याहुः ।

वस्तुतस्तु-

* तदुक्तं नन्दिकेश्वरपुराणे इति ४ पु० पा० ।

† स्वशक्यत्याचितं नरः इति ४ पु० पा० ।

‡ नानाव्रताभिधानात् इति ४ पु० पा० ।

§ अत्रोपवासादिवहुकर्माभिधानेऽपि देवोपूजनमेव प्रधानमिति रहस्यविदः
इति ४ पु० पा० ।

अत्र वैशीषायाः प्राधान्येन पूर्वदिने तस्या निषेधात् तदङ्गोपवासादावपि परैव
ग्राह्येति युक्तम् ।

अत एवोक्तं वैश्वेनेन ।

व्रतोपसनियमे घटिकैकाऽपि या भवेत् ।

सा तिथिस्तद्विने पूज्या विपरोता तु पैतृके-इति ॥

अत्र घटिकाशब्दो मुहूर्त्तपर इति नौखाः ।

कमलाकरभट्टारतु-

घटिकैकेति मुहूर्त्तमात्रा कर्तव्येति च द्विमुहूर्त्तस्तुतिः । तेनैवपि की प्रतिपद्द्वि-
हूर्त्ता ग्राह्या । अन्यथा द्विमुहूर्त्तविधेर्वैयर्थ्यापत्तेः ।

यदा तु पूर्वदिने संपूर्णा शुद्धा भूत्वा परदिने दधति तदा संपूर्णत्वादमायोग-
भावाच्च पूर्वैव ग्राह्या ।

यानि च द्वितीययोगनिषेधकानि वचनानि के चित् पठन्ति तान्यपि शुद्धाधिक-
निषेधपराणीत्याहुः ।

द्विमुहूर्त्तत्रयसोऽपि त्रिमुहूर्त्तस्तावकत्वात् परदिने यदि प्रतिपन्मुहूर्त्तत्रयान्पूना
तदा दशयुक्ताऽपि पूर्वैव ग्राह्येति समयप्रकाशकतः ।

वस्तुतस्तु-

त्रिमुहूर्त्तविधिर्मुख्यः । द्विमुहूर्त्तविधिस्त्वनुकल्पः ।

द्विमुहूर्त्ताऽपि कर्त्तव्येति वक्ष्येणापि-शब्दस्योक्तश्रुत्* ।

परदिने प्रतिपदेऽभावे त्वमायुक्ताऽपि सा ग्राह्या ।

अमायुक्ताऽपि कर्त्तव्या यदि न स्यात् परेऽहनि ।

इति निबन्धव्याख्यालिखितवचनात्† ।

अत्र के चित् ।

वृद्धौ समाप्तिरष्टम्यां हासेऽमाप्रतिपन्निशि ।

प्रारम्भो ‡नवचण्डयास्तु नवरात्रमतोऽर्थवत् ॥

* एवं प्रकृतेऽपि उदये द्विमुहूर्त्ताऽपीत्यपि-शब्दोक्तद्विमुहूर्त्तविधिरनुकल्पो बोध्यः
इति ४ पु० पा० ।

† ग्रन्थान्तरोदाहृतानि दशयुक्तप्रतिपद्विधायकानि वचनान्येतद्विषयाण्येव इति
४ पु० पा० ।

‡ नवरात्रस्य ४ पु० पा० ।

इति (निर्णयसिन्धु-) धृत (देवीपुराणोक्त-) वचनाञ्जवरात्रशब्दो नवाहोरत्रपरः* ।
अमायुक्तप्रतिपन्निषेधकानि वाक्यानि तु तिथिद्वासाभावविषयाणीत्याहुः ।
अयं च नेपालदेशसम्प्रदायः ।

वस्तुतस्तु-

॥ न रात्रौ स्थापनं कार्यं न च कुम्भाभिषेचनम् ।

इति (मत्स्य-) पुराणीयवचनेन रात्रौ कलशस्थापनादिनिषेधात् प्रारम्भो नवच-
ण्ड्यास्तित्वति पूजनादेरपूर्वकत्वाभिधानाच्च नवमिदिनैर्नवावृत्तिचण्डीपाठविषयमेतद्व-
चनम् ।

नवरात्रशब्दस्तु नवतिथिपर एव ।

प्रारम्भो नवरात्रस्य इत्यादौ तु कर्मणि लाक्षणिकः । तस्य नवाहोरात्रपरत्वे तु
तिथिद्वासवृद्ध्योर्न्यूनाधिकत्वापत्तेः ।

अत एवेकं (निर्णयामृते देवीपुराणे च)

तिथिवृद्धौ तिथिहासे नवरात्रमपार्थकम् ।

अष्टरात्रेण दोषोऽयं नवरात्रतिथिक्षये ॥

अष्टरात्रेण दोषो हि पूर्णं मुक्त्वा तु पूजनम् ।

तिथिहासेऽपि कर्त्तव्यं प्रतिपद्याश्विने सिते-इति ॥

प्रतिपदि चित्रावैधृतियोगनिषेध उक्तस्तत्रैव ।

त्वाष्ट्रवैधृतियुक्ता चेत् प्रतिपच्चण्डिकार्चने ।

तयोरन्तर्विधातव्यं कलशारोपणं गृहे-इति ॥

तथा ।

आश्विने प्रतिपत् पूर्णा शुद्धा या तु भवेन्नृप ।

आरभ्यं नवरात्रं स्याद्वित्वा चित्रां च वैधृतिम् ॥

यत्र तु चित्रावैधृत्योः परिहारेण प्रतिपन्न लभ्यते तदा कात्यायनः ।

प्रतिपद्याश्विने मासि नरो वैधृतिचित्रयोः ।

* इति (निर्णयसिन्धु-) धृत-(देवीपुराणे(-) कवचनात् ।

तिथेः क्षये तथा वृद्धौ पूर्ववैधो न दृश्यति ।

इति ताम्रिकवचनाच्च इति ४५० पा० ।

आद्यपादौ परित्यज्य प्रारभेन्नवरात्रकम् ॥

(रुद्रयामलेऽपि)

वैधृतौ पुत्रनाशः स्याच्चित्रायां धननाशनम् ।

तस्मान्न स्थापयेत् कुम्भं चित्रायां वैधृतौ तथा ॥

सम्पूर्णा प्रतिपदेवि चित्रायुक्ता यदा भवेत् ।

वैधृत्या वाऽपि युक्ता स्यात् तदा मध्यन्दिने रवौ ॥

अभिजित् तु मुहूर्त्तं यत् तत्र स्थापनमिष्यते ।

(भविष्ये)

चित्रावैधृतिसम्पूर्णा प्रतिपच्चेद्भवेन्नृप ।

त्याज्या हंशास्त्रयस्स्वाद्यास्तुरीयांशे तु पूजनम् ॥

चित्रादियुक्ताऽपि द्वितीयायुता चेन्न दुष्टेत्युक्तं (दुर्गास्तवे)

भद्रान्विता चेत् प्रतिपत् तु लभ्यते विरुद्धयोगैरपि सङ्गता सती ।

सा वै पराङ्गे विबुधैर्विधेया श्रीपुत्रराज्यादिविवृद्धिहेतुः-इति ॥

अथ यववपनविधिः (रुद्रयामले)

ज्ञानं माङ्गलिकं कृत्वा ततो देवीं प्रपूजयेत् ।

शुभाभिर्मृत्तिकाभिश्च पूर्वं कृत्वा तु वेदिकाम् ॥

यवान् वै वापयेत् तत्र गोधूमैश्चापि संयुतान् ।

तन्त्रान्तरे ।

वालुका गृह्य यत्नेन नदीनदसमुद्भवाः ।

वेदीं कुर्यात् प्रयत्नेन चतुरस्यां शुभावहाम् ॥

द्विहस्ता चोत्तमा वेदी मध्यमा सार्धहस्तका ।

अधमा हस्तमात्रा च न्यूनाधिक्यं न कारयेत् ॥

भूरसीति पठेन्मन्त्रं देवीं संस्पृश्य मानवः ।

अपामग्निं समुच्चार्य प्रोक्षयेच्चन्द्राम्भसा ॥

तन्मध्ये विलिखेन्मन्त्रं जयदुर्गाख्यमुत्तमम् ।

८२४
२४५७
७१८ १/२७५७

तत्रावाह्य यजेद्देवीमष्टादशभुजां पराम् ॥
 पञ्चोपचारैः संपूज्य दिक्पालाँश्चापि पूजयेत् ।
 पश्चान्नवार्णमनुना पूजयेदस्त्रमातृकाम् ॥
 संशोध्य यवराशिं च यवोऽसीति मत्तुं पठन् ।
 प्रक्षिपेद्देदिकामध्ये वक्ष्यमाणमत्तुं जपन् ॥
 ॐ यव त्वं यवरूपोऽसि यज्ञार्थे निर्मितो विधेः ।
 देवानां तृप्तिकृद्यस्मात् तस्मात् त्वं वरदो भव ॥
 जयन्ती मङ्गलाकाली भद्रकाली कपालिनी ।
 दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥

तथा ।

भेरोमृदङ्गडमरूघण्टापटहनिःस्वलैः ।
 महोरसवं प्रकुर्वीत यवारोपणकर्मणि ॥
 प्रसृतं च दशम्यां वै भद्राभद्रं विचारयेत् ।

विचारस्तन्यत्र ।

सम्यक् समुद्रता दीर्घा ऋजवश्चाङ्कुराः शुभाः ।
 अतुद्रताः कुण्ठिताया ह्रस्वाः शुष्काश्च भङ्कुराः ।
 कीटाखुभुक्ताः शटिताः विषमाश्चाशुभाः स्मृताः ॥
 संप्रहान्तरलिखितविचारान्तरं तु प्रमाणाभासमूलकत्वादुपेक्षितम् ।
 (रुद्रयामले)

तत्र संस्थापयेत् कुम्भं विधिना मन्त्रपूर्वकम् ।
 सौवर्णं राजतं वाऽपि ताम्रं मृण्मयमेव वा ॥
 (मात्स्व्ये)

न रात्रौ स्थापयेत् कुम्भं न च कुम्भाभिषेचनम् ।
 विष्णुः ।

भास्करोदयमारभ्य यावत् तु दश नाडिकाः ।

प्रातःकाल इति प्रोक्तः स्थापनारोपणादिषु ॥

कलशस्थापनविधिस्तु दशभुजापक्षे वक्ष्यते (वैष्णविकल्पे)

नैमित्तिकोक्तविधिना नवाहानि प्रपूजयेत् ।

उपोषणं तथाऽष्टम्यां प्रभूतवलिदानकम् ॥

नवम्यामाचरेद्धीमान् दशम्यां तु विसर्जयेत् ।

पुत्रिणा तु महाष्टम्यामुपजासो न कार्यः ।

उपवासं महाष्टम्यां पुत्रवान् न समाचरेत् ॥

यथा तथा संयतारमा व्रती देवीं प्रपूजयेत् ।

इति (कालिकापुराणात्) नवम्यां प्रभूतवलिदानमित्यनेनाष्टम्यादौ पूजावलिदानमायाति ।

अष्टम्यां वलिदानेन पुत्रनाशो भवेद्भुवम् ।

इति नामशूल्यं वचनं केचित् पठन्ति । तत्र मूलं मृग्यम् । समूलत्वामिधाने तु प्रभूतवलिदाननिषेधकमिति मन्तव्यम् । पूजावलिदानविसर्जनादिविहितेन व्यक्तीभविष्यति ।

अथ दशभुजापक्षः (कालिकापुराणे)

बोधयेद्विल्वशाखासु षष्ठ्यां देवीं फलेषु च ।

सप्तम्यां विल्वशाखां तामाहृत्य प्रतिपूजयेत् ॥

पुनः पूजां तथाऽष्टम्यां विशेषेण समाचरेत् ।

जागरं च स्वयं कुर्याद्वलिदानं महानिशि ॥

प्रभूतवलिदानं च नवम्यां विधिवच्चरेत् ।

जपहोमसमायुक्तो भोजयेद्भुवै कुमारिकाः ॥

ध्यायेद्दशभुजां देवीं दुर्गातन्त्रेण पूजयेत् ।

विसर्जनं दशम्यां तु कुर्याद्भुवै शविरोत्सवैः ॥

फलेषु इति । फलयुक्तासु शाखास्वित्यर्थः । दुर्गातन्त्रेणेति दुर्गातन्त्रसंज्ञकेन पूर्वोक्तजयदुर्गामन्त्रेणेत्यर्थः । शविरोत्सवैरिति । शविरोचितवेशभाषाधूलिकर्दमद्विधौ पादिभिरित्यग्रे स्फुटीभविष्यति । षष्ठ्यां च सायाह्ने सन्ध्यायां वा बोधनं कार्यम् ।

सायाह्ने विल्वशाखायां षष्ठ्यां देवीं प्रबोधयेत् ।

इति महाकालोक्तेः ।

षष्ठ्यां विल्वतरौ बोधं सायंसन्ध्यासु कारयेत् ।

इति (भविष्यपुराणाच्च)

पञ्चधा विभक्तिदिनपञ्चमांशः सायाह्नः । सन्ध्या तु दिनरात्र्योः सन्धौ मुहूर्तः ।
(देवीपुराणे)

ज्येष्ठानक्षत्रयुक्तायां षष्ठ्यां विल्वाभिमन्त्रणम् ।

सप्तम्यां मूलयुक्तायां पत्रिकायाः प्रवेशनम् ॥

इति नक्षत्रयोगे फलातिशयः ।

मूलाभावेऽपि सप्तम्यां केवलायां प्रवेशयेत् ।

इति (नन्दिकेश्वरपुराणात्)

एवं च ।

ज्यैष्ठ्यायामेव सम्बोध्य मूलनैव प्रवेशयेत् ।

पूर्वोत्तराभ्यां सम्पूज्य श्रवणान्ते विसर्जयेत् ॥

इत्यादौ सर्वत्रापि तिथिनक्षत्रयोगे फलभूयस्त्वं वेदितव्यम् । पूर्वोत्तराभ्यामिति ।
पूर्वाषाढान्वितायामष्टम्यामुत्तराषाढान्वितायां नवम्यामित्यर्थः । नक्षत्रानुरोधेन पत्रि-
काप्रवेशनं विसर्जनं च रात्रौ न कर्तव्यम् ।

ऋक्षयोगानुरोधेन रात्रौ पत्रीप्रवेशनम् ।

विसर्जनं चरेद्यस्तु सराष्ट्रः स विनश्यति ॥

इति (दुर्गाभक्तिरत्नङ्गणी-) लिखितवचनात् ।

तथा च ।

अन्त्यपादो निशाभागे श्रवणस्य यदा भवेत् ।

तदा देव्याः समुत्थानं दशम्यां दिनभागतः ॥

इति क्वचनात् श्रवणान्ते विसर्जयेत् इत्यादिवचनानुरोधेन रात्रौ विसर्जनं न कार्य-
मिति तत्रैवाक्तम् । अत्र दिनत्रये तिथित्रयविहितपूजात्रयं प्रायिकं कदा चित् तिथिद्वा-
सवशाद्द्वारायां पूजात्रयं कदा चित् तिथिवृद्धिवशाद्दिनचतुष्टयेन पूजात्रयं तिथित्रय-
लाभे तु निर्विवादेव व्यवस्था ।

व्रती प्रपूजयेद्देवीं सप्तम्यादिदिनत्रये ।

द्वाभ्यां चतुरहोभिर्वा ह्रासवृद्धिवशात् तिथेः ॥

इति (भविष्य-) वचनात्

अस्मिन् पक्षेऽपि प्रतिपदादिदिनकृत्याभ्युक्तानि (भविष्ये)

केशसंस्कारद्रव्याणि प्रदद्यात् प्रतिपत्तिथौ ।

पट्टडोरं द्वितीयायां केशसंयमहेतवे ॥

दर्पणं च तृतीयायां सिन्दूरालक्तकं तथा ।

मधुपर्कं चतुर्थ्यां तु तिलकं नेत्रमण्डनम् ॥

पञ्चम्यामङ्गरागं च शक्याऽलङ्करणानि च ।

षष्ठ्यां विल्वतरौ बोधं सायंसन्ध्यासु कारयेत्—इति ॥

अत्र च पत्रिकाप्रवेशात् पूर्वद्युः सायंकाले षष्ठ्यभावे तत्पूर्वदिनेऽधिवासनं कार्यम् । पष्ठ्याः सायंकालेऽत्यन्तासत्त्वे त्वधिवासनलोपः ।

षष्ठ्यां सायं प्रकुर्वीत विल्ववृक्षेऽधिवासनम् ।

इति (कल्पतरु-) वचनादिति । एवं देवीबोधनेऽपि व्यवस्था ।

वस्तुतस्तु—

अनेकतन्त्रबोधितकर्त्तव्यताकस्य देवीबोधनस्यावश्यकतया यस्मिन् दिने सायंस-
मये षष्ठीलाभस्तत्रैव बोधनम् । उभयदिने सन्ध्यायां षष्ठीलाभे तु युग्मादरेण व्यवस्था ।
दिनद्वये सन्ध्यायां षष्ठ्यभावे तु प्रदोषादिसमये षष्ठ्यामिति कौमुदीकृन्मतमेवादर-
णीयम् । गौणकालव्याप्तेः सत्त्वात् ।

तदुक्तम् ।

स्वकालादुत्तरः कालो गौणः स्यात् पूर्वकर्मणः—इति ।

अत एव सायं श्रुतिः फलार्थातिशयार्था न तु कर्मलोपः कार्यं इत्याचार्यचू-
डामणिः ।

प्रदोषस्तु—

त्रिमूहर्त्तः प्रदोषः स्याद्भानावस्तं गते सति ।

इति (मदनरत्ने) व्यासेनोक्तः ।

वत्सेन तु—

प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिकाद्वयमिष्यते—इत्युक्तम् ।

एवं च पत्रिकाप्रवेशादौ सप्तम्युदयव्यापिन्येव ग्राह्या न तु षण्मुन्योरिति युग्मवा-
प्यात् पूर्वविद्धा ।

युगाद्या वर्षवृद्धिश्च सप्तमी पार्वतीप्रिया ।

रवेरुदयमिच्छन्ती न तत्र तिथियुग्मता ॥

इति (कृत्यतत्त्वार्णव-) लिखितवचनात् ।

भगवत्याः प्रवेशादिविसर्गान्ताश्च याः क्रियाः ।

तिथाबुदयगामिन्यां सर्वास्ताः कारयेद्बुधः ॥

इति (तिथितत्त्व-) लिखित-(नन्दिकेश्वरपुराणाच्च)

अधिवासनं तु पत्रिकाप्रवेशाव्यवहितपूर्वदिन एव सायंकाले षष्ठ्यभावेऽपि कार्यम् ।

ज्येष्ठा वा यदि वा षष्ठी सायंकाले न चेद्भवेत् ।

सायमेव तथाऽपि स्याद्विल्ववृक्षेऽधिवासनम् ॥

पूर्वां षष्ठीं सनक्षत्रां सायं प्राप्तामपि त्यजेत्-इति ।

तथा च ज्योतिःशास्त्रम् ।

पूर्वाह्णे नवपत्रिका शुभकरी सर्वार्थसिद्धिप्रदा

आरोग्यं धनदा करोति विजयं चण्डीप्रवेशे शुभा ।

मध्याह्णे न च पीडनं क्षयकरी नृणामघोरावहा

सायाह्णे वधबन्धमादिकलहं सर्वक्षतिं दास्यति ॥

सप्तम्यामस्तगायां यदि विशति गृहं पत्रिका श्रीफलाद्या

राज्ञः सप्ताङ्गराज्यं जनसुखसहितं हन्ति मूलानुरोधात् ।

तस्मात् सूर्योदयस्थां नरपतिशुभदां सप्तमीं प्राप्य देवीं

भूपालो वेशयेत् तां सकलजनहितां राक्षसक्षं विहाय ॥

मत्स्यसूक्तवचनात् ।

पत्रीप्रवेशात् पूर्वद्युः सायाह्णे विल्ववासिनीम् ।

चण्डीमामन्त्रयेद्द्विद्वान्नात्र षष्ठीपुरस्किया ॥

इति (ब्रह्माण्डपुराणाच्च)

विल्वनिमन्त्रणपत्रिकाप्रवेशादिविधिरग्रे वक्ष्यते ।

एकादशपक्षोऽपि (कालिकापुराणे)

यस्त्वेकस्यामथाष्टम्यां नवम्यामथ साधकः ।

पूजयेद्दरदां देवीं महाविभवविस्तरैः-इति ॥

(रुद्रयामले)

मूलनक्षत्रमारभ्य पूजनीया सरस्वती ।
पूजयेत् प्रत्यहं देवीं यावद्वैष्णवमृक्षकम् ॥
नाध्यापयेन्न च लिखेन्नाधीयीत कदा चन ।
पुस्तके स्थापिते देवि विद्याकामो द्विजोत्तमः ॥

(संग्रहे)

आश्विनस्य सिते पक्षे मेधाकामः सरस्वतीम् ।
मूलेनावाहयेद्देवीं श्रवणेन विसर्जयेत् ॥

अथ महाष्टमी निर्णीयते । सा च पूजापवासादिषु पर्युता ग्राह्या । वसुरन्ध्रयोरिति युग्मवाक्यात् ।

शुक्लपक्षेऽष्टमी चैव शुक्लपक्षे चतुर्दशी ।
पूर्वविद्धा न कर्त्तव्या कर्त्तव्या ऽपरसंयुता ॥

इति (ब्रह्मवैवर्त्ताच्च)

तथा च (स्मृतिसंग्रहे)

शरन्महाष्टमी पूज्या नवमीसंयुता सदा ।
सप्तमीसंयुता नित्यं शोकसन्तापकारिणी ॥
जम्भेन सप्तमीयुक्ता पूजिता तु महाष्टमी ।
इन्द्रेण निहतो जम्भस्तस्मादानवपुङ्गवः ॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सप्तमीमिश्रिताऽष्टमी ।
वर्जनीया प्रविज्ञाय मनुजैः शुभकाङ्क्षिभिः ॥
सप्तमीं शल्यसंयुक्तां मोहादज्ञानतोऽपि वा ।
महाष्टमीं प्रकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते ॥
सप्तमी कलया यत्र परतश्चाष्टमी भवेत् ।
तेन शल्यमिदं प्रोक्तं पुत्रपौत्रक्षयप्रदम् ॥

तथा ।

पुत्रान् हन्ति पशून् हन्ति हन्ति राष्ट्रं सराजकम् ।

हन्ति जातानजाताँश्च सप्तमीसहिताऽष्टमी ॥

(निर्णयामृते) स्मृत्यन्तरवचनम् ।

नाष्टमी सप्तमीयुक्ता सप्तमी नाष्टमीयुता ।

नवम्या सह कार्या स्यादष्टमी सर्वथा बुधैः ॥

तत्रैव ।

अष्टमी नवमीयुक्ता महोत्साहो महोत्सवः ।

इति (देवीपुराणे)

सप्तमी वेधसंयुक्ता यैः कृता तु महाष्टमी ।

पुत्रदारधनैर्हीना भ्रमन्तीह पिशाचवत् ॥

(भोजराजीये)

उमाया नवमी प्रोक्ता हरस्य तिथिरष्टमी ।

द्वयोरैक्ये महापुण्या उमामाहेश्वरी तिथिः ॥

(मदनरत्ने स्मृतिसमुच्चये)

सप्तमी शल्यसंविद्धा वर्जनीया महाष्टमी ।

स्तोकाऽपि सा महापुण्या यस्यां सूर्योदयो भवेत् ॥

स्तोकाऽपीति घटिकामात्राऽपीत्यर्थः । अत एव घटिकामात्राऽप्यष्टम्यौदयिकी ग्राह्या ।

व्रतोपवासनियमे घटिकैकाऽपि या भवेत् ।

इति देवलोकैरिति निर्णयसिन्धुकृतः । गौडा अप्येवमेवाहुः ।

एवं च सप्तमीवेधः कलारूपोऽप्यष्टमीवर्जनप्रयोजको न तु त्रिमुहूर्त्तैति द्रष्टव्यम् ।

समयप्रकाशादिग्रन्थकारास्तु त्रिमुहूर्त्ताऽष्टम्येव सप्तमी वर्जनप्रयोजिका न तु ततो न्यूना । स्तोकाऽपोल्यादीनि घचनान्यवयवद्वारा त्रिमुहूर्त्तं स्तुवन्ति तेनाष्टमी परदिने यदि मुहूर्त्तत्रयान्य्यूना तदा सप्तमीयुता पूर्वैव ग्राह्येत्याहुः ।

कलाकाष्टा घटिकामुहूर्त्तद्विमुहूर्त्तैर्चांसि त्रिमुहूर्त्तप्रशंसापराणीति निबन्धन्याख्याकारोऽपि वभाण ।

यत् तु-

महाष्टम्याश्चिने मासि शुक्ला कल्याणकारिणी ।

सप्तम्याऽपि युता कार्या मूलेन तु विशेषतः ॥

इति वचनं तत् परदिनेऽष्टम्यभावविषयम् ।

तदुक्तं (निर्णयामृतो देवीपुराणे)

उत्तरास्तिथयो यत्र क्षयं यान्ति नराधिप ।

तदा पूर्वाष्टमीं कुर्यादन्यथा त्वशुभं भवेत्-इति ॥

यच्च-

यदाऽष्टमीं तु सम्प्राप्य ह्यस्तं याति दिवाकारः ।

तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यान्न कुर्यादपरेऽहनि ॥

दुर्भिक्षं तत्र जानीयान्नवम्यां यत्र पूज्यते ।

इति परदिनेऽष्टमीसत्त्वेऽपि पूर्वविद्धाविधायकं वचनं तत् परदिने नवम्यभावविषयम् ।

यदा सूर्योदये न स्यान्नवमी चापरेऽहनि ।

तदाऽष्टमीं प्रकुर्वीत सप्तम्या सहितां नृप ॥

इति (स्मृतिसंग्रहात्)

यत् तु-

सप्तम्यामुदिते सूर्ये परतो याऽष्टमी भवेत् ।

तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यान्न कुर्यादपरेऽहनि ॥

इति परविद्धाष्टमीनिषेधकविश्वरूपनिबन्धवचनं तदाश्विनकृष्णपक्षनवम्यां विहिते देवोबोधने तदङ्गत्वेन कृष्णाष्टम्यां क्रियमाणदेवीपूजाविषयम् ।

कृष्णपक्षेऽष्टमी चैव कृष्णपक्षे चतुर्दशी ।

पूर्वविद्धा तु कर्तव्या परविद्धा न कुत्र चित् ॥

उपवसादिकार्येषु एष धर्मः सनातनः ।

इति कृष्णाष्टम्याः परविद्धाया एव प्राशस्त्यविधानादिति* निबन्धव्याख्याकृतः ।
निर्णयामृतोऽप्येवमाह ।

यानि च-

* इत्यापस्तम्बवचनेन कृष्णाष्टम्याः पूर्वविद्धाया एव विधानादिति । इति
४ पु० पा० ।

अहं भद्रा च भद्राऽहं नावयोरन्तरं क चित् ।
सर्वसिद्धिं प्रदास्यामि भद्रायामर्चिताऽप्यहम् ॥

तथा ।

महाष्टम्यां भगवती भद्रायामपि पूजिता ।

ददाति चायुरारोग्यं यतो भद्रास्वरूपिणी ॥

इत्यादीनि (देवीपुराण-) वचनानि तानि तु विष्टिकरणमध्ये पूजाविधानार्थानि ।

विष्टिं त्यक्त्वा महाष्टम्यां मम पूजां करोति यः ।

तस्य पूजाफलं न स्यात् तेनाहमवमानिता ॥

इति देवीवाक्यात् ।

भद्रायां भद्रकाल्याश्च मध्ये स्यादर्चनक्रिया ।

तस्माद्वै सप्तमीविद्धा कार्या दुर्गाष्टमी बुधैः ॥

इति वचनं तु पूर्वदिनेऽष्टम्यभावविषयमिति सर्वसम्मतम् ।

महाष्टमी भौमवारान्विता चेदतिप्रशस्ता ।

तदुक्तं (मदनरत्ने)

अष्टम्यामुदिते सूर्ये दिनान्ते नवमी भवेत् ।

कुजवारो भवेत् तत्र पूजनीया प्रयत्नतः-इति ॥

मूलयुक्तेयमितिप्रशस्तेत्युक्तं (स्कान्दे)

महाष्टमी मूलयुक्ता त्रैलोक्येऽपि सुदुर्लभा-इति ।

मूलयुक्ताऽपि सप्तमीविद्धा चेत् त्याज्यैवेत्युक्तं (दुर्गात्सवे)

मूलेनापि हि संयुक्ता सदा त्याज्याऽष्टमी बुधैः ।

लेशमात्रेण सप्तम्या अपि स्याद्यदि दूषिता-इति ॥

यदा तु पूर्वदिने सम्पूर्णा सती परदिने वर्धते तदा संपूर्णत्वात् सप्तमी योगाभा-
वाच्च पूर्वैव ग्राह्या न उत्तरा ।

षष्टिदण्डात्मिकायाश्च तिथेर्निष्क्रमणे परे ।

अकर्मण्यं तिथिमलं भवेदेकादशीं विना-इति स्मार्त्तवचनात् ॥

एवं च-

सप्तमी कलया युक्ता वर्जनीया महाष्टमी ।

इत्यादिवाक्यैः पूर्वविद्धाया निषेधात् परविद्धैव महाष्टमीति सिद्धम् ।
शुद्धायां तु न कश्चित् संदेहः ।

के चित् तु-

तत्राष्टम्यां भद्रकाली दक्षयज्ञविनाशिनी ।
प्रादुर्भूता महाघोरा योगिनीकोटिभिः सह ॥
अतोऽर्थं पूजनीया सा तस्मिन्नहनि मानवैः ।
त्रिसन्ध्यं पूजयेद्देवीं जपस्तोत्रपरायणः ॥

इत्यादिवाक्यविहितायां दिवातनपूजायां परविद्धाऽष्टमो ग्राह्या ।

आश्विनस्य सिते पक्षे या तु स्यात् तिथिरष्टमी ।
तस्यां रात्रौ पूजनीया महाविभवविस्तरैः ॥

इत्यादिवचनप्राप्तायां रात्रिपूजायां त्वष्टम्यां रात्रियोग एवादरणीयः ।

कर्मणो यस्य यः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः ।

तया कर्माणि कुर्वीत ह्यसवृद्धी न कारणम् ॥

इति वचनादित्याहुः । महाष्टमीकृत्यमग्रे वक्ष्यते ।

अथ महानवमी निर्णीयते । सा च पूर्वयुता ग्राह्या वसुरन्ध्रयोरिति युग्मवाक्यात् ।

अष्टम्या सहिता कार्या सा महानवमी तिथिः ।

इति (बृहत्सिद्धांतसाराच्च)

अष्टम्या सहिता रिक्ता न कदा चित् परायुता ।

इति * (लघुतिथिनिर्णये मत्स्यपुराणाच्च)

पैठीनसिरपि ।

प्रतिपन्नवमी चैव कर्त्तव्या संमुखी तिथिः ।

संमुखी सायाह्नव्यापिनी ।

(ब्रह्मवैवर्त्ते)

अष्टम्या नवमी विद्धा कर्त्तव्या फलकाङ्क्षिभिः ।

(पात्रे)

अष्टमी नवमीयुक्ता नवमी चाष्टमीयुता ।

* लघुतिथिनिर्णये यमपुराणे इति ४ पु० पा० ।

(मात्स्ये)

अष्टम्या सहिता रिक्ता प्रकर्त्तव्या सदा बुधैः ।

पूर्णायुक्तां तदा कुर्यात् का चिन्नास्त्यष्टमीयुता ॥

(*हेमाद्रौ पादो)

श्रावणी दुर्गनवमी पूर्वा चैव हुताशनी ।

पूर्वविद्धा च कर्त्तव्या शिवरात्री वलेर्दिनम् ॥

(भविष्ये)

अश्वयुक् शुक्लपक्षे तु याऽष्टमी मूलसंयुता ।

सा महानवमी नाम त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ॥

अष्टमीमूलाभ्यां युक्त्यर्थः । मूलेत्युपलक्षणम् ।

तथा च (मदनरत्ने लैङ्गे)

दुर्गापूजासु नवमी मूलाद्यृक्षत्रयान्विता ।

महती कीर्तिता तस्यां दुर्गां महिषमर्दिनीम् ॥

पूजयेदिति शेषः ।

अष्टम्या नवमी विद्धा नवम्या चाष्टमी तथा ।

मूलादिभत्रयेणाद्या त्रैलोक्येऽपि प्रपूजिता-इति ॥

अत्र मुहूर्त्तत्रयात्मको वेधो वेदितव्यः ।

तदाह पैठौनसिः ।

पक्षद्वयेऽपि तिथयस्तिथिं पूर्वां तथोत्तराम् ।

त्रिभिर्मुहूर्त्तैर्विध्यन्ति सामान्योऽयं विधिः स्मृतः-इति ॥

यद्यपि-

उदिते दैवतं भानौ पित्र्यं चास्तमिते रवौ ।

द्विस्त्रिर्मुहूर्त्तमहो यः सा तिथिर्हव्यकव्ययोः ॥

इति (हेमाद्रौ विष्णुधर्मे) मुहूर्त्तद्वयात्माऽपि वेध उक्तस्तथाऽपि प्रातरैव सः ।
सायं तु त्रिमुहूर्त्त एव वेधः ।* यद्यपि यमपुराणादिवचनानि नवमीसामान्यपराणि तथाऽपि प्रकृताः प्रकृत्या
निबन्धव्याख्यायामुदाहृतानि ।
तथा च इत्यन्यथा पा० ४ पु० ।

तदुक्तं (स्कान्दे)

यां तिथिं समनुप्राप्य यात्यस्तं पद्मिनीपतिः ।

सा तिथिस्तद्दिने प्रोक्ता त्रिमुहूर्त्तैव या भवेत्-इति ॥

सूर्योदयेऽपि द्विमुहूर्त्तत्वमनुकल्प एव ।

द्विमुहूर्त्ताऽपि कर्त्तव्या या तिथिर्वृद्धिगामिनी ।

इति दक्षेणापि-शब्दग्रहणात् ।

निर्णयसिन्धुद्वयोऽपि त्रिमुहूर्त्तयोगे पूर्वा नवमी पूर्वोक्तवचनात् ।

न कुर्यान्नवमीं तात दशम्या तु कदा चन ।

इति (स्कान्दे) परानिषेधाच्च । त्रिमुहूर्त्तयोगाभावे तु निषिद्धाऽपि परैव ग्राह्या ।

व्रतोपवासनियमे घटिकैकाऽपि या भवेत् ।

सा कार्योदयगामिन्याम् ॥

इत्यादिवचनानि नवमीभिन्नतिथिपरानि नवम्यां विशेषोक्तेरित्याहुः ।

यद्यप्येवं निर्णयः प्रामाणिकैः कृतस्तथाऽपि ।

तत्राश्वयुक्तनवमी मुहूर्त्तं वा कला यदि ।

सा तिथिः सकला ज्ञेया लक्ष्मीविद्याजयार्थिभिः ॥

इति (सौरपुराणात्)

अष्टम्यामुदिते सूर्ये दिनान्ते नवमी भवेत् ।

प्रभाते वलिदाने तु कियन्मात्राऽपि लभ्यते ॥

नवम्यां तत्र सम्पूज्य दुर्गां दुर्गार्त्तिनाशिनीम् ।

इति (सिद्धान्तसंग्रहो-दाहृतवचनात्) ।

सूर्योदये परं रिक्ता पूर्णा स्यात् परतो यदि ।

वलिदानं प्रकर्त्तव्यं तस्मिन् देशे शुभावहम् ॥

वलिदाने कृतेऽष्टम्यां *पुत्रभङ्गो भवेन्नृप ।

इति (देवीपुराणाच्च) वलिदाने परादिद्याः प्राशस्त्यमेवावगन्तव्यम् । उप-
वासे तु पूर्वैव पूर्वोक्तवचननिचयात् ।

* राष्ट्रभङ्गो-इति ४ पु० पा० ।

एकादशी च नवमी दिशा विद्धा भवेद्यदि ।

तदा वर्ज्या प्रयत्नेन गङ्गाम्भः सुरया यथा ॥

नवमी दशमी चैव नोपोष्या परसंयुता ।

इति (पाञ्चब्रह्मवैवर्त्तयोः) उपवासे परानिषेधाच्च । पूजाङ्गवलिदानमष्टम्यामपि कर्त्तव्यम् ।

अष्टम्यामधिकं देयं सप्तमीवलिदानतः ।

इति महाकालोक्तेः ।

किन्तु प्रभूतवलिदानं तत्र निषिद्धम् ।

प्रभूतवलिदानं तु न कुर्यान्नवमीं विना ।

इति भैरवोक्तेः ।

नवम्यामुदयव्यापिन्यां प्रभूतवलिदानमुक्तं (भविष्ये)

एवं हृष्टैर्निशां नीत्वा प्रभाते अरुणोदये ।

घातयेन्महिषान् मेषान् रटतो नतकन्धरान् ॥

शतमर्धशतं वाऽपि तदर्धं वा यथेच्छया-इति ।

निशामष्टमीरात्रिम् । अरुणोदयः सूर्योदय इत्यर्थः ।

सूर्योदये नवम्यां तु दद्याद्द्वलिमतन्द्रितः ।

इति तन्त्रान्तरसंवादात् ।

अरुणो भास्करोऽपि स्यात्

इति (अमरकोषाच्च)

यानि तु-

नन्दायां ज्वलते वह्निः पूर्णायां पशुघातनम् ।

भद्रायां गोकुलक्रीडा राज्यनाशाय जायते ॥

नवम्यामपराह्णे तु वलिदानं प्रशस्यते ।

दशमीं वर्जयेत् तत्र नात्र कार्या विचारणा ॥

इत्यादीनि (ब्रह्मवैवर्त्तादि-) वचनानि तानि शुद्धाधिकनिषेधपरान्नीति दिक् ।

नवमीदृश्यमग्रे वक्ष्यते ।

अथ विजयादशमी निर्णीयते । सा च देवीविसर्जनव्यतिरिक्तकर्मसु तारकोदयव्यापिनी प्राज्ञा ।

ईषत्सन्ध्यामतिक्रान्तः किञ्चदुद्भिन्नतारकः ।

विजयो नाम कालोऽयं सर्वकार्यार्थसिद्धिदः ॥

इति (ज्योतिर्निबन्धे) नारदवचनात् ।

दिनद्वये नक्षत्रोदयव्यापिन्या दशम्याः सत्त्वे पूर्जा ।

या पूर्णा नवमीयुक्ता तस्यां पूज्याऽपराजिता ।

क्षेमार्थं विजयार्थं च पूर्वोक्तविधिना नरैः ॥

नवमीशेषयुक्तायां दशम्यामपराजिता ।

ददाति विजयं देवी पूजिता जयवर्धिनी ॥

इति (हेमाद्रौ स्कन्दात्) निर्णयसिन्धुमते तूत्तश ।

दशम्यां तु नरैः सम्यक् पूजनीयाऽपराजिता ।

ऐशानीं दिशमाश्रित्य चापराह्णे प्रयत्नतः ॥

इति (स्कान्दात्) अपराह्णव्याप्तेराधिक्यात् । असत्त्वे तु एकादशमुद्भूतान्यापि-
जी ग्राह्या ।

आश्विने शुक्लपक्षे तु या भवेदशमी तिथिः ।

एकादशमुद्भूता सा ग्राह्या श्रवणसंयुता—इति धौम्योक्तेः ॥

आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्यां सर्वरात्रिषु ।

सायंकाले शुभा यात्रा दिवा वा विजयक्षणं ॥

एकादशो मुद्भूतोऽपि विजयः परिकीर्तितः ।

तत्र सर्वैर्विधातव्या यात्रा विजयकाङ्क्षिभिः ॥

इति भृगुवचनाच्च ।

दिनद्वयं तद्याप्तौ पूर्वतारकोदयव्याप्तेराधिक्यात् ।

यदा तु परदिने स्वल्पाऽपि श्रवणयुक्ता तदा यात्रायां परैवोपादेशः ।

उदये दशमी किञ्चित् संपूर्णैकादशी यदि ।

श्रवणर्क्षं यदा काले सा तिथिर्विजयाभिधा ॥

श्रवणर्क्षे तु पूर्णायां काकुत्स्थः प्रस्थितो यतः ।

उल्लङ्घयेयुः सीमानं तद्दिनर्क्षे ततो नराः ॥

इति (हेमाद्रौ) काश्यपोक्तेः ।

एषमुक्तलक्षणाया दशम्याः परदिने सत्त्वे देवीविसर्जनेऽपि परैव ग्राह्या ।

* प्रातरेव दशम्यां च श्रवणर्क्षे विसर्जने ।

विसर्जनं तु तद्दुष्टं लक्ष्मीविद्या बलक्षयम् ॥

(तिथिनिर्णये देवीपुराणे) पूर्वानिवेधात् ।

अत एव नारदः ।

सूर्योदये यदा राजन् दृश्यते दशमी तिथिः ।

आश्रिते मासि शुक्ले तु विजयां तां विदुर्बुधाः ॥

इति श्रवणाश्वितायां दशम्यां केवलायामेव दशम्यां वा विसर्जनं कार्यम् ।

तत्तन्नक्षत्रयोगे तु फलभूमा प्रजायते ।

नक्षत्राणामलाभे तु केवलायां तिथौ चरेत् ॥

इति महाकालोक्तेः ।

तिथिः शरीरं तिथिरेव कारणं तिथिः प्रमाणं तिथिरेव साधनम् ।

इति लल्लवचनाच्च ।

परदिने दशम्यसत्त्वे तु पूर्वदिन एव दशमीभागे विसर्जनं कार्यम् ।

सम्प्रेषणं दशम्यां तु क्रीडाकौतुकमङ्गलैः ।

इति (नन्दिकेश्वरपुराणात्)

स्थापनविसर्जनयोर्लक्षणमाह ।

क्रूरे च स्थापयेद्देवीं चरलग्ने तु चालयेत् ।

(महाकालसंहितायाम्)

शरदर्चाविधौ देव्याः स्थापनं च विसर्जनम् ।

चरलग्ने चरांशौ वा कुर्यात् सर्वसमृद्धये ॥

अन्यलग्नेऽन्यांशके वा विपरीतफलप्रदम् ।

इत्युक्तं तन्त्रान्तरे ।

ततो विसर्जयेद्देवीं स्तुत्वा नत्वा पुनः पुनः ।

* नक्षत्रा दशमी मिथ्या नापि देवीविसर्जनम् इति २-३-५ पु० पा० ।

श्रवणस्यान्तिमे पादे दशम्यां शावरोत्सवैः ॥

श्रवणानुरोधेन रात्रौ विसर्जनं न कर्त्तव्यमिति प्रागेवोक्तम् ।
(तिथितत्त्वे देवीपुराणे)

प्रातरावाहयेद्देवीं प्रातरेव प्रवेशयेत् ।

प्रातरेव च सम्पूज्य प्रातरेव विसर्जयेत् ॥

एतद्विसर्जनं परविद्यायामिति ज्ञेयम् ।

तथा ।

वर्षे वर्षे विधातव्यं स्थापनं च विसर्जनम् ।

तन्त्रान्तरे ।

ततोऽपराह्णे सम्पूज्य श्रवणे चापराजिताम् ।

प्रस्थानं नृपतिः कुर्यात् सामात्यबलवाहनः ॥

एतयोर्विधिरग्रे वक्ष्यते ।

प्रस्थानं च दशमीमुल्लङ्घ्य एकादशीभागे न कार्यम् ।

दशमीं यः समुलङ्घ्य प्रस्थानं कुरुते नृपः ।

तस्य तं वत्सरं राज्ये न कापि विजयो भवेत् ॥

इति (निर्णयामृते स्कान्दात्)

उदये दशमी किञ्चित्-इत्यादिकाद्यपोक्तेस्तु दशम्याः कर्मकालव्याप्तिरपि नापेक्षि-
तेति प्रतिभाति तेनेदं स्कान्दवचनं श्रवणशून्यदशमीविषयम् ।

इति दशमीनिर्णयः ।

अथाशौचे विशेषो (विश्वरूपनिबन्धे)

आश्विनस्य सिते पक्षे प्रारब्धे नवरात्रके ।

शावे शौचे समुत्पन्ने क्रियाः कार्याः कथं बुधैः ॥

सूतके वर्त्तमाने च तत्रोत्पन्नं यदा भवेत् ।

देवीपूजा प्रकर्त्तव्या पशुयज्ञविधानतः ॥

सूतके पूजनं प्रोक्तं दानं चैव विशेषतः ।

देवीमुद्दिश्य कर्त्तव्यं तत्र दोषो न विद्यते ॥

विष्णुः ।

व्रते यज्ञे विवाहे च श्राद्धे होमेऽर्चने जपे ।

प्रारब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ॥

तन्त्रेऽपि ।

सूतकेऽत्र समुत्पन्ने प्रारब्धं न त्यजेद्बुधः—इति ।

प्रारब्ध इति आरम्भश्चात्र सङ्कल्परूपः ।

सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः ।

इति विष्णुक्तेः ।

आरब्धे स्वयमेव देवीपूजादि कुर्यात् । अनारब्धे त्वग्निहोत्रादिवत् कारयितव्यमिति सर्वमतम् । रजस्वलाऽन्येन कारयेदिति विशेषवचनाभावात् ।

तदुक्तं (मात्स्ये)

अन्तरा तु रजोयोगे पूजामन्येन कारयेत्—इति ।

तत्र पूजादिकं प्रवृत्तिरूपं कर्म पुत्रादिद्वारा निर्वाह्यम् । उपवासादिकं स्वयमेव कर्तव्यं निवृत्तावशौचस्याकिञ्चित्करत्वात् ।

तत्राहाङ्गिराः ।

नियमस्था यदा नारी प्रपश्येदन्तरा रजः ।

उपोष्यैव तु ता रात्रीः स्नात्वा शेषं चरेद्व्रतम्—इति ॥

अत्र पारणाहे सूतकादिप्राप्तौ तदतिक्रम्य पारणं कुर्यादिति केचित् तदसत् ।

सूतके पारणं कुर्यान्नवम्यां होमपूर्वकम् ।

तदन्ते भोजयेद्दिप्रान् दानं दद्याच्च शक्तितः ॥

इति (रुद्रयामलो—) कवचनेन सूतकेऽपि पारणविधानात् । गौडाख्यसम्प्रदाय-मभिप्रेत्य नवम्यामित्युक्तेः ।

तदुक्तं (प्रकटयोगिनीमते)

गौडाख्यसम्प्रदाये तु नवम्यां पारणं भवेत् ।

वर्जयेत् तां दिशा विद्धां काश्मीरे सैव शोभना ॥

केरलाख्ये सम्प्रदाये दशम्यामेव पारणमिति (शक्तिसङ्गमे—)ऽप्येवम् । सैव शोभनेति काश्मीरसम्प्रदाये दशमीविद्धैव नवमी प्रशस्तेत्यर्थः । गौडसम्प्रदायिभिस्तु नवम्यां दशमीयुक्तायां पारणं न कार्यम् ।

यो मोहादशमीवेधे नवम्यां चण्डिकां यजेत् ।

पारणं च प्रकुर्याद्वै तस्य पुण्यं निरर्थकम्—इति तन्त्रैवोक्तम् ॥

यजननिषेधस्तु पूर्वदिने कर्माहंनवमीलाभे वेदितव्यः । दशम्यां पारणं कुर्यात्-इति मुण्डमालावचनं तु पुरश्चरणविषयम् । सम्प्रदायप्रभेदप्रयुक्तैककर्तव्यताभेदास्तु नव-
मतरङ्गे स्फुटीकृताः* ।

निर्णयसिन्धुकृतस्तु नवम्यां पारणं विधायकान्येतदादिवचनानि निर्मूलान्येव
समूलत्वाभिमाने तु लोहाभिसारिकपराणि तस्याष्टमीपर्यन्तमेवोक्तेः ।

नवरात्रव्रतस्य नवमीपर्यन्तकर्तव्यताकतया दशम्यामेव नियमपारणा कार्येत्याहुः ।

अथेयं शारदी पूजा नित्या । अकरणे प्रत्यवायश्रवणादिति के चित् ।

शरदागमनिमित्तकत्वाच्चैमित्तिकीत्यन्ये ।

नानाविधफलश्रुतेः काम्येत्यपरे ।

वस्तुतस्तु-

नित्यकाम्यरूपेयं न तु नैमित्तिकी ।

अन्यथा कार्यमात्रं प्रति कालस्य हेतुतया नित्यस्यापि कर्मणो नैमित्तिकत्वाप-
क्षेपित्युक्तं (महाकालसंहितायाम्)

यथा ।

अधुना कथयिष्यामि सरहस्यं विशेषतः ।

शारदीयां च वासन्तीमर्चां नानाफलप्रदाम् ॥

मनीषिणो विदधति विचारानत्र भूयशः ।

स्मृत्यध्वचारिणः सर्वे कौलिकाः सर्व एव च ॥

त्रैविध्यमध्ये किंरूपाः भवतीयं समर्हणा ।

यस्याकरणतः पापं जायते नित्यमेव तत् ॥

विधानाद्यस्य च फलं जायते काम्यमेव तत् ।

अननुष्ठानतो यस्य पापमुत्पद्यते परम् ॥

विधानाच्च फलं वाऽपि तन्नैमित्तिकमुच्यते ।

इयं या शारदी पूजा कथ्यते सा किमात्मिका ॥

के चित् काम्यां वदन्त्येनां के चिन्नैमित्तिकीमपि ।

पूर्वं फलश्रवणतः शरदागमनात् परे ॥

* द्रष्टव्यमस्यैव ग्रन्थस्य पृ० ८६६ ।

नित्यामेनामेव के चिद्ददन्ति कुलमार्गगाः ।

तथा ।

त्रिपुरघ्नाय यद्वाक्यं पुरोवाच सुरेश्वरो ।

शारदीयामिमां पूजां न करिष्यन्ति ये नराः ॥

ते पतिष्यन्ति निरये पापाः पूजापहारकाः ।

इत्यादिवाक्यान्नित्यत्वमभिधानादथ श्रुतेः ॥

घटते काम्यता चास्यास्तत्र हेतुं वदामि ते ।

अत्रापि चण्डिकावक्त्राम्बुजोद्भूतसुधासमम् ॥

वचः कलय कल्याणि काम्यताप्रतिपादकम् ।

शरत्कालीनपूजां ये कर्त्तारो भक्तिभाविताः ॥

तेषां दारान् सुतान् भोगं वित्तमारोग्यमुन्नतिम् ।

तुष्टा दास्याम्यहं शम्भो स्वर्लोके वसतिं सदा ॥

इत्थं नानाफलोल्लेखश्रवणात् काम्यताऽपि च ।

शरदागमनं हेतुमुपन्यस्यास्य ये बुधाः ॥

नैमित्तिकत्वं ब्रुवते न ते पण्डितबुद्धयः ।

कालो न स्यादुपादानकारणं कस्य वस्तुनः ॥

तदागमनहेतुत्वे नित्यस्यापि न नित्यता ।

अकृते जायते नैनः कृते च न भवेत् फलम् ॥

नैमित्तिकस्येदृशं हि ब्रूवाणैर्लक्षणं प्रिये ।

फलाव्याधायके किं नो दृश्येते वचने उभे ॥

तस्मादत्र हि विज्ञेयं नित्यकाम्यत्वमीश्वरि ।

यथा च शारदीयार्चा वासन्त्यर्चा तथैव च ॥

नानयोर्विद्यते भेदः स्वल्पोऽपि निगमादिषु ।

शारदात्सवनिदानमाह ।

आसीत् पूर्वं महापूजा वासन्त्येव जगत्त्रये ।
 रामरावणयोर्युद्धे जाते त्रेतायुगान्तरे ॥
 कालिकाङ्गीतकृत्वेन हन्तुं रामोऽशकन्न तम् ।
 ततो वै चिन्तितो भूत्वा ब्रह्मा सुरगणैर्वृतः ॥
 कालिकां बोधयामास हिमालयकृतालयाम् ।
 त्वदुपासकयोर्देवि युध्यतोर्घोरमाहवे ॥
 अस्त्रशिक्षां लाघवं च समागत्यावलोकय ।
 एवमभ्यर्थिता देवी अकाले बोधिता तथा ॥
 जगाम ब्रह्मणा सार्धं लङ्कां द्रष्टुं रणं तयोः ।
 शुक्लप्रतिपदीषस्य प्राप्ता तं देशमीश्वरी ॥
 सप्तरात्रं निराहारं महद्युद्धमहर्निशम् ।
 तयोर्दिव्यास्त्रप्रयोगसंहारपरयोरभूत् ॥
 रामः शशाक नो हन्तुं राक्षसं काल्युपासकम् ।
 स चापि नाशकद्रामं स्वयं विष्णुमुपागतम् ॥
 समीक्ष्य राक्षसो बाहुबलं देवीं तुतोष ह ।
 स्वभक्त इति कृत्वाऽस्मिन् पक्षपातं चकार च ॥
 रक्षस्यनुग्रहं दृष्ट्वा ब्रह्मा सर्वैः सुरैः सह ।
 संतुष्टाव स्तवैर्दिव्यैर्भक्त्या प्रणतकन्धरः ॥
 काकूत्या प्रणिपातैश्च नमस्कारैः स्तवैरपि ।
 तुष्टा ब्रह्माणमूचे सा हृत्स्थं वरस वरं वृणु ॥
 वरं वव्रे ततः सार्धं त्रिदशैश्च चतुर्मुखः ।
 त्वरपादयोर्भक्तमपि त्यजेनं दुष्टराक्षसम् ॥
 मय्यनुग्रहलेशेन विष्णोर्मान्यतयाऽपि च ।

कृपादृष्ट्या च देवेषु धर्मसंस्थापनाय च ॥
 त्रिलोकी जायतां सुस्था देवाः सन्तु मखाशिनः ।
 तपस्तपन्तु मुनयश्चातुर्वर्ण्यं प्रवर्त्तताम् ॥
 एष वीरजिताल्लोकाञ्छस्त्रपतश्च गच्छतु ।
 पूजां प्रवर्त्तयिष्यामि तव देव्यमरैः सह ॥
 तिथिमाद्यां समारभ्य यावद्रक्षोवधो भवेत् ।
 दिनानि नव ते पूजा भविष्यति जगत्त्रये ॥
 नवम्यां निहते वीरे रावणे विश्वकण्टके ।
 प्रीतिमुत्पादयिष्यामः प्रभूतवलिभिस्तव ॥
 अपरेऽहि दशम्यां ते नीराजनमहोत्सवम् ।
 गीतैर्नृत्यैस्तथा वाद्यैर्जलकर्मकेलिभिः ॥
 अश्लीलवेशवचनैः शस्त्रास्त्ररचनैरपि ।
 रथद्विरदवाहानां सज्जनाविधिभिस्तथा ॥
 सुराः प्रवर्त्तयिष्यन्ति मनुष्याश्च महीतले ।
 भक्तोऽयं रावणो यद्वत् पादयोस्तव कालिके ॥
 रामो भविष्यति तथा सदैव तव पूजकः ।
 मन्त्रः कोऽपि च ते देवि रामोपासितसंज्ञया ॥
 सद्यस्तव प्रीतिकरः ख्यातिं जगति यास्यति ।
 इत्युक्त्वा ब्रह्मणा काली बभूवास्य पराङ्मुखी ॥
 ततो जघान दिव्यास्तै राघवो रावणं रणे ।
 तत आरभ्य देवेशि शारद्यर्चा प्रवर्त्तिता ॥
 अत एव द्वयो कार्या वासन्ती शारदी तथा ।
 केषां चिदपि वासन्त्यां मतभेदो न विद्यते ॥

शारदां तु त्रयो भेदाः कथ्यन्ते ते मयाऽधुना ।
 आश्विनाशितपक्षस्य नवमी या शिवर्क्षयुक् ॥
 बोधयित्वेश्वरीं तस्यां शरदर्चनमाचरेत् ।
 यावत् स्यान्नवमी शुक्ला तावत् पूजा प्रवर्तते ॥
 इत्येकः पक्ष उदितो द्वितीयमवधारय ।
 प्रतिपद्येव शुक्लायां बोधयित्वा सुरेश्वरीम् ॥
 अभ्यर्चयेन्नवाहानि तन्त्रपौराणिकक्रमैः ।
 उदीरितो द्वितीयोऽयं तृतीयं कथयाम्यथ ॥
 सायाह्ने विल्वशाखायां षष्ठ्यां देवीं प्रबोधयेत् ।
 प्रातः प्रवर्तते पूजा सप्तम्यादिदिनत्रये ॥
 त्रैविध्य ईदृश्यर्चायां विवदन्ते मिथो बुधाः ।
 ब्रवीमि तत्र सिद्धान्तं छिन्नं येन तमो भवेत् ॥
 रम्भकल्पे पुरा देवी रम्भासुरतनूद्भवम् ।
 अष्टादशभुजा भूत्वा महाघोरतराकृतिः ॥
 उग्रचण्डा स्वरूपेण जघान महिषासुरम् ।
 सितेन करवालेन मृतमेनं जहौ तथा ॥
 पतितं च क्षितावस्य व्यशीर्यत कलेवरम् ।
 नीललोहितकल्पे तु पुनरेव व्यजायत ॥
 उद्वेगकृद्देवतानां तथा यज्ञविनाशकृत् ।
 इति कृत्वा महामाया भद्रकाली वपुर्धरा ॥
 सम्भूय षोडशभुजा विशिषेण शितेन हि ।
 अवधीत् तं पुनश्चापि तस्याजं गलितं भुवि ॥
 श्वेतवाराहकल्पाद्वावजायत पुनः स हि ।

जैगोषव्यप्रसादेन पूर्वजातिस्मरोऽभवत् ॥
 वारद्वयं हतं ज्ञात्वा देव्यात्मानं पुराऽसुरः ।
 स्त्रीवध्यतां च विज्ञाय स्वस्यामुष्यां जनावपि ॥
 कालायनमुनेः शापात् स्वप्नदर्शनतोऽपि च ।
 एकान्ते भक्तिमास्थाय त्रिविधां महिषासुरः ॥
 आराधयामास कालो खोदर्कपरिशुद्धये ।
 दिव्यद्वादशसाहस्रवर्षानन्तरमीश्वरो ॥
 प्रत्यक्षमागता तस्य वरं वृण्वति चाब्रवीत् ।
 ततोऽसुरः स ऊचे तां निरीक्ष्य पुरतः स्थिताम् ॥
 वरं पश्चाद्ग्रहोष्यामि देवि त्वत्तो मनोगतम् ।
 आदौ मे संशयं छिन्धि जागरूकं हृदि स्थितम् ॥
 वारद्वयं मामवधोः सुरारिरणमूर्धनि ।
 धृत्वा कां कामाकृतिं त्वमघोरामथ भीषणाम् ॥
 जन्मन्यस्मिन्नपि पुनः केनाकारेण कालिके ।
 मां हनिष्यसि दुर्वृत्तं निखिलामरकण्टकम् ॥
 निशम्येदृग्वचस्तस्य विहस्य जगदम्बिका ।
 चालयन्ती शिरः किञ्चिदुवाच मधुराक्षरम् ॥
 मदीयतादृशाकारदर्शनेन फलं तव ।
 किं भविष्यति दैत्येन्द्र किन्तु त्रासमवाप्स्यसि ॥
 दिदृक्षसे चेदथ तां करालासाकृतिं मम ।
 पश्येत्युक्त्वा जगद्धात्री विहाय ललितं वपुः ॥
 उग्रचण्डा तनूरूपं दर्शयामास दानवम् ।
 ज्वालाकरालवदनमष्टादशभुजान्वितम् ॥

दिव्यशस्त्रास्त्रकलितं मुण्डमालाभयङ्करम् ।
 विदीर्णसूक्कयुगलं घोरदंष्ट्रातिभीषणम् ॥
 चलत्सौदामिनोतुल्यरसनं नाददारुणम् ।
 तद्रूपं दितिजो वीक्ष्य न्यमोलयत लोचने ॥
 कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रत्युवाच च कालिकाम् ।
 घोरमोदृशमाकारं न शक्नोमि तवेक्षितुम् ॥
 त्रैलोक्यत्रासनं रूपं देवि संहर संहर ।
 इत्युक्त्वाऽसुरराजेन पुनः सा प्राकृतं वपुः ॥
 कृत्वा तं दर्शयामास ततः सुस्थो बभूव सः ।
 भद्रकाली वपुर्भूत्वा पुनः सा परमेश्वरी ॥
 निरीक्षयामास रूपं द्वितीयं जीवनापहम् ।
 तद्रूपदर्शनेऽप्येष पुनस्त्रासमुपेयिवान् ॥
 तस्यापि परिवृत्तौ स प्राकृतः सम्बभूव ह ।
 गतभीरथ तां देवीमुवाच दितिजाधिपः ॥
 ईदृशाकारधारिण्या कथं देवि त्वया सह ।
 समरे योद्धुमशकमहं वरमदोद्धतः ॥
 गरुत्मता सह यथा दुण्डुभस्य रणस्मृहा ।
 दावाग्निना पतङ्गानां तिमिरस्य च भास्वता ॥
 मृगाणां हरिणा चैव द्रुमाणां वायुना तथा ।
 भेकानामहिना चापि प्राणिनां शमनेन च ॥
 तद्द्वन्द्ववत्या समं मे कथमासीन्महात्रणः ।
 यदतीतमतीतं तदिदानीं ते वरत्रयम् ॥
 वृणेऽहं मम तदेहि मनोरथपदातिगम् ।

एकं सौम्याकारधरा भूत्वाऽस्मिन् जन्मनीश्वरि ॥
 त्वं मां वधिष्यसि त्राणं हेतोरध्वरभोजिनाम् ।
 द्वितीयं ते मच्छिरसि वामपादास्बुजं सदा ॥
 स्थास्यति प्राणयुक्तस्य पश्यतस्त्वन्मुखच्छविम् ।
 तृतीयं देवि यज्ञस्य भागं प्राप्नोमि कं चन ॥
 इत्येवमुक्ते महिषे वचनेन सुरारिणा ।
 उवाच सस्मितं देवी भक्तिप्रणतकन्धरम् ॥
 दैत्येन्द्र शृणु मद्वाक्यं यथार्थं मधुराक्षरम् ।
 रम्भासुरस्ते जनकस्तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ॥
 शङ्करं तोषयामास रम्भकल्पे हिमालये ।
 वच ऊचे हरस्तुष्टो महाभाग वरं वृणु ॥
 हित्वा सोऽन्यवरं वव्रे भवान् पुत्रो भवत्विति ।
 भक्त्या नियन्त्रितः कार्यगतित्वात् स मद्देश्वरः ॥
 वरं ददौ स आत्मानं पुत्राकृतमनुष्ठ्य हि ।
 तस्माज्जातो हि महिषीगर्भे त्वं काममोहितात् ॥
 साक्षात् त्वं रुद्र एवासि न सामान्या हराकृतिः ।
 तथा ।

शिवस्त्वं वरदानेन रम्भस्य सुततां गतः ।
 मन्वन्तरत्रयं साग्रं भुक्तवाँश्च जगत्त्रयम् ॥
 अतः परं न वस्तव्यं त्वया दितिजदेहिना ।
 स्वपुरं प्रति गन्तव्यं मम लोकादधः स्थितम् ॥
 कात्यायनस्य शापाच्च शिरश्छेदनहेतुकात् ।
 युक्तकाले स्थास्यति नो भक्तिरेतादृशी तव ॥
 कपोतशापादीदृक्षादित्युक्ताः पञ्च हेतवः ।

महिषायेदृशं दत्त्वा वरमुक्त्वा पुरा कथाम् ॥
 सपथ्यन्तर्दधे काली वर्षासु चपला यथा ।
 देव्यामन्तर्हितायां स सर्वं विस्मृतवान् क्षणात् ॥
 बभूव पूर्ववद्बुधो यज्ञदेवद्विजन्मनाम् ।
 प्रणष्टा भक्तिरस्यापि देव्यामव्यभिचारिणी ॥
 पूर्वदत्तमतिभ्रष्टा ज्ञानमन्तर्हितं चरेत् ।
 इति ते कथितो देवि वृत्तान्तः पूर्वसम्भवः ॥
 सिद्धान्तमनयोर्बोद्धुं रीत्या शक्या विचक्षणात् ।
 सिद्धान्तनिर्णयकृते कथिताऽऽख्यायिकाऽप्यसौ ॥
 इयं हि शारदी पूजा मूर्तिभेदात् त्रिधा मता ।
 तत्तद्ब्रव्यमधिष्ठाय नृणां गृह्णाति सार्चनम् ॥
 येऽष्टादशभुजां देवोमुग्रचण्डाभिधां प्रिये ।
 पिपूजयिष्वो मर्त्यास्तदुपासकतामिताः ॥
 तथाऽऽश्विननवम्यां वै कृष्णायां सुसमाहिताः ।
 करवाले बोधयेयुर्मध्याहे शङ्खनिःस्वनैः ॥
 खगानजान् वा महिषानेणान् वाऽन्यवलीनपि ।
 रीतिं संकलितां कृत्वा दद्युः षोडशवासरान् ॥
 एषाऽऽद्या महिषालम्भकर्तृपूजाविधिर्मतः ।
 अथ माध्यमिकः पक्ष इषस्याद्यतिथौ सिते ॥
 प्रातः पटहनिःस्वनैः सदक्कानकगोमुखैः ।
 ईश्वरीं षोडशभुजां भद्रकालीति नामिकाम् ॥
 सम्बोध्य ये पूजयेयुर्दिनानि नव वै प्रिये ।
 अपूपमोदकप्रायवलिसंकलितक्रमैः ॥

तृतीयः पक्ष ईदृक्ष उदितस्त्रिपुरारिणा ।
 अश्वयुक्सितषष्ठ्यां वै शाखायां विल्वशाखिनः ॥
 सायंकाले बोधयित्वा वाद्यैरुच्चावचोद्धतैः ।
 दुर्गादेवीमर्चयीत सप्तम्यादिदिनत्रये ॥
 दशबाहुधरां देवीं महासौन्दर्यशालिनीम् ।
 रीतिसंकलिते पात्रे विल्वपत्रस्य कीर्त्तिता ॥
 अथ वा करवीरस्य शक्त्या च महिषाजयोः ।
 स्वस्वशक्त्यनुसारेण सर्वमन्यत् प्रकीर्त्तितम् ॥
 होमो जपः कुमार्यर्चा साधकानां च भोजनम् ।
 उपोषणमथो मौनं प्रभूतफलहेतवे ॥
 हननात् खड्गबाणाभ्यां तत्र तत्र तु बोधनम् ।
 आविर्भावो विल्वतरोरत्र बोधनमाचरेत् ॥
 तत्तन्नक्षत्रलाभे तु फलभूमा प्रजायते ।
 नक्षत्राणामलाभे तु केवलायां तिथौ चरेत् ॥
 सत्यां शक्तौ चतुर्थ्यां वै देव्याः केशं विमोचयेत् ।
 तत्र पूजा विधातव्या महाविभवविस्तरैः ॥
 उद्धर्त्तनं कण्टकिकां केशबन्धनडोरकम् ।
 नखरञ्जं शलाकां च सिन्दूरालक्तकज्जलम् ॥
 सुगन्धितैलोष्णजलपिष्टातामलकादिकम् ।
 दद्याद्देव्यै विशेषेण भक्तिभावेन पार्वति ॥
 पूजायाः कथितं चात्र द्वैविध्यं मुनिपुङ्गवैः ।
 पौराणिकं तान्त्रिकं च कालिकाप्रीतिसिद्ध्ये ॥
 श्रुतध्वजाय प्राङ्मन्दिकेश्वरेण यदीरितम् ।

तद्वै बहुलविस्तारं शारदीयार्चनं मतम् ॥
यद्देव्या स्वयमाख्यातं कपिलाय महर्षये ।
तन्नातिबहुलं नातिस्वलपं मध्यममुच्यते ॥
यदौर्वेण समाख्यातं सगराय महीभृते ।
तद्विज्ञेयं सुरेशानि कनीयः शरदर्चनम् ॥
तात्रिकं बहुतन्त्रोक्तं सर्वैः स्वस्वमतागतम् ।
यो येनैव क्रमेणैतां शरदर्चां वरानने ॥
विधत्ते स समाप्नोति फलं तत्तत्क्रमेण हि ।
इयं हि पूजा द्विविधा पौराणी तान्त्रिकी तथा ॥
तान्त्रिके कौलिकी रीतिः पुराणे वैदिकी मता ।
यद्येभ्यो रोचते देवि प्रतिनन्दति ते हि तत् ॥
अथ पूजा प्रकर्त्तव्या केषु केषु स्थलेषु हि ।
तत्रोत्तरं ते वदामि शृणुष्ववहिता सती ॥
तैजसे प्रतिमा यन्त्रेऽथ वा माहेयदारवे ।
शैलेय अथ वा देवि धातवे गिरिसम्भवे ॥
विल्ववृक्षपत्रिका च घटः पूर्ववदीरितः ।
गोमयेनोपलिप्तं वा स्थण्डिलं जगदीश्वरि ॥
सिन्दूराङ्के मण्डलं वा शूलखड्गशरास्तथा ।
पुस्तकं वा चित्रपटं सर्वतोभद्र एव वा ॥
अनादिपीठं च तथा शिवलिङ्गं तथैव च ।
जलमग्निस्तथा खातनृकरोटिस्थलं शुभम् ॥
एवमादीनि चान्यानि स्थानान्यर्चनहेतवे ।
पत्रिकाश्च परिज्ञेयाः कदलीविल्वदाडिमाः ॥

हरिद्राशोककच्यौ च जयन्ती धान्यमालिनी ।

(भविष्येऽपि)

रम्भा कची हरिद्रा च जयन्ती विल्वदाडिमौ ।

अशोको मानकश्चैव धान्यानि नव पत्रिकाः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

एकाशीतिपदं चक्रं सर्वतोभद्रमण्डलम् ।

भित्तौ चित्रीकृता देवी पूजिता फलदायिनी ॥

अष्टम्यां तु विशेषेण पूजा कार्याऽत्र पार्वति ।

प्रभूतवलिदानं तु नवम्यां होम एव च ॥

अष्टमीनवमीसन्धौ विशेषात् पूजनं चरेत् ।

नवम्यां वलिदानानु कुमारीपूजनं तथा ॥

दिनत्रयेऽपि च महादेव्याः स्नानं प्रकल्पयेत् ।

तथा ।

उपवासं तथा कुर्यादष्टम्यां कालिकामुदे ।

सिद्ध्यर्थं स्वाभिलाषाणां तथाऽन्येषां च शर्मणाम् ॥

किन्तु पुत्री न कुर्वीत कृते पुत्रो विनश्यति ।

स्युपयोगीनि वस्तूनि रचनादीनि यानि हि ॥

तानि देव्यै प्रदेयानि विभवाद्यनुरूपतः ।

तिथौ शुक्लप्रतिपदि कृत्वोपक्रममीश्वरि ॥

षष्ठेऽहि सायंसमये कृतनित्यक्रियो दिवा ।

बोधयेद्विल्वशाखायां देशिकः परमेश्वरीम् ॥

सङ्कल्पं पुरतः कृत्वा स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ।

सराशिमासपक्षस्य तिथेरुल्लिखनक्रमात् ॥

सगोत्रनामोच्चरणं यजमानो विधाय हि ।

दुर्गाबोधनकर्माहं करिष्ये इति कीर्त्तयेत् ॥
 भूतशुद्धिं ततः कृत्वा षडङ्गं सर्षि तत्परम् ।
 आवाह्य विल्वशाखायामथ वा मर्त्तिपीठयोः ॥
 उपचारैः षोडशभिर्मूलमन्त्रेण देशिकः ।
 पजयित्वा जगद्धात्रीमर्थमस्तमिते रवौ ॥
 विल्ववृक्षं च सम्पूज्य गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।
 शङ्खतूर्यनिनादैश्च मुरजध्वनिगीतिभिः ॥
 बोधयेत् स्तुतिसंलापैर्वन्दीव वसुधाधिपम् ।
 प्रोच्यमानं समुच्चार्य मन्त्रं संचालयेच्छिवाम् ॥
 तारमैधे शाकिनी च कूटं स्वप्नावतं तथा ।
 विसन्धिभगवत्युक्त्वोत्तिष्ठ ह्यमुदीरयेत् ॥
 निद्रां जहि युगं चापि प्रतिबुद्ध्यस्व च ह्यम् ।
 मम शत्रून् हन द्वन्द्वं पातय द्वितयं तथा ॥
 लज्जा रमा डाकिनी च फट्स्वाहा तदनन्तरम् ।

तारः प्रणवः । मैधं वाग्भवम् । शाकिनी फ्रे । स्वप्नावतीकूटम् स्त्री । डाकिनी स्त्री ।
 तत्रान्तरे तु श्लोकरूपा मन्त्रा उक्ताः ।

यथा ।

रावणस्य वधार्थाय रामस्यानुग्रहाय च ।
 अकाले ब्रह्मणा बोधो देव्यास्त्वयि कृतः पुरा ॥
 अहमप्याश्विने षष्ठ्यां सायाह्ने बोधयामि वै ।
 शक्रेणापि च सम्बोध्य राज्यं प्राप्तं सुरालये ॥
 तस्मादहं त्वां प्रति बोधयामि विभूतिराज्यप्रतिपत्तिहेतोः ।
 यथैव रामेण हतो दशास्यस्तथैव शत्रुं विनिपातयामि इति ॥
 तथा ।

षष्ठ्यां सायं प्रकुर्वीत विल्ववृक्षेऽधिवासनम् ।

(महाकालसंहितायाम्)

रजन्याद्ये मुहूर्ते तु चण्डिकामधिवासयेत् ।
 सुगन्धितैलपाताभ्यां पञ्चभिर्गन्धजातिभिः ॥
 पुष्पजातिविशेषैश्च तावद्भिरधिवासयेत् ।
 सर्वमाङ्गल्यवस्तूनि विधायैकत्र भाजने ॥
 प्रशस्तवदनं देव्याः कारयेत् तदनन्तरम् ।
 समांसमीनसिद्धान्नवलिं भूतेभ्य उत्सृजेत् ॥
 गीतवाद्यैश्च नाद्यैश्च नमस्कारैश्च जागरैः ।
 देवीं सन्तोष्य वचनैर्व्याजस्तुत्याद्यनिन्दनैः ॥
 सिद्धार्थकैर्मन्त्रपाठपूर्वं रक्षां विधाय च ।
 पूर्ववत् सर्वमाभाष्य मासपक्षतिथिक्रमैः ॥
 शरत्कालीनपूजाङ्गं ततश्च कृत्यपत्रिकाः ।
 अथ वा प्रतिमापीठयन्तस्थापनकर्मणि ॥
 दुर्गादेव्या गन्धपुष्पपट्टवासस्त्रगादिभिः ।
 अधिवासनकर्माहं कुर्वीयेत्यभिजल्प्य वै ॥
 पूर्ववद्भूतशुद्धिं च सर्षि करषडङ्गकम् ।
 प्राणायामत्रयं चापि कृत्वाऽर्घस्थापनं चरेत् ॥
 गणेशमथ दिक्पालान् मातृग्राह्णस्तथैव च ।
 वटुकान् क्षेत्रपालाँश्च द्वाराध्यक्षाँश्च योगिनीः ॥
 शक्त्योपचारैः सम्पूज्य पत्रिकापीठमूर्तिषु ।
 आवाह्य देवीमिष्टां च मूलमन्त्रोपचारकैः ॥
 शताहरिद्रातैलानि एकीकृत्य समानि हि ।
 चैतन्यकमलालङ्गागन्धचारेरुडस्वकम् ॥

उच्चार्य दद्यादलिके शिरस्यपि च पादयोः ।
 ततः कुङ्कुमकर्पूरकस्तूरीमलयोज्ज्वैः ॥
 एकीकृतैर्डाकिनीहृन्मन्त्रैस्तान्येव भूषयेत् ।
 विल्वपत्रजवापद्मकरवीरापराजिताः ॥
 एकीकृत्यार्पयेन्मूर्ध्नि वदन्मदनमस्तके ।
 माल्यैरापूरयेद्यन्त्रं प्रतिमां पत्रिकामपि ॥
 शङ्खो नोसवदौ क्रौडौ मृत्तिकामलयोज्ज्वलः ।
 गोरोचनाधान्यदूर्वादृषत्सिन्दूरकज्जलम् ॥
 हरिद्रास्वस्तिकालक्तदध्यक्षतफलाम्बुजम् ।
 धूपदीपौ मधुघृतं कुमारीकरतन्तवः ॥
 घनसारो मृगमदं कङ्कोलं कुङ्कुमं तथा ।
 महौषधिगणाः सिद्धार्थफलं स्वर्णमणी तथा ॥
 रौप्यं व्याघ्रनखोऽम्भोजं विष्णुकान्ताऽपराजिता ।
 एवमादीनि माङ्गल्यद्रव्याण्युक्तानि यानि वै ॥
 एकस्मिन् भाजने तानि एकीकृत्य पृथक् पृथक् ।
 देव्याः शिरो वक्षसि च तारमैधत्रपाशिरः ॥
 प्रोच्चरन् समनुत्तोल्य त्रिवारं स्पर्शयेच्छनैः ।
 भूतादिभ्यो वलिं दद्यात् तत्तद्बीजं पुरः स्मरन् ॥
 तत्तन्नामाभ्यसन्तं च सन्धिनेष वलिर्नमः ।
 दशदिक्षु क्षिपेच्चापि राजिकाश्वेतसर्षपौ ॥
 ताराद्रक्षयुगं चास्त्रं शिरः कूर्चोऽन्तिमे तथा ।
 * वर्णैश्चतुर्भिः संवेष्ट्य ताँश्च कल्माषतन्तुभिः ॥

* बाणैरिति ४-५ पु० पा० ।

अस्त्राण्यस्याः पुरः कृत्वा जाययात् सकलां निशाम् ।

इति षष्ठोक्त्यम् ।

अथ सप्तमीकृत्यं तत्रैव ।

अथो उषसि सप्तम्यां कृतनित्यक्रियो बुधः ।

पूर्ववद्विल्वशाखायां देवीमभ्यर्च्य मानवः ॥

शितां गृहीत्वा छुरिकां मन्दमेनं समुच्चरेत् ।

फलद्वययुतां शाखां छिन्याद्विल्वस्य साधकः ॥

चैतन्यं प्रणवं माया रोषरावौ च डाकिनी ।

इमां शाखां छिन्धि युगं छेदय द्वितयं तथा ॥

अस्तयुग्मं शिरश्चापि गृहीत्वा तां करद्वये ।

बद्धाञ्जलिश्चतुर्मन्त्रान् पठेत् पौराणिकान् प्रिये ॥

मेरुमण्डलकैलाशहिमवच्छिखरे गिरौ ।

जातः श्रीफलवृक्षस्त्वमम्बिकायाः सदा प्रियः ॥

श्रीगौले शिखरे जातः श्रीफलः श्रीनिकेतनः ।

नेतव्योऽसि मया गच्छ पूज्यो दुर्गास्वरूपतः ॥

विल्ववृक्ष महाभाग सदा त्वं शङ्करप्रिय ।

गृहीत्वा तव शाखां हि देवीपूजां करोम्यहम् ॥

शाखाछेदोद्भवं दुःखं न च कार्यं त्वया तरो ।

देवैर्गृहीत्वा शाखां ते पूजिताऽम्बेति विश्रुतिः ॥

पुनरन्यत् पद्वरूपं मन्त्रं ब्रूयाच्च साधकः ।

पुत्रायुर्धनवृद्ध्यर्थं नेष्यामि त्वामुमाप्रियाम् ॥

विल्वशाखां समाश्रित्य राज्यं देवि प्रयच्छ मे ।

आगच्छ चण्डिके देवि सर्वकल्याणहेतवे ॥

काल्यायनि गृहाणार्चीं नमस्ते शङ्करप्रिये ।

ततः पूर्वोदिताश्चान्या आहरेदष्ट पत्रिकाः ॥
तन्त्रान्तरे ।

पत्रिकास्ताः समानीय गीतवाद्यपुरःसरम् ।
ब्रह्मघोषादिभिः सार्धं नीत्वाऽन्यस्येदृग्हाङ्गणे ॥
(महाकालसंहितायाम्)

ता एकीकृत्य लज्जयाऽपराजितसमाह्वया ।
संवेष्ट्य वसनेनापि पूजासङ्कल्पमाचरेत् ॥
पूर्ववत् सर्वमुच्चार्य पत्रिकापीठमूर्त्तितः ।
ततश्च स्थापनमहं किरण्ये इति कीर्त्तयेत् ॥
पत्रिकायां तथा मूर्त्तौ खड्गे वा *यन्त्रमूर्त्तयोः ।
देवीमावाह्य सम्पूज्य विल्वपत्राञ्जलित्रयम् ॥
दत्त्वा शक्तौ प्रकुर्वीत देव्याः स्नानं महोत्तरम् ।
तद्वै पौराणवैदिक्यमपि संकीर्त्तयामि ते ॥
शक्तौ दिनत्रयं कुर्यादशक्तौ तु दिनद्वयम् ।
सर्वाभावे नवम्यां तु स्नानमावश्यकं मतम् ॥
कुर्यादत्रापि सङ्कल्पं काम्यमेतद्यतः प्रिये ।
शतजन्मकृतात् पापान्मोचने प्रथमं स्मृतम् ॥
तथा चाष्टसहस्राब्दावच्छिन्नपदतः खलु ।
दुर्गालोकस्थितिरिति शतयज्ञफलाप्तियुक् ॥
नवाऽपि पत्रिका शुद्धतोयेन स्नापयेत् ततः ।
प्रत्येकं तत्तदाख्याभिर्मूर्त्तौ नाम्ना धियाऽपि च ॥
मन्त्राणां पद्यरूपाणामादौ तारस्त्रपा स्मरः ।
रमा मैथुं रावरोषौ डाकिन्यष्ट च वै नव ॥

* यन्त्रकुम्भयोः—इति २-५ पु० पा० ।

प्रत्येकं देवि देयानि तान्तिकस्नापनक्रमे ।
 कदलीतरुसंस्थाऽसि शम्भुवक्षःस्थलस्थिते ॥
 स्नापयाम्यद्य पत्रि त्वां नमस्ते हरवल्लभे ।
 कच्चित् त्वं स्थावरीभूता सद्यः सिद्धिविधायिनी ॥
 दुर्गारूपेण सर्वत्र स्नानेन विजयं कुरु ।
 हरिद्रे हर दुःखानि शङ्करस्य सदा प्रिये ॥
 रुद्ररूपाऽसि देवि त्वं सर्वशान्तिं प्रयच्छ मे ।
 जयन्ती जयरूपाऽसि जगतां जयकारिणी ॥
 स्थापयामीह देवि त्वां जयं देहि गृहे मम ।
 श्रीफल श्रीनिकतोऽसि सदा विजयवर्धन ॥
 देहि मे धर्मकामार्थान् प्रसन्नो भव सर्वदा ।
 दाडिम्यघप्रणाशाय क्षुन्नाशाय तथा नृणाम् ॥
 निर्मिताऽसि पुरा धात्रा प्रसीद त्वमुमाप्रिये ।
 स्थिरा भव सदा लोके दुर्गेशोकविनाशिनि ॥
 मया त्वं पूजिता नित्यं स्थिरा भव हरप्रिये ।
 ब्राह्मणेषु मानो मानेषु माननीयः सुरासुरैः ॥
 स्नापयामि महादेवीं मानं देहि नमोऽस्तु ते ।
 लक्ष्मीस्त्वं धान्यरूपाऽसि प्राणिनां प्राणदायिनी ॥
 स्थिराऽत्यन्तं हि नो भूत्वा गृहे कामप्रदा भव ।
 ततो द्वित्रिनदीतोयं कृत्वा कलशगर्भगम् ॥
 चन्दनालोडितं चापि स्नापयेत् तेन चण्डिकाम् ।
 शीता चालकनन्दा च चक्षुर्भद्रादृषद्गती ॥
 तुङ्गभद्रा कृष्णवर्णा पयोष्णी नर्मदा तथा ।

तापी भीमरथी सिन्धु *वितस्तैरावती तथा ॥
 गोदावरी विपासा च शतद्रुः सिन्धुरेव ।
 चर्मण्वती च कावेरी ताम्रपर्णी महानदी ॥
 करतोया बाह्यदा च शोणा वेत्रवती तथा ।
 देविका भैरवः कोका गोमती चोत्पलावती ॥
 आत्रेयी भारती गङ्गा यमुना च सरस्वती ।
 सरयूगण्डकी चापि †श्वेतगन्धा च कौशिकी ॥
 भोगवती च पाताले स्वर्गे मन्दाकिनी तथा ।
 एताश्चान्याश्च या नद्यो भाषिता याश्च नेरिताः ॥
 देवखातानि तीर्थानि कूपा निर्झरसंज्ञकाः ।
 सरांसि सिन्धवश्चापि सम्भेदा ये च भूतले ॥
 सर्वे त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
 वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणः प्रभुः ॥
 प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवतो स्नापयन्त्वमे ।
 ख्याता ये द्वादशादित्या रुद्रा एकादशापि च ॥
 मरुतश्चोनपश्चाद्दसवोऽष्टर्त्तवश्च षट् ।
 आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा ॥
 वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः ।
 ब्रह्मणा सहितः शेषो दिक्पालाः स्नापयन्त्वमी ॥
 कीर्त्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मैधा पुष्टिः श्रद्धा क्षमा रतिः ।
 बुद्धिर्लज्जा क्रिया शान्तिस्तुष्टिः कान्तिश्च मातरः ॥

* वितस्तैरावतो इति ४ पु० पा० ।

† श्वेतगङ्गा-इति २-३-५ पु० पा० ।

एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु शक्तिरूपधरास्तव ।
 आदित्यश्चन्द्रमा भौमबुधजीवसितार्कजाः ॥
 राहुः केतुश्च भवतीं स्नापयन्तु ग्रहा नव ।
 ऋषयो मनवो गावो देवमातर एव च ॥
 देवपत्न्योऽध्वरा नागा दैत्याश्चाप्सरसां गणाः ।
 त्रिशूलचक्रचापर्षिभुशुण्डी परिघो गदा ॥
 कुन्तमुद्गरखट्वाङ्गशक्तितोमरपर्शवः ।
 पट्टिशो मुद्गलः प्रासभिन्दिपालकटङ्गकाः ॥
 हूता शतघ्नी कुलिशपाशकर्तृहलानि च ।
 चत्वार ऋग्यजुःसामार्थर्वणो निगमा हि ये ॥
 अङ्गानि शिक्षा कल्पश्च छन्दो व्याकरणं तथा ।
 निरुक्तं ज्यौतिषं चापि पुराणान्यखिलानि च ॥
 मीमांसान्यायवेदान्ताक्षपात्साङ्ख्यपतञ्जलाः ।
 स्मृतिशास्त्राणि सर्वाणि दण्डनोतिर्विधाऽपि च ॥
 गन्धर्वायुर्धनुर्वेदाश्चतुःषष्टिश्च याः कलाः ।
 अस्त्राणि सर्वशस्त्राणि वाहनानि नृपास्तथा ॥
 औषधानि च सर्वाणि शिल्पविद्यादिकानि वा ।
 मुक्तामाणिक्यवैदूर्यवज्रेन्द्रमणयस्तथा ॥
 गोमेदपद्मरागौ च प्रवालः श्याम एव च ।
 रत्नानि यानि चान्यानि कालस्यावयवाश्च ये ॥
 मन्वन्तराणि सर्वाणि चत्वार्यपि युगानि हि ।
 अब्दमासर्तुपक्षाहोरात्रायनकलालवाः ॥
 राशिनक्षत्रयोगाश्च कलांशाश्चापि सूक्ष्मकाः

सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः ॥
 देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ।
 एते त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मकामार्थसिद्धये ॥
 * सिन्धुरैवतशोणाद्या ये हृदा भुवि विश्रुताः ।
 सर्वे सुमनसो भूत्वा भृङ्गारैः स्नापयन्तु ते ॥
 तक्षकाद्याश्च ये नागाः पातालतलवासिनः ।
 स्नापयन्तु जगद्धात्रि भृङ्गारैस्त्वां सुवासितैः ॥
 अथ द्रव्यविशिषेण मन्त्रभेदान् ब्रवीमि ते ।
 पौराणानपि तान्खीयान्महास्नापनकर्मणि ॥
 सर्वेषामधिपो देव ईशानो नाम नामतः ।
 शूलपाणिर्महादेवः स त्वां संस्नापयेत् प्रभुः ॥
 स्नापयेच्छङ्खतोयेन मन्त्रमेनमुदीरयेत् ।
 मन्दाकिन्यास्तु यद्धारि सर्वपापहरं परम् ॥
 स्वर्गस्रोतःसमुद्भूतं स्नानं भवतु तेन ते ।
 गाङ्गेन वारिणा देवो स्नापयेन्मनुनाऽमुना ॥
 उष्णं सुखस्पर्शकरं ज्योतिर्वह्निःसमन्वितम् ।
 मलापहारकं कल्यं तेन स्नानं समाचर ॥
 स्नापयेत् पाथसोष्णेन पठन्मन्त्रममुं प्रिये ।
 गन्धाढ्यं शोभनं चैव शीतलं सुमनोहरम् ॥
 सर्वपापहरं तोयं तत् ते स्नानाय कल्पताम् ।
 अमुनाऽऽमोदिसलिलकुम्भेन स्नापयेच्छिवाम् ॥
 पुण्यं पवित्रं स्वच्छं च शीतलं स्वादु यज्जलम् ।

* सिन्धुरैव-इति २-३-५ दु० पा० ।

ह्यानाय कल्पतां तत् ते तथैव श्रमशान्तये ॥
 मेध्याच्छशीतलाम्भोभिः स्नापयेदमुनेश्वरोम् ।
 गावः पवित्रा ह्यनघा गावो विश्वस्य मातरः ॥
 गावोऽध्वराणां धात्र्यश्च गोषु सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
 तदङ्गप्रसृतैः पञ्चगव्यैस्त्वां स्नापयाम्यहम् ॥
 इति सामान्यतो मन्त्रं पठित्वा तदनु प्रिये ।
 प्रत्येकं पञ्चगव्येन स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥
 गवां मूत्रेण पुण्येन सर्वाघपरिमोषिणा ।
 स्नापयामि जगद्धात्रीं पुत्रायुर्धनवृद्धये ॥
 एतेन स्नापयेद्देवीं गोमूत्रेण शनैः शनैः ।
 पवित्रताकरं भूमेर्विभूतैः कारणं परम् ॥
 गोमयं सर्वपापघ्नं तेन त्वां स्नापयाम्यहम् ।
 मन्त्रमेनं पठेद्देवीं स्नपायेद्गोमयाम्भसा ॥
 यद्भवामङ्गसम्भूतं हविषः कारणं हि यत् ।
 दधि तत् तेऽङ्गलावण्यकरणाय भवत्विदम् ॥
 दध्नाऽमुना भगवतीं स्नापयेद्देशिकोत्तमः ।
 यज्ञक्रियाकलापोऽयं सर्वो यस्मिन् प्रतिष्ठितः ॥
 पयसा तादृशेन त्वां स्नापयामि हरप्रियाम् ।
 गृणन्नमुं गव्यदुग्धैः स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥
 यद्धोमसाधनत्वेन प्रथितं निगमादिषु ।
 यच्चाप्यग्निमुखेनैव भुञ्जते निखिलाः सुराः ॥
 यस्मात् पवित्रं नैवास्ति बलवीर्यकरं च यत् ।
 तेन त्वां स्नापयाम्यद्य गव्येन हविषेश्वरीम् ॥

कालीममूभ्यां मन्त्राभ्यां घृतेन स्नापयेद्बुधः ।
 एकोऽङ्कः ततः पञ्चगव्यानि सकलानि हि ॥
 तथाऽनामिकयाऽऽलोड्य कुशमूलेन वा प्रिये ।
 यस्मात् परं नापरमस्ति मेध्यं देहे गतं यद्वृजिनं निहन्ति ।
 नास्ते परं हृद्यमतस्तदेतत् स्नानाय भूयात् तव पञ्चगव्यम् ॥
 स्नापयेत् पञ्चगव्येन मन्त्रेणानेन कालिकाम् ।
 गव्यं पयो दधि घृतं माध्वीकं सितशर्कराः ॥
 पञ्चामृतमिदं प्रोक्तममुना स्नापयेदुमाम् ।
 सारं गृहीत्वा जगतां त्रयाणां यन्निर्मितं यज्ञकृते विधात्रा ।
 पञ्चामृतं तन्मधुरं मनोज्ञं संस्नापकं ते जगदम्ब भूयात् ॥
 मनुनैवामुना पञ्चामृतेन स्नापयेच्छिवाम् ।

तथा ।

ॐ काल्यायन्यै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।
 एतेनेक्षुरसेनैव स्नापयीत सुरेश्वरीम् ।

तन्नास्तरे ।

महौषधीभिः सर्वाभिः सर्वकामार्थसिद्धये ।
 या औषधीति मन्त्रेण स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥

(महौषध्य उक्ता मास्थे)

सहदेवी तथा व्याघ्री वला चातिवला तथा ।
 शङ्खपुष्पी च सिंही च वचा चैव सुवर्चसा ॥
 महौषध्यष्टकं प्रोक्तं महास्नाने नियोजयेत् ।

व्याघ्री कण्टकारिका । वला वाट्यलकः ।

सवौषध्यस्तु प्रागेवोक्ताः ।

तथा ।

सहस्रधारकुम्भेन स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ।

(महाकालसंहितायाम्)

सागराः सरितः सर्वाः स्वर्गस्रोतो नदास्तथा ।
 तिस्रः कोट्योऽर्धकोटिश्च तीर्थानि पृथिवीतले ॥
 कूपाः सरः प्रस्रवणा देवखाताः सगर्तकाः ।
 कुल्याश्च निर्झरी वाप्यो यावन्तश्च जलाशयाः ॥
 लवणेषुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलात्मिकाः ।
 समुद्राः सप्त तद्द्वीपा ये च सप्त प्रकीर्तिताः ॥
 जम्बूक्षकुशक्रौञ्चशाकशाल्मलिपुष्कलाः ।
 अभिषिञ्चन्तु सर्वे त्वां मन्त्रपाठवशीकृताः ॥
 अग्निमीलेति मन्त्रेण ऋग्वेदस्याद्यया ऋचा ।
 त्वां स्नापयतु गव्येन पयः कुम्भेन चण्डिकाम् ॥
 इषे त्वाख्येन मन्त्रेण स्नापयत्विक्षुजद्रवैः ।
 षडशीतिभिदा युक्तो यजुर्वेदः सुरेश्वरीम् ॥
 सहस्रशाखासंयुक्तः सामवेदो मधुद्रवैः ।
 अग्न आयाहि मन्त्रेण त्वां स्नापयतु चण्डिकाम् ॥
 अथर्ववेदो हविषा बहुशाखासमन्वितः ।
 शन्नो देवीति मन्त्रेण देवि त्वामभिषिञ्चतु ॥
 अष्टादश पुराणानि व्यासेनोक्तानि यानि हि ।
 यानि चोपपुराणानि दध्ना त्वां स्नापयन्तु हि ॥
 महर्षिभिः प्रणीतानि धर्मशास्त्राणि यानि च ।
 शतं चाशीतिरूपाणि स्नापयन्तु महेश्वरीम् ॥
 सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
 स्वर्गनद्यम्बुपूर्णेन आद्येन कलशेन तु ॥

अमुना गाङ्गतोयेन स्नापयेत् परमेश्वरीम् ।
 मरुतश्चाभिषिञ्चन्तु भक्तिमन्तः सुरेश्वरीम् ॥
 मेघतोयाम्बुपूर्णेन द्वितीयकलशेन च ।
 एतेन वृष्टिनोराढ्यकुम्भेन स्नापयेच्छिवाम् ॥
 सारस्वतेन तोयेन स्वच्छमेध्येन चण्डिके ।
 विद्याधराः स्नापयन्तु तृतीयकलशेन तु ॥
 सरस्वत्यम्बुसम्पूर्णघटेनाप्लावयेच्छिवाम् ।
 त्वां स्तपयन्तु शक्राद्या लोकपालाः समागताः ॥
 सागरोदकपूर्णेन तुर्येण कलशेन हि ।
 *अभावेनाम्बुना देवीं स्नापयेन्मनुनाऽमुना ॥
 वारिणा परिपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना ।
 पञ्चमेनाभिषिञ्चन्तु नागास्त्वां कलशेन हि ॥
 पद्मपुष्पसमायुक्तजलकुम्भमनुस्त्वसौ ।
 हिमवन्मेरुकैलाशा अभिषिञ्चन्तु पर्वताः ॥
 निर्झरोदकपूर्णेन षष्ठेन कलशेन हि ।
 अमुना निर्झराम्भोभिः स्नापयेत् परमेश्वरीम् ॥
 सर्वतीर्थाम्बुपूर्णेन कलशेन सुरेश्वरीम् ।
 सप्तमेनाभिषिञ्चन्तु ऋषयः सप्त खेचराः ॥
 मन्त्रेणैतेन तीर्थाम्बुकुम्भेन स्नापनं चरेत् ।
 वसवस्त्वाऽभिषिञ्चन्तु कलशेनाष्टमेन तु ॥
 सारसेनैव तोयेन दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ।
 देवीमनेन मन्त्रेण सिञ्चेत् कासारवारिणा ॥

* आर्णवेना-इति २-३-५ पु० पा० ।

धर्मो ज्ञानं च वैराग्यं तपः सत्यं क्षमा धृतिः ।
 यशो विवेको नियमो ब्रह्मचर्यं दया दमः ॥
 शान्तिर्मौनं तथा शौचं सन्तोषो मितभाषिता ।
 यावत्यश्चोपनिषदः कैवल्यप्रतिपादकाः ॥
 स्थावरं जङ्गमं चापि त्रैलोक्ये यत् प्रतिष्ठितम् ।
 यद्ब्रह्मसृष्टावुत्पन्नं मूर्त्तं चामूर्त्तमेव च ॥
 अचरं यच्चरं चापि यद्वाङ्मयमवाङ्मयम् ।
 ते सर्वे स्नापयन्तु त्वां नवमेन घटेन हि ॥
 स्नापयेच्छुद्धतोयेन चण्डिकां मनुनाऽमुना ।
 इत्युक्तं ते महासूत्रं शरदर्चाविधौ प्रिये ॥
 दिनान्तरेऽपि कुर्वीत भक्तश्चेद्भक्तिभावितः ।
 अनेन विधिना यस्तु स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥
 सप्तजन्मकृतात् पापान्मुक्तः स्यान्नात्र संशयः ।
 दिव्याष्टाब्दसहस्राणि देवीलोके वसेत् तथा ॥
 नवम्यां तु महासूत्रं धनपुत्रविवर्धनम् ।
 सहस्रयज्ञस्य फलं लभते नात्र संशयः ॥
 राजा राज्यमवाप्नोति शत्रुनाशं तथैव च ।
 स्वाभीष्टमाप्नुवन्त्यन्ये महास्नानेन पार्वति ॥
 महासूत्रादनु ततो भूतेभ्यो वलिमुत्सृजेत् ।
 स कौलानां मांसमध्ये माषान्नं स्मृतिवर्त्तिनाम् ॥
 गृहीत्वा तममूभ्यां वै मनुभ्यामुत्सृजेद्वलिम् ।
 भूताः प्रेताः पिशाचाश्च ये वसन्त्यत्र भूतले ॥
 ते गृह्णन्तु मया दत्तं वलिमेनं प्रसाधितम् ।
 पूजिता गन्धपुष्पाद्यैर्वलिभिस्तर्पितास्तथा ॥

देशादस्माद्विनिःसृत्य पूजां पश्यन्तु मत्कृताम् ।

ताररावौ कूर्चभूतौ भ्यसन्तो भूत एव च ॥

ससन्ध्येष वलिर्हृत्तन् मन्त्रावेतावुदाहृतौ ।

रावः फ्रं । भूतः स्फ्रो ।

तथा ।

अकृते वलिदाने तु महास्नानादनन्तरम् ।

अरुलं तद्भवेदेवि पूजाङ्गं होयते तथा ॥

विलुम्पन्ति सदा लुब्धा न च गृह्णन्ति देवताः ।

तस्माद्यत्नेन कर्त्तव्यं भूतानामपसारणम् ॥

लाजचन्दनसिद्धार्थभस्मदूर्वाक्षतादिकम् ।

गृहीत्वा ताररोषाणुनिःश्रेण्यस्त्रमुदीरयेत् ॥

अपसर्पन्तु भूतास्ते ये भूताः शारदार्विकाः ।

भूतानामविरोधेन देवीपूजां करोम्यहम् ॥

वेतालाश्च पिशाचाश्च राक्षसाश्च सरीसृपाः ।

अपसर्पन्तु सर्वत्र मन्त्ररूपास्त्रताडिताः ॥

अन्ते मन्त्रनामेतेषां हूँ अः फडिति कीर्त्तयेत् ।

भूतादीनपसार्याथ द्वारपालेभ्य एव च ॥

त्रपाहृद्विल्वशाखान्ते वासिन्यै तदनन्तरम् ।

दुर्गायै कर्त्तव्यमस्त्वं च मन्त्रेणाग्नेन पार्वति ॥

पाद्यादिभिः समभ्यर्च्य कुर्यान्नो राजनाविधिम् ।

नीराज्जनं * निर्मञ्छनम् ।

* पञ्च नीराजनं कुर्यात् प्रथमं दोषमालया ।

द्वितीयं सोदकाब्जेन तृतीयं धौतवाससा ॥

चूतः श्वत्थादिपत्रैश्च चतुर्थं परिकीर्त्तयेत् ।

पञ्चमं प्रणिपत्तेन साष्टाङ्गेन यथाविधि-इति (शब्दस्तोममहानिधौ) ॥

द्वारदेशं समानीय कुर्यान्निर्मज्जनं ततः ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

तथा ।

धृत्वाऽऽसनं ततो देवीं पत्रिकां मृन्मयीमपि ।

संचाल्य गीतवद्यादीनिमं मन्त्रं समुच्चरेत् ॥

स्थापयेत् सुस्थिराकारां ततः कल्पित आसत्वे ।

तारत्रपारावलक्ष्मीयोगिनीकामयोषितः ॥

डाकिनीं चापि फेत्कारीं चण्डिके भगवत्यपि ।

चलद्वयं चालय द्विर्वर्जकापालिनीत्यपि ॥

पूजालयं द्विः प्रविश हूँ फट् स्वाहा ततः परम् ।

आगच्छ मद्वृद्धे देवि सह शक्तिभिरष्टभिः ॥

पूजां गृहाण विधिवत् सर्वकल्याणहेतवे ।

अनेन स्थापयेद्देवीं सर्वकल्याणदायिनीम् ॥

दिनत्रयस्य पूजार्थं वेदिकाद्यासनादिषु ।

त्रया ह्रीं । रावः फ्रं । योगिनीं ह्रीं । कामः ह्रीं । योषित् स्त्रीं । डाकिनीं स्त्रीं ।

फेत्कारीं स्त्रीं ।

तथा ।

तारत्रिद्रावडाकिन्यः स्थाँ स्थाँ त्वमम्बिके तथा ।

स्थिरीभव शिरश्चति स्थिरीकुर्यात् ततः परम् ॥

चिद्रागभवम् ।

कलशस्थापनमह ।

ततः पुनर्विरचिते सर्वतोभद्रमण्डले ।

चित्रितं पञ्चवर्णेन दध्यक्षतफलान्वितम् ॥

पञ्चरत्नेन हेम्ना च गर्भगेन विभूषितम् ।

पट्टाच्छादनसंवीतग्रीवं पल्लवशोभितम् ॥

ब्रीहोनीं वा यवानां वा स्थापयित्वोपरि प्रिये ।

वैदिकेन विधानेन कलशस्थापनं चरेत् ॥
 भूमिं स्पृष्ट्वा जपेन्मन्त्रं भूरसीति वरानने ।
 अथ धान्यमसोत्युक्त्वा ब्रीहिने वाऽभिमन्त्रयेत् ॥
 अजिघ्रेत्युच्चरन्मन्त्रं कलशं तत्र विन्यसेत् ।
 वरुणस्येति मन्त्रेण पाथोभिः परिपूरयेत् ॥
 काण्डात् काण्डादिति प्रोच्य पल्लवं विन्यसेत् ततः ।
 फलं वा फलिनीत्युक्त्वा श्रीश्चेत्युक्त्वा प्रसूनकम् ॥
 गन्धद्वारेत्यथो गन्धं सहस्रैत्यक्षतं न्यसेत् ।
 स्थिरीभवेति मन्त्रेण स्थिरीकरणमाचरेत् ॥
 वल्मीककुञ्जररदनदीसङ्गमपर्वतात् ।
 गोकुलादेवनृपतिद्वारादपि च मृत्तिकाः ॥
 आहृत्य हार्दमन्त्रेण प्रत्येकं निःक्षिपेद्दुधटे ।

हार्दमन्त्रेण नमः इति मन्त्रेण ।

पूर्ववत् सर्ववस्त्वादिशोधनं विदधीत वै ।
 प्रागुदीरितमन्त्रेण तथैवालोकनेन च ॥
 यदात्मनाऽनवज्ञातं पूजाद्रव्यादिदूषणम् ।
 अस्पृश्यस्पर्शनं वाऽपि यदन्यायार्जितं च वा ॥
 तथा निर्माल्यसंस्पृष्टं कीटारोहणदूषितम् ।
 नश्यन्ति तानि सर्वाणि दूषणान्यवलोकनात् ॥
 भूतापसारणं कृत्वा भूतशुद्धिं विधाय च ।
 सम्पूज्यासनमात्मीयं गणेशगुरुदेवतः ॥
 नत्वा विदध्यात् तदनु प्राणायामत्रयं बुधः ।
 पत्रिकायास्ततः कुर्याद्द्रव्यादि यतमानसः ॥

शरत्कालीनदुर्गाचीविधेरस्य हि नारद ।
 ऋषिश्छन्दश्च गायत्री श्रीदुर्गा देवता मता ॥
 बीजं होमिति निर्दिष्टं शक्तिः श्रीमपि पार्वति ।
 कीलकं क्लोमिति प्रोक्तं पूजायां विनियोगता ॥
 अस्मिन्नेव ह्यवसरे सङ्कल्पं केऽपि कुर्वते ।
 काम्यत्वान्नेतरे चास्य निन्यत्वान्नित्यकृत्यवत् ॥
 क्रियते यदि सङ्कल्पस्त्यहस्याप्येक एव हि ।
 एकप्रयोगसंहारात् फलैक्याच्च विसर्जनात् ॥
 पीठे मर्तौ च नित्यं तमृषिं तत्तन्मनोश्चरेत् ।
 मृन्मूर्तिपत्रिकापक्षे मन्त्रं सर्षिं निशामय ॥
 आदौ वेदादिमालेख्य द्विवारं दुर्गं ईरयेत् ।
 सम्बुद्धिरथ रक्षिण्याः शिरसा सह कीर्तयेत् ॥
 पत्रिकाचोपचारादिप्रदानार्थं मनुस्त्वमौ ।
 एकं द्वे द्वे त्रीणि च द्वे सकलो मन्त्र एव च ॥
 कराङ्गुलीहृदादिष्वमी न्यस्या मन्त्रवर्णकाः ।

तथा ।

नित्यपीठे पुरोदीर्णं खं खं ध्यानं समाचरेत् ।
 माह्वयपीठिकापक्षे ध्यानमाकलय प्रिये ॥
 निस्तप्तस्वर्णवर्णाभां भवतारुण्यशालिनीम् ।
 पूर्णचन्द्राभवदनां जटामुकुटमण्डिताम् ॥
 लोलदीर्घासितत्र्यक्षां खण्डेन्द्राबद्धशेखराम् ।
 दाडिमीकुतुमाकारदन्तपङ्क्तिविराजिताम् ॥
 उत्तुङ्गपीनवक्षोजां वलित्रयविराजिताम् ।
 अतिक्षामोदरीं देवीं नितम्बाभोगभासुराम् ॥

त्रिभङ्गस्थानकतया भज्यन्मध्यामिव स्थिताम् ।
 बाहुभिर्दशभिर्युक्तां सर्वालङ्करणान्विताम् ॥
 शूलं कृपाणं चक्रं च बाणं शक्तिं च दक्षिणे ।
 धारयन्तीमथो वामे पाशचर्माङ्कुशं धनुः ॥
 कण्ठोरवोपरिन्यस्तदक्षिणाङ्घ्रिसरोरुहाम् ।
 संमुखस्थितसंछिन्नमहिषासुरमस्तकाम् ॥
 कण्ठनालोत्थदितिजसकिरीटकचोच्चयाम् ।
 पाशं वामकरेणैव बिभ्रतीं परमेश्वरीम् ॥
 शूलेन हृदि निर्भिन्नं पश्यन्तीं दानवं रूपा ।
 पाशाकारमहानागवेष्टितोदरबाहुकम् ॥
 भ्रूकुटीभीषणाकारं शोणितार्द्रकलेवरम् ।
 आकृष्टासिनिगलितकफोणिं हरिणा हृताम् ॥
 स्ववद्रुधिरसंदोहवदनेन महात्मना ।
 स्तूयमानां सुरैः सर्वैर्ब्रह्माजेशमुखादिभिः ॥
 लीलया दानवं हत्वा किञ्चित् किञ्चिद्धसन्मुखीम् ।
 उग्रचण्डा प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्डनायिका ॥
 चण्डा चण्डवती चैव चण्डरूपा च चण्डिका ।
 आभिः शक्तिभिरष्टाभिः सततं परिवेष्टिताम् ॥
 चिन्तयेदीदृशीं दुर्गां धर्मकामार्थमोक्षदाम् ।
 ध्यात्वेत्थं मानसैरेवोपचारैः परिपूज्य च ॥
 पूर्वोक्तेनैव विधिना विदध्यादर्घ्यसंस्थितिम् ।
 नैमित्तिकविधानेन विस्तारो यत्र कीर्तितः ॥
 सत्यां शक्तौ तु पाद्यादीन् पृथक्त्वेन प्रविन्यसेत् ।

अर्घस्योत्तरतः कार्यं पाद्यमाचमनोयकम् ॥
 स्नानीयं मधुपर्कं च उपचारास्तथा मया ।
 अस्मिन्नेव क्षणे देवीपश्चायतनपूजकः ॥
 गणेशार्कहरीशानां सम्भारैः कल्पितैर्यजेत् ।
 पीठार्चनं ततः कुर्यात् सामान्यं प्रथमं बुधः ॥
 सर्वशेषे योगरत्नं शेषमन्त्रोपबृंहितम् ।
 विधाय च पुनर्ध्यानमावाहनमथाचरेत् ॥
 मुद्राविभक्तिकलितं साधको मीलितेक्षणः ।
 मूलमन्त्रेणाथ सावयवीकृत्य विभादनैः ॥
 मन्त्रक्षरैः षडङ्गानि विन्यसेत् तदुपस्पृशत् ।
 मूलपीठप्रतिष्ठायां यो मनुः प्रादुदीरितः ॥
 यन्त्रमूर्त्योस्तु तेनैव प्रतिष्ठां स्थिरयोश्चरेत् ।
 मृन्मूर्तिपत्रिकाकुम्भशूलास्यादिष्वपि प्रिये ॥
 के चनेच्छन्ति तन्मन्त्रं नैव कापालिकादयः ।
 अन्यान् पौरिणिकान् मन्त्रान् वैदिकानपि काँश्चन ॥
 ईरयेत् पीठिकाकुम्भमाह्वयप्रतिमादिषु ।
 ताँस्ते वदामि सुतनु नन्दिकेश्वरभाषिताः ॥
 हस्तं दत्त्वा पत्रिकायां तारादि तत्सदित्यपि ।
 त्रिरुदीर्य पठेन्मन्त्रानेवैतान् स्थिरपीठयोः ॥
 आगच्छ मदृहे देवि अष्टाभिः शक्तिभिः सह ।
 पूजां गृहाण विधिवत् सर्वकल्याणकारिणि ॥
 एहोहि भगवत्यम्ब शत्रुक्षयजयप्रदे ।
 भक्तिः पूजयामि त्वां नवदुर्गे सुरार्चिते ॥

दुर्गे देवि समागच्छ सान्निध्यं चापि कल्पय ।
 यज्ञभागं गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सहः ॥
 शारदीयामिमां पूजां करोमि त्रिदशार्चिते ।
 आज्ञापय महादेवि दैत्यदर्पनिषूदनि ॥
 दुष्पारे घोरसंसारे सागरे पतितं सदा ।
 त्रायस्व वरदे देवि नमस्ते शङ्करप्रिये ॥
 ये देवा याश्च देव्यश्च चलितायां चलन्ति हि ।
 आवाहयामि तान् सर्वांश्चण्डिके परमेश्वरि ॥
 प्राणान् रक्ष यशो रक्ष रक्ष दारान् सुतं धनम् ।
 सर्वरक्षाकरी यस्मात् त्वं हि देवि जगत्प्रिये ॥
 प्रविश्य तिष्ठ यज्ञेऽस्मिन् यावत् पूजां करोम्यहम् ।
 मे नानन्दकरे देवि सर्वसिद्धिं च देहि मे ॥
 आगच्छ चण्डिके देवि सर्वकल्याणहेतवे ।
 पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शङ्करप्रिये ॥
 आवाहयामि देवि त्वां मृन्मये श्रीफले तथा ।
 त्रिशूले कलशे खड्गे मण्डले चित्र एव च ॥
 कैलाशशिखरादेवि विन्ध्याद्रेहिमपर्वतात् ।
 आगत्य विल्वशाखायां चण्डिके कुरु सान्निधिम् ॥
 स्थापिताऽसि मया देवि पूजये त्वां प्रसीद मे ।
 चण्डे चण्डारिमके चण्डि चण्डविग्रहधारिणि ॥
 विल्वशाखां समाश्रित्य तिष्ठ देवि गणैः सह ।
 अथ वा मृन्मये कुम्भे त्रिशूले खड्ग एव च ॥
 तथा चित्रपटे वाऽरिनुमुण्डे वह्निमण्डले ।

सर्वगां त्वं समागत्य सान्निध्यमिह कल्पय ॥
 देवि त्वं जगतां मातः सृष्टिसंहारकारिणि ।
 मण्डलेषु समस्तेषु सान्निध्यमनुकल्पय ॥
 चतुर्विंशतिसङ्केषु अधिष्ठेयेषु चण्डिके ।
 आगत्य शारदो पूजां गृह्ण देवि प्रसीद मे ॥
 आवाहिताऽसि देवि त्वं निखिले मण्डले तव ।
 भूत्वाऽत्रैव स्थिरात्म त्वं मद्गृहे कामदा भव ॥
 चण्डि त्वं चण्डरूपाऽसि सुरतेजःसमुद्भवे ।
 परिवारैः समागत्य स्थितिमत्र कुरु द्रुतम् ॥
 अष्टादशैतान् प्रजपेन्मन्त्रान् पौराणिकान् प्रिये ।
 ततो हंसः शुचीत्येवं प्रतद्विष्णुस्तवेत्यपि ॥
 तथा विष्णुर्योनिमिति तार्क्षीयकतयोदितम् ।
 तारव्याहृतिपूर्वा च गायत्री तारपश्चिमा ॥
 ऽयम्बकं चेति पञ्चैतान् वैदिकान् प्रजपेन्मनून् ।
 नेमानपि स्थिरे पीठे मूर्त्तौ वा परिकल्पयेत् ॥
 अतः प्राणप्रतिष्ठां वै कुर्वीत मनुविस्तरैः ।
 आद्येन नित्यख्यातेन निमित्तोक्तेन तत्परम् ॥
 आख्यास्यमानतार्क्षीयमनुना तदनन्तरम् ।
 तच्च शारदपूजायां नेतरस्यां कदा चन ॥
 पीठमूर्त्त्योरपि तथा मण्डले नेतरत्र च ।
 तारमैधत्रपारादयोगिन्यो डाकिती तथा ॥
 फेरकारीकृर्वनिता बीजानीमानि वै नव ।
 एषेहि भगवत्येवं ततो ब्रूयात् पदत्रयम् ॥

त्रयस्त्रिंशत्कोटिपदात् तथा त्रिदशशब्दतः ।
 तेजःकल्पितशब्दाच्च शरीरे परिकल्पयेत् ॥
 पदात् तथा च महिषासुरतो मर्दिनीत्यपि ।
 ततो जगद्व्येत्युक्त्वा पालिनि प्रतिकीर्तयेत् ॥
 कामप्रसादपाशाश्च नृसिंहकमले ततः ।
 आगच्छद्वितयं चापि सान्निध्यं कल्पयद्वयम् ॥
 पूजालयं प्रविश्योक्त्वा तिष्ठयुग्ममतः परम् ।
 ततो बिसन्ध्यष्टशक्तिपदात् परिवृते वदेत् ॥
 ज्वलयुग्मं प्रज्वलयुगं स्फुर प्रस्फुर चेदृशम् ।
 अङ्कुशप्रेतभैरव्योऽमाहारप्रलयास्ततः ॥
 विद्युन्महाक्रोधताराः शिरः शंखे ततः परम् ।
 शतमष्टादशोपेतं वर्णानामत्र वै मनौ ॥
 मन्त्रत्रयेणामुनैव कुर्यात् प्राणप्रतिष्ठितम् ।
 मृन्मूर्त्तिपत्रिकाकुम्भादिषु सर्वान्तिमं मनुम् ॥
 श्रौतं पठेन्मनोजूतिरिति कौलेतरो नरः ।
 नैमित्तिकोक्तेन तथा कुर्यादावाहनं ततः ॥
 मन्त्रेण त्रिरुदीर्णेन न पद्यां पीठ एव हि ।
 अथ कौलादयः कुर्युरस्मिन्नवसरे प्रिये ॥
 नैमित्तिकेन विधिना पात्रस्थापनमुत्तमम् ।
 न्यासौघान् पुरतः कृत्वा नैमित्तिकविधीरितान् ॥
 शक्तौ तु पञ्चकान् सर्वान् षोढात्रितयमेव हि ।
 माहेयपत्र्योर्नैतां वै प्रकुर्वीत कदा चन ॥
 पात्राणां स्थापनं चापि कुर्यात् स्वेन मतेन हि ।

विचाररीती एषां वै नैमित्तिक उदीरिते ॥
 सा कल्पना च ते मन्त्राः स क्रमः संस्थितिश्च सा ।
 ते न्यासाः शोधनं तच्च वस्तु वा तर्पणं च तत् ॥
 शरदर्चापीठमूर्त्योर्नैमित्तिकसमर्हणात् ।
 कस्यापि मत ईशानि नैवाणुरपि भिद्यते ॥
 विशिष्यातो मया तन्त्रपौराणिकविधिद्वयम् ।
 उच्यते स मनुः प्रायो बुद्धिमद्बुद्धिगोचरः ॥
 पत्रिकादिषु पौराणं तान्त्रिकं पीठ एव हि ।
 वस्त्वर्पणस्य प्रत्येकं ये मन्त्राः पूर्वमीरिताः ॥
 नैमित्तिकार्चनविधौ ग्राह्यास्तेऽत्रापि पार्वति ।
 प्रत्येकं मनवो ये वै पत्रिकादिषु संस्थिताः ॥
 तानिदानीं प्रवक्ष्यामि तत्तद्वस्त्वर्पणाविधौ ।
 यथा तत्तन्मनूच्चारादनुमूलमनूदितान् ॥
 कथ्यते वस्तुदानाय तथाऽत्रापि सुरेश्वरि ।
 पौराणिकमनुं प्रोच्य तदन्ते परिकीर्तयेत् ॥
 द्वात्रिंशद्वर्णकं मन्त्रमथ वा भैरवोदितम् ।
 कात्यायनोपासितं यज्जयदुर्गादशाक्षरम् ॥
 ताभ्यां पौराणिकार्चायां वस्तुदानसमुद्धृतेः ।
 द्वयोरशक्तावेकं वा आवश्यकतयेरयेत् ॥
 वक्ष्ये तयोरुद्धृतिं तदाद्यं नन्दीश्वरार्चितम् ।
 तारत्रपाभ्यां डेन्ता स्यादक्षयज्ञविनाशिनी ॥
 महाघोराऽपि च तथा योगिनीकोटिशब्दतः ।
 तद्वत् परिवृता कार्या मायाबीजं ततः परम् ॥
 पूर्ववद्भद्रकाली च हृन्मन्त्रः सर्वशेषगः ।

अथ वा तारतो दुर्गा इति वारद्वयं वदेत् ॥
 सम्बुद्ध्यन्तां रक्षणीं च तर्जनीमनुरन्त्यगः ।
 यद्यपीमौ मनू देवि तान्त्रिकौ समुदीरितौ ॥
 तथाऽपि पौराणिकान्ते नियोज्यौ तत्तदर्हणे ।
 अथ सर्वोपचारीयान् वक्ष्ये पौराणिकान्मनू ॥
 पूर्वमेवोदिताः सन्ति निमित्तार्चासु तान्त्रिकाः ।
 त एवात्र नियोक्तव्याः प्रत्येकं तत्तदर्पणे ॥
 पत्रिकादिषु पौराणाः पीठमूर्त्योस्तु तान्त्रिकाः ।
 आसनं पाद्यमर्घ्यं च ततोऽन्वाचमनीयकम् ॥
 मधुपर्कं स्नानजलं वस्त्रं भूषणचन्दने ।
 पुष्पं धूपं च दीपं च नेत्राञ्जनमतः परम् ॥
 अलक्तं चापि नैवेद्यं प्रदक्षिणनमस्कृती ।
 उपचारा इमे प्रोक्ता देवीतुष्टिविधायकाः ॥
 यद्यद्वै दीयते द्रव्यमलङ्कारादिकाञ्चनम् ।
 तेषां दैवतमुच्चार्य कृत्वा च प्रोक्षणार्चने ॥
 उत्सृज्य तत्तन्मन्त्रेण तत्तन्नाम्ना निवेदयेत् ।
 सर्वशुद्धिं तु पौराणक्रमेण धरयाऽऽचरेत् ॥
 इदं त आसनं दत्तं मया सुरवरार्चिते ।
 भवैतस्मिन्निषण्णा त्वं यावत् पूजां करोम्यहम् ॥
 दूर्वापराजितापद्मश्यामाकसहितं जलम् ।
 पाद्याय कल्पते देवि विशेषार्चासु नान्यथा ॥
 पाद्यं गृह्य * मया दत्तं सर्वदुःखापहारकम् ।

* महादेवि इति ४ ५ पु० पा० ।

त्रायस्व वरदे देवि घोरादस्मान्द्रवार्णवात् ॥
 स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमनीयकम् ।
 तच्च स्वधापदेर्दद्यान्मधुपर्कं तथा प्रिये ॥
 अर्घं स्वाहापदेनैव सर्वमन्यन्नमःपदैः ।
 गन्धपुष्पाक्षतयवकुशाग्रतिलसर्षपान् ॥
 विल्वपत्रक्षीरदूर्वासहितं सलिलं शुचि ।
 शङ्खपात्रगतं कृत्वा कालिकायै निवेदयेत् ॥
 दूर्वाक्षतसमायुक्तं विल्वपत्रसमन्वितम् ।
 शोभनं शङ्खपात्रस्थं गृहाणार्घ्यं हरप्रिये ॥
 नानातीर्थोद्भवं वारि सर्ववस्तूपकल्पितम् ।
 गृहाणार्घ्यमिमं देवि जगद्धात्रि नमोऽस्तु ते ॥
 चन्द्रजातोलवङ्गैलाकक्रोलसहितं जलम् ।
 विशेषाचमनीयं वै दद्याद्देव्यै फलेच्छया ॥
 आमोदवस्तुसुरभीकृतमेतदनूत्तमम् ।
 गृहाणाचमनीयं त्वं मया भक्त्या निवेदितम् ॥
 इमा आपो मया भक्त्या तव पादतलेऽर्पिताः ।
 आचामय महादेवि प्रीता शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
 सुराभावे घृतदधि मधु कांस्ये निवेदयेत् ।
 मधुपर्कं तदुद्दिष्टं प्रार्थनीयं दिवौकसाम् ॥
 मधुपर्कं महेशानि ब्रह्मणा परिकल्पितम् ।
 मया निवेदितं तुभ्यं गृहाण जगदीश्वरि ॥
 मधुपर्कप्रदानान्ते पुनराचमनीयकम् ।
 दातव्यं प्राशनान्तेऽस्य यत उच्छिष्टता भवेत् ॥

वारीदं हि ममामोदि प्रसन्नं मेध्यमेव च ।
 मया निवेदितं भक्त्या स्नाहनेन सुरेश्वरि ॥
 नानावर्णसमायुक्तपट्सूत्रादिनिर्मितम् ।
 वासः शुक्लं तथा रक्तं गृहाण त्रिदशेश्वरि ॥
 देहशोभाकरं पूतं रक्षितं नागवस्तुभिः ।
 परिधत्स्व जगद्धात्रि वासो भक्त्या निवेदितम् ॥
 वाससः परिधानान्ते पुनराचमनोयकम् ।
 दातव्यं भक्तिभावेन स्मृत्युक्तत्वान्मनुष्यवत् ॥
 दिव्यरत्नसमायुक्ता वह्निभानुसमप्रभाः ।
 अलङ्कारास्तवाङ्गानि शोभयन्तु सुरेश्वरि ॥
 अनुलेपनमेतत् ते महासुरभि शीतलम् ।
 मया निवेदितं देवि गृहीत्वा लेपयाङ्गकम् ॥
 इदं कुसुममामोदि ग्रामारण्यसमुद्भवम् ।
 प्राणसन्तर्पणं हृद्यं मया दत्तं प्रगृह्यताम् ॥
 रूर्परागुरुसंमिश्रो वनस्पतिरसोद्भवः ।
 मया निवेदितो धूपो देवदेवि प्रगृह्यताम् ॥
 अग्निज्योतो रविज्योतिश्चन्द्रज्योतिस्तथैव च ।
 ज्योतिषामुत्तमं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
 त्वं चन्द्रसूर्यज्योतीषि विद्युदग्न्योस्तथैव च ।
 त्वमेव जगतां ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
 स्निग्धमुष्णं हृद्यतमं दृशां शोभाकरं तव ।
 गृहीत्वा कज्जलं सद्यो नेत्राण्यञ्जय पार्वति ॥
 त्वत्पादाम्भोजनखरद्युतिकारि मनोरमम् ।

अलक्तकमिदं देवि मया दत्तं प्रगृह्यताम् ॥
 नानाविधानि रम्याणि स्वादूनि रसवन्ति च ।
 मया दत्तानि गृह्यन्तां नैवेद्यानि सुरार्चिते ॥
 फलफूलानि सर्वाणि ग्रामकाननजानि च ।
 नानाकारसुगन्धीनि गृहाण * परमेश्वरि ॥
 चतुर्विधमिदं भोज्यं देवि षड्भी रसैर्युतम् ।
 सदा तृप्तिकरं रम्यमिदमन्नं प्रगृह्यताम् ॥
 गव्यसर्पिःपयोयुक्तं नानामधुरमिश्रितम् ।
 निवेदितं देवि मया परमान्नं प्रगृह्यताम् ॥
 अमृतै रचितं दिव्यं घृतखण्डविनिर्मितम् ।
 पिष्टकं विविधं स्वादु गृहाण हरवल्लभे ॥
 मोदकं स्वादु रुचिरं कर्पूरादिभिरन्वितम् ।
 मिश्रं नानाविधैर्द्रव्यैः प्रतिगृह्याशु भुज्यताम् ॥
 ताम्रपात्रे स्थितं सीधुं पयो गव्यमथात्र वा ।
 नारिकेलोदकं कांस्ये गृहाण शङ्करप्रिये ॥
 पानीयं शीतलं स्वच्छं प्रसन्नं घनसंयुक्तम् ।
 भोजने तृप्तिकृदेवि कृपया प्रतिगृह्यताम् ॥
 भोजनान्ते प्रदातव्यं पुनराचमनीयकम् ।
 पूर्वोक्तैर्नैव मन्त्रेण सर्वत्रैव शुचिस्मिते ॥
 फलपत्रकसंयुक्तं कर्पूरादिसुवासितम् ।
 मुखकान्तिकरं हृद्यं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥
 दूर्वाङ्गुरं ततो देव्यै दद्यात् साधकसत्तमः ।

* हरप्रिये इति ५ पु० पा० ।

नमस्ते सर्वगे देवि नमस्ते भुक्तिमुक्तिदे ॥
 दूर्वां गृहाण देवि त्वं मां निस्तारय सङ्कटात् ।
 विल्वपत्रं ततो देव्यै पृथक्त्वेन * निवेदयेत् ॥
 अमृतोद्भवं श्रीयुक्तं महादेवप्रियं सदा ।
 पवित्रं ते प्रयच्छामि पत्रं मालूरशाखिनः ॥
 नानापुष्पेण रचितां स्तनवद्धां सुगन्धिनीम् ।
 प्रभ्रष्टां लम्बनां चापि तव देवि निवेदये ॥
 सर्वशेषे प्रदातव्यं सिन्दूरं पत्रिकार्चने ।
 अनुलेपनकाले तु पीटमूर्त्योर्भिदेयती ॥
 अलिकादिकशोभायाः कारकं रागसम्भवम् ।
 अतिरागि समुत्पिञ्जसिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥
 चमरीपुच्छजं श्वेतं हेमदण्डि सुलोम च ।
 मयाऽर्पितं राजचिह्नं चामरं प्रतिगृह्यताम् ॥
 वर्हिवर्हकृताकारं मध्यदण्डसमन्वितम् ।
 गृह्यतां व्यजनं देवि देहस्वेदापनत्तये ॥
 येन भीषयसे दैत्यान् येन परयसेऽम्बरम् ।
 तां घण्टां ते प्रयच्छामि महिषघ्निं† प्रगृह्यताम् ॥
 दीपैरनेकैर्विहितमारात्रिकमिदं शुभम् ।
 निवेदयामि ते देवि संहराज्ञानजं तमः ॥
 सर्वशेषे प्रदातव्यं पुष्पाणामञ्जलित्रयम् ।
 तन्मनुस्तु वरारोहे दुर्गागायत्र्युदीरिता ॥

* प्रदीयते इति ३, ४, ५ पु० पा० ।

† प्रसीद मे इति ३, ४, ५ पु० पा० ।

ॐ चण्डिकायै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो गौरी प्रचो-
दयात् ।

अनेन विधिना यस्तु मन्त्रैरभिश्च पार्वति ।
महिषघ्नीं महामायां पत्रिकासु प्रपूजयेत् ॥
अश्वमेधफलं प्राप्य स गच्छेच्चण्डिकालयम् ।
इहापि च भवेत् सद्यः कल्याणानां स भाजनम् ॥
पूजारीतिर्वरारोहे पीठमूर्त्योरपीदृशी ।
मन्त्रभेदः परो जेयः पात्राणां स्थापनं तथा ॥
प्रत्येकं तु ततः कुर्यात् पत्रिकाणां तु पूजनम् ।
यावच्छुभयोपचारेण मन्त्रेणापि पृथक् पृथक् ॥
एका तत्तदधिष्ठात्री देवता परिकीर्तिता ।
तत्तन्नाम्ना चतुर्थ्यन्तां समवाह्यार्चयेत् प्रिये ॥
आदौ तु रम्भाधिष्ठात्री ब्रह्माणी परिकीर्तिता ।
कालिका कच्च्यधिष्ठात्री त्रिपुरघ्नेन भाषिता ॥
दुर्गा हरिद्राधिष्ठात्री जयन्त्यां कार्तिकी तथा ।
शिवा च विल्वाधिष्ठात्री दाडिमाधिष्ठिता तथा ॥
शत्रुसङ्क्षयकरी विजेया रक्तदन्तिका ।
मुनिभिः शोकरहिताऽशोकाधिष्ठात्र्युदीरिता ॥
तथैव मानाधिष्ठात्री चामुण्डा परिकीर्तिता ।
लक्ष्मीश्च धान्याधिष्ठात्री नन्दीशेनोपपादिता ॥
नवपत्रिकाधिष्ठात्री कात्यायन्यप्युदीरिता ।
याथाऽऽसां क्रमतो देवि नामान्युक्तानि ते मया ॥
तथैव मन्त्रमेकैकं क्रमेण प्रब्रूवेऽधुना ।

ब्रह्माणि त्वं ससागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय ॥
 रम्भारूपेण सर्वत्र शान्तिं कुरु नमोऽस्तु ते ।
 महिषासुरयुद्धेषु कञ्चीभूताऽसि कालिके ॥
 मनुष्यानुग्रहार्थाय लोकमेनमुपागता ।
 हरिद्रे वरदे देवि दुर्गारूपाऽसि शोभने ॥
 मम विघ्नविनाशाय पूजां गृह्य प्रसीद मे ।
 निशुम्भशुम्भमथनैः सेन्द्रैर्देवगणैः पुरा ॥
 जयन्ती पूजिताऽसि त्वमस्माकं वरदा भव ।
 महादेवप्रियकरो वासुदेवप्रियः सदा ॥
 सदा कालीप्रीतिकरो विल्ववृक्ष नमोऽस्तु ते ।
 दाडिमि त्वं पुरा युद्धे रक्तबीजस्य संमुखे ॥
 चामुण्डाप्रीतिमकरोत् तस्मात् त्वां पूजयाम्यहम् ।
 हरप्रीतिकरो वृक्षो ह्यशोकः शोकनाशनः ॥
 दुर्गाप्रीतिकरत्वेन मामशोकं सदा कुरु ।
 यस्य पत्रे वसेद्देवी मानवृक्ष शचीप्रिय ॥
 समैवानुग्रहार्थाय पूजां गृह्य सुरेश्वरि ।
 जगतः प्राणरक्षार्थं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥
 उमाप्रीतिकरं धान्यं तस्मात् त्वं रक्ष मां सदा ।
 पत्रिके नवदुर्गे त्वं महादेवमनोहरे ॥
 पूजां समास्तां संगृह्य रक्ष मां त्रिदशेश्वरि ।
 प्रत्येकमित्थं संपूज्य मन्त्रैरेतैरुदीरितैः ॥
 नामाभ्यामपि डेन्ताभ्यामुक्ताभ्यां पूर्वमेव ते ।
 सामान्यपीठन्यासोक्तनामभिर्डेन्तबृंहितैः ॥

दिक्पालानपि नित्योक्तवाहनायुधरुंयुतान् ।
 वस्तुभिः पीठमूर्त्योस्तु नित्यनैमित्तिकोदितैः ॥
 प्रावृत्यार्चनविस्तारैर्यजेत परमेश्वरीम् ।
 यावतो कथिता नित्य इतिकर्त्तव्यता मया ॥
 यथा नैमित्तिके चापि द्वयीमपि नियोजयेत् ।
 संप्रयोगममन्त्राणामवदन्नेत्यके विधौ ॥
 तं केवलं विधायेशि सर्वमन्यमुपाचरेत् ।
 नैमित्तिकीयः संग्राह्योऽन्यः सर्व उभयात्मकः ॥
 प्रयोगो यादृशीयस्तु तादृशीयं हि तर्पणम् ।
 शक्तौ तु पत्रिकार्चायां दशास्त्राणि प्रपूजयेत् ॥
 डेन्तैस्तारहृदो मध्येऽधिष्ठितैस्तत्तदक्षरैः ।
 ततोऽनु सर्वपूजान्ते पूजयेन्महिषासुरम् ॥
 वलिं दद्यात् स्वशक्या च पशूनपि खगानपि ।
 नैमित्तिके तद्विधानं प्रागेव तव कीर्तितम् ॥
 इति सप्तमीकृत्यम् ।

अथाष्टमीकृत्यम् ।

तत्रैव ।

एतावत् सप्तमीकृत्यमथाष्टम्यर्चनं शृणु ।
 सप्तम्युक्तविधानं हि पूर्वमेवानुवर्त्तते ॥
 अधिकं यत् तदाख्यास्ये सर्वमन्यत् पुरोक्तवत् ।
 शोधनं द्रव्यजातानामासनादेस्तथैव च ॥
 प्राणायामो भूतशुद्धिर्मातृकान्यास एव च ।
 तथा पीठषडङ्गाख्यन्यासौ न्यासान्तराण्यपि ॥
 विधाय पूर्वोक्तरीत्या च महाह्वानं तथैव च ।

दर्पणे प्रतिविम्बं च कारयित्वा पुरोक्तवत् ॥
 दन्तकाष्ठं निवेद्याथ संकल्पं विरचय्य च ।
 अर्घ्यसंस्थापनादीनि विधाय च पुरोक्तवत् ॥
 समाप्यात्मार्चनं चापि घटे गणपतिं यजेत् ।
 सूर्यादीनपि पञ्चायतनान् संपूज्य यत्नतः ॥
 ध्यात्वाऽथ मानसैरेवोपचारैः परिपूज्य च ।
 उपचारैः षोडशभिर्महामायां समर्चयेत् ॥
 तैस्तैर्मन्त्रैस्तदनुक्रमतश्चापि पार्वति ।
 मुद्राप्रदर्शनैस्तैस्तैरुपचारनिवेदनैः ॥
 पीठमूर्योस्तान्दिकोक्तरीत्या पूजनमाचरेत् ।
 पत्रिकासु च पौराणक्रमतो जगदीश्वरि ॥
 कृत्वाऽवरणपूजां हि पीठे द्वाभ्यां समाचरेत् ।
 नित्यनैमित्तिकोक्ताभ्यां महाष्टम्यर्चनक्रमे ॥
 विशेषं कं चिदाख्यास्ये पत्रिकायाः प्रपूजने ।
 पूर्वादिवसुकोणेषु दशोपचरणैर्यजेत् ॥
 देव्याः शक्तीः क्रमेणैवोद्यच्छण्डाद्या विशेषतः ।
 मन्त्रमालामयोसंस्थैर्मन्त्रैरासां तु कौलिकः ॥
 नन्दिकेशपुराणोक्तैर्मनुभिः पद्यरूपिभिः ।
 श्रुत्यध्वन्याः पूजयेयुस्तच्छण्डादिकाः प्रिये ॥
 मन्त्रैस्तदीयानधुना ब्रवीमि तव सुन्दरि ।
 तारहीकमला आदौ मध्ये डेन्ताभिधा तथा ॥
 अन्ते हृन्मनुरेवं हि परिपाटी प्रकीर्त्तिता ।
 उद्यच्छण्डा तु भयदा मध्याह्नार्कसमप्रभा ॥

सा मे सदाऽस्तु वरदा तस्यै नित्यं नमो नमः ।
 प्रचण्डे पुत्रदे नित्यं प्रचण्डगणसंवृते ॥
 जगदानन्ददे देवि प्रसन्ना भव सर्वदा ।
 चण्डोद्ये * भूतरूपाऽसि सर्वभूतभयप्रदा ॥
 सौम्या भूता मयि सदा वरदा भव शोभने ।
 या सिद्धिरिति नाम्ना तु देवेशेन प्रकाशिता ॥
 शसि त्वं साऽसि देवेशि नमस्ते चण्डनायिके ।
 देवि चण्डात्मिके चण्डे चण्डारिविजयप्रदे ॥
 धर्ममोक्षप्रदाऽसि त्वं नित्यं मे वरदा भव ।
 या सृष्टिस्थितिसंहारगुणत्रयसमन्विता ॥
 यस्याः परा न चान्याऽस्ति चण्डवत्यै नमो नमः ।
 चण्डरूपा महाचण्डा चण्डनायकचण्डिका ॥
 सर्वसिद्धिप्रदा देवि तस्यै नित्यं नमो नमः ।
 बालार्कारुणनेत्रा या सर्वदा भक्तवत्सला ॥
 चण्डामुरस्य मथनी वरदा साऽस्तु चण्डिका ।
 ततोऽऽदलपद्मस्य अष्टावृत्या दलेषु च ॥
 यजेच्चतुःषष्टिमिता योगिनीगणरूपिणीः ।
 तारत्रयं पुरो दत्त्वा शेषे नम इदं पदम् ॥
 छेन्तं ततो नाम तासां मध्ये कृत्वा नियोजयेत् ।
 उपचारैः पञ्चभिर्वा पुष्पैर्वा केवलाक्षतैः ॥
 ब्रह्माणी चण्डिका रौद्री गौरीन्द्राणी तथैव च ।
 कौमारी भैरवी दुर्गा नारसिंही च कालिका ॥

* चैतरूपाऽसि इति २, ४, ५, पु० पा० ।

चामुण्डा शिवदूतो च वाराही कौशिकी तथा ।
 माहेश्वरी शङ्करी च जयन्ती सर्वमङ्गला ॥
 करालिनी मुक्तकेशी शिवा शाकम्भरी तथा ।
 भीमा शान्ता भ्रामरी च रुद्राणी चण्डरूपिणी ॥
 क्षमा धात्री स्वधा स्वाहा अपर्णा च महोदरी ।
 घोररूपा महाकाली विद्युज्जिह्वा कपालिनी ॥
 क्षेमङ्करी महामाया मेघमाला बलाकिनी ।
 शुष्कोदरी चण्डघण्टा महाप्रेता प्रियङ्गरी ॥
 * खरतुण्डी ऋक्षकर्णी बलप्रमथनी तथा ।
 † मनोमथन्यपि तथा सर्वभूतदहन्यपि ॥
 उमा तारा महानिद्रा विजया च जया तथा ।
 शैलपुत्री महोल्का च त्रिशूलिन्यञ्जनप्रभा ॥
 कूष्माण्डी विश्वरूत्रासा तथा कात्यायनी परा ।
 कालरात्रिर्महागौरी चतुःषष्टिरिमा मताः ॥
 पूजयेन्मण्डलस्यान्ते सर्वकामार्थसिद्धये ।
 पुनश्च कोटियोगिन्यः पूज्या एकाग्रया प्रिये ॥
 पद्मपत्राग्रहाशेषु पूर्ववन्मन्त्रकल्पनैः ।
 ततो देवीसन्निधाने सम्यग्दुर्गा फलप्रदा ॥
 ऐशान्यादिक्रमे द्वे द्वे मध्ये वा नव पूजयेत् ।
 आसामप्युग्रचण्डादिवन्मन्त्रः परिकीर्तितः ॥
 पाद्यादिभिः पूर्ववच्च तत्तन्मन्त्रैः प्रपूजयेत् ।

* खरकर्णी इति ४ पु० पा० ।

† मनोमथन्यपि इति सर्वपुस्तकेषूपलभ्यते ।

मृत्युञ्जयप्राणसंस्थैरथ पौराणिकैरपि ॥
 पूर्वपक्षः कौलिकानामुत्तरः श्रुतिशालिनाम् ।
 तन्मन्त्रानधुना वक्ष्ये सावधाना निशामय ॥
 चतुर्मुखीं जगद्धात्रीं हंसारूढां वरप्रदाम् ।
 सृष्टिकर्त्रीं महाभागां ब्रह्माणीं तां नमाम्यहम् ॥
 वृषारूढां शिवां भद्रां त्रिनेत्रां वरदां शिवाम् ।
 माहेश्वरीं नमस्यामि जगत्संहारकारिणीम् ॥
 कौमारीं पीतवसनां मयूरवरवाहिनीम् ।
 शक्तिहस्तां शोणदेहां नमामि वरदां सदा ॥
 शङ्खचक्रगदापद्मधारिणीं कृष्णविग्रहाम् ।
 स्थितिरूपां खगेन्द्रस्थां वैष्णवीं प्रणमाम्यहम् ॥
 वराहरूपिणीं देवीं दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धराम् ।
 शुभदां नीलवसनां वाराहीं तां नमाम्यहम् ॥
 नृसिंहरूपिणीं भीमां दैत्यदानवघातिनीम् ।
 विकरालनखां शुभ्रां नारसिंहीं नमाम्यहम् ॥
 इन्द्राणीं गजकुम्भस्थां सहस्रनयनां शुभाम् ।
 नमामि वरदां देवीं सर्वदेवनमस्कृताम् ॥
 चामुण्डां मुण्डमथनीं मुण्डमालोपशोभिताम् ।
 अट्टाट्टहासमुदितां नमाम्यात्मविभूतये ॥
 कात्यायनीं दशभुजां महिषासुरमर्दिनीम् ।
 प्रसन्नवदनां देवीं वरदां प्रणमाम्यहम् ॥
 चण्डिके नवदुर्गे त्वं महादेवप्रिये सदा ।
 पूजां समस्तां संगृह्य रक्ष मां त्रिदशेश्वरि ॥

कात्यायन्याश्च दुर्गाया मन्त्रद्वयसिद्धं मतम् ।
 इमे तेनैव मन्त्रेण पूजयेत् सुरवन्दिते ॥
 पुनः पूर्वोक्तविधिना देवीरेकादशार्चयेत् ।
 जयन्तीं मङ्गलां कालीं भद्रकालीं कपालिनीम् ॥
 दुर्गां क्षमां शिवां धात्रीं स्वधां स्वाहां च पूजयेत् ।
 ततोऽस्तपूजां कुर्वीत सप्तम्यर्चनतोऽधिकाम् ॥
 प्रणवाद्यैर्नमोऽन्तैश्च मन्त्रैरेव सुरेश्वरि ।
 आदौ तु दक्षिणे भागे ततो वामे प्रपूजयेत् ॥
 पाद्यादिभिस्त्रिशूलादीन् केवलैरक्षतैरथ ।
 सर्वायुधानां प्रथमो निर्मितस्त्वं पिनाकिना ॥
 शूलसारं समाकृष्य कृत्वा मुष्टिग्रहं शुभम् ।
 असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः ॥
 श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपाल नमोऽस्तु ते ।
 चक्र त्वं विष्णुरूपोऽसि विष्णुपाणौ सदा स्थितः ॥
 देवीहस्तगतश्चासि चक्रराज नमोऽस्तु ते ।
 सर्वायुधानां श्रेष्ठस्त्वं दैत्यसेनानिषूदन ॥
 भयेभ्यः सर्वदा रक्ष तीक्ष्णबाण नमोऽस्तु ते ।
 शक्ते त्वं सर्वदेवानां गुह्यस्य च विशेषतः ॥
 शक्तिरूपेण सर्वत्र रक्षां कुरु नमोऽस्तु ते ।
 रक्षारूपेण खेट त्वमरिसंहारकारकः ॥
 सदा देवीकरगत मां रक्ष बहुसङ्कटात् ।
 सर्वायुधमहामात्र सर्वासुरनिषूदन ॥
 चाप मां सर्वतो रक्ष साकं सायकसत्तमैः ।

पाश त्वं नागरूपोऽसि विषयूणीं विषोदरः ॥
 शत्रूणां दुःसहो नित्यं नागपाश नमोऽस्तु ते ।
 अङ्गुशोऽसि नमस्तुभ्यं गजानां त्वं नित्यामकः ॥
 देवानामपि रक्षार्थं पार्वत्याऽसि धृतः करे ।
 यस्या निनादमाकर्ण्य शङ्खमूत्रे प्रतुल्लुवः ॥
 दैत्यसङ्घाः पाहि सा त्वं घण्टे नानाविधाद्भयात् ।
 परशो त्वमतितोऽसि सर्ववैरिविमर्दन ॥
 देवीहस्तगतश्चासि सदा तुभ्यं नमो नमः ।
 यानि यानीह मुख्यानि प्रसिद्धान्यायुधानि च ॥
 क्षयकारीणि शत्रूणां विख्यातानि जगद्भये ।
 यानि यान्यम्बिका धत्ते करेषु स्वेषु सर्वदा ॥
 भुशुण्डीपाशपरिघमिन्दिपालास्तु लागुडाः ।
 ऋष्टितोमरकुन्ताश्च पट्टिशो मुशलस्तथा ॥
 गदाशतघ्नीकुणपच्छुरिकाकर्त्तरीमुखाः ।
 सर्वाँस्तान् प्रजयाभ्यद्य महाष्टम्यां विशेषतः ॥
 सर्वे रक्षन्तु मां नित्यं सर्वसिद्धिं ददत्वपि ।
 तारात् कूर्वाच्च दुर्गायै सर्वायुधपदान्यपि ॥
 धारिण्यै नम उच्चार्य दद्यात् पुष्पाञ्जलित्रयम् ।
 ततो देव्याः किरीटादीनलङ्कारान् प्रपूजयेत् ॥
 ताराद्येन नमोऽन्तेन नाम्ना डेन्तेन तस्य च ।
 ततः प्रपूजयेद्देव्याः सिंहासनमनुत्तमम् ॥
 ताराञ्जलनखदंष्ट्रायुधाय परिकीर्त्य हि ।
 महासिंहाय हुँ हृच्च सिंहमेतेन पूजयेत् ॥

यथोपकल्पितैरेवोपचारैः कुसुमाक्षतैः ।
 तदन्ते मनुनेतेन देव्याः सिंहासनं यजेत् ॥
 आसनं चासि देव्यास्त्वं घोरदंष्ट्रोत्कटान्वितः ।
 हिमाद्रिशिखराकार सिंहराज नमोऽस्तु ते ॥
 देव्या दत्तवरत्वेन विशेषान्महिषासुरम् ।
 अष्टम्यां च नवम्यां च पूजयेद्बहुविस्तरैः ॥
 यावच्छक्योपचारैस्तु पाद्यादिभिरनेकधा ।
 नमोऽन्तः प्रणवादिश्च डेन्तोऽन्तर्महिषासुरः ॥
 एतेन मनुना सर्वोपचारानस्य चार्पयेत् ।
 न सामान्यासुरधिया साक्षाद्रुद्रधियैव हि ॥
 पूजान्ते कीर्तयेन्मन्त्रानमन् बद्धाञ्जलिः प्रिये ।
 रुद्रोऽस्यसुरराज त्वं देवानां दर्पनाशकः ॥
 पितुर्वरप्रार्थनया महिषीगर्भसम्भवः ।
 कात्यायन्या समं योद्धुं सामर्थ्यं कस्य विद्यते ॥
 केनासुरेण विधृतः समरे मधुसूदनः ।
 केनान्येन विजित्याजौ त्रिदशाः सेवकीकृताः ॥
 मन्वन्तरत्रयं केन भुक्तं राज्यमकण्टकम् ।
 बभूव कस्य वा सेना परार्धशतसंमिता ॥
 रुद्ररूपधरायातो महिषासुर ते नमः ।
 ततः संपूजयेद्देवि चतुरो वटुकानपि ॥
 सिद्धपुत्रं ज्ञानपुत्रं तथा सहजपुत्रकम् ।
 शेषे रामयपुत्रं च मन्त्रमेषां निशामय ॥
 वेदादिकमलाबीजे पुरतोऽन्ते नमोऽपि च ।

तत्तन्नाम्ना सह तथा वटुको विग्रहीकृतः ॥
 सङ्केन्त इति मन्त्राः स्युरेतेषां जगदीश्वरि ।
 समस्तरूपचारैस्तु यथाविभवकल्पितैः ॥
 पूजयेद्वटुकानेताञ्छृण्वन्यावृत्तिपूजनम् ।
 पूजयेत् क्षेत्रपालाँश्च मध्ये किञ्चिदपक्षयोः ॥
 हेतुकं त्रिपुरघ्नं च अग्निजिह्वं तथैव च ।
 अग्निवेतालसंज्ञं च कालं चाथ करालकम् ॥
 एकपादं भीमनाथमुत्तरादिक्रमेण तु ।
 अधुना मन्त्रमेतेषां ब्रवीमि शृणु पार्वति ॥
 तारकूर्चक्षेत्रपालबीजत्रयमिदं पुरः ।
 एतन्नाम्ना सह पुनः क्षेत्रपालः सविग्रहः ॥
 डेन्तो महाभीषणश्च तद्देव प्रकीर्तितः ।
 क्रोधो हृच्छिरसी चापि मन्त्र एषां वरानने ॥
 मण्डलस्य चतुर्दिक्षु द्वौ द्वौ मध्ये च पूजयेत् ॥
 भैरवान् नव देवेशि शरदर्चनकर्मणि ॥
 असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्त एव च ।
 आनन्दश्च कपाली च भीषणस्तदनन्तरम् ॥
 संहारी सर्वशेषे स्यात् कीर्तिता नव भैरवाः ।
 तारत्रपारोषबीजं तत्तन्नाम ततः परम् ॥
 भैरवान्तं विग्रहि च डेन्तं हृन्मन्त्रसंयुतम् ।
 दिक्ष्वष्टसु बहिः पद्मादिगोशानष्ट पूजयेत् ॥
 इन्द्रोऽग्निश्च यमश्चैव लैर्ऋतो वरुणस्तथा ।
 वायुः सोमश्च ईशान एतन्नाम्ना परिस्थिताः ॥

वज्रं शक्तिश्च दण्डश्च खड्गः पाशोऽङ्कुशस्तथा ।
 ध्वजशूले अमीषां तु शस्त्राणि कथितानि ते ॥
 तैर्ऋतो वरुणश्चापि मध्येऽनन्तः प्रकीर्तितः ।
 तदस्त्रं चक्रमुदितं यथेन्द्रेशानमध्यतः ॥
 ब्रह्मा सपद्म इत्येते दिगीशा दश ईरिताः ।
 मन्त्ररीती इदानीं त्वं समाकल्पय भामिनि ॥
 प्रणवं पुरतो दत्वा तत्तन्नाम ततः परम् ।
 ततः परं तत्तदस्त्रं सशब्दपरिवृंहितम् ॥
 सवाहनपरीवारं सायुधं तदनन्तरम् ।
 शब्दाश्चत्वार इत्येते डेन्ताः कार्या नमस्ततः ॥
 ततो दद्याद्द्विलिं देव्यै पूर्वोदितविधानतः ।
 अष्टम्यामधिकं दद्यात् सप्तमीवलिदानतः ॥

सन्त्रान्तरे ।

ततो यथाशक्ति जपं कृत्वा स्तोत्रमुदीरयेत् ।
 वलिदानविधिः स्तोत्रं चाग्रे दक्ष्यते ।
 तथा ।

साष्टाङ्गं प्रणमेद्भूमौ देवीं भक्तिपरायणः ।
 (निर्णयामृते) पुराणान्तरे ।

ततः खड्गं नमस्कृत्य शत्रूणां वधसिद्धये ।
 इच्छेत विजयं राज्ये सुभिक्षं चात्मनो नृपः ॥
 पुनः पुनः प्रणम्यार्यां संस्मरेद्भृदये शिवाम् ।
 सर्वं कृत्वेति कौरव्य अष्टम्यां जागरं निशि ॥
 *नटनाटकघोषैश्च कारयेच्च महोत्सवम् ।

नटनर्तकगीतैश्च इति ३, ४, ५ पु० पा० ।

अथाष्टमीनवम्योः सन्धौ चामुण्डापूजा ।

(महाकालसंहितायाम्)

अष्टमीनवमीसन्धौ कुर्वते के चिदर्चनम् ।
 तत्सन्धिपूजनमिति पुराणादिषु कीर्तितम् ॥
 नवम्यामधरात्रे वा तत्परेणापि पूजनम् ।
 तान्त्रिकाः के चिदिच्छन्ति सिद्धिं तूभयथाऽर्चने ॥
 चामुण्डारूपधारिण्यास्तत्र देव्यास्तु पूजनम् ।
 विहितं नान्यरूपिण्याः कृत इत्येष निर्णयः ॥
 तन्मन्त्रं ध्यानमस्यास्तु समाकल्पय साम्प्रतम् ।

चामुण्डाया मन्त्रध्याने तन्त्रान्तरोक्ताष्टमातृकाप्रकरणे वक्ष्यामः ।
 तथा ।

एवं ध्यात्वा च सम्पूज्य विविधोपायनादिभिः ।
 शक्तौ तु मार्त्तिकीः स्थालीः परयेदन्नतेमनैः ॥
 पक्कन्नैराममांसैश्च रुधिरैर्देयपक्षिणाम् ।
 ताश्च संपूजयेद्गन्धै रक्तपुष्पाक्षतैरपि ॥
 उपरिष्ठाङ्गपदीपैरखिलैर्मनुभिश्च यः ।
 बलिं समुत्सृजेत् तेन महतीं श्रियमश्नुते ॥
 शक्तियामे ततः पश्चात् के चित् कुर्वन्ति कौलिकाः ।
 तद्विधानं पुरैवोक्तं तेनैवेतां समापयेत् ॥

अथ नवमीकृत्यम् ।

(भविष्यपुराणे)

नवम्यां श्रीसमायुक्ता देवैः सर्वैः सुपूजिता ।
 जघान महिषं दुष्टमवध्यं देवतादिभिः ॥
 लब्ध्वाऽभिषेकं वरदा शुक्ले चाश्वयुजस्य च ।

तस्मात् सा तत्र सम्पूज्या नवम्यां चण्डिका बुधैः ॥
 महत्त्वं हि यतः प्राप्ता तत्र देवी सरस्वती ।
 तदर्थं महतो प्रोक्ता नवमीयं सदा बुधैः ॥
 पूजयित्वा महादेवो नवम्यां मन्त्रचण्डिकाम् ।
 महत्त्वं प्राप्तवान् वीर ब्रह्मा विष्णुस्तथाऽमराः ॥
 तस्मादियं महापुण्या नवमी पापनाशिनी ।
 उपोष्या तु प्रयत्नेन सततं सर्वपार्थिवैः ॥
 पूर्वोत्तरेण ऋक्षेण संयुक्ता विधिवन्नृप ।
 विशेषतो नृपाद्यैश्च बालैर्वृद्धैः सयौवनैः ॥
 ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैरन्यैश्च सेवकैः ।

इत्यादि (दुर्गात्सवपद्धतैः) ।

सन्धान्तरे ।

ततो महानवम्यां च पूजयेज्जगदम्बिकाम् ।
 अष्टम्यां यावती प्रोक्ता विस्तरेण समर्हणा ॥
 नवम्यामपि कर्त्तव्या तावत्येव वरानने ।
 विशेषस्तत्र कर्त्तव्यं प्रभूतवलिदानकम् ॥

(महाकालसंहितायाम्)

नैमित्तिकक्रमेणैव पीठमूर्त्यर्चनं चरेत् ।
 शक्तौ नित्योदितावृत्यर्चनं कुर्वीत साधकः ॥
 नान्यां पूजां वरारोहे व्यवस्थेयं शिवोदिता ।
 पीठमूर्त्तौ पत्रिकासृन्मूर्त्तौ यो भक्तिभावितः ॥
 कुरुते तस्य विहितं पूजनद्वितयं तदा ।
 पत्रिकायाः पुरः पूजा पीठमूर्त्योस्ततः परम् ॥
 सर्वाऽपि तान्त्रिकी रीतिः पीठमूर्त्योरुदीरिता ।

पत्रिकादिषु पौराणी रीतिरुक्ता पुरारिणा ॥
 असंसृष्टं पृथक्कृत्य द्वयमेतन्मयोदितम् ।
 ततः परं सुरेशानि पाठयेदथ वा पठेत् ॥
 मार्कण्डेयपुराणान्तर्गतां भगवतीस्तुतिम् ।
 समग्रां वा पठेदाहो वधं शुम्भनिशुम्भयोः ॥
 महिषासुरस्याप्यथ वा मधुकैटभयोरपि ।
 कुर्यादुभयमेवात्र विधिं संकल्पपूर्वकम् ॥
 ब्राह्मणान् वरयित्वैव वस्त्रालङ्कारणासनैः ।
 विदध्यात् कामनोल्लेखं पूजां शक्त्या च पुस्तके ॥
 शनैः पठेत् पाठकोऽपि वर्णोच्चारणपूर्वकम् ।
 सुव्यक्तं नातिविशिष्टं न शिरश्चालगीतवत् ॥
 तनु मान्दोलयन् नापि न हसन् न रुदन् व्रजन् ।
 नाश्वन्नान्यैरालप्यंश्च न मध्ये चिच्छन्नवत् तथा ॥
 आचान्तः कृतशौचश्च पदोरुद्धमनीयवान् ।
 एतेन विधिनाऽधीते तुष्यते जगदम्बिका ॥
 यथोक्तफलदात्री च भवति प्राणवल्लभे ।
 यथैतत्पाठतो देवी प्रीता स्याद्भुतमीश्वरो ॥
 न तथा धूपदीपस्त्रग्वलिनैवेद्यविस्तरैः ।
 पठनं पाठनं वाऽपि तस्मादेतस्य यत्नतः ॥
 कार्यं शारदपूजायां कालिकातुष्टिमिच्छता ।
 देवीशारदपूजायां यथैतस्य हि नित्यता ॥
 होमस्यापि तथा ज्ञेया मुख्ये अङ्गे इमे मते ।
 हस्तमात्रं विधायादौ स्थण्डिलं श्रद्धया मृदा ॥

तत्राग्निस्थापनं कृत्वा वैदिकैर्मनुभिः प्रिये ।
घृताहुतिं वा जुहुयात् तिलमिश्रामथापि वा ॥
दिल्वपत्रं यवां पद्मं पायसं वा मधूक्षितम् ।
मन्त्रस्तत्र तु विज्ञेया भारती षोडशाक्षरी ॥
अथ वा जयदुर्गाया मन्त्रो यः परिनिष्ठितः ।

भारती षोडशाक्षरीति प्रकृताभिप्रायेण । जयदुर्गामन्त्रस्तु सकलसाधारण इति
बोध्यम् ।

तथा ।

सप्तशत्यास्तथा देवी एकैकलोक एव वा ।
मन्त्रे सहस्रसंख्या स्याच्छक्तावयुतमेव वा ॥
उभयत्रापि दातव्याः कर्मान्ते दक्षिणाः शुभाः ।
इदं कर्मद्वयं देवि मूर्तेः पुरत आचरेत् ॥
नाप्यदो द्वितयं कार्यं क्षपायां वासरावृत्ते ।
तस्यां कृतं तु विफलं जायते वेदशासनात् ॥
देवी सप्तशतीपाठं गृह्णाति विधिवत् कृतम् ।
विधिना वाऽप्यविधिना पुनर्होमं प्रयच्छति ॥
तस्माद्यत्नेन कर्तव्यो होमः शारदपूजने ।
होमः सप्तशतीपाठो वलिर्वादित्रवादनम् ॥
चतुष्टयमिदं शस्तं मासीषे कालिकार्चने ।
प्रभूतवलिदानं च कार्यं भूत्यनुसारतः ॥

अथ वलिदानविधिस्तत्रैव ।

ततो दद्याज्जीववलिं यथालाभं यथाविधि ।
विधिस्तु द्विविधः प्रोक्तः श्रौत आगमिकस्तथा ॥
श्रौतः श्रुत्युक्तमन्त्रेणागमस्तन्त्रोक्तमन्त्रकैः ।

श्रौतोऽपि स्वस्वगृहोक्तविधिना संप्रदीयते ॥

पशुजातिविशेषेण तत्राप्यस्ति भिदाऽधिका ।

(मेरुतन्त्रे)

वलिस्तु त्रिविधो जेयस्तान्त्रिकः स्मार्त्त एव च ।

वैदिकश्चेति तत्रादौ तान्त्रिकोऽष्टविधः स्मृतः ॥

नरश्च महिषः कोलइछागोऽविः सारसस्तथा ।

कपोतः कुक्कुटश्चेति सामान्याः पूर्वपूर्वतः ॥

तथा ।

कूष्माण्डं नारिकेलं वा श्रीफलं चक्षुमेव च ।

वस्त्रसंवेष्टितं कृत्वा छेदयेच्छुरिकादिभिः ॥

एवं स्मार्त्तो वलिः प्रोक्तो धर्मशास्त्रानुगामिनाम् ।

तथा ।

वैदिकं तु वलिं दद्यादोदनं स्विन्नमाषवत् ।

सरोचनमतिक्रूरदैवते वटकान्वितम् ॥

इत्युक्तं (महाकालसंहितायाम्) ।

श्रौतः श्रुतिषु सन्धेयो योऽध्वरेषु निरूपितः ।

वक्ष्याम्यागमिकं सर्वं यागस्थानक्रमागतम् ॥

न स देवो न सा देवो देवयोनिभिदा न सा ।

न स कालो न तद्भूतं यो नेच्छति वलिं प्रिये ॥

अमूर्त्ता ये च कालांशा माससंवत्सरर्त्तवः ।

पक्षायनाहोरजनीतिथिप्रहरसंक्रमाः ॥

एतेऽपि वलिमिच्छन्ति किं पुनर्देवयोनयः ।

वनस्पत्योषधिलतातरुगुल्मनगादयः ॥

स्थावरा जङ्गमाश्चापि वल्याकाङ्क्षां प्रकुर्वते ।

यस्य यस्य हि देवस्य यो यो वलिरुदीरितः ॥

एतत्प्रसङ्गेन शिवे स स कश्चन कथ्यते ।

स्वयम्भुवो बलिः सिंहो विष्णोर्वाध्रीणसः स्मृतः ॥

अथ इन्द्रस्य कथितो गण्डकः परमेष्ठिनः ।

विष्णवादिनुदीर्य वाध्रीणसादेरुत्सर्गमात्रं न तु हिंसेति विधानमुक्तावलीकृतः ।
वाध्रीणसलक्षणं त्वमे वक्ष्यते ।

तथा ।

शूकरो भैरवस्यापि प्रमथानां च जम्बुकः ।

प्रियो द्वीपो वेधसश्च चित्रको बलिरिष्यते ॥

गणाध्यक्षस्य भल्लूको यक्षाणां लोहितो मृगः ।

स्कन्दस्य गोधा विश्वेषां देवानां चमरोऽपि च ॥

विनायकानां च बलिः कृष्णसार उदीरितः ।

वेतालानां च महिषो गुह्यकानां च सम्बरः ॥

शच्याः शल्यो रोहिषस्तु तुषितानां प्रकीर्तितः ।

कृकलाशो दानवानां दैत्यानां श्येन उच्यते ॥

हिरण्यगर्भस्य बलिरष्टापद उदीर्यते ।

ईशानस्य पदस्वर्चा रुरु रुद्रस्य कीर्त्यते ॥

बलिर्ममापि गोकर्णः साध्यानां गवयस्तथा ।

सृमरो भासुराणां च वसूनामृक्ष इष्यते ॥

बृहस्पतेस्तु गवयो हस्ती चैव प्रजापतेः ।

कुरङ्गो गणसाध्यानां तक्षण उष्ट्रो निगद्यते ॥

श्राद्धीयविश्वदेवानां वृषभः परिकीर्तितः ।

अग्नेस्तु कुटरुः पक्षी चक्रवाकः प्रचेतसः ॥

पारुणो गार्हपत्यस्य दक्षिणाग्नेस्तु चीनकः ।

त्रमूराहवनीयस्य शशोऽर्यम्ण उदीरितः ॥

वायोर्वलाका सोमस्य हंसश्चन्द्रस्य वै लवः ।
 वरुणस्य तथा नक्रो मित्रस्य च कुलीयकः ॥
 चाषोऽग्नीषोमयोजेय इन्द्राग्नयोः क्रौञ्च एव च ।
 मित्रमित्रस्य मद्गुः स्यात् कुलीकस्त्वष्टुरेव हि ॥
 आदित्यानां तथा न्यङ्गुः कृष्णोऽपि हि यमस्य च
 स्यात् प्राजापत्यवाय्वोश्च गोमृगौ बलिरीश्वरि ॥
 नासत्ययोर्मयूरोऽपि पूष्णो जम्बुक उच्यते ।
 गर्दभो निर्ऋतेर्मित्रावरुणस्य कपोतकः ॥
 गोधादि देवपत्नीनां मालिकः सवितुस्तथा ।
 कुलीको देवयोनीनां राजज्ञोऽप्सरसामपि ॥
 अन्तरिक्षस्य योक्त्वस्तु भूमेराखुर्दिवः कशा ।
 दिशां बलिस्तु नकुलो विदिशां बभ्रुरेव च ॥
 अपां मत्स्यस्तेजसस्तु होमीयाख्यो भुजङ्गमः ।
 जलः सामान्यकालस्य तथा कालस्य चिल्लिका ॥
 सुपर्णश्चापि दात्यूहो बलिर्वत्सरमासयोः ।
 कपिञ्जलो वसन्तर्त्तोग्रीष्मस्य कलविङ्ककः ॥
 वर्षाणां तित्तिरिजेयः शरदो वर्त्तिका तथा ।
 क्रकरश्चापि ह्रैमन्तः शैशिरो वैककर्कपि ॥
 पक्षस्य खज्जरीटः स्यादयनस्य तु सारसः ।
 पारावतो दिनस्यापि रात्रेः सीरायुरुच्यते ॥
 प्रोक्ता जलौका सन्ध्याया यैज्ञराजस्तिथेरपि ।
 यामस्य सुखिलीकस्तु संक्रान्तेरन्यपायकः ॥
 किरीकको ग्रहाणां च नक्षत्राणां शरव्यकः ।

राशीनामपि साकल्यो लग्नानामपि चुञ्चुटः ॥
 शिशुमारः समुद्रस्य नदीनां च तिमिङ्गिलः ।
 आवर्त्तानां च मकरो विचीनां शङ्खलोऽपि च ॥
 उष्ट्रः पातालदेवस्य शङ्खर्वै ताण्डवस्य च ।
 पर्जन्यानां च मण्डूको वृष्टेरपि महीलताः ॥
 विद्युतामपि सम्बूको भारद्वाजोऽश्नेरपि ।
 सिनीवालीकुहूराकानुमतीनां क्रमेण हि ॥
 शरादिकङ्कहारीतजीवञ्जीवाः प्रकीर्त्तिताः ।
 बलिः कलञ्जः प्रेतानां पिशाचानां वकोऽपि च ॥
 भूतानां कुररश्चापि कुक्कुटो ब्रह्मरक्षसाम् ।
 गन्धर्वाणां कोकिलोऽपि घोणकानां च वायसः ॥
 वर्त्तकः क्षेत्रपालानां वटुकानां च कुक्कुटः ।
 यावत्यो जातिहारिण्यस्तासां भारुण्ड उच्यते ॥
 छुच्छुन्दरीर्ह्यश्मनः स्याज्जलस्य शरभो बलिः ।
 चिल्लो बलिर्डाकिनीनां किन्नराणां च तक्षकः ॥
 भल्लिङ्गो योगिनीनां स्यान्निधीनां टिट्ठिभो बलिः ।
 इन्द्रियाणामथो वच्मि चक्षुषोर्मशको बलिः ॥
 श्रोत्रयोर्भ्रमरश्चापि घ्राणस्य सरघास्तथा ।
 रसनाया बलिश्चिक्रा मक्षिका च त्वचो बलिः ॥
 पतङ्गो मनसश्चापि प्लुषिर्वाचो बलिर्मतः ।
 झिल्लीकीटो बलिः पाण्योः स्वद्योतः पदयोरपि ॥
 पायोर्यूका समुद्दिष्टा उपस्थस्य सिनीपतिः ।
 वनस्पतीनां मधुको लतानां तैलपायिका ॥

मत्कुणा औषधीनां स्युस्तरूणां च पिपीलिका ।
 गुल्मानां गन्धकीटोऽपि शैलानां बुद्धतास्तथा ॥
 शवो बलिः पूतनाया राक्षसीनामहिर्बलिः ।
 जातमात्रशिशुः षष्ठ्याः शङ्खो बालग्रहस्य च ॥
 चकोरो गरुडस्यापि मातृणां तैलपायिका ।
 विद्याधराणां च कोलो यज्ञानां शुक एव च ॥
 गृध्रोऽरुणस्य च बलिर्नरकस्य करेटुकः ।
 राज्ञो बलिर्मर्कटोऽपि कान्तारस्य प्लवः खगः ॥
 सर्वेषामेव देवानां देवीनां च विशेषतः ।
 बलित्वेन विनिर्दिष्टा महिषच्छागलादयः ॥
 जलजाः स्थलजाश्चापि ग्रामजारण्यजास्तथा ।
 पशवः पक्षिणः कीटास्तिर्यग्योनय एव च ॥
 इमे विधात्रा विहिता बलित्वेन दिवौकसाम् ।
 नान्यैर्नैवेद्यसम्भारैस्तथा तुष्यन्ति देवताः ॥
 यथा पशूनां बलिभिर्विहङ्गानां तथैव च ।
 अत एव हि देवेशि मीमांसावेदयोरपि ॥
 देवानां प्रियशब्दस्तु पशुपर्याय उच्यते ।
 एवं विज्ञाय सिद्धान्तं देव्याः सन्तोषहेतवे ॥
 पशून् दद्याद्बलित्वेन मेध्यानपि विहङ्गमान् ।
 किमिकीटादयः सर्वे ये तिर्यश्चः प्रकीर्त्तिताः ॥
 न ते देवीबलित्वेन विधात्रा विहिताः प्रिये ।
 आलभेत वृषं श्वेतं यजे गोमेधनामनि ॥
 नरमेधे नरं चापि गजक्रान्ते गजं तथा ।

अश्वमेधे तथैवाश्वं शङ्खचूडे च हस्तिनम् ॥
 ब्रवीति यत्र वेदोऽपि तत्र कैव विचारणा ।
 तस्मान्नैमित्तिकार्चायां बलिरावश्यकः प्रिये ॥
 विशेषेण प्रदात्तव्यो देवीसन्तोषहेतवे ।
 बलिं विना नैव देवी पूजामङ्गीकरोति हि ॥
 तत्राप्युभौ प्रशस्येते महिषश्छाग एव च ।
 अन्यदेवोचितबलिर्विचारैः किं प्रयोजनम् ॥
 येन सन्तुष्यते काली तं विचारं ब्रुवोऽधुना ।
 याः काश्चिद्बुद्धकाल्यास्तु विहिताः पशुजातयः ॥
 आरण्या अथ वा ग्राम्या जलजानां च जातयः ।
 खगानां जातयश्चापि ता एवादौ ब्रवीमि ते ॥
 मत्स्या मृगा वराहाश्च कच्छपा महिषास्तथा ।
 गण्डका गोधिका ग्राहाः शार्दूला हरयोऽपि च ॥
 नकुलाः शरभश्चापि गवयाश्छागलास्तथा ।
 मनुष्याः पक्षिणश्चापि तेषां कोशा अपि प्रिये ॥
 भगवत्या बलित्वेन विधात्रा बलिकल्पिताः ।
 एतेषां बलिदानेन सर्वकार्याणि साधयेत् ॥

बलिदानफलान्याह ।

बलिभिर्वर्धते ह्यायुर्बलिभिः शाम्यते रुजा ।
 जयत्यरातीन् बलिभिः प्राप्यते बलिभिर्धनम् ॥
 सिद्धिमाप्नोति बलिभिर्बलिभिस्त्रिदिवं व्रजेत् ।
 निष्कामाणां बलौ दत्ते प्राप्यो मोक्षोऽपि यज्ञवत् ॥

मत्स्यादीनां जातिभेदानाह ।

जातिभेदानथो वक्ष्ये समासादवधारय ।

अष्टादशभिधा मत्स्याश्चतुर्विंशतिधा मृगाः ॥
 वराहाः पञ्चधा प्रोक्तास्त्रिभेदाः कच्छपा अपि ।
 द्विभेदा महिषास्तद्वद्वगण्डकाश्च चतुर्विधाः ॥
 गोधिका च त्रिभेदा स्याद्विभेदो ग्राह एव च ।
 त्रिविधौ व्याघ्रसिंहौ च नकुलो द्विविधोऽपि च ॥
 शरभश्चैकजातिः स्यान्नास्य भेदो वरानने ।
 गवयस्त्रिविधः प्रोक्तश्छागः पञ्चविधो मतः ॥
 चतुर्विधा मनुष्याश्च षट्त्रिंशज्जातयः खगाः ।
 क्रमेण नामान्येतेषां व्याहरामि तव प्रिये ॥
 शङ्खलो रोहितः शालः पाठीनो राघवोऽपि च ।
 प्रोष्ठी नालशिशुश्चङ्गमेरेटाङ्गुलिचाम्बटाः ॥
 तिमिभाकूटराजीवगडकाः शस्तजातयः ।
 गोकर्णकृष्णसारैणरुन्यङ्गुचमूरवः ॥
 प्रियवातप्रमीचीनसमूहस्तमरक्रवाः ।
 रङ्गुशम्बरकन्दल्यः सुखरो रोहिषो वटः ॥
 कदल्येन विसालाक्षपतङ्गोल्लाटरोहिताः ।
 वराहास्तब्धकक्रोडकुशाक्षीणजलखनाः ॥
 कूर्मश्चित्री चित्रकटो वामनश्चेति वै त्रिधा ।
 अकेरः क्षीरिलश्चापि महिषो द्विविधो मतः ॥
 कौञ्जरो वारिलश्चामी वैशः खड्गाश्चतुर्विधाः ।
 हिरण्या किलिका मोना गोधिका त्रिविधा मता ॥
 दीर्घग्रीवश्चर्मपूरो ग्राहो द्विविध एव च ।
 तरक्षुस्तरुगश्चित्रो व्याघ्रस्त्रिविध उच्यते ॥

शरलः कृकयुर्मेदी सिंहोऽपि त्रिविधो मतः ।
 स्थूलः कलिङ्गश्च तथा नकुलोऽपि द्विधेरितः ॥
 एकजातिं विना नैव शरभोऽन्यः प्रजायते ।
 लाटिको विट्चरः सास्त्री गवयोऽपि त्रिधोच्यते ॥
 त्रिपिवः पालितः क्षौरी वर्करो मारिषस्तथा ।
 पञ्चभेदो भवेच्छागोऽविरपि त्रिविधो मतः ॥
 उर्मिकः पारिशो भेटो मनुष्यानपि मे शृणु ।
 न मनुष्यत्वसामान्ये चातुर्विध्यं हि वर्तते ॥
 प्रकारभेदतस्तस्या भिन्नता परिकल्पते ।
 चण्डिकानुगृहीतस्य वितृष्णस्य भवाम्बुधौ ॥
 तत्तल्लोकावाप्तिफलश्रवणोत्कण्ठितस्य च ।
 स्वतः प्रवृत्तिर्देव्यास्तु बलिरूपो भवाम्यहम् ॥
 आगत्य च स्वयं ब्रूते मां बलित्वेन योजय ।
 प्रत्यक्षमेव सर्वेषां नृपस्य च विशेषतः ॥
 स एक उदितो देवि द्वितीयमवधारय ।
 बहुवित्तस्य रत्नादेस्तेनो लोकधृतश्च यः ॥
 निर्णयं परिषन्मध्ये प्राग्विपाकेन कीर्तितः ।
 शीर्षच्छेद्यतया देवि द्वितीयः स निगद्यते ॥
 युद्धे जितो धृतः शत्रुः कूटयोधी भटाकृतिः ।
 स तृतीयो विनिर्दिष्टश्चतुर्थमवधारय ॥
 यं आततायी पान्थानां कान्तारेऽप्यथ वा गृहे ।
 विदितश्चापि निर्णीतः साक्षिभिः सत्यवादिभिः ॥
 स हि तुर्यः समाख्यातः पञ्चमो नोपपद्यते ।

वक्ष्ये विहङ्गान् ये देव्यै बलित्वेन निरूपिताः ॥
 पारावतास्ताम्रचूडा हंसा वाध्रीणसास्तथा ।
 उलूका लोहपृष्ठाश्च सर्वाघाटाश्च सारसाः ॥
 कलविङ्गाश्चकोराश्च चक्रवाकाः शुका अपि ।
 शतपत्रा भरद्वाजा भूलिङ्गाश्चटकास्तथा ॥
 कारण्डवाश्चक्रवाकाः पारुश्वाश्च कुलीयकाः ।
 प्लवाः कुटरवश्चापि वर्तकाः कुक्कुभा अपि ॥
 तित्तिर्युरुकक्रौञ्चाश्च नवचाषशिखण्डिनः ।
 योक्त्रदात्यूहसाकल्पप्रैङ्गराजन्यवायकाः ॥
 जिहीका सुखिलोकाश्च मद्गुहारीतवर्तकाः ।
 जीवञ्जीवाश्च हारीताः कोयष्टाश्मटटिडिभाः ॥
 वककोकिलगृध्राश्च करेटुश्चोनखञ्जनाः ।
 चिरीकाश्चैव जहिकाः सीचापुञ्जन्तमेकलाः ॥
 कशाः सुपर्णा भारुण्डा हामायाश्चापि पार्वति ।
 इति ते कथिताः सर्वे षष्टिभेदा विहायसाम् ॥
 देव्यै योग्यबलित्वेन नान्य उक्ता विहङ्गमाः ।
 एतेषां जातिभेदास्तु वर्तन्ते डामरादिषु ॥
 बहुत्वात् ते न कथ्यन्ते ग्रन्थगौरवभीतितः ।
 कपोतभ्रामका बङ्गमनित्थतुरुकादयः ॥
 पारावतास्तु दशधा हंसाः पञ्चविधास्तथा ।
 राजहंसा मल्लिकाख्या धार्तराष्ट्राः परिस्फुटाः ॥
 माहेया एवमन्येऽपि ज्ञेया विगहजातयः ।
 अधुना संप्रवक्ष्यामि बलिना येन येन हि ।

तथा ।

यं यं कालमभिव्याप्य तुष्टा भवति कालिका ॥
 * अष्टादशविधैर्मत्स्यैः कच्छपैरपि चण्डिका ।
 तृप्यते मासमात्रं हि बलित्वेन नियोजितैः ॥
 ताम्रचूडस्य बलिना हंससारसयोरपि ।
 तृप्ता भवति मासौ द्वौ त्रीन् मासान् द्वीपिनक्रयोः ॥
 कलविङ्कैरुलूकैः स्यात् तृप्ता मासचतुष्टयम् ।
 पञ्च मासान् भवेत् तृप्ता शुकैः पारावतैरपि ॥
 दार्वाघाटैश्चकोरैश्च षणमासांस्तृप्तिमाप्नुयात् ।
 तृप्यते सप्त मासान् सा जिहीकैश्च कुलीयकैः ॥
 चतुर्विंशतिभेदैश्च कुरङ्गैर्गव्यैरपि ।
 मासानष्टौ भवेत् तृप्ता नव मासान् पिकैरपि ॥
 हारीतबलिना देवी दश मासांश्च तृप्यते ।
 तथा दात्यूहदानेन गजराजैर्वरानने ॥
 मासानेकादश शिवा तृप्तिमायाति सिद्धिदा ।
 गोधिकाबलिदानेन तृप्ताऽब्दं व्याप्य जायते ॥
 अविना नकुलेनापि त्र्यब्दं तृप्ता भवेदपि ।
 आज्ञेन बलिना वाऽपि तुष्टा स्यात् पञ्चवत्सरम् ॥
 जीवञ्जीवेन पाङ्केन तुष्यतेऽष्टौ च हायनान् ।
 पार्ष्णैर्गौन बलिना वराहबलिनाऽपि च ॥
 द्वादशाब्दमभिव्याप्य तुष्टा भवति कालिका ।
 हामायनामा यः पक्षी सिंहाकृतिधरोऽरुणः ॥
 तद्वानात् तुष्यते देवी पञ्चविंशतिवत्सरम् ।

* मत्स्यादिभेदाः पशुभेदाश्च पूर्वमुक्ताः सः प्रति तेषामप्रचारात् तन्नामानि (शब्दक-
 ल्पबुधमवाचस्पत्याभिधानादिष्वपि) सर्वाणि नेपथ्येऽतः पुस्तकस्थान्येव रक्षितानि ।

त्रिविधैरपि शार्दूलैर्महिषैर्द्विविधैरपि ॥

चतुर्विधैस्तथा खड्गैर्बलित्वेन समर्पितैः ।

शतं संवत्सरं यावच्चण्डिका प्रीतिमश्नुते ॥

एको वार्ध्नीणसोऽजश्च विशेषः परिकीर्त्यते ।

अपरः पक्षिजातीयो हिमवच्चरणस्थितः ॥

वृद्धः श्मश्रुधरः श्वेतः पादस्फोटीन्द्रियोज्झितः ।

त्रिविधो रक्तरसनो निःशृङ्गः स्वरभङ्गयजः ॥

पीतचञ्चू रक्तशिराः सितपक्षोऽसिताङ्गिकः ।

नीलप्रीवः पाटलाभगलो वार्ध्नीणसः खगः ॥

(कालिकापुराणेऽपि)

त्रिपिवं त्विन्द्रियक्षीणं श्वेतं वृद्धमजं परम् ।

वार्ध्नीणसं विजानीयाद्धव्यकव्येषु संस्कृतम् ॥

नीलप्रीवो रक्तशिराः कृष्णपादः सितच्छदः ।

वार्ध्नीणसः स पक्षो स्यान्मम विष्णोरपि प्रियः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

अजवार्ध्नीणसैस्तुष्टा भवेत् त्रिंशतिवत्सरम् ।

निरङ्गसामान्यशशैर्बलित्वेन निरूपितैः ॥

जायते गुह्यकाली सा तुष्टा पञ्चशतं समाः ।

शरभैरथ सिंहैश्च शोणितैश्च खदेहजैः ॥

दत्ते सन्तुष्यते काली सहस्रं परिवत्सरान् ।

वार्ध्नीणसविहङ्गेन दत्तेन विधिना प्रिये ॥

अब्दं द्वादशसाहस्रं तुष्यते जगदम्बिका ।

चौराततायिरूपेण नारेण बलिना तथा ॥

त्रीणि लक्षाणि वर्षाणां प्रीतये गुह्यकालिका ।

एते ते कथिता देवि बलयस्तृप्तिहेतवः ॥

अथ निषिद्धबलयस्तत्रैव ।

अदेयानधुना वक्ष्ये पशूनपि विहङ्गमान् ।

मल्लूकान् मर्कटान् फेरून् सर्पानोतून् शुनस्तथा ॥

क्रमेलकाँश्च बालेयान् शल्यान् विट्चरशूकरान् ।

जलजेष्वपि मण्डूकान् रासभान् शिशुमारकान् ॥

कुलीरान् दीर्घपृष्ठादीन् मीनानपि च भूरिशः ।

खगेषु वायसाँश्चिह्नान् दुर्विदान् कुलिकानपि ॥

एवमन्येऽपि विज्ञेया नानाशास्त्रागमादिषु ।

तथा ।

काँश्चिन्निषिद्धान् वक्ष्यामि विहितेषु बलिष्वपि ।

ग्राम्याणामथ वन्यानां पशूनां पक्षिणां तथा ॥

त्रियं नैव प्रयुञ्जीत बलिकर्मणि साधकः ।

ज्ञानपूर्वं बलिं दत्वा नरकं प्रतिपद्यते ॥

अज्ञानेन वितीर्यापि किञ्चित् पापं समश्नुते ।

अत्रिमाससमुत्पन्नं पशुं न विनिवेदयेत् ॥

न्यूनं तदर्धान्न खगं जातु देव्यै समर्पयेत् ।

भग्नशृङ्गं भग्नदन्तं छिन्नलाङ्गूलमेव च ॥

काणं व्यङ्गं रोगिणं च शृङ्गाहतनरं तथा ।

दुष्टं गलितरोमाणं क्षीरपं च गलद्विशम् ॥

पशुं न दद्यादीदृक्षं तथा चैव विहायसम् ।

छिन्नत्रोटिं छिन्नपक्षं रुग्णमाहारवर्जितम् ॥

अनुङ्गीनं तथाऽऽकाशे मातुरङ्गे परिस्थितम् ।

विहितावपि विज्ञातौ न दद्यात् पशुपक्षिणौ ॥

तन्त्रान्तरे ।

कृष्णवर्णो बलिर्यस्तु श्वेतपुच्छो यदा भवेत् ।

छागलं तादृशं विद्वान् दूरतः परिवर्जयेत् ॥

एवं सितं कृष्णपुच्छं वर्जयेत् मतिमान् सदा ।

(महाकालसंहितायाम्)

यस्य यस्य निषिद्धो यः स इदानीं निरूप्यते ।

नरं केशरिणं व्याघ्रं चाषं खञ्जनमेव च ॥

स्वकीयरुधिरं मद्यं न दद्याद्ब्राह्मणः क्वचित् ।

तौ द्वौ खगौ तथा सिंहं द्वीपिनं मानुषं तथा ॥

दत्त्वा रोगी च हीनायुर्भूत्वा नरकमश्नुते ।

आत्महत्यामवाप्नोति दत्त्वा स्वरुधिरं द्विजः ॥

दत्त्वा देव्यै द्विजो मद्यं ब्राह्मणाद्विच्युतो भवेत् ।

चाण्डालत्वमवाप्नोति सर्वकर्मविवर्जितः ॥

न कृष्णसारं वितरेद्दुर्हिणं च नराधिपः ।

कृष्णसारं ददद्देव्यै द्वितीयो वर्ण ईश्वरि ॥

ब्रह्मघ्नत्वमवाप्नोति सर्वकर्मविवर्जितः ।

न वैश्याः शूकरं दद्युर्न वर्त्तककुलीयकौ ॥

ददतां तत्क्षणादेव महापातकता भवेत् ।

वर्णोऽपरो नो वितरेद्दोधिकाशुखद्विजिनः ॥

मूषं मार्जारकं चाषं शूद्रो दत्त्वा पतत्यधः ।

मौहाच्छठाद्वा ददतां सद्यो ब्रह्मघ्नता भवेत् ॥

वानप्रस्थो ब्रह्मचारी गृहस्थो वा दयापरः ।

सात्त्विको ब्रह्मनिष्ठश्च यश्च हिंसाविवर्जितः ॥

ते न दद्युः पशुबलिमनुकल्पं चरन्त्यपि ।

अनुकल्पेऽपि मुख्येऽधिकारिण एवाधिकार इति प्रागुक्तम् ।

अनुकल्पविधिस्तु तत्रैवोक्तो यथा ।

सात्त्विको जीवहत्यां हि कदा चिदपि नो चरेत् ।

इक्षुदण्डं च कूष्माण्डं तथा वन्यफलादिकम् ॥

क्षोरपिण्डैः शालिचूर्णैः पशुं कृत्वा चरेद्वलिम् ।

तत्तत्फलविशेषेण तत्तत्पशुमुपानयेत् ॥

तथा ।

महिषत्वेन कूष्माण्डं छागत्वेनैव कर्कटीम् ।

वृन्ताकं कुक्कुटत्वेन मेषत्वेन च तुम्बिकाम् ॥

रम्भापुष्पं बीजपूरं पिण्डं जीवं कलौ भवेत् ।

मानुषत्वेन पतसं मत्स्यत्वेनेक्षुदण्डकम् ॥

शूराणां शम्बरत्वेन तथा कोशातकं मृगे ।

पायसं तु गजत्वेन मार्जारत्वे कुलित्थकम् ॥

पटोलं शूकरत्वेन शर्करावालुकं तथा ।

खड्गत्वेन महेशानि मत्स्यत्वे कदलीफलम् ॥

मूषत्वे मूलकं चैव सारङ्गत्वे कलिञ्जकम् ।

करित्वे नारिकेलं च कल्पयेत् परमेश्वरि ॥

माषाः सर्वबलिन्त्वेन सर्वेषां कृशरान्नतः ।

तथा ।

तत्तत्पशुप्रदातॄणां फलावाप्त्यै वरानने ।

घृतगोधूमैक्षवाद्यैः फाणितैरन्नजैस्तथा ॥

कृत्वा तं तं पशुं दद्यात्तत्तत्फलमवाप्नुयुः-इति ।

अथ प्रशस्तपशुलक्षणं (रत्नावल्याम्)

ऊर्ध्वशृङ्गो लम्बकर्णः एकवर्णोऽतिपीवरः ।

नीरोगः पुष्टकायश्च सदर्पश्च ब्रह्मलोर्जितः ॥

नाधिकाङ्गो न हीनाङ्ग एकद्वित्र्यादिहायनः ।

प्रशस्तपशुरीदृक्षो देवीप्रीतिकरः शुभः ॥

तन्त्रान्तरे ।

कृष्णवर्णदछागलस्तु पृष्ठवंशे सितो यदि ।

प्रशस्तं तं विजानीयाद्विपरीतं विवर्जयेत् ॥

विपरीतमिति श्वेतवर्णम् । पृष्ठवच्छेदेन नोलभित्यर्थः ।

(त्रैपुरपद्धत्याम्)

बल्यन्ते छागलबलिं तथा मेवं सुरेश्वरि ।

प्रदद्यात् सर्वकालेषु सर्वकामार्थसिद्धये ॥

निरत्ये नैमित्तिके काम्ये माहिषं बलिमाहरेत् ।

जयाय सर्वकामाय देवीलोकाप्तसिद्धये ॥

(महाकालसंहितायाम्)

पशूनां यत्र बाहुल्यं भवेद्विज्ञानुसारतः ।

तत्रैकं प्रथमं देवि सर्वलक्षणलक्षितम् ॥

ऊर्जस्विनं सुन्दरं च बलिनं पशुमुत्सृजेत् ।

तथा ।

पशूनामिह सर्वेषां प्रोक्षणं चैवमेव हि ।

कश्चिद्विशेष उत्सर्गे फलं देवायुदीरणे ॥

(त्रैपुरपद्धत्याम्)

सर्वलक्षणसंयुक्तं पशुं संस्त्राप्य मन्त्रतः ।

देव्यग्रे स्थापयित्वाऽर्घोदकैः संप्रोक्षयेत् ततः ॥

अस्त्रमन्त्रेण संरक्ष्य कवचेनावगुण्ठ्य च ।

मूलमन्त्रं समुच्चार्य धेनुमुद्रामृतीकृतम् ॥

गन्धपुष्पाक्षतैः सम्यक् परिपूज्योपचारकैः ।

कर्णे तस्य पठेन्मन्त्रं पशुपाशविमोचनम् ॥

ॐ पशुपाशाय विघ्नहे विप्रकर्णाय धीमहि तन्नो जीवः* प्रचो-
दयात् ।

गायत्रीयं समाख्याता पशुपाशविमोचिनी ।

इमां पठेदक्षकर्णे तस्य मुक्तिप्रसिद्धये ॥

संप्रोक्षयेदिति प्रोक्षणं मूलमन्त्रेणैव ।

अर्घपात्रोदकैः शुद्धैर्मूलेन प्रोक्षयेत् त्रिशः ।

इति महाकालोक्तेः ।

गात्र्यन्तरमुक्तं तत्रैव ।

योगिनीबीजतो डेन्तं बलिरूपं तु विघ्नहे ।

देवीप्रियं पूर्ववच्च धीमहीति ततः परम् ॥

तन्नः पशुरिति प्रोच्य वदेच्चाथ प्रचोदयात्-इति ।

योगिनीबीजं छिमिति (त्रैपुरपद्धत्याम्) ।

ततः खड्गं यजेन्मन्त्री मन्त्रेणानेन दक्षतः ।

तारं च भुवनेशानो कालीयुग्मं समालिखेत् ॥

वज्रेश्वरीपदं पश्चाच्छोहदंष्ट्रां ततः परम् ।

डेन्तां हृदसुयुग्मैकसङ्ख्यवर्णो मनुर्मतः ॥

अतो न गन्धपुष्पाद्यैः खड्गमभ्यर्चयेद्बुधः ।

ततस्तस्य मुष्टिदेशे मध्ये चाग्रे यथाक्रमम् ॥

गन्धपुष्पाक्षतैर्मन्त्री मिथुनत्रितयं जयेत् ।

वागीशीसहितो ब्रह्मा लक्ष्मीनारायणौ तथा ॥

उमामहेश्वरौ चेति संप्रोक्तं मिथुनत्रयम् ।

ततश्चानेन मन्त्रेण तं खड्गमभिमन्त्रयेत् ॥

खड्गायासरनाशाय शक्तिकार्याय तत्पर ।

पशुश्छेद्यस्त्वया शीघ्रं खड्गनाथ नमोऽस्तु ते ॥

* रुद्र इति ४ पु० पा० ।

ततस्तु ताम्रपात्रस्थकुशाक्षतजलादिकम् ।
 गृहीत्वा मूलमुच्चार्य संकल्प्य पशुमुत्सृजेत् ॥
 गृहीत्वाऽक्षततोयादि पशोः शिरसि संत्यजेत् ।
 ततस्तेनैव खड्गेन मूलमन्त्रेण साधकः ॥
 पशुच्छेदं प्रकुर्वीत स्वयं देवीमनुस्मरन् ।

(मेरुतन्त्रसिद्धान्तसारयोः)

यदा संचालयेद्गात्रं गृहीतस्तु यथेच्छया ।
 यावन्न चालयेद्गात्रं पशुस्तावन्न हन्यते ॥
 उत्तराभिमुखो भूत्वा बलिं पूर्वमुखं तथा ।
 निरीक्ष्य साधकः पश्चादिमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥
 पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः ।
 प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम् ॥
 चण्डिकाप्रीतिदानेन दातुरापहिनाशनम् ।
 चामुण्डाबलिरूपाय बले तुभ्यं नमो नमः ॥
 यज्ञार्थे पशवः सृष्टाः स्वयमेव स्वयम्भुवा ।
 अतस्त्वां घातयाम्यद्य तस्माद्यजे बधोऽवधः ॥
 इमं देहं परित्यज्य भूत्वा देववपुर्धरः ।
 मोदस्व प्रमथैः सार्धं यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥
 ऐं हौं श्रीमिति मन्त्रेण त्वं बलिं मत्स्वरूपिणम् ।
 चिन्तयित्वा न्यसेत् पुष्पं कुम्भकेनास्य मस्तके ॥

(महाकालसंहितायाम्)

ध्यायेत् कुसुममादाय खड्गमादौ वरानने ।
 कृष्णं पिनाकपाणिं च कालरात्रिस्वरूपिणम् ॥
 उग्रं रक्तास्यनयनं रक्तमाल्यानुलेपनम् ।

रक्ताम्बरधरं चैव पाशहस्तं कुटुम्बिनम् ॥
पिवमानं च रुधिरं भुञ्जानं क्रव्यसंहतिम् ।
क्षोभयन्तं जगत् सर्वं कम्पनादिप्रचारणैः ॥
वेष्टितं मृत्युकालाभ्यां वामदक्षिणभागतः ।

तन्त्रान्तरे ।

ततः खड्गं यजेन्मन्त्री पाद्याद्यैरुपचारकैः ।
गन्धपुष्पाक्षताद्यैश्च मन्त्रेणानेन मन्त्रवित् ॥

मन्त्रस्तु पूर्वोक्त एव ।

(महाकालसंहितायाम्)

ततो बद्धाञ्जलिर्मन्त्रं पठेत् खड्गं निरीक्ष्य वै ।
रसना त्वं चण्डिकायाः सुरलोकप्रसाधकः ॥
भुङ्क्ष्वैतस्य पशो रक्तं क्रव्यसंहतिमेव च ।
छिन्धीममिव* मे शत्रुं मङ्गलानि प्रयच्छ मे ॥
दैत्यदानवरक्षोऽसृष्ट्योदोन्मत्त नमोऽस्तु ते ।
एतेन खड्गमामन्त्र्य तन्नामाष्टकमुच्चरन् ॥
गृह्णीयान्निशितं खड्गं येन सद्यो भवेद्धवः ।
असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः ॥
श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपाल नमोऽस्तु ते ।

(मेरुतन्त्रे)

ओं हूं फडिति मन्त्रं जपन् संछेदयेद्बलिम् ।
एकेनैव प्रहारेण चिच्छन्नो देवततुष्टये ॥

(महाकालसंहितायामपि)

चन्द्रहासेन खड्गेन छिन्द्यादेकप्रहारतः ।
उत्थाय हननं कुर्यान्नोपविश्य कदा चन ॥

* छिन्धीश पिव इति २ पु० पा० ।

(कालिकापुराणे)

चन्द्रहासेन कर्पूरा वा छेदनं मुख्यमुच्यते ।
 दात्रासिधेनुककचशङ्कुलाभिस्तु मध्यमम् ॥
 असिधेनुः स्वल्पखड्गः शङ्कुला चक्रकर्तरी ।
 क्षुरक्षुरप्रभल्लैश्च मध्यमं परिकीर्तितम् ॥
 एभ्योऽन्यैः शक्तिबाणाद्यैर्वलिश्छेद्यः कदाऽपि न ।
 नास्ति देवी बलिं तं तु दाता मृत्युमवाप्नुयात् ॥
 हस्तेन छेदयेद्यस्तु प्रोक्षणं साधकः पशुम् ।
 पक्षिणं वा ब्रह्महत्यां स प्राप्नोति दुरुत्सहाम् ॥
 नामन्त्र्य खड्गं तु बलिं नियुञ्जीत विचक्षणः ।

तन्त्रान्तरे ।

सर्वेषामुत्तमः खड्गश्चन्द्रहासः सुखावहः ।
 पञ्चाशदङ्गुलः कार्यः किं वा तालत्रयेण तु ॥
 करवीरदलाकारः किं वा पद्मदलाकृतिः ।
 अथ वा कुब्जखड्गेन दण्डखड्गेन भेदयेत् ॥

(महाकालसंहितायाम्)

सहस्रायुतलक्षाणां बलीनां सम्भवे सति ।
 द्वौ त्रीन् पञ्च तथाऽष्टौ वा दश वा द्वादशापि वा ॥
 एभ्योऽधिकान् नैव कुर्याद्देवी भावतया स्थितान् ।
 प्राच्याशाभिमुखान् कृत्वा युगपन्मन्दमीरयेत् ॥
 तन्त्रेणैव बलीन् सर्वान् प्रोक्षयेद्देशिकोत्तमः ।
 छेदका अपि भूयांसः कर्तव्याः कमलानने ॥
 हरिद्वीप्यजकोरभ्रलुलायाकाशगामिनः ।

* देवीभाव-इति २ पृ० पा० ।

दद्यादेतान् वामभागे पानकानि च यानि च ॥

उरग्नो मेघः ।

तथा ।

मत्स्यान् ग्राहान् शशान् खड्गान् कमठान् कोलमोधिकाः ।

यावतो मृगभेदाँश्च दद्यात् संमुख एव हि ॥

(श्रीक्रमसंहितायाम्)

यत्नतस्तं बलिं दद्यान्न हन्यादात्मना पुनः ।

यदि हन्यात् प्रमादेन रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

महाकालोऽपि ।

स्वहस्तेन पशुं हत्वा पशुयोनिमवाप्नुयात् ।

तन्वान्तरे ।

स्वयं वा भ्रातृपुत्रो वा भ्राता वा सुहृदेव वा ।

सपिण्डश्छेदयेद्वाऽपि शुद्धान्तःकरणो यदि ॥

न रिपुं नाङ्गहीनं वा न काणं नापि कुब्जकम् ।

न योजयेच्छत्रुपक्षं बलिच्छेदनकर्मणि-इत्युक्तम् ॥

महिषवलिदाने विशेष उक्तो (महाकालसंहितायाम्)

विशेषः कश्चिदधिको महिषे तं ब्रुवेऽधुना ।

तदङ्गे देवताः सर्वाः पूजयेत् कुसुमाक्षतैः ॥

प्रणवादिनमोऽन्तैश्च मध्ये डेन्तैः पदैस्तथा ।

स्थानानि देवताश्चापि क्रमेण कथयामि ते ॥

ब्रह्मरन्ध्रे च नासायां कर्णयो रसने तथा ।

नेत्रयोर्वदने चैव ललाटे तदनन्तरम् ॥

दक्षगण्डे वामगण्डे ग्रीवायां केश एव च ।

दक्षभ्रुवि तथा वामभ्रुवि चैवं वरानने ॥

ओष्ठेऽधरे च स्कन्धे च हृदये पृष्ठ एव च ।

जठरे चरणे पुच्छे सर्वस्मिन् देह एव च ॥
 ब्रह्मा मेदिन्यथाकाशः सर्वतो मुख एव च ।
 ज्योतीषि विष्णुश्चन्द्रश्च शक्रो वह्निर्महेश्वरः ॥
 निर्ऋतिर्मित्रवरुणौ तथा लक्ष्मीः सरस्वती ।
 धनेश्वरः सर्पराज आदित्यः साध्य एव च ॥
 गन्धर्वेन्द्रस्तथा सिद्धा चामुण्डा सर्वशेषगा ।
 अननैव प्रकारेण नरस्यापि प्रपूजयेत् ॥
 क्रमसिद्धं पूर्वगतमदोऽधिकमिहार्हणम् ।
 अथोभयोः शेषगतान् मन्त्रानाकलय प्रिये ॥
 यमस्य ब्राह्मन्त्वेन ख्यातस्त्वमसि कासरः ।
 वसतः शृङ्गयोरग्रे मृत्युकालौ सदा तव ॥
 भवानेव परिद्वेष्टि जवनास्तुरगानपि ।
 तव रूपं समास्थाय रम्भासुरस्तुतः पुरा ॥
 भगवत्या समं युद्धं कृतवान् दर्पमोहितः ।
 देव्या त्वं निहतश्चासि तथा क्रान्तं शिरस्तव ॥
 वहस्यतश्चण्डिकां त्वं शिरसा भङ्गुरेण वा ।
 त्वत्तो नान्यो बलिः कश्चिद्देव्याः प्रीतिप्रदायकः ॥
 अतो ददामि काल्यै त्वां भक्तियुक्तेन चेतसा ।
 मयि कल्याणमाधाय गच्छ कासर सद्गतिम् ॥

नरबलौ दिशेषमाह ।

मनुष्यबलिदाने तु विशेषः कश्चिदोरितः ।
 पूर्वद्युरकृताहारं संपरित्यक्तमैथुनम् ॥
 ज्ञातं रक्ताम्बरधरं नरं मुण्डितमस्तक्रम् ।

रक्तचन्दनदिग्धाङ्गं कृत्तश्मश्रुनखं तथा ॥
 अजाताश्रुकमुद्रितं न दीनं नाप्यधोमुखम् ।
 न बाढवं न चाण्डालं न क्लीबं पतितं न च ॥
 चतुर्विधेभ्योऽपि शिवे स्वयमागतमुत्तमम् ।
 प्रोक्षयेत् पशुसामान्यरूपेण प्रथमं ततः ॥
 महिषोक्तप्रकारेण पश्चादेतान् मनून् जपेत् ।
 सर्वेषु प्राणिषु श्रेष्ठस्त्वं मनुष्य इति स्थितः ॥
 बलिश्रेष्ठ महाभाग देवगर्भश्रिया वृतः ।
 रक्ष मां सर्वभीतिभ्यः सिद्धिं देहि तथोत्तमाम् ॥
 राज्यं देहि यशो देहि देहि चानुत्तमां गतिम् ।
 आरोग्यं दीर्घमायुश्च प्रजावृद्धिं रणे जयम् ॥
 कल्याणं विपुलान् भोगान् द्वारानपि हृदीप्सितान् ।
 कात्यायन्यां दृढां भक्तिं लक्ष्मीमप्यधिकां स्थिराम् ॥
 दत्त्वा राज्यं परित्यज्य शरीरं पाञ्चभौतिकम् ।
 देवीलोकं व्रज क्षिप्रं सज्ञातिसुतबान्धवम् ॥
 महादानैर्महायज्ञैस्तपोभिरतिदुष्करम् ।
 यत् स्थानं नाप्यते लोकैस्तत् त्वं गच्छ नरर्षभ ॥
 अङ्गीकृतो महाकाल्या मांसशोणितलिप्सया ।
 देवीलोकं सुदुष्प्राप्यं प्राप्नुहि त्वं द्रुतं गतः ॥
 तत्र गत्वा शिवं ध्याहि मामकीनं जगत्पते ।
 देवीलोकगतिः काम्या मत्प्रसादात् तवेदृशः ॥
 त्वत्प्रसादादहं शत्रून् जयेयं रणमूर्धनि ।
 श्लोकानष्टान्निमान् देवि पठेन्नरबलिक्षणे ॥

गण्डकेऽपि विशेष उक्तस्तत्रैव ।

खङ्गमन्त्रं समाख्यास्ये गण्डको येन दीयते ।
 द्विपदेहाकृते खङ्ग शस्त्राभेद्यकलेवर ॥
 तृप्ता भवेयुः पितरस्त्वन्मांसेन सुरा अपि ।
 न च त्वत्तोऽधिकः कश्चित् पवित्रः पृथिवीतले ॥
 त्वत्करोटिजपात्राणि शस्तानि श्राद्धकर्मणि ।
 मया देव्या बलित्वेन त्वमद्य विनिवेदितः ॥
 मम विघ्नान् समुत्सार्य सद्यो देवोगणे भव-इति ।

(यामले)

एवं हत्वा पशून् सद्यस्तदीयरुधिरं तथा ।
 स्वर्णादिरचिते पात्रे गृह्णीयादुष्णफेनिलम् ॥

(कालिकापुराणे)

ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं कौशिकी रुधिरेणाप्यायताम्-इति ।

पात्रे नियोजयेद्रक्तं शिरस्येव प्रदीपकम् ॥

(महाकललंघितायाम्)

अथ पात्राणि वक्ष्येऽहं स्थाप्यते यत्र शोणितम् ।
 हैमे वा राजते ताम्रे ग्राह्यं रक्तं महीभृता ॥
 सामन्तैर्माण्डलकैश्च ताम्रे वा कांस्यरैस्तयोः ।
 दरिद्रगृहिभिश्चापि मार्त्तिके वाऽथ दारवे ॥
 अथ वा पत्रपुटके नैव लोहे कदा चन ।
 न रङ्गे सीसके चापि नारिकेलफलत्वचि ॥
 कौलानां सर्वपात्रेभ्यः कपालं श्रेष्ठमिष्यते ।
 एषां पशूनां पललैर्यावती तृप्तिरीरिता ॥
 भगवत्याः प्रिये तृप्ती रुधिरैरपि तावती ।
 नित्ये नैमित्तिके वाऽपि कात्यायन्याः प्रपूजने ॥

विना बलिं नैव दद्यादामे पललशोणिते ।

पशोर्वा पक्षिणो वाऽपि नरस्यापि विशेषतः ॥

अथ मस्तकपतनफलं तत्रैव ।

एवं दत्त्वा बलिं देव्यै बलिदानविधिर्यथा ।

शुभाशुभं विजानीयाद्राज्यस्य च नृपस्य च ॥

यदि वायव्यदिग्भागे नैर्ऋत्ये दक्षिणेऽपि वा ।

मस्तके पतिते चैव हानिरत्र विनिर्दिशेत् ॥

शेषेषु दिक्षु सर्वासु विदिक्षु च फलं शृणु ।

पूर्वे चोत्तरदिग्भागे पतते यदि मस्तकम् ॥

सर्वसम्पत्करं विद्याद्राजा राज्यं विनिर्दिशेत् ।

भ्रमित्वा दक्षिणे कर्णे यदा पतति वै शिरः ॥

तदा सिद्धिश्च मासान्ते वामकर्णे विपद्भवेत् ।

राज्ञामग्रे भवेच्छानिर्गृहस्थानां भवेच्छुभम् ॥

ऐशान्यां मध्ययोश्चैव पतते यदि मस्तकम् ।

छिन्नं शिरो निपतितं सहास्यं यदि दृश्यते ॥

विभूतिं तस्य जानीयाद्राजा राज्यं विनिर्दिशेत् ।

तदा स्वल्पेन कालेन सर्वसिद्धिर्भवेद्भुवम् ॥

एकवारे भवेत् सिद्धिर्द्विवारे हानिरुच्यते ।

गृहस्थानां विजानीयाद्राज्ञां तु विपरीतकम् ॥

यदाऽश्रु दृश्यते नेत्रे तदा हानिं विनिर्दिशेत् ।

यदा कटकटाशब्दो दन्तानां श्रूयते क्वचित् ॥

तदा तु मरणं विद्याद्धानि सर्वत्र निर्दिशेत् ।

(त्रैपुरपद्धत्याम्)

दक्षिणे पतिते सिद्धिर्वामभागे च निन्दितम् ।

सव्ये तु पतिते छेदे देवीमन्त्रं स्मरेद्बुधः ॥
 ततः कुण्डादिके हुत्वा हुतिभिर्दशपञ्चभिः ।
 शमयेद्भूङ्गतेर्दोषं बलिलक्षणलक्षितम् ॥

(महाकालसंहितायाम्)

दद्याद्राक्षसदिग्भागे मन्त्री बलिशिरः स्वयम् ।
 तदक्षिणे रक्तपात्रं विपरीतं न संददेत् ॥
 देवस्य संमुखं कृत्वा छिन्नं भागं प्रकल्पयेत् ।
 तदेव शस्तं जानीयान्मध्यमं तदुदीरितम् ॥
 बलीनामिति संज्ञानं शिरश्च पुरतो ददेत् ।

तथा ।

न भूमौ स्थापयेच्छीर्षं न चैव विपरीतकम् ।
 शिरः सलोहितं दद्यात् पुर एव न चान्यतः ॥
 रुधिरादानकाले तु पात्रे स्वविभवाहृते ।
 सैन्धवं स्थापयेत् किञ्चित् फलानामेकमेव हि ॥
 तद्रक्तं हविरेव स्यात् पुरोडाशं च तच्छिरः ।
 नासाग्नीवागण्डपुच्छपललानि निकृत्त्य हि ॥
 पशूनां वदने क्षिप्त्वा ततः संस्थापयेत् पुरः ।
 तथा पक्षत्रिपत्रं च वीनां त्रोटौ विनिःक्षिपेत् ॥
 पशुवच्चरणस्यापि शीर्षे कमललोचने ।
 बलीनां मस्तके दद्यात् प्रदीपं धूपवर्त्तिकाम् ॥
 दहनाल्लोमकेशानां यो गन्ध उपतिष्ठते ।
 घ्राति तं* चण्डिका देवी सन्तुष्टा तु प्रजायते ॥
 तस्मिन्नेव ह्यवसरे आधिक्यं धूपदीपयोः ।

* तेन सा श्रुतिः ३ पु० पा० ।

यथाविभतो देवि कर्त्तव्यं भक्तितत्परः ॥
 बल्याधिक्ये च शीर्षाणीं विधेयाः पङ्क्तयस्तथा ।
 सधूपदीपाः कुसुमाक्षतपुञ्जान्वितास्तथा ॥

तथा ।

शिरश्च संमुखे स्थाप्यं सदीपं पात्रवर्जितम् ।
 स चापि हविरक्तः स्यादथ वा तिलजोक्षितः ॥
 सार्षपं न प्रदातव्यं न चान्यफलसम्भवम् ।
 मूर्धाभिषिक्तो हविषा तैलेन बहुसिद्धिभाक् ॥
 अन्यबीजोद्भवै रोगं शोकं मृत्युं च विन्दति ।
 यथा लोमानि दह्यन्ते यत्नात् कार्यं तथा नरैः ॥

तन्त्रान्तरे ।

सूत्रवर्त्ति प्रदद्याच्च वस्तवर्त्तिः प्रशस्यते ।
 अङ्गुष्ठस्य प्रमाणं च दीर्घं चैव षडङ्गुलम् ॥
 कार्पाससूत्रकैर्दद्यादेकविंशतिसूत्रकैः ।
 सुगन्धिद्रव्यैस्तत् कुर्यात् कर्पूरागुरुचन्दनैः ॥
 ग्राहाणां कच्छपानां च गोधायाश्च विशेषतः ।
 मत्स्यानामपि पक्षिणां न दीपं दापयेच्छिवे ॥
 शीर्षोपरि ज्वलद्दीपं यावत्कालं प्रवर्त्तते ।
 तावत्कालं वसेत् स्वर्गे तस्माद्यत्नेन दापयेत् ॥
 लोमदाहोद्भवं गन्धं घ्रात्वा देवी प्रसीदति ।
 तस्मात् संवर्धयेद्दीपं तस्मात् पात्रं विवर्जयेत् ॥
 निर्वाणे मृत्युमाप्नोति दीयमाने प्रदीपके ।

(महाकालसंहितायाम्)

ततः पात्रं पुरः कृत्वा देव्याः सपशु शोणितम् ।
 शर्करायुतदूर्वाणां प्रदद्यात् त्रिर्महाघृतम् ॥

सैन्धवं शृङ्गवेरं च कदलीफलमेव च ।
 पातयेन्मधुराणां च काममुद्दिश्य साधकः ॥
 अष्टधा विभजेद्विग्वन्मध्ये चैकं कुशादिभिः ।
 दत्त्वा किञ्चिद्दधृतं तत्र कुर्यात् तर्पणमुद्रया ॥
 तर्पणं भागभाजां वै देवीनां द्विर्द्विरेव च ।
 आद्यन्तिमौ तारहादीं मध्ये आदिमनोरपि ॥
 तत्तन्नाम्ना मन्त्रमपि तर्पयामीति संयुतम् ।
 द्वितीयरूपं डेन्तं च तद्द्वितीयपदोदितम् ॥
 मध्ये नित्योदितश्रयाख्यपात्रवत् पीठगा क्रिया ।
 पूर्वस्यां दिशि चामुण्डा दक्षिणस्यां तु योगिनी ॥
 डाकिन्युक्ता पश्चिमायामुत्तरस्यां तु भैरवी ।
 विदारिकाऽऽग्नेयकोणे नैर्ऋत्यां पापराक्षसी ॥
 पूतना चापि वायव्ये ईशाने कालिका तथा ।
 ततः स्तुतिं प्रकुर्वीत बद्धाञ्जलिपुटोऽग्रतः ॥
 जय देवि जगन्मातर्जय पापौघहारिणि ।
 जय जन्मजराव्याधितृणदावानलाकृते ॥
 जय सर्वविपत्तिघ्ने जय त्रिदशवन्दिते ।
 जय नित्यानन्दरूपे जय कल्याणदायिनि ॥
 जय शत्रुक्षयकरे जय रोगप्रणाशिनि ।
 जय भीमे जयाघोरे जय सङ्कटतारिणि ॥
 जयामृतरसास्वादतुन्दिलामन्दविग्रहे ।
 त्रिनेत्रे विकरालास्ये मुण्डमालाविभूषिते ॥
 सर्वासुरक्षयकरि खड्गखट्वाङ्गधारिणि ।

महाघोरे महारावे दैत्यदर्पनिषूदिनि ॥
 इमं पशुबलिं देवि गृहीत्वा कालरात्रिके ।
 प्रोता भव महाचण्डे रक्ष मां शरणागतम् ॥
 आयुर्देहि धनं देहि भाग्यं कीर्त्तिं च देहि मे ।
 स्त्रियं देहि सुतान् देहि सर्वान् कामाँश्च देहि मे ॥
 उग्रचण्डे प्रचण्डाऽसि प्रचण्डकरवालिनि ।
 महाचण्डोऽग्रदोर्दण्डे विश्वेश्वरि नमोऽस्तु ते ॥
 रक्ष मां शरणापन्नं त्वत्पादार्पितमानसम् ।
 हर पापं हर क्लेशं हर शोकं हरासुखम् ॥
 हर रोगं हर क्षोभं हर दैन्यं हरप्रिये ।
 स्तुतिमेतां पठित्वैवं दण्डवत् प्रणमेद्भुवि ॥
 गुह्यकालि जगद्धात्रि सर्वान्तर्यामिनीश्वरि ।
 गृहीत्वैमं पशुबलिं यथोक्तफलदा भव ॥
 कायेन मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम ।
 अन्तश्चरसि भूतानां द्रष्टुं त्वं परमेश्वरि ॥
 (यामले)
 कात्यायनि महामाये दुर्गे दुर्गतितारिणि ।
 नमस्तुभ्यं जगद्धात्रि कालरात्रिस्वरूपिणि ॥
 एवं स्तुत्वा महादेव्यै दत्त्वा च सुमनोऽञ्जलिन् ।
 साष्टाङ्गं प्रणमेद्भूमौ भक्तियुक्तेन चेतसा ॥

सुमनोऽञ्जलिनिति बहुवचनं कपिञ्जलाधिकरणन्यायेन त्रित्वे पर्यवस्यति । तथा च
 पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा प्रणमेदित्यर्थः ।

इति बलिदानविधिः ।

अथ पशुपक्षिणां वस्त्वन्तराणां च दैवतानि ।

(महाकालसंहितायाम्)

पशूनां च विहङ्गानामन्येषामपि वस्तूनाम् ।

ब्रवीमि देवताः सर्वाः क्रमेणोत्सर्गकर्मणि ॥
 प्राजापत्यो गजः प्रोक्तस्तुरगो यमदैवतः ।
 तथा चैकशपाः सर्वे कथिता यमदैवताः ॥
 महिषश्च तथा याम्य उष्ट्रो वै नैर्ऋतो मतः ।
 गोवृषौ रुद्रदैवत्यौ छाग आग्नेय उच्यते ॥
 मेषस्तु वारुणो जेयो वराहो वैष्णवो मतः ।
 गोरीदेव्यौ व्याघ्रसिंहौ गण्डको ब्रह्मदैवतः ॥
 यावन्तो मृगभेदाः स्युः कथिता वायुदेवताः ।
 यावन्तः पक्षिणः सर्वे वायव्याः परिकीर्त्तिताः ॥
 प्राजापत्यास्तथा मरत्याः कच्छपाः साध्यदैवताः ।
 गोधा वरुणदैवत्या ग्राहा अपि च तादृशाः ॥
 तथा च बभ्रूशलभावादित्येशानदैवतौ ।
 कन्या दासस्तथा दासी प्राजापत्या नरास्तथा ॥
 अभयं शिवदैवत्यं धरित्री विष्णुदैवता ।
 तथा समुद्रदैवत्यं रत्नमुक्ताफलादिकम् ॥
 जलाशयास्तथा सर्वे वारिधानी कमण्डलुः ।
 प्रपा कुम्भश्च करकं जेयं वरुणदैवतम् ॥
 सुवर्णमग्निदैवत्यं लौहं भैरवदैवतम् ।
 “कांस्ये पूषाऽश्विनौ चापि देवता परिकीर्त्तिताः ॥”
 रङ्गं नासत्यदैवत्यं सीसकं वायुदैवतम् ।
 ताम्रं च सूर्यदैवत्यं पित्तलं कुजदैवतम् ॥
 रजतं चन्द्रदैवत्यं खर्परं पितृदैवतम् ।

“ एतदङ्गान्तर्गतं; पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

गुडं कुबेरदैवत्यं शर्करा मित्रदैवता ॥

“अन्यत्र तु ।

आपो गुडे देवताः स्युः.....इत्युक्तम् ।

तथा ।”

जाङ्गलं वह्नि*दैवत्यं मधु स्याद्यदैवतम् ।

ताम्बूलदेवता जेया शक्रो विद्याधरोऽथ वा ॥

“तन्त्रान्तरे ।

ताम्बूले देवताः शक्रविद्याधरविनायकाः ।

महाकालः ।”

तथा मृत्युञ्जयो देवो घृतेषु परिनिष्ठितः ।

तैलं तु राहुदैवत्यं कार्पासं केतुदैवतम् ॥

क्षीरं च तारादैवत्यं दधि† चौषधिदैवतम् ।

“अन्यत्र तु ।

क्षीरे नारायणः प्रोक्तो दधिसर्पाः प्रकर्त्तिताः-इत्युक्तम्” ।

तथा ।

पिष्टं शचीदैवतं च सिन्दूरमपि पार्वति ।

“तन्त्रान्तरे ।

अन्येषु देवताः सर्वे देवः पिष्टे प्रजापतिः ।

महाकालः” ।

लवणं चाब्धिदैवत्यं जलं वरुणदैवतम् ।

देवः स्मरश्च गन्धर्वो मधुपर्के च चन्दने ॥

पुष्पं च लक्ष्मीदैवत्यं धूपे देवो वनस्पतिः ।

अप्सरोदैवतं जेयं सर्वं मृगमदादिकम् ॥

दीपोऽपि वह्निदैवत्यो नैवेद्यं विष्णुदैवम् ।

* ब्रह्मादैवत्यम्-इति ४ पु० पा० ।

† दध्यौषधीशदैवतमित्यन्यत्र पाठः । तत्रौषधीशश्चन्द्रः ।

“ ” एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पादुका सोमदैवत्या छत्रं स्यादिन्द्रदैवतम् ॥
 देवता कामधेनुः स्याच्चामरे त्रिदशेश्वरि ।
 व्यजनं वायुदैवत्यमिन्द्रः सिंहासनस्य च ॥
 माला च रतिदैवत्या डाकिनी देवता सुरा ।
 मांसं निर्ऋतिदैवत्यं वितानं चन्द्रदैवतम् ॥
 प्राजापत्यानि शस्यानि पक्वान्नानि च सर्वशः ।
 वाचस्पत्यानि वासांसि पाण्डुराण्यसितानि च ॥
 मयुदैवानि रक्तानि दुर्गादैवं तु पट्टकम् ।
 विद्या ब्राह्मी विनिर्दिष्टा विद्याप्रकरणानि च ॥
 सारस्वतानि ज्ञेयानि पुस्तकाद्यानि पार्वति ।
 पात्राणामपि सर्वेषां विश्वकर्माऽधिदैवतम् ॥

“(यामले)

वायं चतुर्विधं ज्ञेयं रुद्रगन्धर्वदैवतम् ।

महाकालः ” ।

द्रुमाणां च लतानां तु शाकानां हरितैः सह ।
 फलानामपि सर्वेषां देवो ज्ञेयो वनस्पतिः ।
 अजिनानि तथा शय्या रथ आसनमेव च ॥
 उपानहौ तथा दोला यच्चान्यत् प्राणिवर्जितम् ।
 उत्तानाङ्गिरदैवत्यं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥
 ध्वजो वै धर्मदैवत्यः सीरं पर्यन्यदैवतम् ।
 पाषाणादि तथा रत्नं कथितं शक्रदैवतम् ॥
 गृहं तु सर्वदैवत्यमनुक्तं यन्मया प्रिये ।
 तत् सर्वं रुद्रदैवत्यं ज्ञेयमुत्सर्गकर्मणि ॥

इति दैवतानि ।

” एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

अथ कुमारीपूजाविधिः ।

(महाधर्वणसंहितायाम्)

ततः कुमारीयजनं कुर्यात् साधकसत्तमः ।

यस्मिन् कृते तु विधिवत् कर्मणः साङ्गता भवेत् ॥

अकृते चाङ्गहानिः स्याद्विशेषाच्छरदर्चने ।

(महाकालसंहितायाम्)

समाप्य पूजामासायं प्रदोषे पर्युपस्थिते ।

कुमारीपूजनं कुर्याद्विधिना पञ्चमं हितम् ॥

तथा ।

भक्तभद्राभद्रमुभे तदनक्ति सुरेश्वरि ।

स्वयं तद्रूपमास्थाय मूढभावमुपेयुषी ॥

दिदृक्षुरायाति शिवा भक्तिपूजनसम्भृतिः ।

तस्मात् तत्रादरः कार्यो भक्तिभावं च जानता ॥

देवतास्त्रिविधोत्पातैर्यथादेशे हिताहितम् ।

सूचयन्ति तथैवैषां वार्षिकं सुरवन्दिते ॥

तद्विज्ञानार्थमप्येषा पूजितव्या प्रयत्नतः ।

चतुर्णामपि कौलानां स्मर्त्तानामानुकल्पनाम् ।

नैवात्र मतभेदोऽस्ति नैवार्चनभिदाऽपि वा ॥

न च पूर्वोत्तरौ पक्षौ न च संदेहकल्पना ।

भवेच्च फलबाहुल्यं तुष्टिर्देव्यास्तथैव च ॥

विशिष्य ज्ञायतेऽनेन तथा भावि शुभाशुभम् ।

ज्ञाते शुभे भवेत् तोषोऽन्यस्मिँश्चोपायचिन्तनम् ।

तथा ।

न तथा तुष्यति शिवा बलिहोमस्तुतीरणैः ।

कुमारीपूजनेनात्र यथा सद्यः प्रसोदति ॥

न केवलं पूजयेत् तां भोजयेच्चापि यत्नतः ।

तथा ।

व्यङ्गता चाप्यकरणात् पूजायाः परिकीर्तिता ।

कुमारीपूजनेनात्र यथा सद्यः प्रसोदति ॥

करणात् साङ्गताऽपि स्यादन्यस्मिन्नकृतेऽपि हि ।

तथा ।

कौलानां निशि पूजोक्ता स्मार्त्तानामपराह्निकी ।

नित्या तु शारद्वर्गायां काम्या नैमित्तिकीतरा ॥

कुमारीलक्षणमाह ।

सुखातां रक्तपीतादिनानारागोज्ज्वलांशुकाम् ।

सर्वालङ्कारचित्राङ्गीमज्ञातानङ्गचेष्टिताम् ॥

अजातपुष्पमनःसङ्गां सप्ताष्टनववर्षिकीम् ।

अनोचजातिं गौराङ्गीं पितृमातृमतीमपि ।

अदन्तुरामवाग्दन्तामधिकोनाङ्गवर्जिताम् ॥

अदीर्घकेशीमुदीप्तां सुस्मितास्यामलोभनाम् ।

निषिद्धालक्षणमुक्तं तत्रैव ।

श्यामां दीर्घदतीमोतुनयनां पिङ्गमूर्धजाम् ।

तनुमनगतिं क्रुद्धां कुब्जां खल्लां च खर्विकाम् ॥

भ्रुकेशाल्पत्वसहितां तथा चैव गलद्रणाम् ।

जातस्तनुरजोऽनङ्गां प्रयत्नेन विवर्जयेत् ॥

तन्त्रान्तरे ।

अधिकाङ्गीं च हीनाङ्गीं रोगिणीं च व्रणाङ्गिताम् ।

अन्धां काणां केकरां च कुरूपां लोमशां त्यजेत् ॥

(महाकालसंहितायाम्) ।

एतन्निष्ठा कुमारी तु वरणीयाऽर्चनक्रमे ।

(मेरुतन्त्रे)

विप्रां सर्वेष्टसंसिद्धयै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।

वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥

(स्कान्दे)

दारुणे चान्त्यजां कन्यां पूजयेद्विधिना नरः ।

(यामले)

यः कुमारो यजेन्मन्त्री सर्वपर्वसु सर्वदा ।

तेनार्चिता महादेवी सत्यं सत्यं न संशयः ॥

सन्ध्यैकवर्षा संप्रोक्ता द्विवर्षा च सरस्वती ।

त्रिधामूर्त्तिस्त्रिवर्षा च चतुरब्दा चा कालिका ॥

सुभगा पञ्चवर्षेयमुमा षड्वर्षिकी भवेत् ।

मालिनी सप्तवर्षा च अष्टमी कुब्जिका मता ॥

नवाब्दा कालसंकर्षा दशवर्षाऽपराजिता ।

एकादशाब्दा रुद्राणी द्वादशाब्दा च भैरवी ॥

तत्परा स्यान्महालक्ष्मीस्तत्परा कुलनायिका ।

क्षेत्रज्ञा तत्परा प्रोक्ता षोडशाब्दा च चण्डिका ॥

एवं क्रमेण विजेया विना पुष्पं कुमारिका ।

(हेमाद्रौ स्कान्दे)

एकैकां पूजयेत् कन्यामेकवृद्ध्या तथैव च ।

द्विगुणं त्रिगुणं वाऽपि प्रत्येकं नवकं तु वा ॥

तथा ।

* नवभिर्भजते भूमिर्भैरव्यं द्विगुणेन तु ।

एकवृद्ध्या लभेत् क्षेममेकैकेन श्रियं लभेत् ॥

एकवर्षा तु या कन्या पूजार्थे तां विवर्जयेत् ।

गन्धपुष्पफलादीनां प्रीतिस्तस्या न विद्यते ॥

* नवभिर्जुम्भते इति ४ पु० पा० ।

“ (वाङ्मनलीये)

उत्तमा सा परिज्ञेया सप्ताष्टनवहायना ।
मध्यमा पञ्चवर्षा च षडब्दा दशहायना ॥
एकद्वित्रिचतुर्वर्षा रुद्राब्दाद्याऽवरा स्मृता ” ।

(महाकालसंहितायाम्)

गीतवादित्रनिर्घोषैरानन्दादरपूर्वकम् ।
नीत्वा पूजागृहद्वारि कुमारीस्ता अयुष्मिकाः ॥
पञ्च वा सप्त वा चापि नवैकादश वा पुनः ।
मुख्यैका तासु कर्त्तव्या या स्यात् सर्वाङ्गसुन्दरी ॥
बह्वीनामप्यभावे हि भवेदेका कुमारिका ।
काम्ये नैमित्तिके चैका बह्वयः शारदपूजने ॥
श्रेणोभूता उत्थिताश्च नम्रीभूतानना अपि ।
स्थापयित्वा क्रमेणैता मुख्यामादौ नियोज्य च ॥
देवोबुद्धिं विधायास्यां साधको विगतत्वरः ।
गृहीतमदिरामत्तः कल्पितार्चनसम्भृतिः ॥
प्राणायामं विधायादौ ततो भूतापसारणम् ।
गुरुं गणपतिं नत्वा वामदक्षिणयोस्ततः ॥
मध्ये कुमारीं च तथा मूलदेवोस्वरूपिणीम् ।
छोटिकाभिस्तथा तालत्रितयैर्बन्धनं दिशाम् ॥

तथा ।

कुमर्या मूलभूतायाः पादौ प्रक्षालयेत् ततः ।

तथा ।

तज्जलं मस्तके दद्याद्देवीपादोदप्रज्ञया ।

स्वोत्तरीयांशुकैर्नैव पादाम्बूपनयेत् ततः ॥

“ ” एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पुनरक्षतमादाय विघ्नानुत्सारयेत् प्रिये ।
 उदीर्यमाणमन्त्रेण तालत्रयपुरःसरम् ॥
 तारपाशकलाकर्त्तृस्त्राणि प्रथमतो वदेत् ।
 भूतान्यपसारय च विघ्नान् नाशय चेत्यपि ॥
 हृच्छीर्षे चरमे दद्यादेकविंशाक्षरो मनुः ।
 कुमारी सहिताः सर्वे तथा देवीस्वरूपया ॥
 दर्शनार्थं समायान्ति यावन्तो देवयोनयः ।
 प्रेता भूताः पिशाचाश्च गन्धर्वा गुह्यका अपि ॥
 राक्षसा दानवा यक्षा ये चान्ये क्रूरकर्मिणः ।
 सह प्रविश्य कौमारी मण्डपं शारदारचनम् ॥
 लुम्पन्ति च कुमार्यर्चीं पूजां विध्वंसयन्ति च ।
 अतो वारद्वयं कार्यं विघ्नस्योत्सारणं प्रिये ॥
 ततः स्वामहस्तेन कुमारी दक्षिणं करम् ।
 गृहीत्वा दक्षचरणविनिःक्षेपपुरःसरम् ॥
 ✓ पङ्कीभूताः कुमारीस्ताः श्लोकरूपं मनुं पठन् ।
 पूजागृहान्तः शनकैर्नमन्मौलिः प्रवेशयेत् ॥
 समस्तजगतामाद्ये जगदाधाररूपिणि ।
 कुमारीरूपमास्थाय प्रविशेदं गृहं मम ॥
 भवत्याः कीदृशं रूपं जाने मातरहं न हि ।
 कुमारीरूपमेवेदं पश्यामि नरचक्षुषा ॥
 भक्तिं मदीयां विज्ञाय त्वत्पादाम्बुजयोः शिवे ।
 त्वया प्रकटितं रूपमीदृशं सर्वसिद्ध्ये ॥
 दृष्टिः कार्या न मे पापे सञ्चारेणासतः पथः ।

दृढायां केवलं भक्तौ दातव्या सुरवदिन्ते ॥
 शिवाद्यास्तव रूपं हि कीदृशं नेति जानते ।
 ज्ञास्यामि को वराकोऽहं पाञ्चभौतिकविग्रहः ॥
 इति पञ्च पठन् श्लोकान् स्वपृष्ठेनैव तारयेत् ।
 अनोक्षमाण एवेशि गोतवाद्यपुरःसरम् ॥

(यामले)

स्नापिता गन्धतैलेन नानाभरणभूषिता ।
 आनीय देवतापार्श्वे स्थापनीया सुधीमता ॥
 (महाकालसंहितायामपि)

मुख्यं तत्पूजनं प्रोक्तं मुख्याया एव तन्मनुम् ।
 तरपूजयैव ताः सर्वाः पूजिताः स्युर्न संशयः ॥
 तथा ।

चलिं दत्त्वा ततो देवयोनिभ्यः परमेश्वरि ।
 आरभेत निरालस्यः कुमारीन्यासमुत्तमम् ॥
 नामान्यादौ खलु महाचण्डयोगेश्वरी मता ।
 ततः सिद्धिकराली च पुनः सिद्धिविकराल्यपि ॥
 महान्ता मार्यथ जेया वज्रकापालिनी ततः ।
 मुण्डमालिन्यदृहासिन्यंते द्वे परिकीर्तिते ॥
 चण्डकापालिनी कालचक्रेश्वर्यप्यनन्तरम् ।
 गुह्यकाली ततः कात्यायनी कामाख्यया सह ॥
 चामुण्डा सिद्धिलक्ष्मीश्च कुब्जिका तदनन्तरम् ।
 मातङ्गी तदनु जेया चण्डेश्वर्यथ कीर्त्यते ॥
 सर्वशेषेऽथ कौमारी एता अष्टादशेरिताः ।

“एतानि गुह्येशिवियाणि” ।

“एतदङ्गात्तर्गतः पठः ४ पुस्तकेऽधिकं उपलभ्यते ।

“अन्यत्र तु ।

नामान्यादौ व्याहरामि दुर्गा नारायणी शिवा ।
महामाया योगनिद्रा कालरात्री कपर्दिनी ॥
उग्रचण्डा भद्रकाली अजिता चापराजिता ।
कात्यायनी महाकाली कामाख्या कुलनायिका ॥
भैरवी भुवनेशी च कौमार्यष्टादश स्मृताः ।

इति नामान्तरण्युक्तानि ।

तथा ” ।

अङ्गान्यतो वच्मि शिरो मुखं तदनु चक्षुषी ।
कर्णौ नासापुटे चापि कपोलौ तत्पुरौ पुनः ॥
अधरोष्ठौ दन्तपङ्क्ति स्क्न्धौ हृदयमेव च ।
बाहू च जठरं पृष्ठमूर्जानू तथैव च ॥
जङ्घे पादौ च सर्वाङ्गं तावन्त्येव स्थलानि च ।

(विशक्तिरत्ने)

कलादि च कलान्तं ताः पूजयेद्विधिना बुधः ।
उपवेश्यासने दिव्ये कुमारीं साधकोत्तमः ॥
वक्ष्यमाणेन विधिना देहेऽस्या न्यासमाचरेत् ।
कुमारिका स्यात् प्रथमा द्वितीया नायिका मता ॥
तृतीया भैरवी ख्याता तुर्या वागीश्वरी भवेत् ।
पालिका पञ्चमी प्रोक्ता सम्बुद्ध्यन्ताः कुलादिकाः ॥
न्यस्याः पञ्चाङ्गयोगेन कुमारीणां कलेवरे ।
वामावर्तक्रमादास्यचतुष्कं पूजयेत् क्रमात् ॥
ततः सिद्धा जया पूर्वा जयाऽन्या कुब्जिका परा ।
कालिका पञ्चमी प्रोक्ता विजेया बोधिता इमाः ॥

“ ” एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पूर्वादिवक्त्रजंयुक्ता चतुर्थ्यन्ता नमोऽन्तकाः ।
 तत्तत्स्थानेषु विन्यस्याः स्वधिया क्रमपूर्वकम् ॥
 पञ्चप्रणवयोगेन चैतन्यमनुना सह ।
 न्यासजालं हि पूर्वाक्तं कुर्यात् साधकसत्तमः ॥

(महाकाव्यसंहितायाम्)

ततोऽर्घ्यस्थापनं कुर्यान्नित्यके यदुदाहृतम् ।
 पूजोपकरणस्यापि शुद्धिरुक्ता पुरोक्तवत् ॥

तथा ।

ततो ध्यानं प्रकुर्वीत कुमार्या वक्ष्यमाणकम् ।

“ तन्त्रान्तरे ।

प्रसन्नवदनाम्भोजां प्रोद्यद्वालाकसप्रभाम् ।
 रक्ताम्बरां रक्तमाल्यां नानालङ्कारभूषिताम् ॥
 सस्मितां दिव्यकन्याभिः क्रीडारसपरायणाम् ।
 ध्यायेत् कुमारिकां बालां स्वभक्ताभीष्टसिद्धिदाम् ” ॥

तथा ।

उपचारोऽस्ततः सर्वान् पाद्यादीन् स्तुतिपश्चिमान् ।

“ समर्पयेदिति शेषः ” ।

(यांमले)

यष्टव्या पूर्वमार्गेण वक्ष्यमाणेन वा पुनः ।
 स्वनामभिश्चतुर्थ्यन्तैस्त्रिताराद्यैर्नमोऽन्तकैः ॥
 देवतापश्चिमे मन्त्री यजेदेताः सलक्षणाः ।
 आद्या शुद्धा कालिकाऽन्या तृतीया ललिता स्मृता ॥
 चतुर्थी मालिनी ख्याता पञ्चमी स्यादसुन्धरा ।
 सरस्वती रमा गौरी दुर्गा तु नवमी भवेत् ॥

“ एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पञ्चाब्दं नववर्षं च यजेद्दालं विचक्षणः ।
पञ्चाब्दो वटुकः प्रोक्तो नववर्षो गणेश्वरः ॥

तथा ।

प्रदद्यादासनं वाचा ह्रिया पाद्यं समर्पयेत् ।
रमयाऽर्घ्यं निवेद्याथ स्त्रिया चन्दनमर्पयेत् ॥
कुमार्यै शक्तिबीजेन प्रदद्यात् कुसुमोच्चयम् ।
चैतन्यमगुना मन्त्री धूपदीपादिकं न्यसेत् ॥
तारा एते समाख्याता भृगुर्भवसमन्वितः ।
विन्दुनादसमाक्रान्तश्चैतन्यमनुरीरितः ॥
क चिद्भैरवबीजं तु पञ्चमः प्रणवो मतः ।

“ एकस्या एव पुजने त्रिताराद्यमन्त्रेणैव समस्तोपचारसमर्पणं बोध्यम् ।

त्रिताराद्येन मन्त्रेण सर्वं तस्यै निवेदयेत्-इति वचनात् ” ।

(महाकालसंहितायाम्)

भूषणानि दुकूलानि सिन्दूरालक्तकावपि ।
कज्जलादर्शविख्याततालवृन्तानि पेटिका ॥
परिकर्माधारचोलमञ्चिकापीठदोलिका ।
पाञ्चालिका च मञ्जूषा पादुके कुथपट्टके ॥
चन्द्रातपोपसङ्ख्यान तथोद्गर्तनभाजनम् ।
शय्योपधानपर्यङ्काः समुद्रं च प्रसाधनी ॥
प्रतिग्राहश्च हिन्दोला तथा सीमन्तवर्तिका ।
गोरोचनामृगमदौ कर्पूरं कुङ्कुमं तथा ॥
एवमादीनि चान्यानि यावच्छक्यानि सुन्दरि ।
प्रदातव्यानि वस्तूनि कुमारी तुष्यते यथा ॥

तथा ।

“ ” एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

ततो यत् स्थापितं पात्रं कुमार्यै प्रतिपादयेत् ।
 स्वीकुर्यात् सा च तत्रैव तथा यत्नं समाचरेत् ॥
 अगृह्यते तु तत्पात्रे महान् दोषोऽभिजायते ।
 अतो यत्नस्तथा कार्यः स्वीक्रियन्त यथा तथा ॥
 ततो गृह्यत्वा कुसुमाक्षतं तस्याः कलेवरे ।
 पञ्चाशत्सङ्ख्यकाः शक्तीः क्रमतः परिपूजयेत् ॥
 ता इदानीं प्रवक्ष्यामि सावधाना निशामय ।
 आद्या जया च विजया ऋद्धिदा माययाऽन्विता ॥
 कला च सिद्धिदा सूक्ष्मा प्रभा स्यात् सुप्रभा ततः ।
 वियुक्ता च विशुद्धिश्च नन्दिनी च विशुद्धियुक् ॥
 अपराजिता च ललिता लक्ष्मीर्गौरी तथैव च ।
 अथ मेधा च गायत्री सावित्री च स्वधा पुनः ॥
 स्वाह्नेच्छे च क्रिया विद्या प्रज्ञा दीप्ता च चेतना ।
 भद्रा ज्येष्ठा तथोमा च शिवा च मुदिता क्षमा ॥
 श्रद्धाऽथ विमला कौमुद्यपि वै विशदा ततः ।
 अशोका ज्ञानदा चैव बलदा राज्यदाऽपि च ॥
 मैत्री तदनु रुद्राणी भवानी च मृडान्यपि ।
 सर्वज्ञा चण्डिका चापि कुमारी सर्वशेषगा ॥
 पञ्चाशत्सङ्ख्यका एताः कुमार्याः शक्तयः स्मृताः ।
 भैरवानष्ट तदनु पूजयेदक्षतादिभिः ॥
 भैरवीभ्यस्ततो विघ्नविनायकेभ्य एव च ।
 चटुकक्षेत्रपालाभ्यां योगिनिभ्यस्तथैव च ॥
 भतेभ्यः प्रेतयक्षेभ्यो डाकिनीभ्यस्तथैव च ।

एतत्पूजां प्रकुर्वीत सदूर्वाक्षतचन्दनैः ॥
 पुनरष्टौ सर्वशेषे डेन्ता देवीर्यजेत् प्रिये ।
 महामाया कालरात्री ततो वै सर्वमङ्गला ॥
 पूज्या डमरुका पश्चाद्राजराजेश्वरी तथा ।
 सम्पत्प्रदा भगवतो कुमारी तदनन्तरम् ॥

(यामले)

कुलान्तः पूजयेदेनां कुलकोणेष्विमान् यजेत् ।
 कामेश्वरो च वज्रेशी तृतीया भगमालिनी ॥
 उपरिष्ठात् कुलद्वन्द्वकोणेष्वेताः समर्चयेत् ।
 अनङ्गकुसुमाऽनङ्गमन्मथाऽनङ्गपूर्विका ॥
 मदनानन्दशब्दाद्या चतुर्थी कुपुमोत्तरा ।
 पञ्चम्यनङ्गमदनाऽऽतुराऽनङ्गपदादिका ॥
 शिशिरा कथिता ह्येताः शक्तयो रससङ्ख्यकाः ।
 अतोऽनेन विधिना पूज्या कुमारी साधकोत्तमैः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

समाप्येत्यं कुमार्यर्चनां तत्पुरो भुवि वारिणा ।
 वर्तुलं मण्डलं कृत्वा तन्मध्ये कुलकामिनीम् ॥
 विलिख्य जलकुसुमाक्षतचन्दननागजैः ।
 पूजयेन्मण्डलं तच्च शुभदायै नमो वदेत् ॥
 स्थालीगतं च तरुसर्वमन्त्रं तत्र निवेश्य हि ।
 नानाविधां च सामग्रीं लेह्यन्नोष्यादिघट्टिताम् ॥
 मांसमीनसुरापूर्णां भक्ष्यचर्व्यादिपूरिताम् ।
 कुमारीदक्षहस्तं च स्थापयित्वाऽन्नमूर्धनि ॥

* कुर्वीत पूजां देवि कुसुमा-इति ४, ५ पृ० पा० ।

उत्तानं वक्ष्यमाणेन मनुनाऽन्नं समुत्सृजेत् ।

“अन्नोत्सर्गमन्त्रस्तु ।

ऐं ह्रीं श्रीं स्त्रीं सौः सर्वशक्तिस्वरूपायै सर्वसिद्धिदायै
भगवत्यै कुमार्यै भक्ष्यभोज्यनानाविधान्नकल्पितषडूषोपेतमिदं म-
हाभोगनैवेद्यं तुभ्यमहं निवेदयामि गृहाण २ भुङ्क्ष्व २ प्रसीद २
सर्वसिद्धिं मे प्रयच्छ २ ऐं ह्रीं श्रीं नमः स्वाहा ।

इति पद्धतिकृतोक्तः ” ।

तथा ।

इतरासां कुमारीणां प्रत्येकं पूजनं चरेत् ।

गन्धपुष्पैर्धूपदीपैर्नैवेद्यैरन्नसङ्कुलैः ॥

तथा ।

अन्नानि यादृशान्यस्यै मुख्यायै कल्पितानि हि ।

अन्याभ्यस्तादृशान्येव दातव्यान्येष निश्चयः ॥

फलाफलं तु मुख्याया जेयमत्र विपश्चिता ।

भुञ्जानासु कुमारीषु न तूर्यध्वनिमाचरेत् ॥

नान्यत्र च मनो दद्यात् संवाधं नैव कल्पयेत् ।

कोलाहलं निषेधेत अमङ्गल्यानि यानि च ॥

रुदितापानवायुं च प्रयत्नेन विवर्जयेत् ।

सावधानो भवेदत्र किमादौ भक्षयन्ति ताः ॥

मिथः किं वा प्रजल्पन्ति कुत्र वा वस्तुविग्रहः ।

कुत्र दृष्टिं प्रक्षिपन्ति भीताः किं वा वदन्त्यमूः ॥

इत्यादि नानाजातीयाश्चेष्टा आसां प्रयत्नतः ।

सावधानतया जेया भद्राभद्रस्य सूचकाः ॥

“ ३ ” एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिकं उपलभ्यते ।

भक्षयन्तीषु तास्वेवं पठेत तत्स्तोत्रमत्वरम् ।
 कृताञ्जलिर्नम्रशिरा आसामन्ने क्षिपन् दृशौ ॥
 जय कालि महाभीमे भीमरावे भयापहे ।
 संसारदावाग्निशिखे वृजिनार्णवतारिणि ॥
 ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रभूतेशप्रभृत्यमखन्दिते ।
 सर्गपालनसंहारकारण्यहितमारिणि ॥
 गुह्यकालि परानन्दरसपूरितविग्रहे ।
 परब्रह्मरसास्वादकैवल्यानन्ददायिनि ॥
 गुणातीतेऽपि सगुणे महाकल्पान्तनर्त्तकि ।
 कुमारीरूपमास्थाय विज्ञाप्रज्ञास्वरूपिणि ॥
 आगताऽसि ममागारं शारद्यर्चासमाप्तये ।
 सांवत्सरिककल्याणरूचनाय तथैव च ॥
 धन्योऽस्मि कृतकृत्योऽस्मि सफलं जीवितं मम ।
 यस्मात् त्वमोदृशं कृत्वा कौमारं रूपमुत्तमम् ॥
 गुह्यकालि समायाताऽऽब्दिकपूजाजिघृक्षया ।
 त्वमेवैतेन रूपेण देवेभ्यः प्रार्थिता पुरा ॥
 दत्तवत्यसि साम्राज्यं वरानपि समीहितान् ।
 मह्यमप्यद्य देवेशि वरं देहि सुपूजिता ॥
 ब्रह्मणे सृष्टिसामर्थ्यं त्वं पुरा दत्तवत्यसि ।
 विष्णवे च त्वमेवादास्तथा पालनशक्तिताम् ॥
 महारुद्राय संहारकर्तृत्वमददः शिवे ।
 देवेभ्यश्चापि दैत्यानां नाशने दक्षतामपि ॥
 अन्तर्यामिन्यसीशानि त्रिलोकीवासिनामपि ।

निवेदयामि किं तेऽहं सर्वकर्मेकसाक्षिणि ॥
 शत्रुनाशं राज्यलाभं शरीरारोग्यमेव च ।
 त्वत्पादाम्बुजयोर्भक्तिं याचेऽहं चतुरो वरान् ॥
 नमस्ते भगवत्यम्ब नमस्ते भक्तिवत्सले ।
 नमस्ते जगदाधाररूपिणि ग्राहि मां सदा ॥
 मातरं वेद्मि रूपं ते न शरीरं न वा गुणम् ।
 भक्त्या हृत्स्थितया पूजां तव जानाम्यनन्यधीः ॥
 त्वं माता त्वं पिता बन्धुस्त्वमेव जगदीश्वरि ।
 त्वं गतिः शरणं त्वं च स्वर्गस्त्वं मोक्ष एव च ॥
 विहाय त्वां जगन्मातर्नान्यां जानामि देवताम् ।
 नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमो नमः ॥
 एभिः श्लोकैः स्तुतिं कृत्वा कुमारीणां वरानने ।
 दद्यादाचमनीयं हि भोजनान्ते गतत्वरः ॥
 ततः प्रदद्यात् ताम्बूलं मृगचन्द्राभिवासितम् ।
 सह वाद्यादिभिस्तावदनुब्रज्य विसर्जयेत् ॥
 शुभाशुभफलं वच्मि साम्प्रतं तव पार्वति ।
 तत्राप्यादौ शुभं वक्ष्ये विपरीतं ततोऽस्य च ॥
 तदुच्छिष्टं ततो दद्याज्जम्बुकेभ्योऽथ भूतले ।
 निखनेदप्सु वा देवि समालोड्य विसर्जयेत् ॥
 आदौ भक्ते करे दत्ते सुभिक्षं विषये भवेत् ।
 पायसे यजमानस्य पशुवृद्धिः प्रजायते ॥
 घृते स्यादायुरारोग्यं पूजामैश्वर्यवृद्धये ।
 तथा मोदकशष्कुल्योः सन्ततिर्भूयसी भवेत् ॥

मत्स्यजातिष्वर्थलाभः कृशारे यानसम्पदः ।
 मांसे तु पुत्रलाभः स्यात् तेमने कामिनी भवेत् ॥
 फलं मांसविशेषस्य भिन्नं मिश्रं ब्रुवे हि तत् ।
 अर्थलाभस्तु वाराहे खाद्वे तु विजयो रणे ॥
 माहिषेण तु मांसेन राज्यप्राप्तिर्भवेद्भुवम् ।
 आरोग्यं हारिणेनाशु कार्णसारेण वाग्मिता ॥
 शशे मेधावितां गच्छेदाजेष्वजरतामपि ।
 आवेये पलले देवि सर्वकल्याणमाप्नुयात् ॥
 कामठे मेदिनीलाभो बह्वन्नत्वं च राङ्गुरे ।
 वार्ध्रीणसे शत्रुनाशो हांसे मनुजवश्यता ॥
 तैत्तिरेऽभीष्टसिद्धिश्च वर्त्तके पापसंक्षयः ।
 मनस्तोषो बलाकायां फलेक्षोर्विश्ववश्यता ॥
 कीर्तिस्तु महती दध्नि दुग्धे सम्पदनुत्तमा ।
 पिष्टके तनयावाप्तिः शाके च रिपुसंक्षयः ॥
 हालायां पुण्यवृद्धिः स्याच्चोष्ये संपत् सुवाग्मिता ।
 धनागमः फाणिते तु कूर्चिकायां बलान्नतिः ॥
 तुम्बीवृन्ताककूष्माण्डकारवेष्टपटोलकैः ।
 घोषशूरणदीर्घाङ्गिमूलकैस्तेमने कृते ॥
 विद्यालाभो भवेद्देवि तन्त्रे वाक्पटुताऽपि च ।
 गोधूमचूर्णघटिते वस्तुनि प्रतिभा रणे ॥
 वेद्यां दृष्टौ भवेन्मोक्षो मण्डपेऽप्युन्नतिर्भवेत् ।
 चामरच्छत्रयोस्तालवृन्तपर्यङ्गयोरपि ॥
 घण्टादर्पणयोश्चापि दृग्दाने भूतिरुत्तमा ।

आकल्पालङ्करणयोः स्पर्शनालनदृष्टिषु ॥
 नानाविधानि* द्रव्याणि भवन्ति महितुः प्रिये ।
 एवंविधानि भूयांसि चञ्चितान्यशनानि च ॥
 शुभादेशोनि जायन्ते विपरीतान्यतः शृणु ।
 मुख्यभूता कुमारी चेद्वमति द्वित्रिवारकम् ॥
 दुर्भिक्षं जायतेऽवश्यं प्रजाः स्युः पीडिता अपि ।
 राजा विनाशमायाति कुमार्या रोदने कृते ॥
 उच्चारे तु महामारी पुरीषे पुरदाहनम् ।
 अभोजने शत्रुभयमापदो बहुभोजने ॥
 अभाषणे त्वामयाः स्युर्विपदो बहुभाषणे ।
 उपसर्गा बहुविधाश्चेष्टया करपादयोः ॥
 अतिलज्जा विनाशाय तथा निर्लज्जता शुभा ।
 नानोत्पातास्तु मौने स्युः स्वापे बाहोर्विनाशनम् ॥
 सर्वनाशस्तु भीतायां क्रुद्धायां मृत्युरेव च ।
 आवेशे तत्क्षणाद्राजा म्रियते नात्र संशयः ॥
 शङ्कितायां शत्रुशङ्का शान्तायामीतितो भयम् ।
 चिन्तितायां तु विजेयं तद्राष्ट्रस्यैव पातनम् ॥
 मोहे वित्तविनाशः स्याज्जाडो पूजा च निष्फला ।
 चाञ्चल्ये चञ्चला लक्ष्मीः पूजकस्यैव जायते ॥
 विषादवत्यथ यदि कुमारी तत्र जायते ।
 सरुजं सप्रजं राष्ट्रं तदा सोदति पार्वति ॥
 रोगेण म्रियते राजा यदि रुग्णा प्रजायते ।

* सौख्यानि इति ४; ५ पु० पा० ।

दुर्भिक्षमरकातङ्गा यद्यश्रूणि विमुञ्चति ॥
 सर्वनाशो भवेत् तर्हि धुनोति यदि मस्तकम् ।
 त्रस्तायां रिपुजस्त्रासस्तस्य राज्ञः प्रदिश्यते ॥
 कम्पे सति स्याद्विमुखी कालिका परमेश्वरी ।
 नीचैः शिरश्चेत् कुरुते असन्तुष्टा तदेश्वरी ॥
 हीनायुः स्यात् तदा पृथ्वीपतिश्चेद्ब्रह्मदस्वरा ।
 पूजकस्य भद्रैर्न्य व्याकुला यदि जायते ॥
 मोहने व्याकुलायां तु सर्वं नगरमाकुलम् ।
 ब्रोडितायां भवेद्रोगः स्वेदे दारधनक्षयः ॥
 अधोवायुं पतति चेत् कुमारीदैवयोगतः ।
 पीडितं परचक्रेण तदा भवति पत्तनम् ॥
 गीतं गायति चेत् तत्र कुमारी रहितक्रिया ।
 संप्रजाराष्ट्रतनयदारस्य नृपतेर्मृतिः ॥
 सहागताभिः कदा चिन्मुख्या विवदते यदि ।
 तदा समायात्यकस्मात् परचक्रं सुदारुणम् ॥
 यया कया चित् सार्धं वा येन केन चिदेव वा ।
 कुमारी भाषते वीतभयं मन्दाक्षसाध्वसा ॥
 प्रजायन्ते तदा तस्य विषयेषु षडीतयः ।
 व्यत्यासं यदि भक्ष्यस्य कुर्वते करचालनैः ॥
 ग्रस्तं समस्तं भवति मनसो वाञ्छितं प्रिये ।
 उपायनीकृतं यद्यद्व्यं देव्यै तु मण्डपे ॥
 तच्चेत् कराभ्यां स्पृशति कान्दिशीको भवेन्नृपः ।
 निर्वापयति च्छदीपं कुमारो मुखमारुतैः ॥

बुद्धिभ्रंशो भवेत् तर्हि ज्ञानदीपश्च नश्यति ।
 दैवयोगाच्च नृत्यन्ति कुमार्यश्चेत् सुराकुलाः ॥
 सराजकः सविषयः श्मशानमिव जायते ।
 वासांस्युःसृज्य नग्नाः स्युर्यदि तत्र कुमारिकाः ॥
 शत्रुभिर्धूयते तर्हि राजा समरमूर्धनि ।
 यदि फूत्कृत्य कूर्दन्ते करौ धृत्वा भ्रमन्ति च ॥
 भूतावेशः क्षितीशस्य जायते नात्र संशयः ।
 उच्चरिष्यामि हास्ये वा वदन्तीत्यं कुमारिकाः ॥
 भोजनावसरे तर्हि महामारीभयं भवेत् ।
 वामे वा दक्षिणे वाऽपि चलत्तारकया दृशा ॥
 रक्तोग्रया घूर्णयते शिरः स्वस्य कुमारिका ।
 कुरुते वाऽऽदृहासं सा येन त्रस्यन्ति मानवाः ॥
 भूतावेशो भवेत् तर्हि प्रेता नृत्यन्ति वा पुरे ।
 दन्तैर्दन्तान् पीडयित्वा कुर्यात् कटकटारवम् ॥
 प्रयाति सदनं मृत्योः सदारसुतबान्धवः ।
 दृशावनिमिषे कृत्वा सन्दश्यौष्ठं रदेन हि ॥
 संतर्जयति शीर्षं चेत् कम्पयन्ती कुमारिका ।
 तदेव फलमुद्दिष्टं यत् स्यात् कटकटारवे ॥
 आयन्तिकं भजेन्मौनं करेणान्नं स्पृशेन्न च ।
 शिरोऽत्यर्थं च नमयेदङ्गुष्ठेन लिखेद्भुवम् ॥
 विदध्याद्भूतले रेखां करजैर्निष्प्रयोजनम् ।
 लंहताभ्यां कराभ्यां च कण्डूयेदथ वा शिरः ॥
 तृणान्यकारणाच्छिन्त्यादङ्गुलीस्फोटमाचरेत् ।

पाणिभ्यां मुद्रयेन्नेत्रे द्वौ कर्णौ पिदधाति वा ॥
 कुर्वीत वा बाहुरिकां पाणिघृष्टिं करोति वा ।
 महान्तं आसमादत्ते मुखं व्यादाय तिष्ठति ॥
 अन्नोपरि क्षुतं धत्ते जृम्भणं वा मुहुर्मुहुः ।
 गृहीत्वा पाणिना वाऽन्नं चतुर्दिक्षु क्षिपत्यपि ॥
 उत्थाय वा प्रचलति त्यक्त्वाऽन्नं पूजनं तथा ।
 आयाति वमनं वाऽस्याः स्यातां रोमाश्चवेपथू ॥
 निर्गच्छतो वा तद्वात्रात् पूयास्ते हेतुमन्तरा ।
 अकस्मादेव कुरुते काकुं चेत् कारणं विना ॥
 अश्लीलं वल्गति तथा स्ववर्ग्यार्थे प्ररोदिति ।
 आमुक्तालङ्घ्यतीर्मुञ्चेद्द्रुहं यास्यामि वा वदेत् ॥
 यस्य कस्यापि वा कुर्याद्भर्त्सनं तत्स्थले स्थिता ।
 उपालभेत वा कां चित् सहैवास्या उपेयुषी ॥
 भिन्नति वा निदानं वा स्वहस्तबलयानि वा ।
 कृते मृतस्य कस्यापि बन्धोः शोचति तत्र सा ॥
 यत्किञ्चिद्वा प्रलपति निर्निमित्तं कुमारिका ।
 सर्वमेतदमङ्गल्यं विज्ञेयं त्रिदशार्चिते ॥
 दुर्भिक्षं धननाशं च रोगो मारीभयं तथा ।
 पदे पदे च विपदः शोको व्याधी रिपून्नतिः ॥
 परचक्रागमोऽकस्मादग्निदाहः पुरे गृहे ।
 मृत्युत्रासश्च दारिद्र्यं विच्छेदो बन्धुभिः सह ॥
 भूतप्रेतपिशाचाभिनिवेशोऽपि गृहे गृहे ।
 अष्टाभिस्तु महारोगैः प्रजानां निधनं भवेत् ॥

कुमारीचेष्टितद्वारा ज्ञायते हि शुभाशुभम् ।
 वार्षिकं च फलं राज्ञो जयो वाऽथ पराजयः ॥
 मृत्युदुःखं धनं सौख्यं शत्रुभीतिर्बलोल्लसति ।
 राज्यवृद्धिः प्रजापीडा व्यङ्गताऽनीकसंक्षयः ॥
 कुमारीपूजनात् सर्वं ज्ञायते भोजनादपि ।
 परीक्षा यत्नतस्तस्माद्राज्ञा स्वस्य शुभाशुभम् ॥
 अर्चातोऽपि विशेषेण भोजनेन सुरेश्वरि ।
 जाते शुभे समीचीनं वृत्ते तदितरत्र हि ॥
 काम्यार्चा बहुसम्भारैर्दोषं तज्जं निवारयेत् ।
 निवृत्य स्वगृहं रुग्णा याता यदि कुमारिका ॥
 तस्मिन्नेवाहनि भवेत् तथाऽपि न शुभं फलम् ।
 इत्यादि फलबाहुल्यं शुभस्याप्यशुभस्य च ॥
 मया विविच्य कथितं ध्रियस्व हृदि यत्नतः ।
 ततो निशीथसमये विधिवत् पूजनं ततः ॥

“(वाङ्मनलोद्ये)

पूजिता शरदर्चायां या कुमार्युक्तलक्षणा ।
 सर्वपर्वसु सा पूज्या यावत् पुष्पं न दृश्यते ॥

पुष्पमित्युपलक्षणम् ।

महाकालः” ।

पीठमूर्त्योः प्रकुर्वीत धूपदीपानुलेपनैः ।

नैवेद्यैरुपहारैश्च गीतवाद्यादिभिस्तथा ॥

(यामले)

कुमारोपूजिता हन्ति कलुषं पूर्वसञ्चितम् ।

कुमारिकां विजानीयात् साक्षात् प्रकृतिरूपिणीम् ॥

“ ” एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यत्किञ्चिद्वस्तु शोभनेनम् ।
 अनन्तफलं प्रोक्तं कुमार्यै चेत् समर्पयेत् ॥
 भोजिता चेत् कुमारी स्याद्भोजितं भुवनत्रयम् ।
 ब्राह्मणाय सुशीलाय कुमारीं यः समर्पयेत् ॥
 पृथिवीदानजं पुण्यं सोऽश्नुते नात्र संशयः ।
 स सर्वसिद्धिमाप्नोति यः कुमारीं समर्चयेत् ॥
 वसन्ति सततं देहे कुमार्या योगिनीगणाः ।
 अतः पूज्या नमस्या सा लालनीया तदिच्छया ॥
 अक्षय्या पूजयेदेकां कुमारीं साधकोत्तमः ।
 विना कुमरिकापूजां न पर्व परिहापयेत् ॥
 यो नित्यमर्चयेदेतां तस्य स्यात् सिद्धिरुत्तमा ।
 नवरात्रे समायाते नवम्यन्तं निशातधीः ॥
 नानोपहारैरभ्यर्च्य कुमारीं वृद्धिपूर्वकम् ।
 वृद्धिक्रमेण प्रयजेद्वाञ्छितां सिद्धिमाप्नुयात् ॥
 अथ वा पूजयेन्मन्त्री युवतीर्नव संख्यकाः ।
 हृल्लेखा गगना रक्ता महासूक्ष्मा करालिका ॥
 इच्छा ज्ञाना क्रिया दुर्गा नवनामभिरीताः ।
 पूर्ववत् पूजयेन्मन्त्री जपेत् साग्रं सहस्रकम् ॥
 यदि सा क्षोभमायाति स्वयमेव विलासिनी ।
 तथा सह नयेद्वात्रिं वासरं वा निशातधीः ॥
 कुमारीं न स्पृशेदेव भावयुक्तेन चेतसा ।
 अन्यथा मृत्युमाप्नोति नो चेदेवी पराङ्मुखी ॥
 (महाकालसंहितायाम्)
 एवं दोषगुणौ ज्ञात्वा कुर्वीत विधिपूर्वकम् ।

कुमारीपूजनं भक्त्या शरत्पूजनकर्मणि ॥
बलिहोमादयश्चास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।

इति कुमारीपूजाविधिः ।

अथ शिवाबलिः ।

(कुलचूडामणौ)

विल्वमूले प्रान्तरे वा श्मशाने वाऽपि साधकः ।
मांसप्रधानं नैवेद्यं सन्ध्याकाले निवेदयेत् ॥

(महाकालसंहितायाम्)

पुराहर्हिर्निशाकाले महारण्यसमीपतः ।
गृहीत्वा भक्ष्यवस्तूनि पूजासम्भृतिमप्युत ॥
आतैरनुगतो द्वित्रैः प्रदद्यात् फेरवीबलिम् ।
आमानि पक्वान्यपि च मांसानि विधिनाऽर्पयेत् ॥
तत्रोदीचीदिग्बदनो वीतभीः शुचिरूर्जितः ।
प्राणायामं षडङ्गं च विधायार्घं प्रपूज्य वै ॥
उत्थाय मुक्तचिकुरः शिवा आकारयेच्छलैः ।

(कुलचूडामणौ)

कालि कालीति वक्तव्यं तत्र सा शिवरूपिणी ।
पशुरूपा समायाति परिवारगणैः सह ॥
भुक्त्वा रौति यदैशान्यां मुखमुत्तोल्य सुस्वरम् ।
तल्लैव मङ्गलं तस्य नान्यथा कुलभूषण ॥
अवश्यमन्नदानेन तोषयेन्नियतं शिवाम् ।
नित्यश्चाहं यथासन्ध्यावन्दनं पितृतर्पणम् ॥
तथेयं कुलदेवीनां नित्यता कुलपूजने ।
पशुरूपां शिवां देवीं यो नार्चयति निर्जने ॥
शिवारावेण तस्माद्यु सर्वं नश्यति निश्चितम् ।

जपपूजाविधानानि यत्किञ्चित्सुकृतानि च ॥
 गृहीत्वा शापमासाद्य शिवा रोदिति निर्जने ।
 एकया त्वद्वयते यत्र शिवया देवभैरव ॥
 तत्रैव सर्वशक्तीनां प्रीतिः परमदुर्लभा ।
 पशुशक्तिर्नरे शक्तिः पक्षिशक्तिश्च भैरव ॥
 पूजिता विगुणं कर्म सगुणं कारयेद्यतः ।
 तेन सर्वप्रयत्नेन कर्त्तव्यं पूजनं महत् ॥
 राजादिभयमापन्नं देशान्तरभयादिकम् ।
 शुभाशुभानि कर्माणि विचिन्त्य बलिमाहरेत् ॥
 गृह्ण देवि महाभागे शिवे कालाग्निरूपिणि ।
 शुभाशुभफलं व्यक्तिं ब्रूहि गृह्ण बलिं तव ॥
 एवमुच्चार्य दातव्यो बलिः कुलजनप्रिये ।

(महाकालसंहितायाम्)

स्थानादस्मादपसरेत् किञ्चिद्दूरतरं प्रिये ।
 शिवा यथा वीतभया आगच्छन्त्यन्नसन्निधौ ॥
 तत्र स्थित्वा निरीक्षेत किं किं ता भक्षयन्ति हि ।
 सर्वा आगत्य चेत् सर्वं प्रदत्तं भक्षयन्ति हि ॥
 विनिर्दिशेत् सर्वसिद्धिं राज्यलाभं धनागमम् ।
 यद्यत् ता भक्षयन्त्यन्नं तत्तत् फलमवाप्नुयात् ॥
 यद्यच्च नैव खादन्ति तत्तन्नैव फलं लभेत् ।
 कुमारीपूजनादौ तु विशेषोऽस्योपवर्णितः ॥
 तेन नात्र ब्रुवे देवि ग्रन्थाधिक्यभयादपि ।
 कुमारीरूपमास्थाय यथाऽऽयाति महेश्वरी ॥

शिवारूपं तथा कृत्वा स्वयमायाति कालिका ।
 ततो भक्तिः प्रकर्तव्या तासु यत्नेन साधकैः ॥
 शिवासु भक्षयन्तीषु सर्वेभ्यो बलिमाहरेत् ।
 संहारभैरवायादौ वटुकेभ्यस्ततः परम् ॥
 विनायकेभ्यो मातृभ्यः क्षेत्रपालेभ्य एव च ।
 योगिनीभ्यो डाकिनीभ्यः शिवदृतीभ्य एव च ॥
 पुरोक्तो मन्त्र आसिद्धिं तेन तेन बलिं हरेत् ।
 महदैश्वर्यमाप्नोति निःशेषं भक्षयन्ति चेत् ॥
 अर्धे तु मध्यमा सिद्धिरभक्षे तु विपद्भवेत् ।

(कुलचूडामणौ)

यदि नो गृह्यते वत्स तदा नैव शुभं भवेत् ।
 शुभं यदि भवेत् तत्र भक्ष्यते तदशेषतः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

खादितोत्थाय तिष्ठत्सु शिवावृन्देषु तत्र हि ।
 दण्डवत् प्रणमेत् सर्वाः स्वेष्टदेवीधिया स्वयम् ॥
 पुष्पाञ्जलिं समादाय गन्धचन्दनचर्चितम् ।
 उत्थाय मुक्तचिकुरो मीलिताक्षो दिगम्बरः ॥
 भक्तिशाली वीतभयः किञ्चित्प्रणतकन्धरः ।
 स्तुतिं कुर्यात् स्तवैरैतैर्वरप्रार्थनपूर्वकम् ॥
 शिवारूपधरे देवि गुह्यकालि नमोऽस्तु ते ।
 उल्कामुखि ललज्जिह्वे घोररावे शृगालिनि ॥
 श्मशानवाशिनि प्रेते शवमांसप्रियेऽनघे ।
 अरण्यचारिण्यनघे शिवे जम्बुकरूपिणि ॥
 नमोऽस्तु ते महामाये जगत्तारिणि कालिके ।

मातङ्गि कुक्कुटे रौद्रि महाकालि नमोऽस्तु ते ॥
 सर्वसिद्धिप्रदे भीमे भयङ्करि भयापहे ।
 प्रसन्ना भव देवेशि मम भक्तस्य चण्डिके ॥
 संसारसागरतरे जय सर्वशुभङ्करि ।
 विश्वस्तचिकुरे चण्डि चामुण्डे मुण्डमालिनि ॥
 संहारकारिणि क्रुद्धे सर्वसिद्धिं प्रयच्छ मे ।
 दुर्गे किराति शवरि प्रेतासनगतेऽभये ॥
 अनुग्रहं कुरु सदा कृपया मां विलोकय ।
 राज्यं प्रयच्छ विकटे वित्तमायुः सुतान् स्त्रियम् ॥
 शिवाबलिप्रदानेन त्वं प्रसन्ना भवेश्वरि ।
 नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमोऽस्तु ते ॥
 इत्येतैरष्टभिः श्लोकैः शिवास्तोत्रमुदीरयेत् ।
 ततस्तच्छेषमन्नं यद्भाजनं चान्यदेव वा ॥
 सर्वं हि निखनेद्भूमौ प्रयत्नेनैव पार्वति ।
 यदि काकाः खराः श्वानो ये चान्ये पापजातयः ॥
 भक्षयन्ति तदुच्छिष्टं तदा विघ्नः प्रजायते ।
 रात्रावेव समागच्छेन्निर्भयो विपिनान्तरात् ॥

इति शिवाबलिविधिः ।

अथ कृत्यशेषमाह ।

आगत्य गन्धपुष्पाद्यैः पुनर्देवीं प्रपूजयेत् ।

तथा ।

ततः प्रदक्षिणीकृत्य पतित्वा दण्डवद्भुवि ।
 भक्तिमग्नः स्तुतिं जल्पेत् काकुगद्गदया गिरा ॥
 अलिका नासिका बाहू वक्षो जठरमेव च ।

पादौ क्ष्मां स्पर्शतो दण्डप्रणामः स हि गद्यते ॥
 आयुर्देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे ।
 पुत्रान् देहि धनं देहि कामान् सर्वाँश्च देहि मे ॥
 प्रचण्डे पुत्रदे नित्यं सुप्रीते सुरनायिके ।
 कुलोद्योतकरे चोग्रे जयं देहि नमोऽस्तु ते ॥
 उग्रचण्डे प्रचण्डासि प्रचण्डबलनाशिनि ।
 नमस्ते सर्वदा देवि विश्वेश्वरि नमोऽस्तु ते ॥
 दुर्गोत्तारिणि दुर्गे त्वं सर्वाशुभनिषूदनि ।
 धर्मार्थमोक्षदे देवि नित्यं मे वरदा भव ॥
 दुर्गे देवि महाभागे त्राहि मां शरणागतम् ।
 महिषासृञ्जदोन्मत्ते प्रणतोऽस्मि प्रसीद मे ॥
 हर पापं हर क्लेशं हर शोकं हराशुभम् ।
 हर रोगं हर क्षोभं हर मानं हर प्रिये ॥
 कालि कालि महाकालि कालिके पापहारिणि ।
 धर्मकामप्रदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥
 संग्रामे विजयं देहि धनं देहि सदा गृहे ।
 धर्मकामर्थसम्पत्तीर्देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥
 महिषघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि ।
 आयुरारोग्यविजयं देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥
 आयुर्ददातु मे काली पुत्रानपि सदाशिवा ।
 अर्थकामौ महामाया विभवं सर्वमङ्गला ॥
 शिरो मे चण्डिका पातु कण्ठं पातु सुरेश्वरी ।
 हृदयं पातु चामुण्डा सर्वतः पातु कालिका ॥

ब्रह्माणी चैव कौमारी वाराही वैष्णवी तथा ।
 माहेश्वरी नारसिंही इन्द्राणी शिवदूत्यपि ॥
 महाकाली च चामुण्डा भैरवी कौशिकी तथा ।
 उग्रचण्डा च प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्डनायिका ॥
 चण्डा चण्डवती चैव अतिचण्डा च चण्डिका ।
 एताश्चान्याश्च रुद्राणि यास्ते तिष्ठन्ति शक्तयः ॥
 ताभिः सहैव मां रक्ष संग्रामे संकटे तथा ।
 नानापुराणवाक्येन नानादेवर्षिभाषितैः ॥
 सदाशिवाज्ञया चापि त्वमेव शरणं मम ।
 त्वां विहायेतरां नैव संश्रये देवतां शिवे ॥
 अतः परं यदुचितं तत् कर्तुं मातरर्हसि ।
 आध्याकुलं च दारिद्र्यं रोगं शोकं च दारुणम् ॥
 बन्धुस्वजनवैराग्यं दुर्गे त्वं हर दुर्गतिम् ।
 राज्यं तस्य प्रतिष्ठा च लक्ष्मीस्तस्य सदा स्थिरा ॥
 प्रभुत्वं तस्य सामर्थ्यं यस्य त्वं सस्तकोपरि ।
 धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं सफलं जीवितं मम ॥
 अगताऽसि यतो दुर्गे माहेश्वरि समालयम् ।
 अर्घ्यं पुष्पं च नैवेद्यं धूपं दीपं बलिं तथा ॥
 गृहाण वरदे देवि कल्याणं कुरु सर्वदा ।
 कृत्वैवं विधिना दण्डप्रणामस्तुतिपूर्वकम् ॥
 पूजां समर्पयेद्देव्यै गृहीत्वा पाणिना जलम् ।
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ॥
 यदर्चितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ।

गृहीतुं शारदीं पूजां मर्त्यमण्डलमागताम् ॥
 चण्डिके त्वां नमाम्यद्य पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।
 कायेन मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम ॥
 अन्तश्चरसि भूतानां ज्ञात्री त्वं सर्वसाक्षिणी ।
 एतावत् कृत्यमुदितं शारदीयार्चनक्रमे ॥
 प्रातरारभ्य देवेशि रात्रेर्यामत्रयावधि ।
 शिवाबलिं कुमार्यर्चां प्रभूतं बलिमेव वा ॥
 हित्वाऽदस्त्रयमष्टम्यामयमेव विधिः प्रिये ।
 ततः प्रसादं देव्या यदवशिष्टं भवेदनु ॥
 गन्धं पुष्पं च नैवेद्यं सिद्धं वाऽसिद्धमेव वा ।
 बन्धुभिः सह भुञ्जीत हास्यकौतुकपूर्वकम् ॥
 गीतनृत्यादिकं पश्चाद्देव्यग्रे विनियोजयेत् ।
 क्रीडां च ज्ञातिभिः सार्धं विदधीत विचक्षणः ॥

“एतावदशका संक्षिप्तपूजाका (कालिकापुराणे)

सम्यक्कल्पोदिता पूजा यदि कर्तुं न शक्यते ।
 गन्धं पुष्पं च धूपं दीपं नैवेद्यमेव च ॥
 अभावे तोयपुष्पाभ्यां तदभावे च भक्तिः ।
 संक्षेपपूजा कथिता इति ” ॥

इति नवमीकृत्यम् ।

अथ द्वितीयादिनवमीपर्यन्तं रेवन्तादिपूजाविधिः ।

तदुक्तं (स्कन्दपुराणे)

शान्तये वृद्धयेऽश्वानामात्मनो विजयाय च ।
 द्वितीयादिनवम्यन्तं रेवन्तं पूजयेन्नृपः ॥

“ एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

ग्रन्थान्तरे ।

आश्विनस्य सिते पक्षे नवमीं यावदेव हि ।

द्वितीयां तिथिमारभ्य पूजयेद्विविधार्हणैः ॥

रेवन्तमुच्चैःश्रवसं तुरङ्गानभिरक्षितान् ।

वर्धन्ते वाजिनस्तेन सर्वोपद्रववर्जिताः ॥

अभिरक्षितानिति रक्षणहेतुस्तद्विधिश्चोक्तः ।

(शालिहोत्रे)

अश्वयुजि शुक्लपक्षे द्वितीयादि सप्तरात्रं तु ।

वडवारूपेणैका स्वातिः सौरं रथं वहति ॥

सा भारेणाक्रान्ता क्रुद्धाऽन्यान्यान्निरीक्षते वाहान् ।

तेषां तेजः सत्त्वं बलं च कृत्स्नं निगृह्णाति ॥

सञ्जायन्ते रोगा महोपसर्गैः समन्विताः कष्टाः ।

तस्मात् स्वात्युपतापे वाजिषु पीडा भवेन्महती ॥

एवं च सप्तरात्रं स्वातेः सम्पात एव निर्दिष्टः ।

तत्र दिवाकरकिरणैरस्पृष्टा वाजिनो रक्षयाः ॥

शालां ततोपलिप्तां मनोरमां वर्जितां च रविकिरणैः ।

नानाकारैः पुष्पैरलङ्कृतां धूपितां कुर्यात् ।

तस्यां ह्यतास्तुरगाः सुधूपिता अर्चिता द्वितीयायाम् ॥

पुरुषैश्च शस्त्रहस्तैः सप्ताहं रक्षितव्यास्तु ।

तथा ।

शुभेऽहनि मुहूर्ते च क्षमापतिः सपुरोहितः ।

कृतमङ्गलसंस्कारान् वाहान् शालां प्रपूजयेत् ॥

ज्योतिःशास्त्रेऽपि ।

स्वाती नाम रवेः पत्नी वरदा रूपिणी रथम् ।

वहन्ती साऽऽश्विने मासि सूर्यरश्मिसमाश्रिता ॥

सप्ताङ्गं पीडयेदश्चास्ततः स्नानार्चितान् गृहे ।
रेवन्तं पूजयित्वाऽथ बद्ध्वा पोटलिकां गले ॥
तथा ।

शुक्लपक्षे द्वितीयायां शालां संवेष्ट्य रक्षयेत् ।
आदित्यरश्मितो वाहान् कटैर्वस्त्रादिकैस्तथा ॥
अस्तं गते दिनकरे कट्यादीनपकर्षयेत् ।
प्रवातार्थं पुनर्दद्याद्यावत् सन्ध्या न जायते ॥
शालाप्रवेशविहितां रक्षां कण्ठे प्रदापयेत् ।
लोहकं निम्बपत्राणि गुग्गुलुं सर्षपान् घृतम् ॥
चैलबद्धां वचां हिङ्गु बध्नीयाद्वाजिनां गले ।
घर्षणं भ्रामणं चैव तथा चैवापवर्त्तनम् ॥
निशाशेषे प्रकर्त्तव्यं यावद्दूरे दिवाकरः ।
एतत्प्रतिदिनं कुर्यात् सप्तरात्रमतन्द्रितः ॥
कारयेद्वाह्यणांश्चैव शान्तिस्वस्त्ययनानि च
(ब्रह्मपुराणेऽपि)

शान्तिस्वस्त्ययने कार्ये तदा तेषां दिने दिने ।
धान्यं भस्मातकं कुष्ठं वचां सिद्धार्थकास्तथा ॥
पञ्चरङ्गेन सूत्रेण कण्ठे तेषां तु बन्धयेत् ।
वायव्यैर्वारुणैः सौरैः शक्तैर्मन्त्रैः सर्वैष्णवैः ॥
वैश्वदेवैस्तथाऽऽनेयैर्होमः कार्यो दिने दिने ।
तुरगा रक्षणीयाश्च पुरुषैः शस्त्रपाणिभिः ॥
न च ताड्याः क चित् तत्र न च बाह्याः कदा चन ।
(शालिहोत्रे)

शिरसि स्थापयेद्देवीं रेवन्तं पूजयेत् सदा ।

तथा ।

नानाखाद्यनिवेद्यानि रेवन्ताय निवेदयेत् ।

तथा ।

वेदों च कल्पयित्वा धुरि च विधानेन पावकं जुहुयात् ।

धुरि शालाशिरोभागे ।

सायं प्रातश्च शुचिः पुरोहितो ब्रह्मचारी स्यात् ।

शालिहोत्रगदितेन मन्त्रेणानेन होमयेत् ॥

रोहिताश्व महाभाग हव्यवाडमरोत्तम ।

धूमध्वज ऋतुद्वार स्वर्गस्य प्रथितः पथि ॥

उत्तिष्ठ होमं गृह्णेमं शान्तिरस्य ह्येषु च ।

स्वाहेति तत्र मन्त्रेण प्रापयेत् प्रथमाहुतिम् ॥

ततः प्रजापतीन्द्राय सोमाय वरुणाय च ।

विवस्वते कुवेराय सुषेणायाहिशालिने ॥

आदित्येभ्यस्तथाऽश्विभ्यो रुद्रेभ्यो वसुभिः सह ।

विष्णोश्च विश्वदेवानां साध्यानां मरुद्भिः सह ॥

वासुकिप्रमुखानां च नागानां गरुडस्य च ।

सर्वासां पौर्णमासीनां तिथीनां चैव सर्वशः ॥

देवीनां नदीनां सागराणां वनपस्तीनाम् ।

स्वाहाकारेण जुहुयात् तृतीयं च हुताशने ॥

देवानामेव सर्वेषां स्वाहाकारेण होमयेत् ।

दुर्बलानीह रक्षांसि प्रत्यूषे ब्रह्मतेजसा ॥

भवन्ति तस्मात् प्रत्यूषे स्वापयेत् पोषयेद्भयान् ।

पुरोहितस्तु द्विः कालं तर्पयित्वा द्विजोत्तमम् ॥

पुण्याहं कारयेन्नित्यं स्वस्त्याशीर्मङ्गलान्वितम् ।

नटनर्तकगन्धर्वाः सूतचारणमागधाः ॥
 तुरगानुपतिष्ठेयुः सप्ताहं शान्तिकारणात् ।
 मनोज्ञान् मधुरान् शब्दान् श्रुत्वा गच्छन्ति वै ग्रहाः ॥
 वादित्रं वाहनागारे तस्मान्नित्यं प्रयोजयेत् ।
 अतिक्रम्य च सप्ताहमष्टम्यां स्नापयेद्धयान् ॥
 वरुणाय बलिं दत्त्वा पश्चात् तोयेऽवगाहयेत् ।

अष्टम्यामिति द्वितीयामारभ्याष्टमीतिथावित्यर्थः ।

ग्रन्थान्तरे ।

तानश्चान् समलङ्कृत्य वाजिशालां प्रवेश्य च ।
 प्रतिमायां चित्रपटे स्थण्डिले मण्डलेऽथ वा ॥
 नानोपचारसम्भारै रेवन्तं देवमर्चयेत् ।
 नमो देवाधिदेवाय तुरङ्गबलचारिणे ॥
 सूर्यपुत्राय देवाय तुरङ्गानां हिताय च ।
 तुरङ्गपरिषद्यस्य नृगजोपरि धावति ॥
 साश्वमश्वाधिपं रक्ष शरणं त्वां ब्रजाम्यहम् ।
 इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा रेवन्ताय बलिं हरेत् ॥

तथा ।

सूर्यपुत्र महाबाहो छायाहृदयनन्दन ।
 शान्तिं कुरु तुरङ्गानां रेवन्ताय नमोऽस्तु ते ॥
 एवं स्तुत्वाऽथ विधिवदुच्चैःश्रवसमर्चयेत् ।

(ब्रह्मपुराणे)

अश्वयुक्शुक्लपक्षे तु स्वातीयोगे सुशोभने ।
 पूर्वमुच्चैःश्रवा नाम प्रथमं सूर्यमावहत् ॥
 तस्मात् साश्वैर्नरैस्तत्र पूज्योऽसौ श्रद्धया सदा ।

पजनीयाश्च तुरगा नवमो यावदेव हि ॥

अन्थान्तरे ।

उच्चैःश्रवो नमस्तुभ्यं नमः क्षीराब्धिनन्दन ।
 वाहान् वर्धय वाहेन्द्र सर्वोत्पातं विनाशय ॥
 एवं स्तुत्वोच्चैःश्रवसं तुरगान् पूजयेत् ततः ।
 नानोपचारैस्तेषां तु कर्णजापमिदं पठेत् ॥
 गन्धर्वकुलजातोऽसि मा भूयाः कुलदूषकः ।
 ब्रह्मणः सत्यवाक्येन सोमस्य वरुणस्य च ॥
 तेजसा चैव सूर्यस्य मुनीनां तपसा तथा ।
 रुद्रस्य ब्रह्मचर्येण पवनस्य बलेन च ॥
 प्राभावाच्च हुताशस्य वर्त्तस्व त्वं तुरङ्गम ।
 स्मर त्वं राजपुत्रोऽसि कौस्तुभं च मणिं स्मर ॥
 सुरासुरैर्मथ्यमानात् क्षीरोदादमृतादिभिः ।
 जात उच्चैःश्रवा पूर्वं तेन जातोऽसि तत् स्मर ॥
 यां गतिं ब्रह्महा गच्छेत् पितृहा मातृहा तथा ।
 भूम्यर्थे नृतवादी च रणे यस्तु पराङ्मुखः ॥
 सूर्याचन्द्रमसौ वायुर्यावत् पश्यन्ति दुष्कृतम् ।
 ब्रज त्वं तां गतिं क्षिप्रं तच्च पापं भवेत् ततः ॥
 विकृतिं यदि गच्छेथा युद्धेऽध्वनि तुरङ्गम ।
 रिपून् विजित्य समरे भर्त्रा सह सुखी भव ॥
 तुरङ्गम चिरं जीव परशस्त्रैरलक्षितः ।
 सदा मां समरे रक्ष स्वामिकार्यं सदा कुरु ॥

ज्योतिःशास्त्रे ।

नार्चयेज्जलजैः पुष्पैर्वाहनार्घविधिं प्रति ।

सौगन्धिकं विशेषेण तेषां दद्यान्न सर्वदा ॥
 ग्रहहोमस्तु कर्त्तव्यो ग्रहाणामर्चनं तथा ।
 अनेन विधिना यस्तु करोति तुरगोत्सवम् ॥
 तस्य तुरङ्गनाथस्य न कदा चिद्भयं भवेत् ।

गजपुजाऽप्युक्ता (ब्रह्मपुराणे)

ज्येष्ठायोगे पुरा तत्र गजाश्चाष्टौ महाबलाः ।
 पृथिवीमवहनं पूर्वं सशैलवनकाननाम् ।
 कुमुदैरावतौ पद्मः पुष्पदन्तोऽथ वामनः ॥
 सुप्रतोकोऽञ्जनो नीलस्तस्मात् तांस्तत्र पूजयेत् ।
 शाक्रादृक्षात् समारम्य नवम्यन्तं च पूर्ववत् ॥
 गजपुजामन्त्रस्तु ।
 पान्तु वो बसवो रुद्रा आदित्याः समरुद्रणाः ।
 भर्तारं रक्ष नागेन्द्र समयः प्रतिपाल्यताम् ॥
 अवाप्नुहि जयं युद्धे समये स्वस्ति नो ब्रज ।
 श्रीस्तु सोमादलं कृष्णात् तेजः सूर्याज्जवोऽनिलात् ॥
 स्थैर्यं मेरोर्जयो रुद्राद्यशो देवात् पुरन्दरात् ।
 युद्धे रक्षन्तु नागास्त्वां दिशश्च सह दैवतैः ॥
 अश्विनौ सह गन्धर्वैः पान्तु त्वां सर्वतः सदा ।
 इति ज्योतिःशस्त्रे प्रोक्तः ।

इति रेवन्तादिपूजाविधिः ।

अथ शक्तिसङ्गमोक्ताः काम्यविशेषा लिख्यन्ते ।

नवरात्रव्रतासक्तो नवनाथो भवेद्भुवम् ।
 गौडकाश्मीरद्रविडमार्गेण त्रिविधो भवेत् ॥
 अष्टम्यन्तं जपः कार्यस्ततोऽष्टम्यां तु होमयेत् ।
 अर्धरात्रे समायाता पूर्वविद्धाऽपि पार्वति ॥

साऽष्टमी सर्वकार्याणां कर्त्री भवति निश्चितम् ।
होमपूजादिकं तत्र कुर्याद्यत्नेन पार्वति ॥
द्वितीयदिवसे चेत् सा तदैवोपोषणं चरेत् ।

तथा ।

घटिकाः षोडश त्याज्या आद्याः प्रतिपदस्तु याः ।
कलशस्थापनं कुर्यात् कल्याणं जायते तदा ॥
नवम्यां पारणं कुर्याद्दशम्यां तु विसर्जनम् ।
काश्मीराल्पं क्रमं देवि शृणु यत्नेन पार्वति ॥
नवरात्रं निराहारो होमोऽष्टम्यां तथा भवेत् ।
नवम्यां विप्रभोज्यं स्याद्द्विग्वेधे पारणं चरेत् ॥
नवरात्रं निराहारो निर्विकल्पं जितेन्द्रियः ।
अष्टमीनवमीसन्धौ होमकर्म समाचरेत् ॥
नवम्यां विप्रभोज्यं स्याद्दशम्यां पारणं चरेत् ।
केरलाल्पः क्रमः प्रोक्तो निर्णयं शृणु पार्वति ॥
तिथिक्षये तथा वृद्धौ यथोक्तेन तु वर्त्मना ।
अष्टमीनवमीप्राप्तौ पूर्ववेधो न दूष्यति ॥
अष्टम्यामर्धरात्रे तु यत्किञ्चित् कुरुते नरः ।
तत्तदक्षयमायाति नवदुर्गाप्रयोगतः ॥
एकोत्तरप्रविद्ध्या वा स्तोत्रं जापादिकं चरेत् ।
प्रथमेऽहि जपो यावत् तावत् कुर्याच्च वा सुधीः ॥
उदयास्तमयं जप्त्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।
नवरात्रव्रते स्त्रीणां *मृत्युयोगो भवेद्यदा ॥
सैव देवी न संदेहस्तां पूज्य विजयी कलौ ।

* स तु योगो इति ४ पु० प० ।

ताम्बूलागुरुकस्तूरीदिव्याम्बरविभूषणैः ॥
 सूर्योदयं समारभ्य पुनः सूर्योदयान्तरम् ।
 तावज्जपत्वा निरातङ्गः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
 एकासनगतो भूत्वा नवरात्रं तु शाम्भवीम् ।
 मुद्रामालम्बयेद्देवि नवनाथाधिपो भवेत् ॥
 गुहायां मठिकायां वा निर्जने पर्वतेऽपि वा ।
 अधोमुखो वा देवेशि नवरात्रं निरम्बुभुक् ॥
 स्वमाच्छाद्य मृदा देवि तत्र संस्थापयेद्दण्डम् ।
 यवाङ्कुरान् समारोप्य शाम्भवीं मुद्रिकां चरेत् ॥
 दृढासनी वाऽशयनी यथोद्दिष्टं समाचरेत् ।
 कापालिकावधूतानां व्रतमेतन्मयेरितम् ॥

शाम्भवी मुद्रा तु (त्रिपुरासारसमुच्चये)

अथ पाणिनिरुद्धकम्बुनिर्ना ध्वजमूलस्थितसव्यपादपाणिः ।
 ऋजुकायशिरोधरो यतात्मा विषयेभ्यो विनिवर्तितेन्द्रियश्च ॥
 काकीचञ्च्रकृष्टैर्मुहूरुदरदरीं पूरयित्वा समीरै-
 रङ्गुष्ठाभ्यामुभाभ्यां नररिपुविवरे तर्जनीभ्यां च नेत्रे ।
 नासारन्ध्रं निरुध्य स्थिरविमलमतिर्मध्यमाभ्यामथास्यं
 त्वन्याभिर्नातिगाढं कमलजनिलये स्थापयेन्मानसं स्वम्-इति ॥
 तथा (शक्तिसङ्गमे)

आज्ञा भवति देवेशि तदैवोपोषणं चरेत् ।
 आज्ञा यदि न जायेत तदा ग्रामाधिपस्य च ॥
 देशाधिपस्य विप्रस्य पूजकस्य स्त्रियस्तथा ।
 आज्ञां गृहीत्वा देवेशि वरं प्रार्थ्य सुखो भवेत् ॥
 भक्तप्रीता च सा दुर्गा स्वयमाज्ञां प्रयच्छति ।

वीरशाक्तविधानेन चण्डदर्पव्रतं चरेत् ॥
 जिह्वां संत्रोव्य यत्नेन द्विवेदेषुरसाङ्गुलाम् ।
 जिह्वा सा पुनरायाति तेन सिद्धीश्वरो भवेत् ॥
 नवरात्रं समासाद्य महाष्टम्यां निशामुखे ।
 देवीं यत्नेन संपूज्य सङ्कल्पं कामनान्वितम् ॥
 शिरःपुष्पं कर्त्तयित्वा पूर्णं मध्यकनिष्ठतः ।
 यत्ने देवे निवेद्याथ शिवतुल्यो भवेद्भुवम् ॥
 पुनः शिरः समायाति महाचीनवरः स तु ।
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥
 नवरात्रं निराहारः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
 महाष्टम्यामर्धरात्रे अङ्गुष्ठान्मस्तकावधि ॥
 मासं संकर्त्तुं यत्नेन यथोक्तं कुण्डमाचरेत् ।
 होमयेत् तत्र देवेशि देवीप्रत्यक्षतामियात् ॥
 देवीदेहं भवेत् तद्धि नात्र कार्या विचारणा ।
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥
 नवरात्रे निराहारो गुरुभक्तो महाव्रती ।
 कुण्डं पुरुषमात्रं तु कृत्वा तत्र विशङ्कितः ॥
 पञ्चपल्लवकाष्ठानां वह्निं तत्र समाचरेत् ।
 अङ्गुष्ठान्मस्तकं यावत् स्वदेहं होमयेद्व्रती ॥
 अग्निशय्यां च वा कृत्वा देवीं पश्यति निश्चितम् ।
 अर्चापरः क्रमेणैव लतागोहप्रवेशनात् ॥
 भवेत् कल्पलतातुल्यः साधको नात्र संशयः ।
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥

नवरात्रं निर्विकल्पो निराहारो वृढव्रतः ।
 यमुद्दिश्य क्रियां कुर्यात् तमेव वशमानयेत् ॥
 कामबीजं साध्यनाम वशीकुर्विति चोच्चरेत् ।
 स्वाहामुच्चार्य देवेशि प्रदीप्ते जठरानले ॥
 होमयेद्यत्नतो देवि तद्गृहं वशमानयेत् ।
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥
 नवरात्रं निराहारः सत्यवादो जितेन्द्रियः ।
 सहदेवीरसं गृह्य नवम्यां परमेश्वरि ॥
 पूर्वोक्तमनुना देवि पत्राण्यापिण्डमाहरेत् ।
 आजन्मान्तं वशीकुर्यात् तमेव सकुटुम्बकम् ॥
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।
 नवरात्रं मौनयुक्तो वृक्षासनसमन्वितम् ॥
 पारणादिवसे प्राप्ते गोमुखं कारयेत् प्रिये ।
 पूर्वोक्तमनुना देवि होमयेज्जठरानले ॥
 स्वगेहे तत्त्वरात्रेण तद्गेहे दिवसत्रयात् ।
 आजन्मान्तं वशं कुर्यान्महादेवाधिकं नरम् ॥
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।
 नवरात्रं निराहारो गुरुभक्तो महाव्रती ॥
 वामाङ्गुष्ठोपरि स्थित्वा वेदरात्रं महेश्वरि ।
 दक्षाङ्गुष्ठोपरि तथा वेदरात्रं महेश्वरि ॥
 नवम्यां पारणं कुर्याद्विल्वे पिण्डं प्रदापयेत् ।
 जगन्नयं वशीकुर्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।

नवरात्रं पर्यटन् वैरोचनासनसंयुतः ॥
 होमं कुर्यान्महाष्टम्यां नवम्यां पारणं चरेत् ।
 सर्वस्वदानं कृत्वा तु त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।
 गोमूत्राशी महेशानि नवरात्रं महेश्वरि ॥
 यं कं चिद्वै जपेन्मन्त्रं नवम्यां होममाचरेत् ।
 नवम्यां पारणं कुर्याद्गोमुखेन महेश्वरि ॥
 देवतादर्शनं भूयाद्रात्रौ स्वप्ने महेश्वरि ।
 अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगं शृणु पार्वति ॥
 नवरात्रं जितग्रासो मौनव्रतधरः शुचिः ।
 निर्द्वन्द्वो निरहङ्कारः सत्यवादी महामतिः ॥
 राजाकर्षणकामश्चेद्राज्ञः सदनदिङ्मुखः ।
 पारणामिच्छया कुर्याद्रात्रिजापी सदा भवेत् ॥
 त्रैलोक्यं वशमायाति नात्र कार्या विचारण ।

अथ दशमीकृत्यम् ।

तत्रैव ।

ततो दशम्यां निर्वाह्य स्नातो नित्यक्रियां निजाम् ।
 यावच्छक्त्युपचारैस्तु पूजयेन्न्यासमुज्जहन् ॥
 कृताञ्जलिः पठेत् पश्चाद्विसर्जनमनूनिमान् ।
 विधिहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं यदर्चितम् ॥
 पूर्णं भवतु तत्सर्वं त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ।
 शक्नुवन्ति न ते पूजां कर्तुं ब्रह्मादयः सुराः ॥
 अहं किं वा करिष्यामि मृत्युधर्मा नरोऽल्पधीः ।
 न जानेऽहं तेऽम्ब रूपं न शरीरं न वा गुणान् ॥

एकामेव हि जानामि भक्तिं त्वच्चरणाब्जयोः ।
 तां भक्तिं हृदि सम्भाव्य शारद्यर्त्तां प्रगृह्य च ॥
 गच्छ देवि निजस्थानं मह्यं दत्त्वा वरान् बहून् ।
 एतान्मन्त्रान् समुच्चार्य चरलग्ने चरांशके ॥
 प्रतिमां पत्रिकां वाऽपि चालयेत् पूजकः शनैः ।
 निर्माल्येन ततो देव्याः पूजयेत् कलशोपरि ॥
 निर्माल्यवासिनीं देवीं डेन्तां नमः पदेन हि ।
 प्रदर्श्य योनिमुद्रां च ऐशान्यां दिशि निःक्षिपेत् ॥
 निर्माल्यं भगवत्यास्तच्चण्डेश्वर्यै नमो वदन् ।
 मृन्मूर्तिं पत्रिकां वाऽपि जलेऽगाधे विनिःक्षिपेत् ॥
 स्रोतस्यथो मज्जयित्वा नदीवेगेन हारयेत् ।
 पीठमूर्तीं स्वके स्थाने चालयित्वा निवेशयेत् ॥
 चालने यन्मनुद्वन्द्वं तदिदानीं निशामय ।
 उत्तिष्ठ देवि चामुण्डे शुभां पूजां प्रगृह्य मे ॥
 कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह ।
 गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं देवि चण्डिके ॥
 यत् पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु ते ।
 गम्यतामर्थलाभाय क्षेमाय विजयाय च ॥
 शत्रोर्दोषविनाशाय पुनरागमनाय च ।
 ब्रज त्वं स्रोतसि जले मद्देहे तिष्ठ भूतये ॥
 आगामिवत्सरे च त्वं पुनरायास्यसि ध्रुवम् ।
 इति देवीं चालयित्वा मनुना कथयिष्यता ॥
 महावाद्यरवं कुर्यान्नभोदिवपरि सर्वतः ।

तारत्रपारुषश्चैव शाकिनी डाकिनी तथा ॥
 चामुण्डे चल युग्मं च चालय द्दितयं तथा ।
 कूर्चास्नानलकान्ताभिर्मनुश्चालनकर्मणि ॥
 शङ्खतूर्यनिनादैश्च मृदङ्गैः पटहैस्तथा ।
 ढक्काभेरीझञ्जरीश्च पणवानकगोमुखैः ॥
 तालवादित्रवीणाभिरातोद्यैर्दिण्डिमैरपि ।
 मुरजैर्वेणुभिर्हिङ्गैस्तालमानलयान्वितैः ॥
 धूलीकर्मविक्षपैः क्रीडाकौतुकमङ्गलैः ।
 वेशयुग्वेशनिचयैर्विविधैः शावरोत्सवैः ॥
 भगलिङ्गाभिधानैश्च भगलिङ्गप्रगीतकैः ।
 भगलिङ्गक्रियाशब्दैर्वेशचेष्टाभिरुक्तिभिः ॥
 विसर्जनस्यावसरे क्रीडितव्यं निजेच्छया ।
 कार्यं जरद्भिरप्येतद्देवीसन्तोषहेतवे ॥
 परैर्वा क्षिप्यते यस्तु यः परान् नाक्षिपत्यपि ।
 तस्य क्रुद्धा भगवती शापं दद्यात् सुदारुणम् ॥
 एतत्प्रासङ्गिको देव्या उक्तिं समवधारय ।
 ममानन्दे सदानन्दः सदानन्दो भविष्यति ॥
 ममानन्दे निरानन्दो निरानन्दो भविष्यति ।
 यथा यथा ममानन्दे भवत्युन्मत्तवज्जनः ॥
 तथा तथाऽहं तुष्यामि तत्कृतार्चासु वल्लभ ।
 ख्यातं मम भगं चिह्नं लिङ्गं चिह्नं तव प्रभो ॥
 लिङ्गाङ्गत्वाङ्गगाङ्गत्वादियं माहेश्वरी प्रजा ।
 त्वां मां त्रिहाय तैवान्यत् किञ्चित् त्रिभुवतोदरे ॥

तस्मान्मत्पूजनस्यान्ते त्वन्मच्चिह्नोक्तिभिर्जनः ।
 यः क्रीडति महाभाग स मे मनसि तिष्ठति ॥
 अकुर्वाणोऽपि सुरतं भगं भगमिति ब्रुवन् ।
 लिङ्गं लिङ्गमिति प्रोच्य मां तोषयति तत्क्षणात् ॥
 रेतःसिक्तं भवेद्यादृक् तादृश्यत्र प्रजायते ।
 भगं त्रिजगतां स्रष्टु को वा निन्दितुमर्हति ॥
 इत्यादिवचनैर्देव्या यथेष्टं विहिरेजनः ।
 उपस्थयोनिभजनशब्दैस्तत्तत्क्रियान्वितैः ॥
 ततो नित्योदकाभ्यासं स्वयमम्भः प्रविश्य च ।
 पत्रिकां मृन्मयीं मूर्तिं तदन्तः स्थापयेच्छनैः ॥
 निमज्ज्याम्भसि सम्पूज्य पत्रिकां वर्जितां जले ।
 मया देवि वरान् दत्त्वा ततो गच्छेन्निजालयम् ॥
 इत्यनेन तु मन्त्रेण देवीं संस्थापयेज्जले ।
 षोडशमूर्त्योरिदं कर्म न कार्यं त्रिदशेश्वरि ॥
 ततः सर्वैर्जनैः सार्धं जलक्रीडां समाचरेत् ।
 निमज्जनोन्मज्जनैश्च तथा पिञ्जलताम्बुभिः ॥
 अन्यैर्जलविहारैश्च क्षणं कौतुकमाचरेत् ।
 प्रदद्यादक्षिणां पूजां कारयित्वा स्वभक्तितः ॥
 हिरण्यं रजतं धेनुं भूमिं वासांसि मन्दिरम् ।
 यावच्छक्यं च यच्छक्यं दातव्यं दक्षिणां ततः ॥
 यानि देव्यै प्रदत्तानि महोपकरणान्यपि ।
 विभज्य तानि सर्वेभ्यो दातव्यानीति निश्चयः ॥

पूजाफडन्याह ।

एवमुक्तप्रकारेण कृत्वा शारदपूजनम् ।

यदाप्नोति फलं देवि तदिदानीं निशामय ॥
 ससलोकोपरि शिखे वैकुण्ठो लोक उच्यते ।
 तदूर्ध्वं शिवलोको हि गोलोकस्तदनन्तरम् ॥
 तस्योपरि प्रियतमे देवीलोको विराजते ।
 योजनानां कोटिशतं विस्तीर्णं तावदायतम् ॥
 विभवा वा गुणा यस्य मम वाचासगोचराः ।
 कल्पकोटिशतं साधं तत्रायं वसति प्रिये ॥
 अव्याहतगतिर्भूत्वा षडानन इवापरः ।
 त्रिलोकीं विचरत्येष द्वितीयो द्विरदाननः ॥
 यदीहावतरत्येष कदा चित् कालपर्ययात् ।
 शतसंवत्सरायुः स्यात् समस्तपृथिवीपतिः ॥
 तेजसा सूर्यसदृशः कान्त्या चन्द्रमसा समः ।
 कुबेरसन्निभो वित्ते क्षमया क्षमया समः ॥
 स्थैर्ये सुमेरुणा तुल्यो गाम्भीर्ये सागरोपमः ।
 विद्यया वाक्पतिसमः सौन्दर्ये मन्मथोपमः ॥
 प्रियंवदो विनीतश्च दाताऽमितपराक्रमः ।
 किं बहूक्तेन देवेशि यावन्तो हि गुणाः स्मृताः ॥
 तमेकं संश्रयन्ते हि समुद्रं सरितो यथा ।
 प्रत्येकमस्या बाहुल्यं वर्तते फलसम्भवे ॥
 न विस्तरंभयाद्वच्चिम डामरेषु तदीरितम् ।
 न तादृशं फलं किञ्चिद्यन्न स्याच्छारदार्यनात् ॥
 ततोऽपराजितां संपूज्य यात्रां कुर्यात् । तदुक्तं (निर्णयार्द्धे) पुराणान्तरे ।
 दशम्यां पूजयित्वा तु मृन्मयीं वाऽपराजिताम् ।

कलशं तोयसंपूर्णं जयन्तीपल्लवाननम् ॥

चतुर्वर्गैस्तदा यात्रा कर्तव्या साधनेन च ।

दशम्यां च बली राजा पूजयित्वाऽपराजिताम् ॥

दशदिक्षु मनोयोगाद्यात्रां कृत्वाऽथ वा नृपः ।

नीराजनं स्वस्य कृत्वा ततो नोराजयेद्बलम् ॥

नीराजनमन्त्रस्तत्रैव ।

चतुरङ्गबलं मह्यं सुस्थिरत्वं व्रजत्विह ।

विजयो मम सर्वत्र अस्तु मेऽग्निप्रसादतः—इति ॥

“सर्वत्र विजयो मेऽस्तु त्वत्प्रसादात् सुरेश्वरि—इति (कृत्यरत्ने)

अपराजितापूजने संक्षिप्तप्रकारस्तु अपराह्णे ईश.नोदिशम.श्रित्य सीमानमुल्लङ्घ्य-

अद्याश्चिनगुल्लदशम्यां क्षेमसिद्ध्यर्थं मराजितापजां करिष्ये-

इति सङ्कल्प्य कलशेऽष्टदलपद्मयन्त्रमध्ये—अपराजितायै नमः—इत्यपरा-

जिताम् ।

तदक्षिणे—क्रियाशक्त्यै नमः—इति जयाम् ।

वामे—उमायै नमः—इति विजयां चावाग्र ।

ॐ अपराजितायै नमः । ॐ जयायै नमः । ॐ विजयायै नमः ।

इति मन्त्रैः सम्पूज्य प्रणम्य ।

इमां पूजां मया देवि यथाशक्ति निवेदितम् ।

रक्षार्थं तु समादाय व्रज स्वस्थानमुत्तमम्—इति विसर्जयेत्” ॥

(महाकालसंहितायाम्)

अथ नीराजनं राजाऽपराह्णे विदधीत वै ।

विचित्रवेशवसनः सह स्वजनबान्धवैः ॥

चूडामणिः रिस्र्फूर्यर्त्करीटकुण्डलोज्ज्वलः ।

लसत्प्रालम्बिको मुक्तामाली कटकमण्डितः ॥

“ ” एतदङ्कान्तः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

केयूरी शृङ्खली तद्वदङ्गुलीयकभूषितः ।
 उष्णपी वद्धनिस्त्रिंशश्चर्चितो मलयद्रवैः ॥
 चन्द्रकुङ्कुमकस्तूरीविलेपनसुवासितः ।
 नानाविषयजानश्वान् भूषाभिः परिवृंहयेत् ॥
 गान्धरजानुत्तरजान् पारसीकोद्भवानपि ।
 काम्बोजवानायुभवान् बाल्हीकमणिमन्थजान् ॥
 युक्ताँस्तदीयभूषाभिः कुथाभिरुपशोभितान् ।
 एवमेव गजेन्द्राँश्च कुथघण्टाङ्कुशोज्ज्वलान् ॥
 कलिङ्गजङ्गलभवाँश्चेदितैलङ्गसम्भवान् ।
 एवं रथानपि व्यूहे तदुषस्करसंयुतान् ॥
 पदातीँश्च भटाँश्चापि नानाप्रहरणान्वितान् ।
 कोदण्डशरनिस्त्रिंशद्वालपट्टीशतोमरान् ॥
 गदापरिघचक्रर्ष्टिभुशुण्डीपाशकौरजान् ।
 भिन्दिपालहुताशक्तिपर्शुकुन्ताहिमुद्गरान् ॥
 खट्वाङ्गवज्रमुशलपाशायोगुडकर्चरीः ।
 शतघ्नोशल्यकुदालक्रकचच्छुरिकास्तथा ॥
 एतान्यन्यानि चास्त्राणि दधतः स्फुरितौजसः ।
 चतुरङ्गबलं चेत्यं कृत्वाऽग्रेसरमीश्वरि ॥
 नानाविधैर्वाहनैश्च पौस्जानपदानपि ।
 वादित्राणि च सर्वाणि वादयित्वा विशेषतः ॥
 महाकोलाहलं कृत्वा समराभिप्रयाणवत् ।
 जय जीवेति निनदैः स्तूयमानो महीपतिः ॥
 विनिर्गच्छेत् पुरात् स्त्रीयादनुकूलां दिशं प्रति ।

ब्राह्मणानग्रतः कृत्वा ताम्बूलं चर्वयन्मुहुः ॥
 नटान् मल्लान् वन्दिनश्च शिल्पिनो गणिकास्तथा ।
 दैवज्ञान् वणिजो दूतानन्यान् वै देशिकानपि ॥
 विलोकयन् हृष्टमना एतेभ्यः पारितोषिकम् ।
 ददन्नुत्साहसंयुक्तो विजिगीषुरिव ब्रजेत् ॥
 एतन्नीराजनं नाम घटनाया बलास्त्रयोः ।

अथ खञ्जनादिदर्शनविधिस्तत्रैव ।

एतत् कृत्वा महीपालो भूषितस्तेन चान्वितः ।
 खञ्जनं सारसं चाषं प्रयत्नेन विलोकयेत् ॥
 अनूपकंचलगोष्ठानगोविडम्बुरुहादिषु ।
 स्थितो रुवन् विधुन्वानः पक्षती खञ्जनः शुभः ॥
 मङ्गल्यं खञ्जनं दृष्ट्वा मध्यस्थाने मनोरमे ।
 शुभं स्यादशुभं जेयं विपरतेन संशयः ॥
 वृक्षेषु गोषु गजवाजिमहोरगेषु
 राज्यप्रदः कुशलदः शुचिशादलेषु ।
 भस्मास्थिकाष्ठतुषलोमतृणेषु दृष्टो-
 ऽरिष्टं ददाति बहुशः खलु खञ्जरीटः ॥
 तस्मिन् निधिर्भवति मैथुनमेति यस्मिन्
 यस्मिन् पुनर्वसति तत्र दिशन्ति काचम् ।
 अङ्गारमप्युपदिशन्ति पुरीषणोऽस्य
 तत् कौतुकाय च शुभाय च खञ्जरीटः ॥
 दृष्ट्वा तु खञ्जनं राजा प्रणमेद्विहिताञ्जलिः ।
 इमं मन्त्रं समुच्चार्य श्लोकरूपं वरानमे ॥
 खञ्जनः खञ्जरीटश्च शङ्खमौलिः शुभप्रदः ।

महापद्मो नीलगलश्चपलाङ्गो हरिद्विजः ॥
 यः खञ्जरीटं प्रणमेदेभिर्नामभिरष्टभिः ।
 जायते मङ्गलं तस्य सतो गेहे यतः पथि ॥
 नारायणशरीरोत्थ संवत्सरशुभप्रद ।
 शालग्रामशिलाकण्ठ खञ्जरीट नमोऽस्तु ते ॥
 वासुदेवस्वरूपेण सर्वकामफलप्रद ।
 पृथिव्यामवतीर्णोऽसि खञ्जरीट नमोऽस्तु ते ॥
 त्वं योगयुक्तो मुनिपुत्रकस्त्वमदृश्यतामेषि हिमोद्गमेन ।
 त्वं दृश्यसे प्रावृषि निर्गतायां त्वं खञ्जनाश्रयमयो नमस्ते ॥
 अशुभं खञ्जनं दृष्ट्वा देवब्राह्मणपूजनम् ।
 शान्तिं कुर्वीत कुर्याच्च स्नानं सर्वौषधीजलैः ॥
 अयं खगस्तु विजेयो विष्णुरूपी सुरेश्वरि ।
 संसृजयति वर्षोत्थं मङ्गलामङ्गलद्वयम् ॥
 देवीरूपस्तु विजेयः सारसः पक्षिराडपि ।
 तं दृष्ट्वा तोयतर्वादिसदूर्वावीतलेषु हि ॥
 प्रणमेच्छुभदं केशगमस्थिगमभद्रदम् ।
 तथा कुर्वाण आहारं चञ्च्वा कण्डुं तनावपि ॥
 तिष्ठन् कुलाये शावाय ददद्वा भोजनं शुभम् ।
 सारसः सरसीवासः पुष्करः पुष्करालयः ॥
 विघ्नापहर्ता पक्षीन्द्रो देवीरूपो महाबलः ।
 विघ्नं नाशय पक्षीन्द्र शुभं देहि महाबल ॥
 पुष्कराब्दफलं ब्रूहि जहि शत्रून् महाबल ।
 पठित्वेदं पथयुगं प्रणमेत् सारसं बुधः ॥

विपरीते तथैतस्य पूर्ववच्छान्तिकं चरेत् ।
 अथ चाषं निरीक्ष्यापि महारुद्रस्वरूपिणम् ॥
 पूर्वोदितेषु स्थानेषु प्रणमेन्मङ्गलप्रदम् ।
 अन्यत्राशुभदातारं विहगं शिवरूपिणम् ॥
 अशोकश्च विशोकश्च नन्दीशः पुष्टिवर्धनः ।
 ताम्रचूडो मणिग्रोवः स्वस्तिकश्चापराजितः ॥
 अष्टावेतानि नामानि चाषं दृष्ट्वा तु यः पठेत् ।
 अग्रतो धनलाभाय पार्श्वतो विजयाय च ॥
 पृष्ठतः क्षेमवित्ताभ्यां दिव्य चाषं नमोऽस्तु ते ।
 अशोकाय नमस्तुभ्यं सर्वाभीष्टप्रदाय च ॥
 नीलकण्ठाय भद्राय भद्ररूपाय ते नमः ।
 भद्रत्वं देहि मे भद्रमाशां परय परक ॥
 स्वस्तिकोऽसि कुरु स्वस्ति त्वं मां नन्दीश नन्दय ।
 अशोक कुर्वशोकं मां पुष्प त्वं पुष्टिवर्धन ॥
 एवं चाषं नमस्कृत्य “प्रणमेच्च शमीतरुम् ।
 अमङ्गलानां शमनीं शमनीं दुष्कृतस्य च ॥
 दुःस्वप्नशमनीं धन्यां प्रपद्येऽहं शमीं शुभाम् ।
 शमी शमयते पापं शमी लोहितकण्टका ॥
 धारिण्यर्जुनबाणानां रामस्य प्रियवादिनि ।
 करिष्यमाणयात्राया यथाकालं सुखं मया ॥
 तत्र निर्विघ्नकर्त्री त्वं भव श्रीरामपूजिते ।
 इति संप्रार्थ्य मूलस्थां” एहीत्वा पीतमृत्तिकाम् ॥

“ एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

प्रदक्षिणीकृत्य तथा समीवृक्षं महीपतिः ।
 नियुद्धं प्रेक्ष्य महानां भटानां शस्त्रलाघवम् ॥
 भरतानां प्रेषणं च धावनं गजवाजिनाम् ।
 अस्तं गते दिनमणौ दोषिकाशतसंवृतः ॥
 प्रविशेन्नगरं राजा कोलाहलपुरःसरम् ।
 अग्नेन विधिना यस्तु कुरुते शारदं महम् ॥
 तस्य देवी सदा तुष्टा सदा नैव विमुञ्चति ।
 फलं यच्छारदार्याया वक्तुं तत् केन शक्यते ॥
 ईदृशेव च वासन्ती पूजा कार्या मधौ सिते ।

इति दुर्गोत्सवविधिः ।

बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवत्रोवैविज्यचित्रामृत-
 स्रोतःशालिनि सन्निबन्धसरित्संभेदमभ्यर्हितम् ।
 सन्मुक्तोपमयुक्तिशालिनि तरङ्गः प्रारदेकादशो
 विज्ञश्रीनरदेवनिर्मितपुरश्चर्याणवेऽस्मिन् नवे ॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराजप्रतापसिंहसाहविरचिते पुरश्चर्याणवे दुर्गामन्दपुरश्चर-
 णदुर्गोत्सवविधिर्नामैकादशस्तरङ्गः ।

अथ ब्रह्माण्यादिमन्त्रास्तत्पुरश्चरण- विशेषाश्च निरूप्यन्ते ।

(मेघतन्त्रे)

मुनय उचुः ।

देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ।

ब्राह्मण्यद्यष्टौ भास्करस्य रथे तिष्ठन्ति शक्तयः ॥

रणे मृतानां योगेन मृतानां सहगामिनाम् ।

स्वर्गं याश्च प्रयच्छन्ति तन्मनून् ब्रूहि शङ्कर ॥

शिव उवाच ।

ब्रह्मशक्तिस्तु शक्तीनां नायिका परिकीर्तिता ।

योगिनां मुक्तिदात्री सा भोगिनां भोगदा मता ॥

ब्रामित्येकाक्षरं बीजं मुनिर्वाचस्पतिर्मतः ।

गायत्री छन्द उद्दिष्टं वः शक्तिः कीलकं वचः ॥

अथ ध्यानम्

ध्यायेद्ब्राह्मीं पलाशस्थां हंसारूढां चतुर्भुजाम् ।

अक्षमालावराभीतिकमण्डलुकरारुणाम् ॥

बीजेनैव षडङ्गानि..... इति ।

अस्य पुरश्चरणं तत्रैव ।

लक्ष्मेकं जपेन्मन्त्रं पलाशसमिधैर्हुनेत् ।

तत्पुष्पयुक्तसलिलैस्तर्पयेन्मार्जयेत् कुशैः ॥

अथ माहेश्वरोमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि सम्यग्माहेश्वरोविधिम् ।

ॐ ह्रीं नमो भगवति माहेश्वर्यै हि संवदेत् ॥

परमे पदमुच्चार्यैश्वर्यै स्वाहान्तको मनुः ।

तारादिरेकविंशार्णोऽश्वारूढा तत्परं मतम् ॥

ध्यानम् ।

वृषारूढां भालचन्द्रां त्रिनेत्रां शशिसन्निभाम् ।

दधतीं शूलडमरुमहाहिवलयां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं विल्वपत्रैर्घृतप्लुतैः ।

जुहुयात् तदशांशेन महदैश्वर्यवान् भवेत् ॥

अथ कौमारीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि कौमार्या विधिमुत्तमम् ।

क्रौं कौमार्यै नम इति षडर्णो मन्त्र ईस्तिः ॥

मुनिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दः कौमारिका भवेत् ।

देवता कौमिदं बीजं कौमार्यै शक्तिरुच्यते ॥

मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि हृदि ध्यायेच्च देवताम् ।

ध्यानं यथा ।

शक्त्यक्षस्त्रग्वराभीतिकरां बन्धूकसन्निभाम् ।

मयूरध्वजिनीं रक्तवस्त्रासौदुम्बरस्थिताम् ॥

हरितकञ्चुकिकां रम्यां नानालङ्कारभूषिताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षषट्कं जपः प्रोक्तः पञ्चखाद्यैस्तथा हुनेत् ।

मधुरत्रयसंयुक्तैः सिद्धमन्त्रस्तदा भवेत् ॥

तर्पणं मार्जितं कृत्वा कुमारीणां च भोजनम् ।

अथ वैष्णवीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वैष्णवीमन्त्रमद्भुतम् ।

अकचटतपयशा वैष्णव्या मन्त्र ईरितः ॥
 अष्टाक्षरो मनुश्चास्य नारदोऽनुष्टुबुच्यते ।
 छन्दस्तु वैष्णवी देवी न्यासः प्रणवपूर्वकः ॥
 मूलमन्त्राक्षरैः कुर्यात् त्रिभिस्त्रिभिरनुक्रमात् ।
 एकैकं च जपेत् पश्चादङ्गानि षडनुक्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

शोणपद्मप्रतीकाशां मुक्तमूर्धजलम्बिनीम् ।
 लसत्काञ्चनसम्भूतकुण्डलोज्ज्वलशालिनीम् ॥
 स्वर्णरत्नसमुद्भ्रजकिरीटसूत्रधारिणीम् ।
 कृष्णशुक्लारुणैर्नेत्रैस्त्रिभिश्चारुविभषिताम् ॥
 बन्धूकदन्तवसनां शिरीषप्रभनासिकाम् ।
 कम्बुग्रीवां विशालाक्षीं सूर्यकोटिसमप्रभाम् ॥
 चतुर्भुजां सुवसनां पीनोन्नतपयोधराम् ।
 दक्षिणाभ्यां कराभ्यां तु खड्गं च जपमालिकाम् ॥
 बिभ्रतीं वामहस्तभ्यामभयं च वरं तथा ।
 अनल्पनागनासोरुं गुप्तगुल्फां सुपाष्णििकाम् ॥
 गात्रेण रत्नस्तम्भं च सम्यगालम्ब्य संस्थिताम् ।
 किमिच्छसीति वचनं व्याहरन्तीं मुहुर्मुहुः ॥
 पञ्चाननं पुरः संस्थं निरीक्षन्तीं स्ववाहनम् ।

ईदृशीं चण्डिकां ध्यायेदिति शेषः ।

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षद्वयं जपेदस्य पुरश्चरणकर्मसु ।
 दशांशं होममाज्येन कर्तव्यं तर्पणादिकम् ॥
 अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।
 ॐ नमोऽन्ते च वैष्णव्यै मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ।

मन्त्राणैरेत्र चाङ्गानि शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥

अथापराजितावैष्णवीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वैष्णवीमपराजिताम् ।

तारमाकर्षिणिपदमावेशिनि ततो वदेत् ॥

ज्वालामालिनि रमणि रामणि धरणीति च ।

धारणि तपनीत्युक्त्वा तापिनि मनोन्मादिनि ॥

शोषिणीति पदं प्रोच्य ततः संमोहिनीति च ।

तथा नीलपताके च महानीले महाप्रिये ॥

महाग्नेयि महाचण्डे महारौद्री महेति च ।

वज्रिणीति तथाऽऽदित्यरश्मिजाह्नुवि संवदेत् ॥

यमघण्टे किलिकिलिचिन्तामणिपदं वदेत् ।

सुरभिसुरोत्पन्ने च सरस्वतिपदं ततः ॥

सर्वकामदुघे प्रोच्य यथा मम मनीषितम् ।

कार्यं तन्मे सिध्यत्विति स्वाहान्तोऽयं मनुर्मतः ॥

षडङ्गादशाणो मुन्यादिः प्राग्वत् सौख्यप्रदो मनुः ।

जपेद्वर्णशतं होमादिकं पूर्ववदाचरेत् ॥

अथ वाराहीमन्त्रः ।

अथ वार्त्तालिकां वक्ष्ये वाराहीं शत्रुघातिनीम् ।

ऐँ लौँ ठँ ठँ ठँ मिति हुँ स्वाहान्तोऽष्टाक्षरो मनुः ॥

छन्दोऽनुष्टुप् च कपिलो मुनिवार्त्तालिका सुरी ।

वाराह्यत्र षडङ्गानि क्रमाद्द्विभ्रिन्दुभूभूमिः ॥

द्वाभ्यां ध्यायेत् ततो देवीं विद्युद्भासां कराम्बुजैः ।

दधानामङ्कुशं पाशं मुद्गरं शक्तिमेव च ॥

विद्युद्भासां त्रिनेत्रां च नाशयन्तीं तथा रिपून् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वसुलक्षं जपित्वाऽन्ते विल्वपत्रैर्द्वयारिजैः ।
धात्रीफलैर्भृङ्गराजैः कुशैश्चापि दशांशतः ॥
होमः कार्यस्तर्पणादि कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् कर्तुमर्हति ॥

अथ श्यामलामन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मालामन्त्रं सुसिद्धिदम् ।
ॐ ऐं ग्लौं ऐं नमः प्रोच्य ततो भगवतीति च ॥
वार्त्तालिवाराहियुगं वाराहमुखिवाभवम् ।
ग्लौं अन्धे अन्धिनीति नमो रुन्धे च रुन्धिनि ॥
नमो भञ्जे भञ्जिनीति नमो मोहेति मोहिनि ।
नमस्तम्भे स्तम्भिनीति नम ऐं ग्लौं च वाग्भवम् ॥
सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाग्देत् ।
चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरुद्वयम् ॥
शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ऐं ग्लौं ऐं ठचतुष्टयम् ।
ह्रूं फट् स्वाहेति मन्त्रोऽयं वेदरुद्राक्षरः स्मृतः ॥
मुनिः शिवोऽस्य जगती छन्दो वार्त्तालिका सुरी ।
वाराहस्य षडङ्गानि वार्त्ताली हृदयं स्मृतम् ॥
वाराहस्य शिरः प्रोक्तं शिखा वाराहमुख्यपि ।
अन्धे अन्धिनि वर्मोक्तं रुन्धे रुन्धिनि नेत्रकम् ॥
भञ्जे भञ्जिनि चास्त्रं स्यात् ततो ध्यायेच्च चण्डिकाम् ।
अथ ध्यानम् ।

रक्ताब्जकर्णिकायां तु शवासनसमास्थिताम् ।
मुण्डमालालसत्कण्ठां नीलाभां दधतीं करैः ॥

अभयं मुशलं चापि हलं चापि वरं तथा ।

वाराहास्यां तुङ्गकुचां त्रिनेत्रामरुणाम्बराम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेन्मन्त्रं सहस्राणि बन्धूककुसुमैस्तिलैः ।

जुहुयात्.....इति ॥

अथ स्वप्नवाराहीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वाराहो स्वप्नसंज्ञिकाम् ।

ॐ ह्रीं नमश्च वाराहीघोरे स्वप्नं विसर्गयुक् ॥

ठद्वयं वह्निजायान्तो मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ।

ईश्वरोऽस्य मुनिः प्रोक्तो जगती छन्द ईरितम् ॥

देवता स्वप्नवाराही बीजं तारः प्रकीर्तितः ।

हृल्लेखा शक्तिरुद्दिष्टा ठद्वयं कीलकं मतम् ॥

अथ ध्यानम् ।

ततो ध्यायेद्दधनश्यामां त्रिनेत्रामुन्नतस्तनीम् ।

कोलास्यां चन्द्रभालां च दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धराम् ॥

खड्गाङ्कुशौ दक्षिणयोर्वामयोश्चर्मपाशकौ ।

अश्वारूढां च कोलास्यां नानालङ्कारभूषिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेद्दशांशेन नीलपद्मैस्तिलैर्हुनेत् ।

अथेन्द्राणीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि इन्द्राणीं नष्टराज्यदाम् ।

इन्द्राणीं नम इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥

गुरुर्मुनिश्च गायत्री छन्दो देवीन्द्रवल्लभा ।

ह्रीं बीजं शक्तिरिन्द्राणीं नमः कीलकमुच्यते ॥

अथ ध्यानम् ।

वज्रपाशवराभीतिहस्ता श्यामाम्बरवृता ।

चतुर्दन्तगजाकरूपच्छायासंस्था हिरण्यभा ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षषट्कं जपेन्मन्त्रं मालतीकुसुमैर्हुनेत् ।

त्रिमध्वक्तैस्तावदेव राज्यार्थं राजवृक्षकैः ॥

अथ चामुण्डामन्त्रस्तन्त्रान्तरे ।

मायाबीजं समुच्चार्य चामुण्डा डेयुता पुनः ।

नमोऽन्तो नगवर्णोऽयं मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ॥

शिवो मुनिश्च गायत्री छन्दोऽमुष्य च देवता ।

चामुण्डा मन्त्रवर्णैश्च द्विरावृत्त्या षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

नीलोत्पलदलश्यामचतुर्बाहुसमन्विता ।

खट्वाङ्गं चन्द्रहासं च बिभ्रती दक्षिणे करे ॥

वामे चर्म व पाशं च ऊर्ध्वतो भावतः पुनः ।

दधती मुण्डमालां च व्याघ्रचर्माम्बराधरा ॥

कृशाङ्गी दीर्घदंष्ट्रा च अतिदीर्घाऽतिभीषणा ।

लोलजिह्वा निम्नरक्तनयनाकारभीषणा ।

कबन्धवाहनासीना विस्तारिश्रवणानना ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं मधुरप्लुतैः ।

पायसैर्जुहुयान्मन्त्री ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥

अथ महालक्ष्मीमन्त्रस्तत्रैव ।

मायाबीजं समुद्धृत्य स्वबीजं च समुद्धरेत् ।

ततो डेन्ता महालक्ष्मीर्नमोऽन्तोऽष्टाक्षरो मनुः ॥

मुनिरस्य शिवः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम् ।

देवता तु महालक्ष्मीर्मन्त्रवर्णैः षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

सुवर्णवर्णदीप्ताङ्गी त्रिनेत्रा सिंहवाहिनो ।
 ईषप्रहसिता देवी नीलोत्पलदलेक्षणा ॥
 भुजषोडशसम्पन्ना सर्वालङ्कारभूषिता ।
 खड्गं घण्टां शरं सूत्रमङ्कुशं शूलपद्मकम् ॥
 दधाना दक्षिणैर्हस्तैरनाथेभ्यो वरप्रदा ।
 तथा वामैर्हस्तपद्मैः खेटकं डिण्डिमं धनुः ॥
 कमण्डलुं नागपाशं कपालं पुस्तकाभयम् ।
 जाज्वल्यमाना तेजोभिरतीवाह्लादकारिणी ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्ष्मेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं मधुरसुतैः ।
 विदध्यात् पायसैर्हार्तममेवं सिद्धो भवेन्मनुः ॥

इत्यष्टमातृकाप्रकरणम् ।

अथ गोरक्षनाथमन्त्रः ।

(कल्पद्रुमतन्त्रे)

गर्ग उवाच ।

अथ मन्त्रं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं यदुनन्दन ।
 जपन्ति साधका वीरास्तन्मन्त्रान् श्रद्धयाऽन्विताः ॥
 शीघ्रं भवति सिद्धिर्वै साधकानां शिवाज्ञया ।

तथा ।

गोरक्षस्य मनुं जप्त्वा योगोन्द्रो भविता नरः ।
 विना गोरक्षमन्त्रेण योगसिद्धिर्न जायते ॥
 गोरक्षस्य प्रसादेन सर्वकार्याणि साधयेत् ।

मन्त्रा यथा ।

ॐ ह्रीं श्रीं हुँ फट् स्वाहा ।

ॐ ह्रीं श्रीं गौं गोरक्ष हुं फट् स्वाहा ।

ॐ ह्रीं श्रीं गौं गोरक्ष हुं हुं निरञ्जनात्मने हुं फट् स्वाहा ।

ॐ श्रीं गौं ह्रीं हूं ह्रां गोरक्षनाथाय निरञ्जनात्मने* हूं सैं

फट् हसः ।

इति चत्वारो मन्त्राः ।

अथ गायत्री ।

ॐ ह्रीं श्रीं गौं गोबीजाय विद्महे गोरक्षाय धीमहि तन्नो
निरञ्जनः प्रचोदयात् ।

अथ ऋष्यादिन्यासः ।

गोरक्षनाथमन्त्रस्य बृहदारण्यको मुनिः ।

छन्दोऽनुष्टुब्देवता च नाथो गोरक्षसंज्ञकः ॥

कराङ्गन्यासस्तु ।

ॐ ह्रीं श्रीं गौं गोरक्षनाथाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः—इत्यादि ।

अथ ध्यानम् ।

शुद्धस्फटिकसंकाशो जटाजूटी त्रिलोचनः ।

निरञ्जनो निराकारो निर्विकल्पो निरामयः ॥

अथ पुरश्चरम् ।

लक्षं शताधिकं जप्त्वा साधकः शुद्धमानसः ।

साधयेत् सर्वकार्याणि नात्र कार्या विचारणा ॥

धारयेद्यो नरो नित्यं मन्त्रमेतं विशेषतः ।

स योगसिद्धिमाप्नोति गोरक्षस्य प्रसादतः ॥

अथ शीतलामन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये महेशस्य वस्त्रप्रक्षालिका तु या ।

शीतलेति च विख्याता मसूर्या चिपिटेश्वरी ॥

* हूं सैं फट् हूं इति २, ५ पृ० पा० ।

तारो माया रमा शीतलायै हृच्च नवाक्षरः ।

(" यामले तु) ।

माया श्रीशीतला डेन्ता हृदन्तोऽष्टाक्षरो मनुः—स्त्युक्तम् ।

(मेरौ)

उपमन्युर्मुनिश्छन्दो बृहती शीतला सुरी ।

षड्दीर्घयुक्त्रपालक्ष्मीबीजाभ्यां स्यात् षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानं (" यामलादौ)

नमामि शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ।

मार्जनीकलशोपतां सूर्पालङ्घृतमस्तकाम् ॥

(मेरौ)

ध्यायेच्च शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ।

मार्जनीसूर्पहस्तां च रक्तपुष्पहिमार्चिताम् ॥

तैलादिमलसंयुक्तवस्त्रपोटलिशीर्षिकाम् ।

त्रिकोणान्तर्त्यजेदेवीं कोद्रवां च मसूरिकाम् ॥

शराविकां च कोणेषु भूपुरे त्वष्टभैरवान् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं पायसेन दशांशतः ।

हुत्वा कृत्वा तर्पणादि मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥

नाभिमात्रे जले स्थित्वा यः सहस्रं जपेन्मनुम् ।

तेन संमार्जितास्तीव्राः स्फोटा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥

साधितो येन मन्त्रोऽयं तस्य वंशे न शीतला ।

तेनाभिमन्त्रितं भस्म यद्देहे तत्र सा न हि ॥

एतत्पुरुषस्यापि मन्त्रस्तत्रैवोक्तः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भर्तुरस्याः परं मनुम् ।

" " एतद्दङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

तारः प्रासादबीजं यँ वँ व्योमव्यापिने द्विठः ॥
 एकादशार्णमन्त्रोऽयं न्यासध्यानार्चनादिकम् ।
 प्रासादमन्त्रवज्जेयमर्धलक्षं पुरस्कृतिः ॥
 दशांशं जुहुयादाज्यैस्तर्पणादि ततश्चरेत् ।
 इति शीतलाप्रकरणम् ।

अथोक्तदेवतानां पूजायन्त्राणि प्रदर्शयन्ते ।
 तत्रादौ विघ्नराजयन्त्रं (मेरुतन्त्रे)
 श्रीपण्यादिकृते पीठे रचयेत् कुङ्कुमादिना ।
 चतुर्द्वारयुतं कुर्याच्चतुरस्रत्रयं शुभम् ॥
 तन्मध्येऽष्टदलं कार्यं पूजापीठं गणेशितुः ।
 अथ लक्ष्मीगणेशयन्त्रं तत्रैव ।

अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं कर्णिकाकेशरोज्ज्वलम् ।
 चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥
 “ शक्तिगणेशक्षिप्रसादहेरम्बहरिद्रा गणेशयन्त्रं विघ्नराजयन्त्रवत् ।
 अथ महागणपतियन्त्रं तत्रैव ।

धर्मादिवल्लभे पूर्वोक्ते तीव्रादिनवशक्तिके ।
 पूजायन्त्रं गणेशस्य मातृकापद्म उच्यते ॥
 चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम् । ”
 तत्कर्णिकायां षट्कोणं तदन्तश्च त्रिकोणकम् ॥
 विरञ्चिगणनायकयन्त्रं विघ्नराजयन्त्रवत् । वक्रतुण्डयन्त्रं लक्ष्मीगणेशयन्त्रवत् । एव-
 मग्निमयोरपि विघ्नराजसमानम् ।
 अथ सूर्ययन्त्रं (सौरपद्मतौ)

लिखेदष्टदलं पद्मं तद्बाह्येऽष्टदलं लिखेत् ।
 चतुरस्रं ततो बाह्ये सूर्ययन्त्रमिदं स्मृतम् ॥

“ ” एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४, ५ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

(महाक्रमचर्चनपद्धतौ तु)

मध्येऽष्टदलपद्मं च अष्टशृङ्गं ततः परम् ।

द्वादशारं च कमलं वेदास्त्रद्वारमेव हि-इत्युक्तम् ॥

क चित् तु चतुरस्त्रावृतमष्टदलमात्रमुक्तम् ।

अन्यत्र तु द्वादशदलपद्ममुक्तम् ।

अथ विष्णुयन्त्रं तत्रैव ।

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं कर्णिकाकेशरोज्ज्वलम् ।

चतुरस्त्रावृतं बाह्ये पूजापीठं मधुद्विषः ॥

अथ मत्स्ययन्त्रम् ।

षट्पत्रं विलिखेत् पद्मं तद्बाह्ये च चतुर्दलम् ।

सप्तपत्रं तु तद्बाह्ये तद्बाह्येऽष्टदलं लिखेत् ॥

ततश्चतुर्दशदलं तद्बहिः षोडशच्छदम् ।

वसुच्छदं तु तद्बाह्ये चतुरस्रं ततो बहिः ॥

कूर्मयन्त्रं तु भूपुरावृतमष्टदलपद्ममेव ।

अथ वराहयन्त्रं (प्रपञ्चसारे)

अष्टपत्रमथ पद्ममुल्लसत्कर्णिकं विधिवदारचय्य च ।

मण्डलं रविसहस्रसन्निभं शूकरं यजत तत्र सिद्धये ॥

अथ नृसिंहयन्त्रम् (विष्णुसेनसंहितायाम्)

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं कर्णिकाकेशरान्वितम् ।

तद्बाह्येऽष्टदलं लेख्यं तद्बाह्येऽपि वसुच्छदम् ॥

चतुरस्रं ततो बाह्ये यन्त्रं श्रीनारसिंहकम् ।

अन्यत्र तु पूर्वोक्तविष्णुयन्त्रमेव श्रीनृसिंहयन्त्रमुक्तम् ।

अथ वामनयन्त्रम् ।

षड्दलं पद्ममालिख्य तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ।

तद्बहिर्वसुपत्रं च तद्बाह्ये द्वादशच्छदम् ॥

अष्टपत्रं ततो बाह्ये तद्बहिर्भूपुरत्रयम् ।

अथ परशुरामयन्त्रम् ।

आदौ चतुर्दलं पद्मं तद्बाह्योऽष्टदलं लिखेत् ।

अष्टपत्रं ततो बाह्ये तद्द्विर्दशपत्रकम् ॥

तद्द्विर्दशदशारं च षोडशारं च तद्द्विर्दशः ।

तद्द्विर्दशभूपुरद्वन्द्वं चतुर्दशोपशोभितम् ॥

अथ रघुनाथयन्त्रम् ।

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं षट्कोणोज्ज्वलकर्णिकम् ।

पुनरष्टदलं बाह्ये लिखेद्दत्तत्रयाद्विः ॥

तद्द्विर्दशदशदलं तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ।

दन्तपत्रं च तद्बाह्ये भूपुरत्रितयावृतम् ॥

अत्र के चित् ।

देहात्मनोर्यथा भेदो मन्त्रदैवतयोस्तथा ।

तस्मात् पीठे महामन्त्रं लिखित्वा तत्र पूजयेत्—इति ॥

वशिष्टवचनादस्मिन् सपर्यायन्त्रेऽपि साधारणयन्त्रोक्तमन्त्रवर्णान् यथास्थानं लिखित्वा श्रीरामः पूज्य इति वदन्ति ।

धारणयन्त्रे मन्त्रलिखितप्रकारस्तु (रामतापिन्या-) मुक्तः ।

यथा ।

त्रिरेखापुटमालिख्य मध्ये तारद्वयं लिखेत् ।

तन्मध्ये बीजमालिख्य तदधः साध्यमालिखेत् ॥

द्वितीयान्तं च तस्योर्ध्वे षष्ठ्यन्तं साधकं तथा ।

कुरुद्वयं च तत्पार्श्वे लिखेद्बीजान्तरे रमाम् ॥

तत्सर्वं प्रणवाभ्यां च वेष्टयेद्बुद्धि-ऋद्धिमान् ।

दीर्घभाजि षडस्त्रेषु लिखेद्बीजं हृदादिभिः ॥

कोणपार्श्वे रमामाये तदग्रेऽनङ्गमालिखेत् ।

क्रोधं कोणाग्रान्तरेषु लिखेन्मन्त्र्यभितो गिरम् ॥

वृत्तत्रयं साष्टपत्रं सरोजे विलिखेत् स्वरान् ।
 केशरे चाष्टपत्रे च वगस्तिकमथो लिखेत् ॥
 तेषु मालामनोर्वर्णान् विलिखेद्दर्मि-(४५)संख्यया ।
 अन्ते पञ्चाक्षरानेवं पुनरष्टदलं लिखेत् ॥
 तेषु नारायणाष्टाणं लिखेत् तत्केशरे रमाम् ।
 तद्वहिर्द्वादशदलं विलिखेद्द्वादशाक्षरम् ॥
 तथोन्नमो भगवते वासुदेवायेत्यव्ययम् ।
 आदिक्षान्तान् केशरेषु वृत्ताकारेण संलिखेत् ॥
 तद्वहिः षोडशदलं लिखेत् तत्केशरे ह्रियम् ।
 वर्मास्त्र*रतिसंयुक्तं दलेषु द्वादशाक्षरम् ॥
 तरसन्धिश्चोरजादीनां मन्त्रान् मन्त्री समालिखेत् ।
 ह्रँ स्तँ भ्रँ व्रँ ल्रँ प्ल्रँ ज्रँ च लिखेत् सम्यगतो बहिः ॥
 द्वादशारं महापद्मं नादविन्दुसमायुतम् ।
 विलिखेन्मन्त्रराजाणं तेषु पत्रेषु यत्नतः ॥
 ध्यायेदष्ट वसूनेकादश रुद्राँस्तथैव च ।
 द्वादशेनाँश्च धातारं वषट्कारं ततो बहिः ॥
 भूगृहं वज्रशूलाढ्यं रेखात्रयसमन्वितम् ।
 द्वारोपेतं च राश्यादिभूषितं फणिसंयुतम् ॥
 एवं मण्डलमालिख्य तस्य दिक्षु विदिक्षु च ।
 नारसिंहं च वाराहं लिखेन्मन्त्रद्वयं तथा ॥
 कटरेफानुग्रहेन्दुनादशक्त्यादिभिर्युतः ।
 यो नृसिंहः समाख्यातो ग्रहमारणकर्मणि ॥

* नति- २, ३, ५ पु० पा० ।

अन्त्यार्घीशवियद्विन्दुनादैर्बीजं च शौकरम् ।
 हूँकारं चात्र रामस्य मालामन्त्रोऽधुनेरितः ॥
 तारो नतिश्च निद्रायाः स्मृतिर्वेदश्च कामिका ।
 रुद्रेण सहिता वह्निमेधामरविभूषिताः ॥
 दीर्घा क्रूरयुताह्लादिन्यथो दीर्घा समानदा ।
 क्षुधा क्रोधिन्यमोघा च विश्वमप्यथ मेधया ॥
 युक्ता दीर्घा ज्वालिनी च ससक्ष्मा मृत्युरूपिणी ।
 सप्रतिष्ठाऽऽह्लादिनी त्वक् क्ष्वेडं प्रीतिश्च सामरा ॥
 ज्योतिस्तीक्ष्णाऽग्निसंयुक्ता श्वेताऽनुस्वारसंयुता ।
 कामिका पञ्चमोलान्ता स्तान्तान्तो धान्त इत्यथ ॥
 ससानन्तो दीर्घयुक्तो वायुः सूक्ष्मयुतो विषा ।
 कामिका कामिका रुद्रयुक्ताऽथोपिस्थिराससे ॥
 तापिनी दीर्घयुक्ता भूरनिलोऽनन्तगोऽनलः ।
 नारायणात्मकः कालः प्राणोऽम्भो विद्यया युतम् ॥
 पीता रतिस्तथा लान्तो युक्तो योन्या तथा नतिः ।
 सप्तचत्वारिंशदणो गुणान्तस्त्वगुणः स्वयम् ॥
 अयं राज्याभिषिक्तस्य रामस्योक्तक्रमाह्लिखेत् ।
 इदं सर्वात्मकं यन्त्रं प्रागुक्तमृषिसेवितम् ॥
 सेवकानां मोक्षकरमायुरारोग्यवर्धनम् ।
 अपुत्राणां पुत्रदं च बहुना किमनेन वै ॥
 प्राप्नुवन्ति क्षणात् सम्यगत्र धर्मादिकानपि ।
 इदं रहस्यं परममीश्वरेणापि दुर्गमम् ॥
 इदं यन्त्रं समाख्यातं न देयं प्राकृते जने ।

श्रीकृष्णवल्लभमयोर्यन्त्रं तु पूर्वाक्विष्णुयन्त्रमेव ।

बुद्धयन्त्रं तु भूपुरावृतद्वात्रिंशदलं पञ्चम् ।

एवं ध्यात्वा यजेत् पद्मे द्वात्रिंशत्पत्रसंमिते ।

इति (मेरुतन्त्र-) वचनात् ।

विष्णुयन्त्रमेव कल्कियन्त्रम् ।

हयग्रीवादियन्त्रमपि विष्णुयन्त्रमेव ।

गोपालसुन्दरीयन्त्रं श्रीचक्रं तच्चाग्रे वक्ष्यते ।

अथ शिवयन्त्रं (प्रपञ्चसारे)

अष्टपत्रगुणवृत्तराशिभिर्वीथिकल्पतरुभिः समावृतम् ।

मण्डलं प्रतिविधाय शूलिनः पीठमन्त्रनवशक्तिभिर्यजेत् ॥

क चित् तु भूपुरत्रयावृताष्टदलपञ्चत्रयात्मकं शैवयन्त्रमुक्तम् ।

“कर्णिकाकेशरभ्राजहसुपत्रत्रयं लिखेत् ।

चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम्—इति ॥

(सिद्धान्तसंग्रहे)

भूपुरत्रयमध्ये तु लिखेदष्टदलत्रयम् ।

केशरानाद्यपत्रेषु मध्ये विन्दुं प्रकल्पयेत् ” ॥

अथ दक्षिणामूर्त्तियन्त्रं (मेरुतन्त्रे)

पद्मत्रयसमोपेते भूगृहत्रितयान्विते ।

चतुर्द्वारयुते.....इति ॥

अथ पाशुपतास्त्रमन्त्रयन्त्रं तत्रैव ।

पद्ममष्टदलं कृत्वा कर्णिकाकेशरान्वितम् ।

चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥

अथ वटुकयन्त्रं तत्रैव ।

शैवे पीठे यजेद्देवमन्तव्यामाष्टपत्रकम् ।

ऊर्ध्वत्रिकोणषट्कोणमष्टपत्रं गृहावृतम् ॥

“ ” एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

अथ क्षेत्रपालयन्त्रं तत्रैव ।

शैवे पीठे यजेदष्टपत्रे दिक्स्वरभूषिते ।

अथ भवानीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

आदौ त्रिकोणमालिख्य तद्बाह्येऽष्टदलाम्बुजम् ।

“भूपुरं चापि तद्बाह्ये भवानीमत्र पूजयेत् ॥

एतदेव त्रिकोणं शून्यं यन्त्रान्तरम् ।”

गरुडयन्त्रं तु वक्ष्यमाणमातृकायन्त्रमेव ।

पूजयेन्मातृकापद्मे गरुडं वेदविग्रहम्—इति (मेरुतन्त्र-) वचनात् ।

कार्तवीर्ययन्त्रं तु पूर्वोक्तविष्णुयन्त्रमेव ।

काम्यपूजायां तु विशेष उक्तो (मेरुतन्त्रे)

अथातो दक्षिणे मार्गे वक्ष्यते काम्यपूजनम् ।

शुद्धभूमावष्टगन्धैर्लिखेद्यन्त्रं तदुच्यते ॥

लिखेदशदलं पद्मे कर्णिकायां समालिखेत् ।

ॐ क्लीमोमैश्च पत्रेषु प्रणवाद्यानि संलिखेत् ॥

मन्त्रस्य नवबीजानि ततो यन्त्रान्तरेषु च ।

फडादिदशवर्णांश्च मन्त्रस्यैव समालिखेत् ॥

शषसहान् स्वरांश्चापि केशरेषु द्विशो लिखेत् ।

वेष्टयेत् कादिभिर्वर्णैः शषसहविवर्जितैः ॥

तद्बाह्ये चतुरस्रं तु वेष्टयेद्भूतवर्णिकैः ।

कामनाभेदतस्तानि वाय्वग्निक्षमा जलं नभः ॥

पञ्च ह्रस्वाः पञ्च दीर्घा एकाराद्याश्च पञ्च च ।

पञ्चवर्णा पञ्च याद्याः षक्षराश्च सहौ क्रमात् ॥

स्तम्भने पार्थिवैराप्यैः शान्तौ वश्ये च तैजसैः ।

उच्चाटने वायवीयैर्विद्वेषे चापि नाभसैः ॥

“ एतदङ्गान्तर्गतः पाठः ४, ५ पुस्तकयोर्धिक उपलभ्यते ।

मारणे तैजसैः शान्तौ चाप्यैः पुष्टौ च पार्थिवैः ।
 अस्मिन् यन्त्रे तोयपूर्णघटे भूपं प्रपूजयेत् ॥
 कुम्भं स्पृष्ट्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रं तेन सेचयेत् ।
 सम्यक् साध्यं तदा स स्यात् पुत्रवान् रोगवर्जितः ॥
 यशस्वी दीर्घजीवी च सत्कलत्रोऽनुरक्तः ।
 चाक्सिद्धश्चापि तेजस्वी प्रतापी विजितेन्द्रियः ॥
 शत्रूपद्रवमापन्नो ग्रामे वा मण्डपे पुरे ।
 रत्नस्थापयेदिदं यन्त्रमरिभीतिनिवृत्तये ॥
 अथ वक्ष्ये वामगानां यन्त्रभेदं शृणुष्व तत् ।
 लिखेदष्टदलं पद्मं ससाध्यं क्रौञ्चं च मध्यतः ॥
 यौ यैमाद्यन्तयोस्तस्य लिखेत् पत्रेषु च क्रमात् ।
 मन्त्रबीजाष्टकं चान्ते दले लेख्यं पुनश्च फट् ॥
 पत्रान्तरे शेषवर्णान्ते वर्णद्वयं लिखेत् ।
 द्विशः स्वरान् केशरेषु द्विधोष्मार्णसमन्वितान् ॥
 वृत्तद्वयं च तद्बाह्ये तयोर्वीथ्यां च कादिकान् ।
 उष्मोनांश्चतुरस्रं तु वज्राष्टकसमन्वितम् ॥
 तद्बाह्ये विलिखेत् तत्र पूर्ववद्भूतवर्णिकान् ।
 स्नानार्थं घटमानीयमन्यत् पूर्ववदीरितम् ॥

अथ हनुमद्यन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं कर्णिकाकंशरोज्ज्वलम् ।
 भूपुरं च ततो बाह्ये लिखित्वा तत्र पूजयेत् ॥

अथ सरयन्त्रं तत्रैव ।

() यन्त्रं लिखेत् ततो विद्वान् वसुपत्राग्बुजं शुभम् ।
 तद्बाहिः षोडशदलं चतुरस्रेण संयुतम् ॥

अथ मातृकायन्त्रं (शारदायात्)

व्योमेन्दौ रसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्कशरं
यन्त्रान्तर्गतपञ्चवर्गयशलार्णादित्रिवर्गं क्रमात् ।

आशास्त्रिषु लान्तलाङ्गलियुजा क्षोणीपुरेणावृतं
पद्मं कल्पितमत्र पूजयत तां वर्णात्मिकां देवताम् ॥

व्योम हकारः । इन्दुः सकारः । औ इति स्वरूपम् । रसनार्णो विसर्गः । तेन द्वौ-
रिति । आशास्त्रियादि । आशासु दिक्षु । अक्षिषु कोणेषु । लान्तो वकारः । लाङ्गली
ठकारः । तथा चतुर्दिक्षु वकारयुक्तेषु कोणेषु ठकारयुक्तेनेत्यर्थः । शेषं स्पष्टम् ।

भूतलिपियन्त्रं तु अष्टदलेपरि षोडशदलं तदुपरि चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रमिति
(शारदा-) टीकायामुक्तम् ।

अथ श्यामासपर्यायन्त्रं (कालीतन्त्रे)

आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं च बहिर्न्यसेत् ।

ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥

ततो वृत्तं समालिख्य लिखेदष्टदलं ततः ।

वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद्भूपुरमेककम् ॥

यन्त्रान्तरमुक्तं (कुमारिकल्पे)

आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्वहिर्न्यसेत् ।

बहिल्लिकोणमालिख्य षट्कोणं च बहिर्न्यसेत् ॥

मध्ये तु वैन्दवं चक्रं बीजेनापि विभूषितम् ।

षट्कोणात् तु बहिः पद्मं भूपुरैकेण संयुतम् ॥

ज्ञात्वैवं मुक्तिमाप्नोति यन्त्रमेतन्न संशयः ।

पद्ममष्टदलम् । भूपुरं च चतुर्द्वारयुक्तम् ।

तदुक्तं (भैरवतन्त्रे)

शक्त्यग्निभ्यां च षट्कोणं तत्र शक्तित्रयं लिखेत् ।

पद्ममष्टदलं भूमिपूश्चतुर्द्वारसंयुतम् ॥

शक्यश्रिभ्यामिति । शक्तिरधोमुखत्रिकोणम् । अग्निरूर्ध्वमुखं त्रिकोम् । तार्क्या
षट्कोणे सिद्धे तन्मध्ये वाऽधोमुखत्रिकोणत्रयं लिखेदित्यर्थः ।

तथा ।

स्वर्णादिरचिते पात्रे रक्तचन्दनचर्चिते ।

स्वयम्भुकुसुमाक्ते वा रक्ताक्ते चान्यथा शुचि ॥

रक्तचन्दनलेखन्याऽथ वा स्वर्णशलाकया ।

रक्तचन्दनचर्चिते पशुना स्वयम्भुकुसुमाक्ते वीरेण यन्त्रं लेखनीयमित्यर्थः ।

(कुमारीकल्पे)

एतत् तु विलिखेत् ताम्रे कुण्डगोलविलेपिते ।

स्वयम्भुकुसुमैर्युक्ते कुङ्कुमारुणसेविते ॥

(स्वतन्त्रतन्त्रे)

स्वयम्भुकुसुमं कुण्डगोलोत्थं रोचनाऽरुः ।

काश्मीरमृगनाभी च मद्यं मलयजोद्भवम् ॥

एष गन्धः समाख्यातः सर्वदा चण्डिकाप्रियः ।

एतेन गन्धयोगेन योनिचक्रक्रमं लिखेत् ॥

(मुण्डमालायाम्)

ताम्रपात्रे कपाले वा श्मशाने काष्ठनिर्मिते ।

शनिभौमदिने वाऽपि वीरमृतकसम्भवे ॥

स्वर्णे रौप्ये तथा लौहे चक्रमर्च्यं विधानतः ।

अत्रापि कपालादिविधेर्वीरपरत्वं वेदितव्यम् ।

अथ गुह्यकालीयन्त्रं (महाकालसंहितायाम्)

सविन्दुत्रयारपश्चारविभिन्ननवकोणयुक् ।

वृत्तयोरन्तरेऽष्टारयुतं तदनु भाविनि ॥

वस्वर्कभूपच्छदनाम्भोजवृत्तान्वितं ततः ।

अष्टाशनिसमायुक्तमन्तर्बहिरथापि च ॥

अष्टशूलाष्टमुण्डाढ्यं वह्निज्वालायुतेन हि ।

श्मशानेनावृतं शेषे शोणितोदेन वेष्टितम् ॥
 यन्त्रराजमिदं देवि पूजनाय प्रकल्पितम् ।
 भरतश्च्यवनश्चापि हारीतश्च जवालकः ॥
 दक्षश्चैते जनाः पञ्च पूजयन्त्यमुनाऽम्बिकाम् ।
 विन्दुः पञ्चारषट्कोणत्रिकोणनवकोणगः ॥
 अष्टारवृत्तसहितषोडशच्छदपद्मयुक् ।
 पुनर्दृष्टान्वितः शेषे पूर्ववत् सकलं प्रिये ॥
 पूज्योऽयं रामयक्षेशनाहुषाणां वरानने ।

अथ कामकलायन्त्रं तत्रैव ।

यन्त्रमस्याः प्रवक्ष्यामि तत्र धेहि मनः प्रिये ।
 भूपुरे वसुपत्राढ्ये पद्ममष्टदलान्वितम् ॥
 केशराणि प्रकल्प्यानि तदन्तश्चापि कर्णिकाम् ।
 कर्णिकान्तस्त्रिकोणस्य त्रितयं पृथगेव हि ॥
 बहिस्त्रिकोणकोणेषु लिखेद्बीजत्रयं शुभम् ।
 मायाबीजं तु वामे स्यात् क्रोधबीजं तु दक्षिणे ॥
 अधः पाशं विनिर्दिश्य कन्दर्पाणि तु मध्यतः ।
 तदन्तःस्थायिनी देवी तत्र सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥
 एतद्यन्त्रं महादेवि सर्वकामफलप्रदम् ।
 एतस्य सर्वयन्त्राणि कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥

अथ श्मशानकालीयन्त्रं (स्वतन्त्रतन्त्रे)

पद्मं चाष्टदलं वृत्तं तद्बाह्योऽष्टकवर्गकम् ।
 धरण्यां विलिखेदाद्यं चतुष्कं च चतुष्ककम् ॥
 पर्वादौ उत्तरान्तं च मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ।

अथ सिद्धिलक्ष्मोयन्त्रं कालानलतन्त्रे ।

यन्त्रोद्धारमहं वक्ष्ये सिद्धिलक्ष्म्या द्विज शृणु ।

चतुरस्रं चतुर्द्वारं वृत्तत्रयेण वेष्टितम् ॥

अष्टारं च रविदलं पुनरष्टदलं लिखेत् ।

षट्कोणमध्ये कोणं च तत्र विन्दुं विचिन्तयेत् ॥

अथ तारायन्त्रं (फेरवीधि)

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं त्रिकोणोज्ज्वलकर्णिकम् ।

मायां पूर्वदले न्यस्य याम्ये बीजं द्वितीयकम् ॥

तथोत्तरे पश्चिमे च फट्कारं विलिखेत् ततः ।

मध्ये बीजं लिखित्वा.....इति ॥

(फेत्कारिणोतन्त्रे)

सयोनि गोमयेनाष्टपत्रमञ्जं सुशोभनम् ।

भूपुरं वसुवज्राढ्यं यन्त्रमेकजटात्मकम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

ततस्तां पूजयेत् पीठे पद्मे षट्कोणकर्णिके ।

धरागृहावृते पीठमादावर्च्यं सशक्तिकम् ॥

एतयोर्भूपुरमधिकमुक्तम् ।

तथा त्रिकोणषट्केणयोर्विकल्पः (नीलतन्त्रे)

व्योमेन्दौ रसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरं

वर्गोल्लासिवसुच्छदं वसुमतीगण्डेन संवेष्टितम् ।

ताराधीश्वरवारिवर्णविलसद्विक्रोणसंशोभितं

यन्त्रं नीलतनोः परं निगदितं सर्वार्थसिद्धिप्रदम् ॥

इदं च नीलसरस्वतीयन्त्रं नीलतनोरित्यभिधानात् ।

(फेत्कारिणोतन्त्रो-) कयन्त्रमेकजटायाः । (फेरवीयमेरुतन्त्रोक्तं) च ताराया इति

सम्प्रदायविद्ः ।

के चित् तु व्योमेन्द्रावित्यादिना धारणयन्त्रमुक्तम् । पूर्वोक्तानि यन्त्राणि तारकज्ञ-
दानीलसरस्वतीसाधारणानीति वदन्ति ।

(मत्स्यसूक्ते)

अनुक्तकल्पे यन्त्रं तु लिखेत् पद्मं दलाष्टकम् ।

षट्कोणकर्णिकं वृत्तं वेदद्वारोपशोभितम् ॥

अथ श्रीयन्त्रं (यामले)

विन्दुत्रिकोणवसुकोणदशारयुग्मं

मन्वस्वनागदलसंयुतषोडशारम् ।

वृत्तत्रयं च धरणीसदनत्रयं च

श्रीचक्रराजमुदितं परदेवतायाः ॥

अस्मिन् यन्त्रे केशरा न कर्तव्याः ।

योऽस्मिन् यन्त्रे महेशानि केशराणि प्रकल्पयेत् ।

योगिनीसहितास्तस्य हिंसां कुर्वन्ति भैरवाः ॥

इति (भूतभैरवोक्तेः)

एतद्दर्शनफलमुक्तं (यामले)

सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा यत् फलं समवाप्नुयात् ।

तत् फलं लभते भक्त्या कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥

महाषोडशदानादि कृत्वा यल्लभते फलम् ।

तत् फलं समवाप्नोति कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥

सार्धत्रिकोटितीर्थेषु स्नात्वा यत् फलमश्नुते ।

लभते तत् फलं भक्त्या कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥

अथ पूजाफलम् ।

कोटिलिङ्गप्रतिष्ठायां यत् फलं समुदाहृतम् ।

तत्फलं लभते नूनं श्रीचक्रस्य च पूजनात् ॥

अथ दानफलम् ।

श्रीचक्रं कारयित्वा तु यो दद्यात् साधकाय च ।

भूचक्रं तेन दत्तं हि सशैलवनसागरम् ॥

अथैतत्पादोदकमाहात्म्यम् ।

गङ्गापुष्करनर्मदासयमुनागोदावरीगोमती-

गङ्गाद्वारगयाप्रयागवदरीवाराणसीसिन्धुषु ।

रेवासेतुसरस्वतीप्रभृतिषु ब्रह्माण्डभाण्डोदरे

तीर्थक्षानसहस्रकोटिगुणितं श्रीचक्रपादोदकम् ॥

अथैतच्चक्रोद्धारप्रकारस्तन्वान्तरोक्तः प्रदश्यते ।

वृत्तं कृत्वेष्टमानेन मध्ये सूत्रं तु पातयेत् ।

पूर्वपश्चिमलघाग्रं द्विचत्वरिंशवद्भवेत् ॥ ५२

पूर्वदिग्भागतः कार्या रेखा दोषापनुपत्तये ।

त्यक्त्वा षड्भागमाद्या स्याद्रेखा याम्योत्तराश्रिता ॥

पञ्चभागाँस्ततस्त्यक्त्वा द्वितीयाऽपि तथा भवेत् ।

ततो भागचतुष्केण दूरतस्त्रितया भवेत् ॥

ततो भागत्रयं त्यक्त्वा रेखा स्यात् तु चतुर्थिका ।

भागद्वयं ततस्त्यक्त्वा रेखा कार्याऽथ पञ्चमी ॥

ततो भागचतुष्केण षष्ठी रेखा तथा भवेत् ।

सप्तमी स्यात् त्रिभिर्भागैश्चतुर्भागैस्तथाऽष्टमी ॥

नवमी पञ्चभिर्भागैरेवं रेखा विधाय तु ।

अन्तरं वृत्ततः षड्विंशैराद्यन्तरेखयोः ॥

सूर्यादिग्रहनामानि नवानां धारयेत् क्रमात् ।

पार्श्वद्वयेऽपि कर्त्तव्यं रेखाग्राणां विमार्जनम् ॥

अग्रयोरुभयोलुप्येत सूर्ये भागत्रयं त्रयम् ।

पञ्चभागान् प्रलुप्येत द्वितीया पार्श्वयोर्द्वयोः ॥

मार्जनं च भवेदेवमग्रयोः शनिभौमयोः ।

बुधरेखाग्रयोर्लुप्याद्भागान् षोडश यत्नतः ॥
 अष्टादश विलुप्येत भागान् गुर्वग्रयोर्द्वयोः ।
 षोडशोभयतो लुप्येद्भागान् भृग्वग्रयोस्तथा ॥
 राहुकेत्वोः क्रमेण स्यादष्टषड्भागमार्जनम् ।
 सूर्याग्रे चुम्बतः शुक्रे मध्यं सोमाग्रके पुनः ॥
 चुम्बतः केतुमध्यं तु भौमाग्रे वृत्तचुम्बके ।
 बुधाग्रे राहुमध्यं तु चुम्बतस्तद्देव हि ॥
 चुम्बतः शनिमध्यं तु अग्रभागौ बृहस्पतेः ।
 पूर्वस्यां वृत्तमध्यं चुम्बतोऽग्रे शनरपि ॥
 राह्वग्रे सूर्यमध्यं तु चुम्बतस्तद्देव हि ।
 केत्वग्रे चुम्बतो भौमं भृग्वग्रे सोमचुम्बके ॥
 एवं चक्रं लिखित्वा तु भवेदतिमनोरमम्-इति ।

बालायन्त्रं तु वक्ष्यमाणत्रिपुरमैरवीयन्त्रवत् ।

(त्रिपुरासारसमुच्चये) यन्त्रान्तरमुक्तम् ।

त्रिकोणं विलिख्यानु दृत्तं दलानां
 ततः पञ्चकं तद्वहिश्चापि वृत्तम् ।
 पुनः षड्दलं बाह्यतश्चापि वृत्तं
 लिखेदष्टपत्राणि तद्बाह्यतोऽपि ॥

अथ भुवनेश्वरीयन्त्रम् (शारदायाम्)

पञ्चमण्डलं बाह्ये वृत्तं षोडशभिर्दलैः ।
 विलिखेत् कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम् ॥
 चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।

अथ त्रिपुरमैरवीयन्त्रं (शारदायाम्)

पञ्चमण्डलोपेतं नवयोन्याढ्यकर्णिकम् ।

छिन्नमस्तायनम् ।

११५५

११/६/५६

चतुर्द्वारसमायुक्तं भूगृहं विलिखेत् ततः ॥

अथ चैतन्यभैरवीयन्त्रं (ज्ञानार्णवे)

त्रिकोणं चैव षट्कोणं वसुपत्रं वरानने ।

चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ॥

भुवनेश्वरोभैरवीकमलेश्वरभैरव्योरपि तदेव यन्त्रम् । सम्पत्प्रदाभैरवीयन्त्रं त्रिपुर-
भैरवीयन्त्रवत् । कामेश्वरभैरवीयन्त्रं चैतन्यभैरवीयन्त्रवत् ।

अथ षट्कूटाभैरवीयन्त्रं (ज्ञानार्णवे)

यन्त्रमस्या वरारोहे त्रिकोणं संपुटं लिखेत् ।

बहिरष्टदलं पद्मं रविपत्रं ततो लिखेत् ॥

चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।

अथ रुद्रभैरवीयन्त्रं तत्रैव ।

त्रिकोणं चैव वृत्तं च वृत्ताष्टदलपङ्कजम् ।

वृत्तं भूमण्डलं च इति ॥

अथ छिन्नमस्तायनम् (यामले)

त्रिकोणं विन्यसेदादौ तन्मध्ये मण्डलत्रयम् ।

तन्मध्ये विलिखेद्योनिं द्वारत्रयसमन्वितम् ॥

बहिरष्टदलं पद्मं भूविम्बत्रितयं पुनः ।

कूर्मबीजं लिखेन्मध्ये त्रिकोणे हसमन्वितम् ॥

(तन्त्रान्तरे)

अथोच्यते यन्त्रराजं वैरोचन्या महेश्वरि ।

षट्कोणं प्रथमं लेख्यं मध्यदेशे त्रिकोणकम् ॥

सूर्यविम्बं ततो दद्याच्चतुरस्रं ततः परम् ।

भूगोलं च ततो दद्याच्चतुरस्रं ततः परम् ॥

अष्टपत्रं ततो दद्याद्यथास्थानं च देशिकः ।

चन्द्रविम्बं ततो दद्याद्द्विविम्बं ततः परम् ॥

भूगोलं च ततो दद्याद्भूपुरत्रितयं ततः ।
 वज्रशूलसमायुक्तं कोणे टङ्गं नियोजयेत् ॥
 किञ्जल्के केशरे दद्यान्मत्रवर्णौस्त्रिकोणके ।
 इति कामोपरि ध्यायेद्देवीं वैरोचनीं शुभाम् ॥
 (तन्त्रान्तरे)

भैरवोक्तमहं वक्ष्ये यन्त्रं सर्वसमृद्धिदम् ।
 त्रिकोणं प्रथमं लेख्यं षट्कोणैर्वेष्टयेच्च तत् ॥
 त्रिविम्बं च ततो दद्याद्गुणानां परिणामकम् ।
 भूपुरत्रितयं कुर्याद्वज्रशूलसमन्वितम् ॥
 कोणदेशे ततो दद्याद्वङ्गास्त्रं सुमनोहरम् ।
 यथास्थाने लिखेद्धीमान् कर्तृखर्परकं शुभम् ॥
 रतिकासोपरि ध्यायेद्देवीं वैरोचनीं शुभाम् ।
 (मेरुतन्त्रे)

त्रिकोणं रसकोणं वाऽष्टदलं भूपुरं ततः ।
 अथ धूमावतीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।
 लिखेदष्टदलं पद्मं भूपुरेण च वेष्टितम् ।
 अथ वगलामुखीयन्त्रं (मेरुतन्त्रे)
 सौवर्णे वाऽथ वा रौप्यं पैत्तले वाऽथ भूर्जके ।
 कर्पूरागुरुकस्तूरीश्रोखण्डकुङ्कुमैरपि ॥
 लिखेद्यन्त्रं प्रयत्नेन लेखन्या हेमतारयोः ।
 मध्ये योनिं समालेख्य तद्बाह्ये तु षडस्त्रकम् ॥
 तद्बाह्येऽष्टदलं पद्मं तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ।
 चतुरस्त्रत्रयं बाह्ये चतुर्दारीपशोभितम् ॥
 अथ मातङ्गीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।
 षट्कोणाष्टदलं पद्मं लिखेद्यन्त्रं मनोरमम् ।

एतस्मिन् पूजयेत् पीठे नवशक्तीः क्रमादिमाः ॥

अथ यन्त्रान्तरं (मेरुतन्त्रे)

त्रिकोणं पञ्चकोणं च बहिरष्टदलद्वयम् ।

षोडशारं चाष्टदलं भूपुत्रितयं लिखेत् ॥

एतद्द्वयमप्युच्छिष्टचाण्डालिन्याः । राजमातङ्गीयन्त्रं तु तद्व्यानात् प्रागेवोक्तम् ।
वक्ष्यमातङ्गादिभेदानामपि तदेव यन्त्रमाकलयीयम् ।

अथ सुमुखीयन्त्रम् ।

त्रिकोणं पञ्चकोणं च वृत्तमष्टदलावृतम् ।

चतुरस्रं च तद्बाह्ये सुमुखीयन्त्रमीरितम् ॥

अथ लक्ष्मीयन्त्रं (मेरुतन्त्रे)

धर्मादिकल्पिते पीठे भूपुरद्वारशोभिते ।

दलादष्टके केशराख्ये कर्णिकायां यजेदिमाम् ॥

भूपुरावेष्टितमष्टदलपद्मत्रयात्मकं यन्त्रमन्यत्रोक्तम् ।

अथ सरस्वतीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

पद्ममष्टदले लेख्यं चतुरस्रावृतं शुभम् ।

यन्त्रमेतद्वारोहे वाग्देव्याः परिकीर्तितम् ॥

त्वरिताया नित्यह्निन्नायाश्च यन्त्रं पूर्वोक्तभुवनेश्वरीयन्त्रवत् ।

अथान्नपूर्णयन्त्रं (मेरुतन्त्रे)

त्रिकोणं च चतुःपत्रं वसुपत्रं ततः परम् ।

कलापत्रं च भूविम्बं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥

प्रत्यङ्गिरायन्त्रमन्नपूर्णयन्त्रवत् ।

अथ कुब्जिकायन्त्रम् ।

विन्दुत्रिकोणषट्कोणमष्टपत्रं सकेशरम् ।

श्रीमत्कुब्जेश्वरीयन्त्रं सहारं भूपुरत्रयम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

विन्दुत्रिकोणषट्कोणमष्टपत्राम्बुजं तथा ।

समातृबीजाष्टदलमष्टशृङ्गं सभूपुरम् ॥

गङ्गायन्त्रं तु सरस्वतीयन्त्रवत् । भूपुरावृतपङ्कसं वाग्मतीयन्त्रम् ।
अष्टदलकमलद्वयात्मकं चाद्रयन्त्रम् ।

अथ भौमयन्त्रं (मेरुतन्त्रे)

त्रिकोणं पूर्वमुद्धृत्य पञ्चधा विभजेत् ततः ।
तृतीयरेखां चिह्नाभ्यां लाञ्छयेत् समभागतः ॥
आद्यरेखाग्रयुगलं तृतीयाचिह्नयोन्यसेत् ।
द्वितीयग्रे समाकृष्य तृतीयाचिह्नयोन्यसेन् ॥
युता रेखा तृतीया तु समा भाज्या समं ततः ।
तुर्या चिह्नद्वयेनाथ त्रिभिश्चिह्नैश्च पञ्चमो ॥
तृतीयाग्रे प्रकुर्वीत पञ्चम्या मध्यचिह्नजे ।
तुर्याग्रे योजयेत् सम्यक् पञ्चम्या चिह्नयोर्द्वयोः ॥
अथ मीनद्वये दद्यात् सूत्रयुग्मं विचक्षणः ।
एवमेकाधिका सम्यक् कोष्ठानां विंशतिर्भवेत् ॥

बुधादीनां यन्त्रं तु भूपुरावृताष्टदलकमलम् । तेषां यन्त्रान्तराणि विस्तरप्रयात्न
लिख्यन्ते ।

पिङ्गलादिग्रहमातृयन्त्रं तु त्रिकोणपञ्चकोणाष्टदलभूपुररूपम् । षड्दलाद्बहिरष्ट-
दलमिन्द्रयन्त्रम् । अग्नियन्त्रमपि तदेव । अष्टदलमात्रमग्नेर्यन्त्रान्तरम् । यमयन्त्रमिन्द्र-
यन्त्रवत् । नैर्ऋतयन्त्रं तु पञ्चकोणगर्भाष्टदलपञ्चम् । षड्दलाद्बहिरष्टदलवरुणयन्त्रम् ।
षड्दलाद्बहिरष्टदलत्रयं वायुयन्त्रम् । कुबेरयन्त्रमष्टदलमात्रम् । ईशानयन्त्रं शिवयन्त्र-
वत् । ब्रह्मयन्त्रं तु दशदलपञ्चम् । विष्णुयन्त्रमेवानन्तरयन्त्रम् । षट्कोणकर्णिकषोडश-
दलपञ्चं ब्राह्मयन्त्रम् । पञ्चकोणगर्भाष्टदलकमलं कौमाटोयन्त्रम् । वैष्णवीयन्त्रमष्टदलप-
ञ्चम् । तदेव वराहयन्त्रमपि ।

मालायन्त्रं तु यन्त्रान्तरमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

योनिपञ्चास्रषट्कोणाष्टपत्रशतपत्रकम् ।

सहस्रदलभूविम्बसंवीतं द्वारशोभितम् ॥

कैलाशाचलमध्यस्थं पोठमेतद्विचिन्तयेत् ।

त्रिकोणषोडशदलाष्टदलदशदलद्वयात्मकं स्वप्नवाराहोयन्त्रं तत्रैवोक्तम् । षट्कोण-
गर्भाष्टदलपञ्चमैन्द्रोचामुण्डामहालक्ष्मीयन्त्रम् ।

नवदुर्गात्मकचामुण्डामन्त्रयन्त्रं तु तत्रान्तरे ।

एतन्मन्त्रावृतत्रयसप्तकोणाष्टदलं लिखेत् ।

पञ्चविंशदलं बाह्ये चतुरस्रावृतं शुभम् ॥

अथ दुर्गायन्त्रं (मेरुतन्त्रे)

अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं चतुरस्रत्रयावृतम् ।

चतुर्द्वारसमायुक्तं कुङ्कुमादिभिरुद्धरेत् ॥

अथ यन्त्रपुरश्चरणं तत्रान्तरे ।

आदौ यन्त्रस्य सिद्ध्यर्थे तन्मन्त्रस्य पुरस्कियाम् ।

कृत्वाऽयुतप्रमाणेन पश्चाद्यन्त्रस्य वाऽऽचरेत् ॥

यथाऽऽधारे यथाद्रव्यैर्यन्त्रं संलिख्य यत्नतः ।

तत्रावाह्यैव तद्देवं संपूज्य विधिपूर्वकम् ॥

ध्यात्वा बलिं जपं होमं कृत्वा देवं विसर्जयेत् ।

एकैकवारमावर्त्य तन्मन्त्रं संस्मरन् बुधः ॥

इत्थं जपादिभिः सिद्धे यन्त्रे नासाध्यता क्व चित् ।

दिवसहस्तप्रमाणेन यन्त्रे कार्या पुरस्किया ॥

अथ धारणयन्त्रसाधनमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

अथ यन्त्रविधिं वक्ष्ये सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ।

सिद्धस्य लिखनादेव यन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥

न भावि यत्र कार्यं तु सिद्धस्यापि तदा भवेत् ।

दुःस्वप्नदर्शनं पूर्वं तदा यन्त्रं न कारयेत् ॥

साधकस्य शुभे घस्त्रे समाराधयेद्देवताम् ।

स्वप्यात् त्रिदिवसं भूमौ हविष्याशी जपे रतः ॥

एतद्यन्त्रं करिष्यामि मम तत् कीदृशं प्रभो ।

स्वप्ने वदेतदेवेशि तदङ्गत्वेन पूजनम् ॥

प्रदोषसमये कृत्वा लिखेत् त्रिदिवसं भुवि ।
 तृतीयदिवसे रात्रौ यथा स्वप्नः प्रजायते ॥
 तथैवाज्ञां गृहीत्वा तु सरस्वमे चालिखेद्भुवि ।
 अस्वमे वाऽथ दुःस्वमे नैव कुर्यादलिखेच्छि तत् ॥
 जीवसंस्थापनं यन्त्रे कुर्याद्येन फलं लभेत् ।
 षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्यबीजोर्ध्वतो लिखेत् ॥
 द्वितीयान्तं साध्यमधः कुरुद्वन्द्वं च पार्श्वयोः ।
 हसौर्यन्त्रस्य जीवः स्यान्मध्यभागादधो लिखेत् ॥
 हंसः सोऽहं मनोरस्य लिखेदेकैकमक्षरम् ।
 ईशानादिषु कोणेषु दक्षपार्श्वे च इद्वयम् ॥
 उद्वयं वामपार्श्वे च पूर्वाशादौ लिखेत् क्रमात् ।
 लँ रँ मँ क्षँ तथा वँ यँ सँ हँ पूर्वादिके लिखेत् ॥
 ईशानपूर्वयोर्मध्ये आँ ह्रीँ वायव्यसौम्ययोः ।
 एवं दिक्पालबीजानि दशदिक्षु न्यसेत् क्रमात् ॥
 यन्त्रराजाय विद्महे वरप्रदाय धीमहि तन्नो यन्त्रः प्रयोदयात् ।
 एतस्याः प्रतिकाष्टायां लिखेद्वर्णत्रयं त्रयम् ।
 बहिः प्राणप्रतिष्ठाया मन्त्रं सर्वत्र वेष्टयेत् ॥
 एवं तु लिखितं यन्त्रं भवेत् सिद्धिप्रदायकम् ।
 स्थलानुक्तौ भूर्जपत्रे क्षौमे वा ताम्रपत्रके ॥
 यन्त्रं विलिख्य गुटिकां बद्ध्वा सूत्रेण वेष्टयेत् ।
 लाक्षयाऽऽच्छादितं स्वर्णे रूप्ये ताम्रेऽथ वा क्षिपेत् ॥
 यदेवताकं यन्त्रं स्यात् तद्बीजेन च पूजयेत् ।
 तदभावे मातृकार्णैर्यन्त्रपूजां समाचरेत् ॥

अष्टोत्तरसहस्रं तु मूलं जप्त्वा हुनेद्दृष्टम् ।
तत्संपातेन संसिक्तं कृत्वा यन्त्रं नियोजयेत् ॥
मग्निं बाहौ गले वाऽपि तत्तदिष्टार्थसिद्धये ।

(मेरुतन्त्रे)

उपास्या वा भूतलिपिर्यन्त्रसिद्धिविधायिनी ।
अक्लेशेनैव सर्वेषां यन्त्राणां सिद्धिमाप्नुयात् ॥

अथ भूतलिपिनिर्णयः (शारदायाम्)

अथ भूतलिपिं वक्ष्ये सुगोप्यामपि दुर्लभाम् ।
यां प्राप्य शम्भोर्मुनयः सर्वान् कामान् प्रपेदिरे ॥
पञ्च ह्रस्वाः सन्धिवर्णा व्योमेराग्निर्जलं धरा ।
अन्तर्माद्यं द्वितीयं च चतुर्थं मध्यमं क्रमात् ॥
पञ्चवर्गाक्षराणि स्युर्वान्तः श्वेतेन्दुभिः सह ।
एषा भूतलिपिः प्रोक्ता द्विचत्वारिंशदक्षरैः ॥

पञ्च ह्रस्वा इति अकारादयः । सन्धिवर्णा एकारादयश्चत्वारः । व्योम हकारः ।
इरो यकारः । अग्नी रेफः । जलं वकारः । धरा पृथ्वी तद्वीजं लकारः । अन्तर्मित्यादि
वर्गस्येति शेषः । वान्तः शकारः । श्वेतः षकारः । इन्दुः सकारः ।

तथा ।

आयंवराणां वर्गाणां पञ्चमाः शार्णसंयुताः ।

वर्गाद्या इति विज्ञेया नव वर्गाः स्मृता अमी ॥

आयंवराणां इति । अश्च ए च अंवराणांश्च ते । आयंवराणां अकारैकारहकारा
इत्यर्थः । वर्गाणां पञ्चमा ऊज्जनमाः । शार्णः शकारः । एते वर्णा नवानां वर्गाणामाद्या
इत्यर्थः ।

भूतलिपित्वं दर्शयति ।

व्योमेराग्निजलक्षोणीवर्गवर्णान् पृथग्विदुः ।

द्वितीयवर्गे भूर्न स्यान्नवमे सजलं धरा ॥

भूर्न स्यादिति । द्वितीयवर्गस्य वर्णचतुष्टयात्मकत्वादिति भावः । एवमग्रेऽपि बो-

ध्यम् ।

तथा ।

विरिञ्चिविष्णुरुद्राश्विप्रजापतिदिगीश्वराः ।
 क्रियादिशक्तिसहिता नवदुर्गेश्वराः स्मृताः ॥
 ऋषिः स्यादक्षिणामूर्त्तिर्गायत्री छन्द ईरितम् ।
 देवता कथिता सद्भिः साक्षाद्वर्णेश्वरी परा ॥
 हादिषड्वर्णकैः कुर्यात् षडङ्गानि सजातिभिः ।

(मेरुतन्त्रे)

स्वरहोनैर्हयाद्यैश्च मन्त्राणैः पञ्चपञ्चभिः ।

अथ ध्यानं (शारदायाम्)

ध्यायैल्लिपितरोर्मले देवों तन्मयपङ्कजे ।
 वदन्ति सुधियो वृक्षं नित्यं वर्णमयं शुभम् ॥
 परसंविन्महाबीजं विन्दुनादमहाशिफम् ।
 पृथिव्यक्षरशाखाभिः सर्वाशासु विजृम्भितम् ॥
 सलिलाक्षरपत्रैः स्वैः संछादितपुगत्रयम् ।
 वह्निवर्णाङ्कुरैर्दीप्तं रत्नैरिव सुरद्रुमम् ॥
 मरुद्गर्गलसरपुष्पैर्द्योतयन्तं वपुःश्रियम् ।
 आकाशाणामफलैर्नम्रं सर्वभूताश्रयं परम् ॥
 परामृताख्यमधुभिः सिञ्चन्तं परमेश्वरीम् ।
 वेदागमादिभिः कलससमुन्नतिमनोहरम् ॥
 शिवशक्तिमयं साक्षाच्छायाश्रितजगन्नयम् ।
 एतामाश्रित्य सुधियः सर्वान् कामान् प्रपेदिरे ॥
 अङ्कोन्मुक्तशशाङ्गकोटिसदृशीमापीनतुङ्गस्तनीं
 चन्द्रार्धान्वितमस्तकां मधुमदादालोलनेत्रत्रयाम् ।
 बिभ्राणांमनिशं वरं जपवतीं त्रिव्यां कपालं करै-

राद्यां यौवनगर्वितां लिपितनुं वागीश्वरीमाश्रये ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं न्यसेज्जपेत् तावज्जुहुयादयुतं तिलैः ।

पूजयेदन्वहं देवीं पीठे प्रागीरिते सुधीः ॥

(मेरुतन्त्रेऽपि)

लक्षं प्रजप्यादयुतं तिलैर्हुत्वा च तर्पयेत् ।

एवं भूतलिपिः सेव्या यन्त्वसिद्धिः प्रजायते ॥

श्रीविद्याराधने वाऽपि समर्थो जायते नरः ।

इति भूतलिपिपुरश्चरणम् ।

अथ मातृकान्यासपुरश्चरणं (शारदायाम्)

दीक्षितः प्रोक्तमार्गेण न्यसेल्लक्षं समाहितः ।

जपेत् सत्संख्यया विद्वानयुतं मधुराश्रुतैः ॥

विदधोत तिलैर्होमं मातृकामन्वहं जपेत् ।

इति मातृकान्यासपुरश्चरणम् ।

अथ त्रिलोहीमुद्रा तत्रैव ।

सोमसूर्याग्निरूपाः स्युर्वर्णा लोहत्रयं तथा ।

रौप्यमिन्दुः स्मृतो ह्येव सूर्यस्ताम्रं हुताशनः ॥

लोहभागाः समुद्दिष्टाः खराद्यक्षरसंख्यया ।

तैलेर्हैः कारयेन्मुद्रामसङ्कलितसङ्कताम् ॥

साग्रं सहस्रं संजप्य स्पृष्ट्वा तां जुहुयात् ततः ।

तस्यां संपातयेन्मन्त्री सर्पिषा पूर्वसंख्यया ॥

निःक्षिप्य कुम्भे तां मुद्रामभिषेकोक्तवर्त्मना ।

आवाह्य पूजयेद्देवीमुपचारैः समाहितः ॥

अभिषिञ्ज्य विनीताय दद्यात् तां मुद्रिकां गुरुः ।

इयं रक्षा क्षुद्ररोगविषज्वरविनाशिनी ॥

व्यालचौरमृगादिभ्यो रक्षां कुर्याद्विशेषतः ।

युद्धे विजयमाप्नोति धारयेन्मनुजेश्वरः ॥

सोमसूर्याग्निरूपा इति । अकारादयः स्वराः सोमरूपाः । कादयो मान्ताः स्पर्श-
वर्णाः सूर्यरूपाः । यकारादयो व्यापकवर्णा अग्निरूपा इत्यर्थः ।

तथेति । तथैत्र लोहत्रयमपि सोमसूर्याग्निरूपमित्यर्थः ।

एतदेव स्फुटयति रौप्यमित्यादिना । भागा अंशाः ।

स्वराद्यक्षरसंख्येति । रौप्यस्य षोडश । हेमः पञ्चविंशतिः । ताम्रस्य दशभागा
इत्यर्थः ।

असङ्कलितसङ्कतामिति । असङ्कलितामेकरूपतामनापन्नाम् । सङ्कतां परस्परस-
म्बद्धाम् ।

संजप्येति । जपश्चात्र मातृकावर्णानामेव ।

तस्यां संपादयेदिति । स्वाहेति हुत्वा तस्यां मुद्रायां संपाताज्यं निःक्षिपेदित्यर्थः ।

अभिषिकोक्तवर्त्मनेति । काम्याभिषेकोक्तरीत्यर्थः ।

काम्याभिषेकस्तु तत्रैव ।

पूर्वोक्तं पङ्कजं कृत्वा कुम्भं संस्थाप्य पूर्ववत् ।

काथेन पूरयेन्मन्त्री यथावत् क्षीरशाखिनाम् ॥

अष्टगन्धं विलोडयास्मिन् नवरत्नसमन्विते ।

आवाह्य पूजयेद्देवीं मातृकामुक्तमार्गतः ॥

सहस्रं साधितैस्तोयैरभिषिञ्चेत् प्रियं नरम् ।

भानुवारे शुभे लग्ने ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥

गुरवे दक्षिणां दद्याद्भक्तियुक्तः स्वशक्तितः ।

रक्षाकरं विशेषेण कृत्वा द्रोहोपशान्तिदम् ॥

ऐश्वर्यजननं पुंसां सर्वसौभाग्यसिद्धिदम् ।

अभिषेकमिमं प्राहुर्विश्वसंमोहनं परम्-इति ॥

देवीं मातृकासरस्वतीम् ।

अभिषिञ्च्येति । अभिषेकस्तु विलीममातृकावर्णैः कार्यः ।

अभिषिञ्चेद्विलोमेन साध्यन्तं दत्तदक्षिणम् ।

इत्यभिषेकान्तरे तत्रैवोक्तत्वात् ।

अथ नवरत्नमुद्रा तत्रैव ।

विभजेन्मातृकां मन्त्री नववर्गान् यथाक्रमात् ।

अष्टावष्टौ स्वराः स्पर्शाः पञ्चशो व्यापका अपि ॥

नववर्गाः समुत्पन्नाः नवरत्नेश्वरग्रहाः ।

अर्केन्दरक्तज्ञगुरुभृगुमन्दाहिकेतवः ॥

माणिक्यं मौक्तिकं चारु चिद्रुमं गारुडं पुनः ।

पुष्परागं लसद्वज्रं नीलं गोमेदकं शुभम् ॥

वैदूर्यं नवरत्नानि मुद्रां तैः कल्पयेच्छुभाम् ।

जपहोमादिकं सर्वं कुर्यात् पूर्वोक्तवर्त्मना ॥

यो मुद्रां धारयेदेनां तस्य स्युर्वशगा ग्रहाः ।

वहते तस्य सौभाग्यं लक्ष्मीरप्यहता भवेत् ॥

कृत्या द्रोहा विनश्यन्ति नश्यन्ति सकलापदः ।

रक्षोभूतपिशाचाद्या नेक्षन्ते तं भयाकुलाः ॥

उपर्युपरि वर्धन्ते धनरत्नादिसम्पदः ।

इति नवरत्नमुद्रा ।

अथ षोढान्यासपुरश्चरणं तन्त्रान्तरे ।

देवीभावसमायुक्तः षोढान्यासपरो भवेत् ।

दशविद्याविधौ सा च दशधा भिन्नभिन्नतः ॥

प्रत्येकं षडृषिं तं तं तद्व्यानं च समाचरेत् ।

ऋषिच्छन्दादिकं यत्र कीर्तितं परमेश्वरि ॥

तदेव तत्र गदितमनुक्ते मूलदेववत् ।

ध्यानं छन्दादिकं स्तोत्रं देवीवत् सर्वमेव तु ॥

अयुतं च पुरश्चर्या न्यासस्तत्क्रमयोगतः ।
इति षोढान्यासपुरश्चरणम् ।

अथ सहस्रनामस्तवकवचानां पुरश्चरणं तत्रैव ।

ईश्वर उवाच ।

सहस्रनामस्तोत्रेषु कवचेष्वपि पार्वति ।
कवचादौ तु या प्रोक्ता सा वै कार्या पुरस्कृत्या ॥
यत्रानुक्ता पुरश्चर्या तत्र किं वा विधोयते ।
अयुतं तु पुरश्चर्या स्तोत्रमात्रे प्रकीर्तिता ॥
सहस्रनामकवचे पुरश्चर्या त्वियं मता ।
एवं पुरस्कृत्यां कृत्वा दशांशं हवनादिकम् ॥
तर्पणं मार्जनं देवि कुत्र चित् परिकीर्तितम् ।
महाकालमते प्रोक्तं तत्रस्थं चेत् समाचरेत् ॥
विप्रसंतोषणेनैव सर्वं सिद्ध्यति पार्वति ।
हवनं तु तथा कार्यं पुरश्चर्यादिकं भवेत् ॥
सहस्रनामरूपं वै कीदृशं परमेश्वरि ।
तथा च कवचं देवि किंरूपं परिकीर्तितम् ॥
शिवदेव्योस्तु संवादो ब्रह्मरन्ध्रं प्रकीर्तितम् ।
अन्ये श्लोकाः केशतुल्या ऋषिः शिर उदीरितम् ॥
छन्दो मुखं भवेद्देवि देवता हृदयं भवेत् ।
बीजं गुह्यमिति प्रोक्तं शक्तिं तु पदगां विदुः ॥
सर्वाङ्गं कीलकं देवि ह्यर्थवादः प्रकीर्तितः ।
स्तोत्रमध्ये स्थितं यद्यत् तत् सर्वं स्तोत्ररूपकम् ॥
एवं च देवदेवेशि स्तोत्ररूपं प्रकीर्तितम् ।
तथैव कवचं देवि ज्ञात्वा पाठं पठेत् प्रिये ॥

अङ्गहीने भवेन्नाशः सर्वथा परमेश्वरि ।
 फलस्तुत्यादिकं देवि अङ्गमित्यभिधीयते ॥
 आद्योपान्तं विना देवि फलमर्थं प्रकीर्तितम् ।
 अत्रार्थे प्रत्ययो देवि षडङ्गाद्या यथा स्मृताः ॥
 हवनं कवचादीनां श्लोकान्ते विहितं च वा ।
 आद्योपान्तं पठित्वा तु पश्चात् तु हवनं मतम् ॥
 आदौ पूर्णं तु संपद्य तथैवान्ते महेश्वरि ।
 मध्ये नामानि पाद्यानि पुरश्चर्या प्रकीर्तिता ॥
 श्लोकान्ते हवनं प्रोक्तं श्लोकान्ते मार्जनादिकम् ।
 तत्र स्तोत्रोक्तविधिना पुरश्चर्यादिकं चरेत् ॥
 स्तोत्रमावर्त्य संपूर्णं तदन्ते गणानां चरेत् ।
 संपूर्णहोमयोगोऽयं कथितस्ते प्रियंवदे ॥
 सारूप्यं कवचाख्यं च सायुज्यं स्तोत्रमीरितम् ।
 सान्निध्यं नामसाहस्रं त्रितयं परिकीर्तितम् ॥
 कवचं कवचरूपं स्यात् स्तोत्रं सहचरो भवेत् ।
 सहस्रनामस्तोत्रं तु पूजास्थाने प्रकीर्तितम् ॥
 पूजा दुर्गास्वरूपा स्याद्वलिदानं तु मारणम् ।
 मन्त्रो राजा पुरश्चर्या राज्यसंपत्तिरीरिता ॥
 संपत्त्या तु विना राजा न शोभति महेश्वरि ।
 संपत्तिमूलमेतद्धि सर्वमेव प्रकीर्तितम् ॥
 होमो मन्त्रः इति प्रोक्तः पर्जन्यास्त्वं तु तर्पणम् ।
 जलं दुर्गस्वरूपं वै त्वभिषेकः प्रकीर्तितः ॥
 ब्राह्मणानां भोजनं तु दुष्टसैन्यप्रभक्षणम् ।

देवतागुरुविद्यैक्यं त्वात्मैक्यं परिभाष्य च ॥
 सर्वसिद्धीश्वरो भूत्वा त्रैलोक्याधिपतिर्भवेत् ।
 यथा च राजराज्यादौ शत्रुसैन्यभयं भवेत् ॥
 सिद्धिराज्ये महादेवि तथैव परिकीर्तितम् ।
 दुर्गयन्त्रादिकं देवि देशराज्ये यथा मतम् ॥
 तथैव सिद्धिराज्यस्य पुरश्चर्यादिकं मतम् ।
 मन्त्रो राजा गुरुर्मन्त्री गणेशा द्वारपालकाः ॥
 साधनं शवमुण्डस्य सिंहासनमितीरितम् ।
 साधकेन तथा कार्यं येन सर्वं तु सिध्यति ॥
 नैमित्तिकं च काम्यं च हयद्विरदकौ मतौ ।
 होमधूपः पताका स्याज्जयस्तु सिद्धभूमिका ॥
 सिद्धिराजाधिपे देवि किं न सिध्यति भूतले ।
 षोढान्यासादिकं सेना देवता राज्यदायिका ॥
 यन्त्रं तु वज्रदुर्गं तु जीवचक्रं त्वभेदकम् ।
 कवचादि पुरश्चर्या प्रोक्ता किं श्रोतुमिच्छसि ॥

इति स्तवकवचसहस्रनामपुरश्चरणम् ।

अनुक्तपुरश्चरणानां स्तवकवचादीनां पुरश्चरणमेतत् । उक्तपुरश्चरणानां तु तेषां कल्पोकमेव तत् कार्यम् ।

अथ कर्पूरस्तवपुरश्चरणं (वीरतन्त्रे)

देव्युवाच ।

कर्पूराख्यमिदं स्तोत्रं यदुक्तं भवता पुरा ।

षट्कर्मसाधनं तस्य प्रयोगं वद शङ्कर ॥

श्रीशिव उवाच ।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कर्पूरस्तवसाधनम् ।

सकृत् कृतेऽपि देवेशि काली तुष्टा भवेत् सदा ॥
 शनिभौमदिने देवि स्नात्वा प्रयतमानसः ।
 संपूज्य कालिकां देवीं सङ्कल्पं सम्यगाचरेत् ॥
 कृत्वा षोढादिकं देवि पठेत् स्तोत्रमनुत्तमम् ।
 अयुतैकप्रमाणेन तद्दशां हुनेत् सुधीः ॥
 तर्पणं चाभिषेकं च ब्राह्मणान् भोजयेत् ततः ।
 पश्चात् स्वकार्यसिद्ध्यर्थं प्रयोगानाचरेत् तथा ॥
 राज्ञो भये समुत्पन्ने दुर्भिक्षे शत्रुसंकटे ।
 त्रासोत्पन्ने महेशानि रोगशोकभये तथा ॥
 पठेत् स्तोत्रं महाकाल्याः सर्वशान्तिं प्रयच्छति ।
 कुमारीपूजनं चान्ते कर्त्तव्यं सुसमाहितः ॥
 एवं कृते महेशानि सम्यक् सिद्धिर्भवेद्भुवम् ।
 इति कर्पूरस्तवपुरश्चरणम् ।

अथ सप्तशतीस्तवविधानम् ।

(मुक्तावह्याम्)

सप्तशत्या विधानं तु शृणु वक्ष्यामि यत्नतः ।
 यज्ज्ञात्वा साधकश्रेष्ठः सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥

(मेरुतन्त्रे)

सप्तशत्यास्तु सकलं तत्त्वं वेद्म्यहमेव हि ।
 पादोनं श्रीहरिवेत्ति वेत्त्यर्थं तु प्रजापतिः ॥
 व्यासस्तुर्यांशकं वेत्ति कोट्यंशमितरे जनाः ।

(वाराहीतन्त्रे)

ऋषिच्छन्दादिकं न्यस्य पठेत् स्तोत्रं विचक्षणः ।
 ऋष्यादिन्यास उक्तो (मेरुतन्त्रे)
 सप्तशत्याश्चरित्रे तु प्रथमे पद्मभूर्मुनिः ।

छन्दो गायत्रमुदितं महाकाली तु देवता ॥
 वाग्बीजं पावकस्तत्त्वं धर्मार्थे विनियोजनम् ।
 मध्यमस्य चरित्रस्य मुनिर्विष्णुरुदाहृतः ॥
 उष्णिक् छन्दो महालक्ष्मीर्देवता बीजमद्रिजा ।
 वायुस्तत्त्वं धनप्राप्त्यै विनियोग उदाहृतः ॥
 उत्तरस्य चरित्रस्य मुनिः शङ्कर उच्यते ।
 महासरस्वती देवी त्रिष्टुप् छन्द उदाहृतम् ॥
 कामो बीजं रविस्तत्त्वं कामाप्राप्त्यै विनियोजनम् ।
 तन्त्रान्तरे ।

नवार्णमन्त्रवर्णैस्तु षडङ्गन्यासमाचरेत् ।
 देवतात्रयध्यानानि (दुर्गाप्रकरणे) प्रोक्तानि ।

अथ पाठक्रमो (वाराहीतन्त्रे)

आधारे स्थापयित्वा तु पुस्तकं वाचयेत् ततः ।
 हस्तसंस्थापनादेवि भवेदर्धफलं यतः ॥
 यावन्न पूर्यतेऽध्यायस्तावन्न विरमेत् पठन् ।
 यदि प्रमादादध्याये विरामो भवति प्रिये ॥
 पुनरध्यायमारभ्य पठेत् सर्वं मुहुर्मुहुः ।
 अनुक्रमात् पठेदेवि शिरःकम्पादिकं त्यजेत् ॥
 (महाकालसंहितायाम्) ।

ब्राह्मणान् वरयित्वैवं वस्त्रालङ्करणसनैः ।
 विदध्यात् कामनोल्लेखं पूजां शक्त्या च पुस्तके ॥
 शनैः पठेत् पाठकोऽपि वर्णोच्चारणपूर्वकम् ।
 सुव्यक्तं नापि विश्लिष्टं न शिरश्चारणीवत् ॥
 तनुमान्दोलयन्नापि न हसन्न रुदन् व्रजन् ।

नाश्वन्नान्यैरालपँश्च न मध्ये छिन्नवत् तथा ॥
आचान्तः कृतशौचश्च पदोरुद्धमनीयवान् ।
एतेन विधिनाऽधीते तुष्यते जगदम्बिका ॥
यथोक्तफलदात्री च भवति प्राणवल्लभे ।

(वाराहितन्त्रे)

प्रणवं चादितो दत्त्वा स्तोत्रं वा संहितां पठेत् ।
अन्ते च प्रणवं दद्यादित्युवाचादिपुरुषः ॥

तथा ।

स्वयं च लिखितं यच्च शूद्रेण लिखितं भवेत् ।
अब्राह्मणेन लिखितं तच्चापि विफलं भवेत् ॥
स्तोत्रे न दृश्यते यत्र प्रणवं तत्र विन्यसेत् ।
सर्वत्र पाठे विज्ञेयस्त्वन्यथा विफलं भवेत् ॥

(देवीपुराणे)

वाचकं पूजयित्वा तु यथाविभवविस्तरैः ।
वाचयीत ततो राजन् देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ॥
तदन्ते शान्तिशब्दस्तु जनस्य सनृपस्य च ।
अनेन विधिना राजन् यः पठेच्छृणुयादपि ॥
चिन्तयेद्वाचयेद्वाऽपि तस्य पुण्यफलं शृणु ।
वाजपेयसहस्रस्य अश्वमेधशतस्य च ॥
यत् फलं लभते तात तत् फलं शतधा भवेत्-इत्यादि ।

(मरीचिकल्पे)

रात्रिसूक्तं जपेदादौ मध्ये सप्तशतीस्तवम् ।
प्रान्ते तु जपनीयं वै देवीसूक्तमिति क्रमः ॥
एवं संपुटितं स्तोत्रं सर्वकामार्थसिद्धये ।

अत्र रात्रिसूक्तं-च ।

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा-इत्यादि प्रथमचरित्रस्थस्तुतिरूपं देवीसूक्तम् ।

नमो देव्यै-इत्यादि तृतीयचरित्रस्थस्तुतिरूपमिति नागोजिमहोदयः ।

अन्ये तु सूक्तद्वयं वैदिकमेवेत्याहुः ।

(मेरुतन्त्रे)

मार्कण्डेयपुराणोक्तं नित्यं चण्डीस्तवं पठेत् ।

पुटितं मूलमन्त्रेण जपन्नाप्नोति वाञ्छितम् ॥

मूलमन्त्रस्तु दुर्गाप्रकरणोक्तो नवाणः ।

अथ पुरश्चरणं (मरीचिकल्पे)

कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशीम् ।

वृद्ध्यैकोत्तरया जाप्यं पूर्वसंपुटितं तु तत् ॥

एवं देवि मया प्रोक्तः पौरश्चरणिकः क्रमः ।

तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पायसैः ॥

* रात्रिसूक्तं प्रति-ऋचं तथा देव्यास्तु सूक्तकम् ।

प्रतिश्लोकेनेति । तस्य (कात्यायनीतन्त्रो-)कमन्त्रविभागेन । तदज्ञाने तु श्लोकेनैव होमः कार्य इति साम्प्रदायिकाः ।

नवरात्रे प्रकारान्तरेण पुरश्चरमुक्तं तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि नवरात्रविधानकम् ।

जपेदेकोत्तरां वृद्धिं दिनानि नवसंख्यया ॥

नवाक्षरीविधानेन संपूज्याथ विचक्षणः ।

सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं प्रत्येकं च यथाविधि ॥

हुत्वा दशांशतो होमं तत्र सिद्धिमवाप्नुयात् ।

इति पुरश्चरणम् ।

अथ प्रसङ्गाच्छतचण्डीविधिर्लिख्यते ।

तथा च (मेरुतन्त्रे)

शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम् ।

* रात्रिं प्रपद्य-इत्यादि रात्रिसूक्तम् । † अहं रुद्र-इत्यादि देवीसूक्तम् ।

नृपोपद्रवमापन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने ॥
 अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ।
 सर्वे विघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौ कृते ॥
 रोगाणां वैरिणां नाशो धनपुत्रसमृद्धयः ।
 शङ्करस्य भवान्या वा प्रसादनिकटे शुभम् ॥
 मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्यात् सध्वजतोरणम् ।
 तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ॥
 स्नात्वा नित्यकृतिं कृत्वा योजयेद्दशवाडवान् ।
 जितेन्द्रियान् सदाचारान् *कुलीनान् सत्यवादिनः ॥
 व्युत्पन्नाँश्चण्डिकापाठे रतान् लज्जादयावतः ।
 मधुपर्कविधानेन वस्त्रस्वर्णादिदानतः ॥
 जपार्थमासनं मालां दद्यात् तेभ्योऽपि भोजनम् ।
 ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ॥
 भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम् ।
 मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः ॥
 नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चायुतं †क चित् ।

वाडवा विप्राः ।

अत्र च ।

पञ्चभिः सप्तभिर्वाऽपि नवैकादशभिस्तथा ।
 अदीर्घदिवसे क्षिप्रं विदध्याच्चण्डिकामखम् ॥
 अयुग्मब्राह्मणैः कार्यं शतावृत्तं सुसिद्धये ।
 त्रिपञ्चसप्तनवभिर्दिनैः पक्षेण वा पुनः ॥
 देवीमाहात्म्यपाठं तु युगैर्विप्रैः कृतं च यत् ।

* कृतज्ञान इति २ पु० पा० ।

† पृथक् इति ४ पु० पा० ।

निष्फलं च भवेत् सर्वं भूतिनाशं च प्राप्नुयात् ॥

इति यद्वचनत्रयं क्रोडतन्त्रनाम्ना पठ्यते तत् तु निर्मूलम् । तन्त्रानुपलम्भादने-
कतन्त्रविरोधान्च ।

तथा ।

यजमानः पूजयेच्च कन्यानां दशकं शुभम् ।

द्विवर्षाद्या दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् ॥

तथा ।

विप्रां सर्वेष्टसंसिद्धयैः यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।

वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥

द्विवर्षादीनां प्रत्येकं नामानि ।

द्विवर्षा सा कुमार्युक्ता त्रिमूर्तिर्हायनत्रिका ।

चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ॥

षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायना ।

अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद्दुर्गा तु नवहायना ॥

शुभदा दशवर्षाक्ता ता मन्त्रैः परिपूजयेत् ।

एकाब्दायाः प्रीत्यभावो रुद्राब्दा तु विवर्जिता ॥

मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् ।

नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम् ॥

कुमारिकादिकन्यानां पूजामन्त्रान् ब्रुवेऽधुना ।

जगत्पूज्ये जवह्न्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ॥

पूजां गृहाण कौमारि जगन्मात्रे नमोऽस्तु ते ।

त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम् ॥

त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ।

कलात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् ॥

कल्याणजननीं नित्यां कल्याणीं पूजयाम्यहम् ।
 अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम् ॥
 अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ।
 कामचारों गुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम् ॥
 कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ।
 चण्डबीजां चण्डमयीं चण्डमुण्डप्रभञ्जनीम् ॥
 पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम् ।
 सदानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम् ॥
 सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ।
 दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवदुःखविनाशिनीम् ॥
 पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गतिनाशिनीम् ।
 सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम् ॥
 सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ।
 एतैर्मन्त्रैर्लक्षणाढ्यां तां तां कन्यां समर्चयेत् ॥
 गन्धैः पुष्पैर्भक्ष्यभोज्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि ।
 वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले ॥
 घटं संस्थाप्य विधिवत् तत्रावाह्यार्चयेच्छिवाम् ।
 तदग्रे कन्यकाश्चापि भोजयेद्वाह्मणानपि ॥
 उपचारैश्च विविधैः पूर्वोक्तावरणान्यपि ।
 एवं चतुर्दिनं कृत्वा पञ्चहोमान् समाचरेत् ॥

एतेन प्रथमेऽहि प्रत्येकमेकैकावृत्तिः । द्वितीये द्वे द्वे । तृतीये तिस्रस्तिस्रः ।
 चतुर्थे चतस्रश्चतस्र इत्युक्तं भवति ।

तदुक्तं (रुद्रयामले)

एकं द्वे त्रीणि चत्वारि जपेद्दिनचतुष्टये ।

पञ्चमे दिवसे प्रातर्होमं कुर्याद्विधानतः—इति ॥

अथ ब्राह्मणहोमद्रव्याण्युक्तानि (मेखतन्त्रे)

पायसान्नैस्तु मध्वक्तैर्द्राक्षारम्भाफलैरपि ।

मातुलुङ्गैरिशुखण्डैर्नारिकेलैः पुरैस्तिलैः ॥

जातीफलैराम्रफलै रम्यैर्मधुरवस्तुभिः ।

सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिश्लोकं हुतं चरेत् ॥

अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः ।

होमविधौ यो विशेषः स चाग्रे वक्ष्यते मया ॥

कृत्वाऽऽवरणदेवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ।

कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग्देवमग्निं विस्तृज्य च ॥

अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः ।

अभिषेकमन्त्रास्तु ।

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीम्—इत्यादि ।

देव्या यया ततमिदम्—इत्यादि ।

नमो देव्यै महादेव्यै—इत्यादि ।

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद—इति चत्वारः श्लोकाः ।

निष्कं सुवर्णमथ वा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ।

(मारीचिकल्पे तु)

पञ्चस्वर्णाः शतावृत्ते पक्षावृत्ते तु तत्रयम् ।

पञ्चावृत्ते स्वर्णमेकं त्रिरावृत्ते तदर्धकम् ॥

एकावृत्ते पादमेकं दद्याद्वा शक्तितो बुधः—इत्युक्तम् ।

(कात्यायनीतन्त्रे)

एकैकं दशविप्रेभ्यो दद्याद्दोमिथुनं समम् ।

निष्कत्रयसमायुक्तं वस्त्रालङ्कारभूषितम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

भोजयेच्च पृथग्विप्रान् भक्ष्यभोज्यैः पृथग्विधैः ।
तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्वा गृह्णीयादशिषस्तथा ॥
एवं कृते जगद्भयं सर्वं नश्यन्त्युपद्रवाः ।
राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्नं लभेत च ॥

(कात्यायनीतन्त्रे)

यद्यत् कार्यं समुद्दिश्य क्रियते शतचण्डिका ।
तत् तत् तस्य महालक्ष्मीः सत्यमाशु प्रयच्छति ॥

अथ सहस्रचण्डीविधानमुक्तं (मेरौ)

एतद्दशगुणं कुर्याच्चण्डीसाहस्रजं विधिम् ।
विद्यावतः सदाचारान् ब्राह्मणान् वृणुयाच्छतम् ॥
प्रत्यहं चण्डिकापाठान् विदध्युस्ते दशामितान् ।
अयुतं प्रजपेयुस्ते प्रत्येकं नववर्णकम् ॥
पूर्वोक्ताः कन्यकाः पूज्याः पूर्वमन्त्रैः शतं शुभाः ।
एवं दशाहं संपाद्य होमं कुर्युः प्रयत्नतः ॥
सप्तशत्याः शतावृत्त्यां प्रतिश्लोकं विधानतः ।
लक्षसंख्यं नवार्णं च पूर्वोक्तैर्द्रव्यसंचयैः ॥
होतृभ्यो दक्षिणां दत्वा पूर्वोक्तान् भोजयेद्द्विजान् ।
सहस्रसंमितान् साधून् देव्याराधनतत्परान् ॥
एवं सहस्रसंख्याते कृते चण्डीविधौ नृणाम् ।
सिद्ध्यत्यभीप्सितं सर्वं दुःखौघश्च विनश्यति ॥
मारीदुर्भगरोगाद्या नश्यन्ति व्यसनोच्चयाः ।

(रुद्रयामले)

राज्यभ्रंशे महोत्पाते जनमारे महाभये

गजमारोऽश्वमारो च परचक्रभये तथा ॥

इत्यादिविविधे दुःखे क्षयरोगादिजे भये ।

सहस्रचण्डिकापाठं कुर्याद्वा कारयेत् तथा ॥

(मेरुतन्त्रे)

नेमं विधिं वदेद्दुष्टे खले चोरे गुरुद्रुहि ।

साधौ जितेन्द्रिये दान्ते वदेद्विधिमिमं परम् ॥

एवं सा चण्डिका तुष्टा वक्तृन् श्रोतृन् प्ररक्षति ।

अथ होमविधिः ।

चतुरस्रे समे कुण्डे समन्ताद्धस्तमात्रके ।

एकावरणसंयुक्ते योनिमण्डलमण्डिते ॥

दशांशविधिना होममुक्तहव्येन साधयेत् ।

निर्यचण्ड्यां नवचण्ड्यां कुण्डमेवंविधं स्मृतम् ॥

एतद्द्विगुणितं कुण्डं शतचण्ड्यां प्रकीर्तितम् ।

संस्कारैरष्टभिः कुण्डं संस्कृत्याग्निं निधापयेत् ॥

कुण्डमध्ये भुवं दग्धैः परिमार्ज्य प्रलेपयेत् ।

प्रागग्राः सुवमूलेन रेखास्तिस्रः समुल्लिखेत् ॥

पांशुमुद्धृत्य रेखाणामभ्युक्षणमतः परम् ।

कुण्डस्य पूजनं षष्ठः सप्तमः सप्तमुद्रया ॥

अस्त्रावगुण्ठितं कुण्डे संस्कारश्चाष्टमः स्मृतः ।

अष्टमङ्गलनामानं कुण्डेऽग्निं सन्निधापयेत् ॥

अत्र सर्वत्र मायाबीजमन्त्रः ।

चण्डिकापाठसंपूर्णे ब्रह्माणं दक्षिणे द्विजम् ।

ततस्तदग्निमतं कुण्डं नववस्त्रेण भूषयेत् ॥

कुण्डस्योत्तरतः स्थाप्या प्रणीता वारिपरिता ।

प्रणोतापात्रतः सर्वे स्थाप्याः पात्रगणाः क्रमात् ॥
 आज्यस्थाली चरुस्थाली गव्यक्षीरसमन्विता ।
 सुक्स्तुवौ च घृतं गव्यं तण्डुलाः कुशमूलकाः ॥
 पालाशाः समिधस्तिस्रः पूर्णपात्रमतः परम् ।
 सप्तद्वीपेश्वरीं ध्यात्वा गृहीत्वा कुशमूलकम् ॥
 निःक्षिपेत् प्रोक्षणीपात्रे वारुणं बीजमुच्चरेत् ।
 तेन दर्भसमूहेन शतसंख्येन चेश्वरि ॥
 क्रमात् पात्राणि संप्रोक्षन् प्रोक्षणीपात्रवारिणा ।
 आज्यपात्रे चरुस्थाल्यां निःक्षिपेद्घृततण्डुलम् ॥
 यथाक्रमेण कर्त्तव्यं ततोऽधिश्रयणं तयोः ।
 आदौ वै पायसं कार्यं पर्यग्निकरणं तयोः ॥
 सव्यं पालाशकाष्ठेन त्रिभिर्दर्भैश्च सोज्ज्वलम् ।
 सुवयोः स्थापनं कृत्वा दक्षिणे स्थापनं कृतम् ॥
 उद्वास्य प्रथमं पूर्वादानीयाग्नेः प्रदक्षिणम् ।
 कुण्डाचार्यान्तरे स्थाप्यं स्वबीजजपगौरवात् ॥

स्वबीजं त्वमृतबीजम् ।

अभिघार्य स्वबीजेन वायव्ये स्थापयेच्चरुम् ।
 तिष्ठन् पालाशसमिधो मौनी वैश्वानरे क्षिपेत् ॥
 कुशमूलकयुक्ताभिः प्रोक्षिष्यद्भिः प्रदक्षिणम् ।
 पर्युक्ष्याग्निं प्रणीतायां निःक्षिपेत् कुशमूलकम् ॥
 निधाय दक्षिणं जानु भूमावग्निसुखं हुनेत् ।
 अन्वारब्धस्तुवेणाज्यं निर्धूमे हव्यवाहने ॥
 प्रजापतिं महाकालीं महालक्ष्मीं सरस्वतीम् ।

एतदग्निमुखं प्रोक्तं मायाबीजपुरस्सरम् ॥

संश्रवान् प्रोक्षणोपात्रे निःक्षिपेद्यज्ञसाधनान् ।

विदध्यात् कल्पितं होममुक्तेन हविषा शमी ॥

कल्पितं सङ्कल्पितमित्यर्थः ।

ततः स्विष्टकृतं दद्याद्धविषा खोज्ज्वलेऽनले ।

मायाबीजं ब्रह्माणीमाहेश्वरीकौमारीवैष्णवीनारसिंही-ऐन्द्री-
चामुण्डायै विन्चे विष्टेते स्वाहा ।

एष प्रोक्तो महादेवीमन्त्रः स्विष्टकृदाहुतौ ।

आज्येन नवाहुतिकं मायाबीजादिनामभिः ॥

नन्दारक्तदन्तिकाशाकम्भरोदुर्गाभीमाश्रामरीकालीशिवदूती-
चामुण्डायै प्रजापतिभ्यः ।

गन्धपुष्पफलोपेतां कृत्वा यज्ञारिमकां श्रुचम् ।

ततः पूर्णाहुतिं दद्याद्दधृतेनाच्छिन्नधारया ॥

नवाक्षरेण मन्त्रेण महालक्ष्मीपरायणः ।

ध्यात्वा यज्ञपुरोडाशममृतं देवदुर्लभम् ॥

प्रोक्षणीपात्रमध्यस्थान्मन्त्रेणाश्नाति संस्त्रवात् ।

यस्मात् प्राशस्तं संस्त्रवपुरोडाशं प्राश्नामि सुखपुण्यदम्-इति

मन्त्रः ।

सलिलेन प्रणीतायास्तीर्थध्यानपरायणः ।

करोति सार्जनं दभैः शतेन श्लोकपाठतः ॥

याः शिवाः शक्तयो याश्च ताभिश्च सविता सह ।

याश्च याः सन्निधानस्थास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्-इति ॥

संस्त्रक्षोर्निखिलं विश्वं मुहुः शुक्रं प्रजापतेः ।

मातरः सर्वभूतानामापो देव्यः पुनन्तु माम् ॥

अलक्ष्मीं मलरूपां याः सर्वभूतेषु संस्थिताम् ।

क्षालयन्ति जलस्पर्शादापो देव्यः पुनन्तु माम्—इति मन्त्रः ॥

अभिषिञ्चेदथात्मानं चतुर्भिश्चण्डिकास्तवैः ।

शूलेन पाहि नो देवीत्यादिश्लोकचतुष्टयम् ॥

अत्र त्रिककर्तृयजमानाभिषेके तु पूर्वोक्तश्लोकचतुष्टयमेव ।

दानं दद्याद्विधानेन हेमधेन्वम्बरादिकम् ।

सजपं होममावेद्य महालक्ष्मीं प्रणम्य च ॥

शूलेन पाहि नो देवीत्येतैः श्लोकैः प्रदक्षिणम् ।

विदध्यात् सुस्थिरो भूत्वा चण्डिकाध्यानतत्परः ॥

इत्येतैः—शूलेन—इत्यादिभिः तैरस्माज्जक्ष सर्वतः—इत्यन्तैरित्यर्थः ।

नमो देव्या इति श्लोकैः पञ्चभिर्ध्यानतत्परः ।

कृत्वा पञ्चनमस्कारानुपविश्यासने शुभे ॥

सर्वस्वरूपे इत्यादिषड्भिः श्लोकैः कृताञ्जलिः ।

प्रार्थयेज्जगतां धात्रीं प्रणतः सन् हृदीप्सितम् ॥

स्वशरीरे समारोप्य दद्यादस्यै विसर्जनम्—इति ।

अनेन विधिना यस्तु प्रकुर्याच्चण्डिकार्चनम् ॥

तस्य तुष्टा महालक्ष्मीः सर्वान् कामान् प्रयच्छति ।

इति होमविधिः ।

(प्रयोगसारे)

चण्डीपाठफलं राजन् शृणुष्व गदतो मम ।

एकावृत्यादिपाठानां प्रत्यहं पठतां नृणाम् ॥

सङ्कल्पपूर्वं सम्पूज्य न्यस्याङ्गेषु मनून् सकृत् ।

पश्चाद्द्वलिप्रदानेन फलमाप्नोति मानवः ॥

उपसर्गोपशान्त्यर्थं त्रिरावृत्तं पठेन्नरः ।

ग्रहदोषोपशान्त्यर्थं पञ्चावृत्तं वरानने ॥
 महाभये समुत्पन्ने सप्तावृत्तमुदीरयेत् ।
 नवावृत्त्या भवेच्छान्तिर्मुच्येत् प्राणार्त्तिजान्नयात् ॥
 राजवश्याय भूतै च रुद्रावृत्तमुदीरयेत् ।
 अर्कावृत्त्या काम्यसिद्धिर्वैरिनाशश्च जायते ॥
 मन्त्रावृत्त्या रिपुर्वश्यस्तथा स्त्रीवश्यतामियात् ।
 सौख्यं पञ्चदशावृत्त्या श्रियं प्राप्नोति मानवः ॥
 कलावृत्त्या पुत्रपौत्रधनधान्यागमं विदुः ।
 राजभीतिविनाशाय वैरस्योच्चटनाय च ॥
 कुर्यात् सप्तदशावृत्तं तथाऽष्टादशकं प्रिये ।
 महार्णवविमोक्षाय विंशावृत्तं पठेन्नरः ॥
 पञ्चविंशावर्त्तनाच्च भवेद्बन्धविमोक्षणम् ।
 सङ्गटे समनुप्राप्ते दुश्चिकित्सामये तदा ॥
 जातिध्वंसे कुलच्छेदे आयुषो नाश आगते ।
 वैरिवृद्धौ व्याधिवृद्धौ धननाशे तथा क्षये ॥
 तथैव त्रिविधोत्पाते तथा चैवातिपातके ।
 कुर्याद्यत्नाच्छतावृत्तं ततः सम्पद्यते शुभम् ॥
 विपदस्तस्य नश्यन्ति अन्ते याति परां गतिम् ।
 श्रियो वृद्धिः शतावृत्त्या राज्यवृद्धिस्तथा परा ॥
 मनसा चिन्तितं देवि सिद्ध्येदष्टोत्तराच्छतात् ।
 शताश्वमेधयज्ञानां फलं प्राप्नोति सुव्रते ॥
 सहस्रावर्त्तनगल्लक्ष्मीरावृणोति स्वयं स्थिरा ।
 भुक्त्वा मनोगतान् कामान् नरो मोक्षमवाप्नुयात् ॥

यथाऽश्वमेधः क्रतुषु देवानां च यथा हरिः ।
 स्तवानामपि सर्वेषां तथा सप्तशतीस्तवः ॥
 नातः परतरं स्तोत्रं किञ्चिदस्ति वरानने ।
 भुक्तिमुक्तिप्रदं पुण्यं पावनानां च पावनम् ॥
 अथ वा बहूनोक्तेन किमेतेन वरानने ।
 चण्डिकायाः शतावृत्या सर्वाः सिद्ध्यन्ति सिद्धयः ॥

(मेघतन्त्रे)

कलौ न चण्डीसदृशी सिद्धदा भुवनत्रये ।
 वामदक्षिणमार्गाभ्यामधिकारिफलप्रदा ॥
 तत्रादिसं चरित्रं तु रोगनाशाय योजयेत् ।
 उपसर्गविनाशाय मध्यमं योजयेद्बुधः ॥
 अन्त्यं विषमकामस्तु चरित्रं परिशीलयेत् ।
 चरित्रद्वयशीलस्य न वंशश्छिद्यते क्वचित् ॥
 पठेदाद्यन्तचरितं विपत्तिस्तस्य नश्यति ।
 अनाद्यं पठते यस्तु मारयेदचिराद्रिपून् ॥
 स्वार्थानुसारपद्यं च सप्तशत्यास्तु योजयेत् ।
 यस्तन्मन्त्रेण पुटितं तत्प्रस्ताराङ्कसंख्या ॥
 पठेच्चण्डीं तथाऽऽद्यन्ते स कामस्तस्य सिद्ध्यति ।
 स्वशत्रून् दैत्यभावेन स्वमित्रान् देवताधिया ॥
 भावयन् योजयेच्चण्डीं त्रिसन्ध्यं मासमात्रकम् ।
 मृता वा मृतकल्पा वा शत्रवः स्युर्न संशयः ॥
 सितपक्षतिमारभ्य चाष्टम्यन्तमिषस्य यः ।
 जपेच्छं मनुं होमं स्वाद्यैस्त्रिमधुराहुतैः ॥

प्रत्यहं पूजयेद्देवीं चण्डीमाद्यन्तयोः पठेत् ।

विप्रान् गुरुं समाराध्य वाञ्छितं लभते द्रुतम् ॥

अथ (कात्यायनीतन्त्रो-)क्ताः कति चित् प्रयोगा लिख्यन्ते ।

प्रतिमन्त्रमाद्यन्तयोः प्रणवं—जपेन्मन्त्रसिद्धिः ।

सप्रणवव्याहृतित्रयमादावन्ते तु त्रिलोमं तदित्येवं प्रतिश्लोकं कृत्वा शतावृत्तपाठेऽतिशीघ्रं सिद्धिः ।

प्रतिश्लोकमादौ जातवेदसे इति ऋचं पठेत् सर्वकामसिद्धिः ।

अपमृत्युवारणायादावन्ते च शतं त्र्यम्बकं जपेत् ।

प्रतिश्लोकं शरणागतदीनार्त्त—इति श्लोकं पठेत् सर्वकार्यसिद्धिः ।

प्रतिश्लोकं करोतु सा नः शुभ—इत्यर्थं पठेत् सर्वकामाप्तिः ।

स्वामीष्टव्रप्राप्त्यै एवं देव्या वरं लब्ध्वा—इति श्लोकं पठेत् ।

सर्वापन्निवारणाय प्रतिश्लोकं—दुर्गे स्मृता—इति पठेत् ।

अस्य केवलस्यापि श्लोकस्यापि कामानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः ।

सर्वबाधा—इत्यस्य लक्षजपे श्लोकोक्तं फलम् ।

इत्थं यदा यदा—इति श्लोकस्य लक्षजपे महामारीशान्तिः ।

ततो वव्रे नृपो राज्यं—इति मन्त्रस्य लक्षजपे पुनः स्वराज्यलाभः ।

हिनस्ति दैत्यतेजांसि—इत्यनेन सदीपबलिदाने घण्टाबन्धने च बालग्रहशान्तिः ।

आद्यावृत्तिमनुलोमेन पठित्वा ततो विपरीतक्रमेण पुनरनुलोमेन वामावृत्तित्रय उक्तप्रकारेषु शीघ्रं सिद्धिर्भवति ।

सर्वापन्निवारणाय—दुर्गे स्मृता—इत्यर्थम् ।

ततो यदन्तिके यच्च दूरके—इत्युचं तदन्ते—दारिद्र्यदुःख—इत्यर्थमेव कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः ।

मारणार्थम् एवमुक्त्वा समुत्पन्ना—इति प्रतिश्लोकं पठेत् । मारणोक्तावृत्तिभिः फलसिद्धिः ।

ज्ञानिनामपि चेतांसि-इति श्लोकत्रयमात्रेण सद्यो मोहनमित्यनुभव-
सिद्धम् ।

प्रतिमन्त्रं तच्छ्लोकपाठे त्ववश्यम् ।

रोगानशेषा-इति श्लोकस्य प्रतिश्लोकपाठे सकलरोगनाशः तन्मात्रजपेऽपि
समं फलम् ।

इत्युक्त्वा सा तदा देवी गम्भीरा-इति श्लोकस्य प्रतिश्लोकपाठे यथा
जपे वा विद्याप्राप्तिः वाग्वैद्वतेर्नाशश्च ।

भगवत्या कृतं सर्वम्-इत्यादिद्वादशोत्तरशताक्षरो मन्त्रः सर्वकामदः
सर्वापन्निवारणश्च ।

देवि प्रपन्नार्त्तिहरे-इति श्लोकस्य यथाकार्यं लक्षायुतसहस्रशतान्यमे जपे
प्रतिश्लोकपाठे वा सर्वापन्नवृत्तिः सर्वकामाप्तिश्च ।

पशु प्रयोगेषु प्रतिश्लोकं दीपाग्रे केवलमेव वा नमस्कारकरणेऽतिशीघ्रं सिद्धिः ।
अत्र सर्वत्र प्रयोगे त्रयोदशपात्रेषु एकस्मिन्नेव पात्रे वा त्रयोदशदीपाः प्रदेयाः ।

प्रतिश्लोकं कामबीज-संपुटितस्यैकचत्वारिंशद्दिनं त्रिरावृत्तौ सर्वकामसिद्धिः ।

एकविंशतिदिनपर्यन्तमुक्तरीत्या प्रत्यहं दशावृत्तौ वशीकरणम् ।

मायाबीज-पुटितस्य फट्पल्लव-सहितस्य सप्तदिनपर्यन्तं त्रयोदशावृत्तप-
ठने उच्चाटनसिद्धिः ।

तादृशस्यैव दिनचतुष्टयमेकादशावृत्तौ सर्वापद्रवनाशः ।

एकोनपञ्चशद्दिनपर्यन्तं प्रतिश्लोकं श्रीबीज-संपुटितस्य पञ्चदशावृत्तौ लक्ष्मी-
प्राप्तिः ।

प्रतिश्लोकं वाग्भवबीज-संपुटितस्य शतावृत्त्या विद्याप्राप्तिः ।

अथ परार्थे प्रयोगे-

ॐ पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसु-
नीथ यज्ञैः । धृतेन त्वं तन्ववर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ।

इति वैदिकमन्त्रं प्रत्यध्यायं प्रत्यावृत्तिं वा पठेत् ।

नवघर्णमन्त्रपुटितप्रयोगस्तु कामानामात्रे कर्तव्यः ।

तदुक्तं (वाराह. तन्त्रादौ)

शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं नवाक्षरम् ।

चण्डीसप्तशतीमध्ये संपुटोऽयमुदाहृतः ॥

सकामैः संपुटो जाप्यो निष्कामैः संपुटं विना ।

सर्वकामप्रसिद्ध्यर्थं नवार्णपुटितं जपेत्-इति ॥

अत्र नवार्णमन्त्रौ प्रसिद्धौ । तत्रैको दुर्गाप्रकरणे उक्तः ।

अन्यस्तु (वाराहीतन्त्रे)

वेदादिर्वाग्भवं चैव माया कामस्तथैव च ।

पृथ्वी रेफो वामनेत्रं नादविन्दुविभूषितम् ॥

माया कामो नमः पश्चान्मूलमन्त्र उदाहृतः ।

अस्य पुरश्चरणमपि तत्रैवोक्तम् ।

लक्षं जपेन्मूलमन्त्रं सर्वकामार्थसिद्ध्यै-इति ।

(कात्यायनीतन्त्रे)

स्थितिक्रमो भुक्तिकामे मुक्तिकामे च संहतिः ।

श्रीकामे पुष्टिकामे च सृष्टिक्रम उदाहृतः ॥

सृष्टिक्रमादयश्च तत्रैवोक्ताः ।

आदिमारभ्य प्रजपेत् सृष्टिक्रम इहोच्यते ।

जपेच्छक्रादिमारभ्य शुम्भदैत्यबधावधि ॥

आद्याच्छक्रादिपर्यन्तं स्थितिक्रम उदाहृतः ।

शेषमारभ्य आद्यन्तं संहारोऽयं क्रमो भवेत् ॥

(मेरुतन्त्रे) चरित्रत्रयप्रयोगसंख्यां यथाक्रममुक्त्वा-

एवं सप्तशतं चात्र प्रयोगाः परिकीर्तिताः ।

तस्मात् सप्तशतीत्येतत् प्रोक्तं व्यासेन धीमता ॥

(कात्यायनीतन्त्रे) तु सप्तशतहोममन्त्रा एवास्य सप्तशतोत्पद्यवह्निप्रयोजका इत्युक्तम् ।

ते च मन्त्रास्तत्रैव ।

मार्कण्डेय-ऋषिप्रोक्तप्रथमश्लोकतः प्रिये ।

व्योमादिवर्णसम्भूतो द्वितीयस्वरसंयुतः ॥

व्योम हकारस्तस्यादिः सकारः । द्वितीयस्वर आकारः । तेन सा इति ।
तथा ।

नृपान्तं प्रवदेन्मन्त्राः सर्वे चाष्टादश प्रिये ।

वैश्योवाच *ततः श्लोका व्योमाद्याः पञ्च मन्त्रकाः ॥

व्योमाद्य आद्यो येषामिति मृगनयनावत् समासः ।

नृपस्योक्तिर्मान्तवर्णो द्वादशस्वरसंयुतः ।

मान्तवर्णो यकारः । स च द्वादशस्वरेण ऐकारेण युक्तः ।

सकारो विन्दुसंयुक्तश्चान्ते स मनुरीदृशः ।

वैश्योवाच पुनर्देवि स्वरैकादश आदितः ॥

स्वरैकादश एकारः ।

वह्निबीजं विन्दुयुक्तमन्ते स्यान्मनुपञ्चकम् ।

वह्निबीजं रमिति ।

मार्कण्डेय-ऋषिप्रोक्तं मन्त्रत्रयमुदाहृतम् ।

तादिवर्णं च भुवनस्वरयुग्वाहनं परम् ॥

भुवनस्वर औ । तद्युक्तं वाहनं वौ इति ।

राजोवाचेति षण्मन्त्रा भादितान्ताः शुभानने ।

अथोवाच ऋषिर्ज्ञानमस्तीत्यादि सुरेश्वरि ॥

सर्वेश्वरेश्वरी चान्ते मन्त्रा वै द्वादश स्फुटाः ।

राजोवाचेति भगवन्नादिरन्ते विदां वरम् ॥

मन्त्रत्रयमिदं ख्यातं तत ऋषिरुवाच ह ।

नित्यैव सा पदं चादौ प्रभुरन्तेऽष्टमन्त्रकाः ॥

ब्रह्मोवाच ततश्च त्वं स्वाहादिश्च महासुरौ ।

अन्ते पञ्चदशैते स्युर्मन्त्राः स्युः परमेश्वरि ॥

एवं स्तुतादि-ऋष्युक्तिवान्तमन्त्राश्च सप्त वै ।

* वैश्य उवाचेत्यत्र वैश्योवाचेति पाठस्त्वान्त्रिकः ।

ततो भगवदुक्तिश्च भवेतादिमनुद्वयम् ॥
 वञ्चितेति च ऋष्युक्तिर्मन्त्रौ द्वौ परमेश्वरि ।
 ऋष्युक्तिश्च तथेत्यादि मन्त्रद्वयमुदाहृतम् ॥
 सर्वे श्लोकास्त्विहाध्याये अष्टयुक् सप्ततिः क्रमात् ।
 मध्ये चतुर्विंशतिका अर्धमन्त्राः प्रकीर्त्तिताः ॥
 सर्वाश्चाहुतयो जेयाश्चतुरुत्तरकं शतम् ।
 उवाचान्तास्तत्र बोध्याः मन्त्रा भुवनसंख्यकाः ॥
 इति प्रथमचरित्रमन्त्रनिर्णयः ।

ईश्वर उवाच ।

द्वितीये ऋषिरुवाचेति नवषष्ठ्याहुतिः क्रमात् ।
 ततस्तृतीयेऽध्याये तु ऋषिरुवाचेति देशिकैः ॥
 षट्त्रिंशच्च तथा मन्त्राः श्लोका जेया वरानने ।
 देव्युवाचेति मन्त्रान्ते मन्त्रः श्लोको मतः प्रिये ॥
 ऋषेरुक्तिः पुनः श्लोकाः पञ्च मन्त्राः सनातनाः ।
 एवमाहुतयस्तत्र चत्वारिंशच्चतुर्युतम् ॥
 चतुर्थे क्रमतो देवि ऋष्युक्तिः षट् च विंशतिः ।
 पुनस्तथैव ऋष्युक्तिः श्लोकौ द्वौ मन्त्ररूपिणौ ॥
 एवं स्तुतेति मन्त्रोऽयमतिगुह्यः शुभानने ।
 देव्युवाचेति त्रियतां मन्त्रोऽयं षोडशाक्षरः ॥
 देवा ऊचुस्ततश्चोक्त्वा भगवत्या कृतं वदेत् ।
 मन्त्रोऽयं शतवर्णाढ्यो द्वादशोत्तरयुक् पुनः ॥
 ततो-ऋषिरुवाचेति इति प्रसादितेति च ।
 चतुःसंख्यास्तु ते श्लोका मन्त्रास्तावन्त एव हि ॥

श्लोकाश्चतुर्थेऽध्याये तु षट्त्रिंशत् परमेश्वरि ।
अर्धमन्त्रद्वयेनैव चत्वारिंशद्वियुक् पुनः ॥
एवं मध्यचरित्रस्य पञ्चाशच्च शतोत्तरम् ।
तथा पञ्चशतं मन्त्रा महालक्ष्म्या विभेदतः ॥

इति मध्यमचरित्रमन्त्रनिर्णयः ।

ऋषिरुवाच त्रिपुरा विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ।
षण्मन्त्राः श्लोकरूपास्ते देवा ऊचुस्ततः परम् ॥
नमो देव्यादितः श्लोकास्त्रिंशद्दिनमर्त्तिभिः ।
विष्णुमायादितो भ्रान्तिरूपान्ते त्रीणि षष्टियुक् ॥
अवतारपृथङ्मन्त्रास्तेषां त्रिषष्टिराहुतीः ।
चित्तिरूपेण मन्त्रेण आहुतित्रयमाचरेत् ॥
एवं मन्त्रा अशीतिस्ते ऋषिरुवाच इत्यथ ।
एवं स्तवादियुक्तानां त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥
मन्त्राः सप्तदशैते तु ऋष्युक्तिर्निशम्येति वै ।
इत्यादित्रितयैर्मन्त्रैः शुद्धभेदाः प्रकीर्त्तिताः ॥
अथ दत्त उवाचेति देवि दैत्येश्वरः परम् ।
इत्यादिनवमन्त्राश्च पुनः ऋषिरुवाच ह ॥
इत्युक्तेत्यादिमन्त्रेण एकेन च सरस्वती ।
देव्युवाचेति श्लोकास्तु चत्वारो मन्त्रभेदतः ॥
दत्त उवाचेति पुनरवल्लिप्ताऽसि इत्यथ ।
मन्त्राश्चत्वारो विज्ञेया देव्युवाच ततः परम् ॥
एवमेतद्वली शुम्भो-स च युक्तं करोतु यत् ।
इति मन्त्रद्वयं श्लोका अर्धमन्त्राश्च ते नव ॥

एकोनत्रिंशच्च शतादधिका मन्त्ररूपकाः ।

इति पञ्चमोऽध्यायः ।

ऋषिरुवाचेत्याकर्णेति श्लोकाश्चत्वार ईरिताः ।

पुनः ऋषिरुवाचेति तेनाज्ञप्तस्ततः परम् ॥

मन्त्रत्रयमिदं प्रोक्तं देव्युवाचेति वै तथा ।

दैत्येश्वरेण प्रहितो—एको मन्त्रः प्रकीर्तितः ॥

ततश्च ऋषिरुवाच इत्युक्तः सोऽभ्यधावत ।

इत्यादिद्वादशश्लोकाः षष्ठेऽध्याये प्रकीर्तिताः ॥

चतुर्विंशतिभेदास्ता देवताहुतयः क्रमात् ।

इति षष्ठोऽध्यायः ।

ऋष्युक्तिराज्ञ—इत्यादित्रयोविंशतिमातरः ।

ऋषिरुवाच तावानीतो मातृभेदद्वयं क्रमात् ॥

सप्तविंशत्यत्र देवि भवन्त्याहुतयः क्रमात् ।

अत्राध्यायद्वये देवि धूम्राक्षी तु प्रकीर्तिता ॥

इति सप्तमोऽध्यायः ।

ऋषिश्चण्डे च निहते इत्याध्यायावसानकम् ।

त्रिषष्ट्याहुतयः प्रोक्ता एका त्वर्धाहुतिर्मता ॥

रक्ताक्षी देवता अष्टौ महाशक्त्यः प्रकीर्तिताः ।

इत्यष्टमोऽध्यायः ।

राजा विचित्रमित्यादि श्लोकद्वयमुदाहृतम् ।

ऋषिश्चकार कोपं हि इत्यादिश्लोकरूपतः ॥

एकचत्वारिंशदिह आहुतिर्नवमे शुभे ।

देवता भैरवी तावच्छृणु गोप्यं वरानने ॥

इति नवमोऽध्यायः ।

ऋषिर्निशुम्भनिहतमित्यादिद्वयमन्त्रकम् ।
 ततो देवीति मन्त्रौ द्वौ एकैवाहं मनूतमौ ॥
 पुनर्देव्येकमन्त्रेण व्यक्तमन्त्रा उदीरिताः ।
 ऋषिस्ततः प्रववृते सार्धद्वाविंशतिस्त्वयम् ॥
 द्वात्रिंशन्मनवस्तत्र एको ह्यर्धमनुर्मतः ।
 प्रथमं सिंहमासीना शूलपाशविधारिणी ॥
 मुख्या चतुर्भुजा बाणचापहस्ता शुभेक्षणा ।

इति दशमोऽध्यायः ।

ऋषिः सुमेधा विख्यातः प्रोक्तो देव्या हते शुभे ।
 चतुर्द्विंशत् तथा श्लोका मन्त्रास्तत्संख्यकाश्च ते ॥
 ततो देव्येकमन्त्रेण वरदाऽहं सुरेश्वरि ।
 देवा ऊचुस्तथा सर्ववाधाप्रशमनं तथा ॥
 श्लोकेनैकेन देवेशि देव्युवाच ततः परम् ।
 वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्तेत्यादिश्लोकाश्चतुर्दश ॥
 सार्धसर्वाहुतिर्देवि पञ्चाशत् पञ्चसंयुताः ।
 वैष्णवी देवता ह्यत्र महागरुडवाहिनी ॥

इत्येकादशोऽध्यायः ।

देव्युवाचेति च तत एभिः स्तवैश्च मां सदा ।
 दूरेत्यर्थेन सहिता अष्टाविंशतिरूपकाः ॥
 ततश्च ऋषिरुवाच इत्युक्त्वा श्लोकमादितः ।
 *ऊर्ध्वयुग्दशभिः श्लोकैर्मन्त्रास्तत्संख्यका मताः ॥
 एवं तु द्वादशाध्याये एकचत्वारिंशदाहुतीः ।

इति द्वादशोऽध्यायः ।

* ऊर्ध्वयुग्मभिः इति २, ५ पु० पा० ।

ततस्तयोदशोऽध्याये ऋषिरुवाच इत्यथ ।

एतत् ते कथितं भूपेत्यादिसार्धत्रयं मनुः ॥

मनुचतुष्टयमित्यर्थः ।

मार्कण्डेय उवाचेति ततो वब्रे मनुद्वयम् ।

देव्युवाच पुनश्चैव स्वरूपलोकत्रयेण वै ॥

अर्धानामेव मन्त्रवान्भवत्यत्र षडाहुतिः ।

षट्संख्याहुतिरित्यर्थः ।

ततो मार्कण्डेय उवाचेति इत्वा तयोरिति ।

द्वौ मन्त्रौ पुनरुच्चार्य सावर्णिर्भविता मनुः ॥

एकोनत्रिंशत्संख्याकाऽऽहुतिरत्र विधीयते ।

एवं त्रयोदशाध्याये होमे तर्पणकर्मणि ॥

शतानि सप्तसंख्यानि तव प्रोक्तानि शैलजे ।

सकारादिनकारान्तो मनुः परमदुर्लभः ॥

स संप्रदायविधिना ज्ञातव्यो मम वल्लभे ।

अन्यथा विफलो मन्त्रः सत्यं सत्यं मयोदितः ॥

विधिनेति । अष्टम्यां वा चतुर्दश्यामिति कीलकेनेत्यर्थः । तत्र होमे स्वाहान्ता एते मन्त्राः पूजायां नमोऽन्ताः । तर्पणे तर्पयाम्यन्ताः ।

के चित् तन्मन्त्रं पठित्वा तत्तदध्यायदेवतायै स्वाहा—इत्येवम् ।

तत्तदध्यायहोमे तत्तदध्यायदेवतां तर्पयामि—इति तर्पणे ।

तत्तदध्यायदेवतायै नमः—इति पूजने इत्याहुः ।

एवं होमाश्चकौ ।

जयन्ती—मन्त्रेण नमो देव्या इति मन्त्रेण सर्वमङ्गल—इति मन्त्रेण वा होमपूजातर्पणानि ।

जुहुयात् स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः—इत्यपि (रहस्ये) ।

आदौ तु कवचं कृत्वा पश्चात् सप्तशतीं जयेत्—इत्यादिवचनात् ।

कवचपाठे क्रियमाणे तच्छ्लोकैराहुतयो न देयाः ।

अन्धकश्च पुरा दैत्यो दुर्गाहोमपरायणः ।

कवचाहुतिमन्त्रेण महेशेन निपातितः-इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

कवचं चात्र शूलेन ग्राहि नो देवि-इत्यादिश्लोकचतुष्टयरूपमिति केचित् ।

तत्र (कात्यायनीतन्त्र-) विरुद्धे (कात्यायनीतन्त्रो-)कमन्त्रविभाग एवामियुक्तैः
स्पष्टीकृत्याभिदर्शितः ।

तथा हि ।

अष्टसप्तत्युत्तरं तु श्लोकानां शतपञ्चकम् ।

प्रोक्तं सप्तशतीस्तोत्रे तत्सप्तशतसंख्यया ॥

विभज्य जूहुयान्मन्त्रमिति कात्यायनीमतम् ।

मार्कण्डेय उवाचैकः सावर्ण्याद्यास्ततः परम् ॥

श्लोकमन्त्राः सप्तदश अर्धश्लोकात्मकस्ततः ।

एकोनविंशदेवं स्युर्वैश्योक्तिर्विंशतिस्तथा ॥

पुनरर्धं पुनः श्लोकं त्रयमर्धं पुनर्भवेत् ।

पञ्चविंशतिसंख्या स्याद्राजा षड्विंशतिस्तथा ॥

अर्धश्लोकात्मकं मन्त्रद्वयमर्धं पुनर्भवेत् ।

एकोनत्रिंशदेवं तु मन्त्रसंख्याः प्रकीर्तिताः ॥

पुनरर्धं पुनः श्लोकत्रयमर्धं पुनर्भवेत् ।

मार्कण्डेयः पुनश्चार्धश्लोकः श्लोकात्मकः पुनः ॥

अर्धश्लोकात्मको मन्त्रो राजार्धश्लोकमन्त्रकः ।

मन्त्राश्चत्वारिंशदेव श्लोकमन्त्रचतुष्टयम् ॥

पुनरर्धमृषिशार्धश्लोकमन्त्राः पुनर्दश ।

पुनरर्धं पुनः राजा एकोना षष्टिरुच्यते ॥

पुनरर्धं पुनः श्लोकः पुनरर्धं पुनः ऋषिः ।

पुनरर्थं पुनः श्लोकाः षण्मन्त्राः पुनरर्थकाः ॥
 निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ।
 इत्येव पाठो मन्त्राणामेकसप्ततिरुच्यते ॥
 ब्रह्मार्थश्लोकमन्त्रोऽथ श्लोकमन्त्रास्त्रयोदश ।
 अर्धश्लोकः पुनः श्लोक ऋषिः श्लोकास्तु पञ्च वै ॥
 पुनरर्थं तु मन्त्राणां सपञ्चनवतिः स्मृताः ।
 भगवानर्थमन्त्रौ द्वौ ऋषिः श्लोकार्धकं पुनः ॥
 श्लोकः पुनः ऋषिः श्लोकद्वयं मन्त्रद्वयं भवेत् ।
 श्लोकानामष्टसप्तत्या चतुर्भिर्अधिकं शतम् ॥
 अध्यायादावेव ऋषिरुवाचेति सकृन्मनुः ।
 अष्टषष्टिमिताः श्लोकास्तावन्तो मनवो मताः ॥
 एकोनसप्ततिः सर्वेऽध्याये मन्त्रा द्वितीयके ।
 आदावृषिरुवाचैकं पञ्चविंशत् ततः परम् ॥
 निहन्यमानाद्याः श्लोका मुखरागाकुलाक्षराः ।
 इत्यन्ता देव्युवाचैको गर्ज गर्जेति चापरः ॥
 श्लोको-ऋषिरुवाचेति पुनश्च श्लोकपञ्चकम् ।
 चतुश्चत्वारिंशदैवं सर्वे मन्त्रास्तृतीयके ॥
 आदावृषिरुवाचेति शक्राद्याः श्लोकमन्त्रकाः ।
 षड्विंशस्तु ऋषिः श्लोकद्वयं देवी ततः परम् ॥
 त्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ।
 इत्यर्धश्लोकमन्त्रोऽथ देवा उच्युस्ततः परम् ॥
 भगवत्या कृतं सर्वमित्यर्धश्लोकमन्त्रकः ।
 यदयं नियतायं च श्लोकमन्त्रत्रयं भवेत् ॥

ऋषिश्लोकास्तु चत्वारो मनवः परिकीर्त्तिताः ।
षट्त्रिंशच्छ्लोककेऽध्याये चत्वारिंशद्व्याधिकम् ॥
षट्सप्ततिश्लोकयुक्तेऽध्याये मन्त्रास्तु पञ्चमे ।
एकोनत्रिंशदधिकं शतं कात्यायनीमते ॥
आदौ ऋषिरुवाचेति पुरा शुम्भादयश्च षट् ।
श्लोकमन्त्रास्ततो देवा ऊचुश्चैवाष्टमो मनुः ॥
नमो देव्यादिकाः श्लोकाः पञ्च मन्त्राः प्रकीर्त्तिताः ।
त्रयोदशैव मन्त्रास्तु या देवीत्यादयोऽपि च ॥
एकविंशतिकाः श्लोका भ्रान्त्यन्तास्तेषु मन्त्रकाः ।
प्रतिश्लोके त्रयो मन्त्रा ज्ञेयास्ते च त्रिषष्टिकाः ॥
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै इति प्रोक्तो विंशत्यक्षरको मनुः ॥
नमस्तस्यै इति प्रोक्तो द्वितीयश्चतुरक्षरः ।
अष्टाक्षरस्तृतीयोऽपि नमस्तस्यै नमो नमः ॥
एवं द्वाविंशतिश्लोके ज्ञेयं मन्त्रत्रयं बुधैः ।
पुनः श्लोकात्मको मन्त्रस्त्रिमन्त्रः श्लोककः पुनः ॥
त्रयोविंशच्छ्लोककेषु मन्त्रा वै सप्तषष्टिकाः ।
पूर्वैस्त्रयोदशैर्मन्त्रैः सहाशीतिरुदाहृता ॥
स्तुता सुरैरिति श्लोकद्वयं चैव पुना ऋषिः ।
पुनः सप्तदशश्लोका ऋषिः श्लोकत्रयं ततः ॥
दूतश्चैव नव श्लोका ऋषिरेकोऽम्बिका ततः ।

एक इत्यस्यैकश्लोकः इत्यर्थः ।

चतुःश्लोकी पुनर्दूतश्चतुःश्लोकी पुनः शिवा ।

श्लोकद्वयं मिलित्वा तु चत्वारिंशन्नवाधिकम् ॥
 अशीत्याऽपि च संयोग एकोनत्रिंशताऽधिकम् ।
 शतमेवं तु विज्ञेयमाहुतीनां च पञ्चमे ॥
 विंशतिश्लोकसंयुक्ते षष्ठेऽध्याये प्रकीर्त्तिता ।
 सर्वे श्लोका मन्त्ररूपा देव्ये काऽथ ऋषित्रयम् ॥
 चतुर्विंशतिमन्त्राणामित्येवं परिकीर्त्तितम् ।
 पञ्चविंशच्छ्लोकयुक्तेऽध्याये मन्त्रास्तु सप्तमे ॥
 सर्वे मन्त्राः श्लोकरूपा ऋष्युवाचद्वयं ततः ।
 सप्तविंशतिरेवं तु मन्त्रसंख्या प्रकीर्त्तिता ॥
 सार्धैकषष्टिश्लोकाद्येऽष्टमेऽध्याये प्रकीर्त्तिताः ।
 एकषष्टिश्लोकमन्त्रा अन्तेऽर्धश्लोकमन्त्रकः ॥
 आदावेक ऋषिश्चैव त्रिषष्टिर्मन्त्रसंततिः ।
 एकोनचत्वारिंशद्भिः श्लोकैर्युक्ते समीरिताः ॥
 अध्याये नवमे मन्त्रास्तावन्तोऽथ मनुद्वयम् ।
 राजा ऋषिश्चेति चैकचत्वारिंशन्मनुस्त्वयम् ॥
 सार्धसप्तान्वितैर्विंशच्छ्लोकैस्तु दशमेऽन्विते ।
 सप्तविंशतिमन्त्रास्तु श्लोकरूपास्ततोऽन्तिमः ॥
 अर्धश्लोकात्मको मन्त्र ऋष्युवाचद्वयं तथा ।
 देव्युवाचद्वयं चैव द्वात्रिंशन्मन्त्रसंग्रहः ॥
 श्लोकानां सार्धपञ्चाशज्ज्ञेयमेकादशे स्फुटम् ।
 पञ्चाशच्छ्लोकमन्त्रास्तदन्तेऽर्धश्लोकमन्त्रकः ॥
 शाकम्भरोति विख्यातिं तदा यास्यास्यहं भुवि ।
 एषोऽर्धमन्त्र इत्याहुः केचिदत्र विचक्षणाः ॥

देवीद्वयमृषिश्चैको देवा एकमितीरितम् ।
 पञ्चाधिकं तु पञ्चाशन्मन्त्रा ज्ञेयाः परिस्फुटम् ॥
 अष्टत्रिंशच्छ्लोकयुक्तेऽप्यध्याये द्वादशात्मके ।
 चत्वारिंशच्च एकश्च मन्त्रास्तत्राहुतिद्वयम् ॥
 अर्धश्लोकात्मकं श्लोकाः सप्तत्रिंशन्मिता ऋषिः ।
 देव्युवाचेति चैवैकमेवं संख्या स्फुटोदिता ॥
 त्रयोदशे सार्धसप्तदशश्लोकाः प्रकीर्तिताः ।
 ऋषिरुवाचेत्यारभ्य भोगस्वर्गापवर्गदाः ॥
 इत्यन्ताः पञ्चमन्त्रास्ते मार्कण्डेयस्ततः परम् ।
 इति तस्य वचः श्रुत्वेत्यर्धमन्त्रः प्रकीर्तितः ॥
 श्लोकमन्त्रास्ततो ज्ञेयाः पञ्चैवाथार्धमन्त्रकम् ।
 देव्युवाचेति मन्त्रोऽयं ततः श्लोकस्तु मन्त्रकः ॥
 मार्कण्डेयस्ततो मन्त्रः श्लोकौ मन्त्रद्वयं ततः ।
 ततो देवीषडर्धानि सप्त मन्त्राः प्रकीर्तिताः ॥
 मार्कण्डेयस्ततः पञ्चाद्वयं मन्त्रद्वयं स्मृतम् ।
 आवृत्त्या त्वधिको मन्त्रः सावर्णिर्भविता मनुः ॥
 एकोनत्रिंशत्संख्याका मन्त्रा अत्र स्मृता दुधैः इति ।

अथ प्रसङ्गात् प्रश्नविधिरुच्यते (तन्त्रविधानमुक्तावली-) धृतवचनानि ।

त्रयोदशदलं पद्मं लिखित्वा सुमनोहरम् ।
 एकाङ्गादिक्रमेणाङ्गैर्दलानि परिपूरयेत् ॥
 प्रत्यध्याये श्लोकसंख्याः पृथग्लेख्याश्च पङ्क्तिशः ।
 पूजयेत् पुस्तके दुर्गा नवर्णेन विधानवित् ॥
 देवि दुर्गे नमस्तुभ्यः सर्वज्ञे सर्वदर्शिनि ।

सिद्धिकार्यस्य वा सिद्धिं सत्यं मन्त्रं प्रदर्शय ॥

एवं संग्राह्यं पुष्पं वा फलं वाऽक्षतमेव वा ।

कुमारी वा शिशोर्हस्तादध्यायाङ्गे निधाययेत् ॥

विदित्वा चैवमध्यायं तत्पद्याङ्गे निधापयेत् ।

श्लोकं ज्ञात्वा ततो मन्त्री वाचयीत स्फुटाक्षरम् ॥

श्लोकस्यार्थानुसारेण जेयं विजैः शुभाशुभम् ।

वरदानार्थकाः श्लोका देवीतुष्ट्यर्थकाश्च ये ॥

प्राणाभ्युपगमार्थाश्च भाविभव्यार्थकाश्च ये ।

देवोत्सवाभिधेया ये श्लोकास्ते सिद्धिसूचकाः ॥

दैत्यानां संख्ययो यत्र देवीविक्रमवर्णनम् ।

अमर्षवर्णनं देव्या असुरेषु रणाजिरे ॥

एवंविधाश्च ये श्लोकाः संग्रामविजयप्रदाः ।

प्रार्थनार्थाश्च ये श्लोकाः स्तोत्ररूपास्तथैव च ॥

सूचयन्ति च ते सिद्धिं दीर्घकालविलम्बिनीम् ।

यदि स्यादुत्तरश्लोको वरदानार्थकस्तथा ॥

सिद्धिमीदृगपि श्लोकस्तुर्णमेवाभिशंसति ।

आपदो वर्णनं तस्या वेदनं च सुपर्वणाम् ॥

भूभृद्विशोश्च संवादो वर्णनं विपदस्तयोः ।

दूतवाक्यं च दैत्यानां विक्रमस्य च वर्णनम् ॥

प्रयाणवर्णनं तेषां कार्यनाशस्य सूचकम् ।

आपद इति सुपर्वणामापदो वर्णनमित्यन्वयः । तस्या आपदो वेदनं ज्ञानं कथ-
नमिति यावत् ।

स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि ।

विचरन्ति-इत्यादिरूपमित्यर्थः ।

के चिदिष्टमनिष्टं वा श्लोकानावेदयन्ति च ।
तादृशश्लोकलाभे तु पुनः प्रश्नं समाचरेत् ॥
इति सप्तशतीप्रकरणम् ।

अथ प्राणायामपुरश्चरणं तदुक्तं (सिद्धान्तसंग्रहे)
अथातः संप्रवक्ष्यामि प्राणायामपुरस्कियाम् ।
बद्धपद्मासनो मन्त्री समकायशिरोऽधरः ॥
वशीकृतेन्द्रियग्रामो नाकुलः कम्पवर्जितः ।
मूलाधारेऽनाहते वा भ्रूमध्ये वा स्वपङ्कजे ॥
मन्त्रं ज्योतिर्मयं ध्यायेद्येनासौ प्राणसंयमः ।

प्राणसंयमः प्राणायामो येन मन्त्रेण कर्त्तव्य इत्यर्थः ।
तथा ।

तत्स्वरूपं शिवं ध्यायेत् पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ।
प्राणायामं चरेद्धीमान् परकादिकलक्षणम् ॥
शिवमिति प्रकृतदेवतामिप्रायेण ।
तथा ।

प्रातःकालं समारभ्य यावद्यामद्वयं भवेत् ।
हविष्यान्नेस्तथा नक्तं प्रकुर्याद्भोजनं मितम् ॥
न कुर्याद्योषितां स्पर्शं न पश्येत् पामरं जनम् ।
शुद्धभूमौ कुशास्तीर्णे शयीत विजितेन्द्रियः ॥
एवं लक्षमितं कुर्यात् प्राणायामं विचक्षणः ।
ततो होमादिकं कुर्यात् पुरश्चर्योक्तवर्त्मना ॥
भोजनं कारयेद्विप्रान् गुरुं संतोषयेत् तथा ।
एवं कृत्वा सर्वपापनिर्मुक्तः शुद्धविग्रहः ॥
मन्त्रसिद्धिमवाप्नोति योगसिद्धिं विशेषतः ।
अणिमाद्यष्टसिद्धीनामपि स्यादाश्रयस्तु सः ॥

यन्मन्त्रं साधयेन्मन्त्री स मन्त्रस्तस्य सिध्यति ।

इति प्राणायामपुरश्चरणम् ।

अथ पुरश्चरणव्यतिरिक्तेन मन्त्रसिद्धिप्रकारो (वीरतन्त्रे)

अथ सम्यक् प्रवक्ष्यामि गुरुसिद्धिपरम्पराम् ।

एवं ज्ञात्वा विशेषज्ञो गोपयेत् प्रीतये मम ॥

एतत्प्रकाशनाल्लोके महाहानिः पदे पदे ।

शिवशिखिशीतभानुं पञ्चमान्त्यस्वराढ्यं

द्वितयमिदमपूर्वं बीजमुग्रप्रभायाः ।

क्षणमपि रमणीनां मण्डलान्तर्विभाव्य

क्षपयति दुरदृष्टं वादिराड्जायते सः ॥

शिवो हकारः । शिखी वह्नितद्बीजं रेफः । सितभानुरनुस्वारः । पञ्चमान्त्यस्वर
उकारस्तेन हुमिति प्रणवादिवह्निजायान्तस्योग्रप्रभामन्त्रस्य द्वितीयं बीजमित्यर्थः ।

तथा ।

स जयति रिपुवर्गान् वादिराजान् विवादे

रमयति रमणीनां चित्तचौरश्चिरायुः ।

कवयति कविराजैरप्यदृष्टं सुकाढ्यं

मधुमतिरपि हेया किं पुनः सिद्धिसंधाः ॥

कुलयुवतिसुयोनौ मन्त्रवर्णान् विलिख्य

निखिलनिगमवर्णान् सुप्तदोषादिदुष्टान् ।

विदितगुरुकुलान्तर्बाह्यवर्त्मा विधिज्ञो

मधुपुटितपटीयान् भावयेच्छान्तचित्तः ॥

कुलपथमनुसन्ध्यातर्पणासक्तचित्त-

स्तव जननि जनो यस्तर्पयेत् तीर्थतोयैः ।

स किल सुरतपुष्पैर्गन्धमाल्यानुरूपै-

रचितयुवतिवेशस्तद्धिया ध्यायते सः ॥
 परिचरति समस्तैर्न्यासपूर्वैः प्रसिद्धैः
 स्तवपरिकरजालैर्योनिचक्रे प्रपूज्य ।
 सुविमलकुलजातां हीघ्रिणावर्जितां यः
 स्वयमपि रचिताङ्गः क्षोभकृद्योगिनीनाम् ॥
 पशुरिपुकुलचक्रे संस्पृशन्मध्यशाखं
 सुरतरुसुरनाथः पापभ्रष्टसुवेशः ।
 कुलपतिकुलनाथस्तद्द्वयं योजयित्वा
 मनुषुटितविमृष्यं योजयेत् तद्बहिर्यः ॥
 जननि तव कलानां को विदां कामरूपः
 कुमतिरहितचित्तः संलिखेत् तान्निधारे ।
 विगतभयविवादध्वान्तजालः सुधांशु-
 स्तव चरणतलान्तर्धृत्यजालैर्विधेयः ॥
 परिकलितवपुस्तद्धर्मभिर्देवपूज्यैः
 परिचरति स विज्ञो मोक्षचर्याधिया सः ।
 मदनमदवधूनां बीजमुद्धृत्य शक्तिं
 तदनु कठतबीजं लोकधात्रीं तदन्तः ॥
 यदि जपति मदन्तर्भावमासाद्य सद्यः
 सुरनगरगतिस्तैः सिद्धवर्गैः स पूज्यः ।
 शिवभृगुमदपृथ्वीशक्तियुक्तं सुसिद्धो
 हरिहरचतुरास्यस्वस्वभूतिप्रभूतम् ॥
 परमवरदसंज्ञः क्षोभकृत् कामिनीना-
 मधिपतिरपि वाचां श्रोपतिः सार्वभौमः ।

भृगुमदकथिताधः कामबीजं तदग्रे
 भुवनभयविनाशः क्षोभिणीं योजयित्वा ॥
 जपति यदि सकृद्वा चिन्त्यते वीरसिंहः
 कुलयुवतिकुलान्तः क्षोभकृत् कामभावात् ।
 मदनमदलताधः शक्तिबीजं नियोज्य
 स्मरहरहरिरूपी कामरूपः कुवेरः ॥
 रिपुकुलहरिणाक्षीलोचनाम्भोजविद्यु-
 द्विपुलजननिषेकात् खण्डितान्तोद्यतापः ।
 शिवभृगुमदमूलं लोभमूलं भजन्ति
 यदि विविधगुरूणां वर्त्ममूलं विमृष्य ॥
 निधिपतिरपि नाथो गीष्पतिर्भद्रचेता
 यदि भवति तदेतन्मुख्यमुर्वोपतित्वम् ।
 वरुणवलविवर्जं घ्राणमेकं विवर्जं
 तदुपरि मृगचिह्नं द्वन्द्वमेतद्भवान्याः ॥
 निखिलमुनिवराणां मोक्षदानैकदक्षः
 सदसतसमधर्मा क्षेमकृन्मन्त्रराजः ।
 शिवशमनययुक्तं बीजमेतद्भवान्या
 अनलशिवसधर्माश्चादिराजं स्वतन्त्रम् ॥
 तव समनययुक्तं बीजमेतद्भवान्या
 द्वितीयमपि विमानं वक्तुमोशो महेशः ।
 किमिह कमलजन्मा जन्मधारासहस्रै-
 रिति भजति नराणां मन्त्रराजं स्वभाग्यैः ॥
 भवति जननि युष्मत्पादपद्मोयभक्त-

स्त्यजसि परपुमांसं नेदृशं कापि काले ।
 न खलु वपुषुरर्घ्यं तस्य का चित् कदा चि-
 त्निहितगुरुमुखाद्वा प्राप्य कस्मादकस्मात् ॥
 स्मररिपुपुरपारे मोक्षचर्यास्वपारे
 परमपदविलीनः सर्वसौभाग्यभोगैः ।
 अनलपुरविभागे कालिकारन्ध्रबीजं
 तदपि यदि विदध्यादीक्षितं दण्डवर्णम् ॥
 नयनयुतलकारं मस्तके नामयुक्तं
 तदनु विकटदंष्ट्रासोत्कटं बीजयुक्तम् ।
 यदि जपति समस्तं गुह्यगुह्यातिगुह्यं
 त्रिजगति किमिहास्ते क्लेशलभ्यं कथं चित् ॥
 क्रमपचित्तमपूर्वं सर्वमेवानुबध्यं
 मनुरपरविभाव्यस्तस्य मध्यस्थरूपम् ।
 भजति यदि चिदानन्दात्मधृक् केवलोऽसौ
 विविधभुवनमुख्यः कौतुकी मानमुख्यः ॥
 इति ते कथितं सर्वं रहस्यं परमाद्भुतम् ।
 यथानुक्रमतो लोके किं न साध्यति योगिराट् ॥

अथ भैरवसाधनं (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि नानाभैरवसाधनम् ।
 श्मशाने ते तु तिष्ठन्ति काले काले पुरे पुरे ॥
 नियमं कं चिदेकं यो न त्यजेद्धर्मगर्भितम् ।
 वाममार्गादिनिरतोऽप्यद्वेष्टेतरवर्त्मनाम् ॥
 हीने गुरावपूर्णे वा साधने लोकभीतितः ।
 स भवेद्भैरवो देवस्तस्य देशस्य शासकः ॥

तत्रत्यभूतवेतालाः सदा संसेवयन्ति तम् ।
 स्वमार्गप्रच्युतानां स शासनं कुरुते सदा ॥
 क्षीणकर्मणि तस्मिँश्च गते ग्रामो विलीयते ।
 अन्यस्मिन् भैरवे जाते ग्रामो वसति निश्चितम् ॥
 यदाम्नायो भैरवोऽसौ तच्छासनं तु तदिशि ।
 तेन मार्गेण वशयेत् कार्यार्थं भैरवं तु तम् ॥
 वाग्रमाकायमायाख्यास्तारो बीजं क्रमाद्भवेत् ।
 पूर्वाद्यध्वान्तकानां तदाम्नायानां क्रमेण च ॥
 आम्रायबीजं ग्रामस्य बीजं श्राँ भैरवस्य च ।
 ग्रामनाम ततः प्रोच्य पितृगेहे निवासिने ॥
 ततस्तेषां मनुमिमं जपेद्दशसहस्रकम् ।
 निशि श्मशाने च बलिं तदाम्नायोक्तवर्त्मना ॥
 जपादौ च जपान्ते च नित्यं दद्यादनन्यधीः ।
 वटुकोक्तं हुनेद्द्रव्यं तर्पणादि ततश्चरेत् ॥
 एवं सिद्धमनुमन्वी भूतानां निग्रहक्षमः ।
 तस्मिन् देशे भवेत् तस्य प्रत्यक्षीकरणं शृणु ॥
 कृतनित्यक्रियः प्रातः सोपवासो जितेन्द्रियः ।
 सायं सन्ध्यादिकं कृत्वा शान्तिपाठं विधाय च ॥
 प्रगृहीत्वा च सामग्रीं सायं सोत्तरसाधकः ।
 ब्रजेच्छ्मशानसामग्रीं शृणु सुस्थिरमाषकान् ॥
 अनङ्कुरान् जलतिलान् मुद्गाँस्तद्वन्मसूरिकान् ।
 तथैव चणकान् भक्तं पायसान् पूषशङ्कुलीः ॥
 कन्यकाकर्तितं सूत्रं कुङ्कुमेन सुजितम् ।

अष्टौ वितस्तिदीर्घाश्च मुष्टिस्थूलाश्च खादिराः ॥
 कोला एको हस्तमात्रं गन्धपुष्पादिकं तथा ।
 बलिद्रव्यं च पूर्वोक्तं पूर्वाम्नाये समत्स्यकम् ॥
 समांसं पश्चिमाम्नाये समद्यं चोत्तरे भवेत् ।
 ग्राममध्ये श्मशाने च ऊर्ध्वाम्नाये सरक्तकम् ॥
 यथायोग्यं च नैवेद्यं गच्छेच्च भयवर्जितः ।
 पादप्रक्षालनं कृत्वा ततः स्मृत्वाऽस्य देवताम् ॥
 बद्धाञ्जलिरिदं वाक्यं प्रवदेत् साधकोत्तमः ।
 अत्र श्मशाने याः काश्चिद्देवता निवसन्ति हि ॥
 ताः प्रयच्छन्तु मे सिद्धिं प्रसन्नाः सन्तु पान्तु माम् ।
 पूर्वं मां शङ्करः पातु तथाऽऽग्नेय्यां च शूलधृक् ॥
 कपाली दक्षिणे पातु नैर्ऋत्ये जटिलोऽवतु ।
 पश्चिमे पार्वतीभर्ता वायव्यां प्रमथाधिपः ॥
 उत्तरे मुण्डमालाढ्य ईशाने वृषभध्वजः ।
 ऊर्ध्वं पातु तथा शम्भुरधस्ताद्धूलिधूसरः ॥
 अग्रतो भैरवः पातु पृष्ठतः पातु खेचरः ।
 दक्षिणे भूधरः पातु वामे तु पिशिताशनः ॥
 केशान् पातु विशालाक्षो मूर्धानं च मरुत्प्रियः ।
 मस्तकं पातु भृग्वीशो नेत्रे पातु महामनाः ॥
 कपोलौ पातु वीरेशो गण्डौ गण्डादिमर्दनः ।
 उत्तरोष्ठे विरूपाक्षस्त्वधरे योगिनीप्रियः ॥
 दन्तेषु दक्षविध्वंसी चिवुके नृकपालधृक् ।
 कण्ठे रक्षतु मां देवो नीलकण्ठो जगद्गुरुः ॥

दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो वामस्कन्धे च सुन्दरः ।
 भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदाऽवतु ॥
 वामे भुजे सार्वभौमो हृदये पातु पाण्डुरः ।
 दक्षस्तनं पशुपतिर्वामं पातु महेश्वरः ॥
 उत्तरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा ।
 नाभौ कामप्रविध्वंसी जङ्घे पातु दयामयः ॥
 जानुनी पात्वजामित्रो गुल्फौ गौरीपतिः सदा ।
 पादपृष्ठं ज्ञाननिधिस्तथा पादाङ्गुलोर्हरः ॥
 पादाधः पातु सततं व्योमकेशो जगत्प्रियः ।
 इति रक्षां समाधाय मन्त्ररक्षां ततश्चरेत् ॥
 ॐ हाँ हुँ हुँ हुँ च पूर्वे ॐ ह्रीँ हुँ ह्रीँ हुताशने ।
 ॐ ह्रीँ श्रीँ दक्षिणे न्यस्य ॐ ग्लुँ स्लुँ चापि नैऋते ॥
 ॐ प्लुँ म्लुँ य्लुँ प्रतोच्यां च तारः प्रौँ प्रुँ समीरणे ।
 ॐ भ्राँ भैरवः सौम्यायां ॐ ब्लुँ प्लुँ भ्रुँ च फट् शिवे ॥
 ॐ ग्लौँ ब्लुँ मूर्धदेशेऽथो स्वाँ स्नुँ स्वं स्रस्त्वधः स्मृतम् ।
 एवं रक्षां समाधाय कील्याः कीलादिगष्टके ॥
 मध्ये महाकीलमथो दिक्पालार्चनमारभेत् ।
 ततो मन्त्रमिमं ब्रूयात् प्रार्थयेत् प्रेमसंयुतः ॥
 भ्राँ भैरव हिरुच्चार्य भयङ्करहरे वदेत् ।
 मां रक्ष रक्ष हुँ फट् च स्वाहा द्वाविंशदर्शकः ॥
 पलाशभाजने माषान् कृत्वा प्राचीं व्रजेत् ततः ।
 कीलस्य निकटे चेन्द्रमावाह्य परिपूजयेत् ॥
 ध्यानं प्रागुक्तवत् कृत्वा तत्पुरश्चतुरस्रके ।

मन्त्रेणानेन चेन्द्राय मण्डले बलिमर्षयेत् ॥
 ॐ ह्राँ ह्रीँ हुँ समुच्चार्य भो इन्द्र सुरनायक ।
 प्रसन्नो भव मे शीघ्रं देहि सिद्धिं सनातनीम् ॥
 इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हूँ फट्नागाग्निवर्णकः ।
 जलं दत्त्वा बलिं त्यक्त्वा नत्वेयाद्दहिकीलकम् ॥
 अग्निं तत्र समावाह्य प्राग्वक्ष्यात्वा प्रपूजयेत् ।
 तदग्रे मण्डलं कृत्वा दद्यान्मन्त्रेण वै बलिम् ॥
 ॐ रँ राँ रूँ रूँ च रिँ रीँ तदग्रेऽग्नेपदं पदेत् ।
 तेजोनायक मे शीघ्रं सिद्धिं देहि इमं वदेत् ॥
 मुद्गबलिं गृह्ण गृह्ण हूँ फट्देवार्णको मनुः ।
 ततो दक्षिणकीलस्य निकटे यममर्चयेत् ॥
 मँ बीजेन समावाह्य मनुना निर्वपेद्बलिम् ।
 ॐ प्राँ प्रीँ प्रुँ ततः प्राँ प्रीँ प्रूँ भो यमपदं वदेत् ॥
 श्रेताधिपतये शीघ्रं प्रसन्नो भव संवदेत् ।
 इमं मे मसुरं पात्रे बलिं गृह्णयुगं वदेत् ॥
 हूँ फडन्तः समाख्यातो मन्त्रो गोरामवर्णकः ।
 ततो नैर्ऋत्यकीलस्य निकटे नैर्ऋतं यजेत् ॥
 ॐ बीजेन समावाह्य बलिमन्त्रोऽथ कथ्यते ।
 ॐ प्रैँ प्रैँ प्रैँ ततो हूँ हूँ त्रिः खँ द्विर्ह्रीँ च भोयुगम् ॥
 रक्षोनाथ पदाच्छीघ्रं प्रसन्नो भव संवदेत् ।
 इमं मे चणकबलिं गृह्ण हूँ फट्मनुर्मतः ॥
 षट्त्रिंशदणोऽथ ततो व्रजेत् पश्चिमकीलकम् ।
 वँ बीजेन समावाह्य वरुणं तत्र पूजयेत् ॥

बलिमन्त्रो ध्रुवो ब्राँ ब्रीँ भो भो वरुण संवदेत् ।
 जलनाथपदस्यान्ते प्रसन्नो भव संवदेत् ॥
 इमं ते चोदनबलिं गृह्ण गृह्ण च हूँ च फट् ।
 त्रिंशदर्णो मनुः प्रोक्तो वरुणस्य बलेरयम् ॥
 ततो व्रजेद्वायुकोणं कीलस्य निकटेऽर्चयेत् ।
 यँ बीजेन समावाह्य वायुं शृणु बलेर्मनुम् ॥
 वाँ वोँ वूँ ततः क्राँ क्रीँ भो भो वायो पुनः पुनः ।
 क्षिप्रं प्रसन्नो भवेति ममेदं पायसेति ॥
 बलिं गृह्णयुगं हूँ फट् पञ्चत्रिंशाक्षरो मनुः ।
 उदक्कोलं ततो गत्वा कुँ बीजेन धनेश्वरम् ॥
 आवायेत् पूजयित्वा मनुना निर्वपेद्बलिम् ।
 ॐ क्राँ क्रूँ ततः क्राँ क्रीँ भो भो यक्षपदं वदेत् ॥
 नाथ शीघ्रं प्रसन्नो मे भवेति च पदं वदेत् ।
 ममापूपबलिं गृह्ण गृह्ण हूँ फट् रदार्णकः ॥
 ईशानकीलनिकटे गत्वेशानं समाह्वयेत् ।
 हँ बीजेन ततः पूज्यबलिः स्यान्मनुनाऽमुना ॥
 ॐ श्राँ श्रीँ श्रूँ ततः श्राँ श्रीँ श्रीँ श्रीँ स्याच्छष्कुलीपदम् ।
 बलिं गृह्णयुगं हूँ फट् नवविंशतिवर्णकः ॥
 पुष्पाक्षतान् समादाय मध्यस्तम्भादधः स्थितः ।
 अधस्तनस्तम्भाय नमो मन्त्रोऽयं तु नवाक्षरः ॥
 अनेन मनुना स्तम्भनिर्भयः परिपूजयेत् ।
 महाकवचमन्त्रेण कुर्याद्देहस्य रक्षणम् ॥
 ॐ ह्राँ ह्रीँ हुँ ततो दश क्षाँ क्षीँ क्षूँ क्षः समुच्चरेत् ।

स्त्वाँ स्त्रीँ स्तुँ स्तुँ स्तथा घ्राँ घ्रीँ घ्राँ घ्रीँ घ्राँ घ्रीँ ततो वदेत् ॥

म्रूँ म्रौँ म्रँ म्रँ ततो म्रौँ म्रौँ त्रिधोक्तेन त्रिधा त्रिधा ।

ह्रूँ सप्तकं समुच्चार्य फडन्तं सर्वतो वदेत् ॥

रक्ष रक्ष पदं प्रोच्य रक्ष रक्षेति भैरव ।

नाथ नाथ फडन्तोऽयमेकपञ्चाशदक्षरः ॥

इत्यात्मरक्षां कृत्वाऽथ स्तम्भस्य च समीपतः ।

आसनं सम्यगास्तीर्य तत्र प्राङ्मुख आस्थितः ॥

साग्रे सग्रे तु भूभागे गोमयाद्युपलेपिते ।

पद्ममष्टदलं कृत्वा तद्वहिः षोडशच्छदम् ॥

तद्बाह्येऽष्टदलं चापि भूपुरं च ततो लिखेत् ।

चतुरस्रत्रयोपेतं चतुर्द्वारसमन्वितम् ॥

तन्मध्ये देवमावाह्य सम्यङ्मूलेन पूजयेत् ।

कर्णिकायां षडङ्गानि ह्यसिताङ्गादिभैरवान् ॥

पत्राष्टके पूजयित्वा पूजयेत् षोडशच्छदे ।

कुलीशं सकुलीशं च जामित्रं रामठं रिभम् ॥

प्रचण्डं चण्डकेशं च चण्डात्मानं च चामरम् ।

चारित्रं च चमत्कारं चञ्चलं चारुभूषणम् ॥

चामीकरं चारुवह्नं चकितं चेति षोडश ।

नत्यन्तनामभिः पूज्याः षोडशानन्दपूरिताः ॥

ब्राह्मगाद्याश्चाष्टपत्रेषु बहिर्वीथ्यां दिगीश्वरान् ।

तद्बाह्यायां तदस्ताणि तद्बाह्यायां त्विमान् यजेत् ॥

प्रचण्डचण्डोर्ध्वकेशभीषणाभीषणामिधाः ।

व्योमकेशो व्योमवाहो व्योमव्यापक एव च ॥

एतान् वीरान् समाहूय चायाहीति समुच्चरेत् ।
 अभ्यर्चयेन्निर्भयः सन् बलिं न्यासान् समाचरेत् ॥
 पश्चिमाभिमुखो भूत्वा मालां संपूज्य संयजेत् ।
 उच्चैः स्वरं तदाऽऽयाति प्रत्यहं भैरवः स्वयम् ॥
 वामहस्तेन दद्याच्च यथाम्नायोदितं बलिम् ।
 सम्भोजयन् जपं कुर्यान्निर्भयः प्रीतमानसः
 तृप्तो देवो यदा ब्रूयाद्दरं वरय वाञ्छितम् ।
 दक्षिणे पायसेनैव तस्य तृप्तिः प्रजायते ॥
 वामादीनां मांसमद्यरक्ताद्यैश्चरुणाऽपि वा ।
 प्रणम्य दण्डवद्भूमौ वाञ्छितं वरमुच्चरेत् ॥
 आगत्य च गृहे पश्चात् त्र्यहं कुर्यान्महोत्सवम् ।
 एवं कलियुगे सिद्धिः श्मशानस्य प्रकीर्तिता ॥
 जपेदेनं समारूढो दैवी प्रत्यक्षता भवेत् ।
 समस्तभैरवानां तु मन्त्रादेवं मयोदितम् ॥

इति भैरवसाधनम् ।

अथ योगिनीसाधनं (भूतडामरे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि योगिनीसाधनोत्तमम् ।
 सर्वार्थसाधनं नाम देहिनां सर्वसिद्धिदम् ॥
 अतिगुह्या महाविद्या देवानामपि दुर्लभा ।
 यासामभ्यर्चनं कृत्वा यक्षेशोऽभूत् कुलाधिपः ॥
 तासामाद्यां प्रवक्ष्यामि सुराणां सुन्दरीं प्रिये ।
 अस्या अभ्यर्चनेनैव राजत्वं लभते नरः ॥
 अथ प्रातः समुत्थाय कृत्वा स्नानादिकं शुभम् ।

प्रासादं च समासाद्य कुर्यादाचमनं ततः ॥
 प्रणवान्ते सहस्रारे ह्रुं फड्दिग्वन्धनं चरेत् ।
 प्राणायामं ततः कुर्यान्मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥
 षडङ्गं मायया कुर्यात् पद्ममष्टदलं लिखेत् ।
 तस्मिन् पद्मे महामन्त्रबीजन्यासं समाचरेत् ॥
 पीठे देवीं समभ्यर्च्य ध्यायेद्देवीं जगत्प्रियाम् ।

ध्यानं यथा ।

पूर्णचन्द्रमुखीं गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम् ।
 पीतोन्नतकुचां रामां सर्वाद्यामभयप्रदाम् ॥
 इति ध्यात्वा च मूलेन दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ।
 पुनर्धूपं निवेद्यैव नैवेद्यं मूलमन्त्रतः ॥
 गन्धचन्दनताम्बूलं सकर्पूरं सुशोभनम् ।
 प्रणवान्ते भुवनेशोमागच्छ सुरसुन्दरि ॥
 वह्निभायी जपेन्मन्त्रं त्रिसन्ध्यं च दिने दिने ।
 सहस्रैकप्रमाणेन ध्यात्वा देवीं सदा बुधः ॥
 मासान्ते व्याप्य दिवसं बलिपूजां सुशोभनाम् ।
 कृत्वा च प्रजपेन्मन्त्रं निशीथे याति सुन्दरी ॥
 सुदृढं साधकं मत्वा महिम्ना साधकालये ।
 सुप्रसन्ना साधकाग्रे सदा स्मेरमुखी ततः ॥
 दृष्ट्वा देवीं साधकेन्द्रो दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ।
 सुचन्दनं सुमनसो ज्ञात्वाऽभिलषितं वदेत् ॥
 मातरं भगिनीं वाऽपि भार्यां वा भक्तिभावतः ।
 यदि माता तदा वित्तं दिव्यं च सुमनोहरम् ॥

एतान् वीरान् समाहूय चायाहीति समुच्चरेत् ।
 अभ्यर्चयेन्निर्भयः सन् बलिं न्यासान् समाचरेत् ॥
 पश्चिमाभिमुखो भूत्वा मालां संपूज्य संयजेत् ।
 उच्चैः स्वरं तदाऽऽयाति प्रत्यहं भैरवः स्वयम् ॥
 वामहस्तेन दद्याच्च यथाम्नायोदितं बलिम् ।
 सम्भोजयन् जपं कुर्यान्निर्भयः प्रीतमानसः
 तृप्तो देवो यदा ब्रूयाद्वरं वरय वाञ्छितम् ।
 दक्षिणे पायसेनैव तस्य तृप्तिः प्रजायते ॥
 वामादीनां मांसमद्यरक्ताद्यैश्चरुणाऽपि वा ।
 प्रणम्य दण्डवद्भूमौ वाञ्छितं वरमुच्चरेत् ॥
 आगत्य च गृहे पश्चात् त्र्यहं कुर्यान्महोत्सवम् ।
 एवं कलियुगे सिद्धिः श्मशानस्य प्रकीर्त्तिता ॥
 जपेदेनं समारूढो दैवी प्रत्यक्षता भवेत् ।
 समस्तभैरवानां तु मन्त्रादेवं मयोदितम् ॥

इति भैरवसाधनम् ।

अथ योगिनीसाधनं (भूतडामरे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि योगिनीसाधनोत्तमम् ।
 सर्वार्थसाधनं नाम देहिनां सर्वसिद्धिदम् ॥
 अतिगुह्या महाविद्या देवानामपि दुर्लभा ।
 यासामभ्यर्चनं कृत्वा यक्षेशोऽभूत् कुलाधिपः ॥
 तासामाद्यां प्रवक्ष्यामि सुराणां सुन्दरीं प्रिये ।
 अस्या अभ्यर्चनेनैव राजत्वं लभते नरः ॥
 अथ प्रातः समुत्थाय कृत्वा स्नानादिकं शुभम् ।

प्रासादं च समासाद्य कुर्यादाचमनं ततः ॥
 प्रणवान्ते सहस्रारे हूँ फड्दिग्वन्धनं चरेत् ।
 प्राणायामं ततः कुर्यान्मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥
 षडङ्गं मायया कुर्यात् पद्ममष्टदलं लिखेत् ।
 तस्मिन् पद्मे महामन्त्रबीजन्यासं समाचरेत् ॥
 पीठे देवीं समभ्यर्च्य ध्यायेद्देवीं जगत्प्रियाम् ।

ध्यानं यथा ।

पूर्णचन्द्रमुखीं गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम् ।
 पीतोन्नतकुचां रामां सर्वाद्यामभयप्रदाम् ॥
 इति ध्यात्वा च मूलेन दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ।
 पुनर्धूपं निवेद्यैव नैवेद्यं मूलमन्त्रतः ॥
 गन्धचन्दनताम्बूलं सकर्पूरं सुशोभनम् ।
 प्रणवान्ते भुवनेशोमागच्छ सुरसुन्दरि ॥
 वह्निभायी जपेन्मन्त्रं त्रिसन्ध्यं च दिने दिने ।
 सहस्रैकप्रमाणेन ध्यात्वा देवीं सदा बुधः ॥
 मासान्ते व्याप्य दिवसं बलिपूजां सुशोभनाम् ।
 कृत्वा च प्रजपेन्मन्त्रं निशीथे याति सुन्दरी ॥
 सुदृढं साधकं मत्वा महिम्ना साधकालये ।
 सुप्रसन्ना साधकाग्रे सदा स्मेरमुखी ततः ॥
 दृष्ट्वा देवीं साधकेन्द्रो दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ।
 सुचन्दनं सुमनसो ज्ञात्वाऽभिलषितं वदेत् ॥
 मातरं भगिनीं वाऽपि भार्यां वा भक्तिभावतः ।
 यदि माता तदा वित्तं दिव्यं च सुमनोहरम् ॥

भूपतित्वं प्रार्थितं यत् तददाति दिने दिने ।
 पुत्रवत् पालितं लोके सत्यं सत्यं सुनिश्चितम् ॥
 स्वसा ददाति दिव्यं च दिव्यवस्त्रं तथैव च ।
 दिव्यकन्यां समानीय नागकन्यां दिने दिने ॥
 यद्यद्भवति भूतं च भविष्यति च यत् पुनः ।
 तत्सर्वं साधकेन्द्राय निवेदयति निश्चितम् ॥
 यद्यत् प्रार्थयते सर्वं ददाति सा दिने दिने ।
 भ्रातृवत् पालितं लोके कामनाभिर्मनोरथैः ॥
 भर्या स्याद्यदि सा देवी साधकस्य मनोहरा ।
 राजेन्द्रः सर्वराजानां संसारे साधकोत्तमः ॥
 स्वर्गे मर्त्ये च पाताले गतिः सर्वत्र निश्चितम् ।
 यद्यददाति सा देवी वर्णितुं नैव शक्यते ॥
 तथा सार्थं च सम्भोगं करोति साधकोत्तमः ।
 अन्यस्त्रीगमनं त्यक्त्वा अन्यथा नश्यति ध्रुवम् ॥
 इति सुन्दरीसाधनम् ।

अथ मनोहरासाधनं तत्रैव ।

ततोऽन्यसाधनं वक्ष्ये निर्मितं ब्रह्मणा पुरा ।
 नदीतीरं समासाद्य कुर्यात् स्नानादिकं ततः ॥
 पूर्ववत् सकलं कार्यं चन्दनैर्मण्डलं लिखेत् ।
 स्वमन्त्रं तत्र संलिख्यावाह्य ध्यायेन्मनोहराम् ॥

ध्यानं यथा ।

कुरङ्गनेत्रां शरदिन्दुवक्त्रां विम्बाधरां चन्दनगन्धलिप्ताम् ।
 चेलांशुकां पीनकुचां मनोज्ञां श्यामां सदा कामदुघां विचित्राम् ॥
 एवं ध्यात्वा जपेद्देवीमगुरुधुपदीपैः ।

गन्धं पुष्पं रसं चैव ताम्बूलादींश्च मूलतः ॥
 तारं माया तथाऽऽगच्छ मनोहरे पावकवल्लभा ।
 स्नात्वाऽयुतं प्रतिदिनं जपेन्मन्त्रं प्रसन्नधीः ॥
 मासान्ते दिवसं प्राप्य कुर्याच्च जपमुत्तमम् ।
 आनिशीथं जपेन्मन्त्रं ज्ञात्वा च साधकं दृढम् ॥
 गत्वा च साधकाभ्यासे सुप्रसन्ना मनोहरा ।
 वरं वरय शीघ्रं त्वं यद्यन्मनसि वर्तते ॥
 साधकेन्द्रोऽपि तां भक्त्या पाद्याद्यैरर्चयेन्मुदा ।
 प्राणायामं षडङ्गं च मायया च समाचरेत् ॥
 मत्स्यमांसबलिं दत्वा पूजयेच्च समाहितः ।
 चन्दनोदकपुष्पेण फलेन च मनोहराम् ॥
 ततोऽर्चिता प्रसन्ना सा पुष्पाति प्रार्थितं चरेत् ।
 सुवर्णस्य शतं भारं सा ददादि दिने दिने ॥
 सविशेषं व्ययं कुर्यात् स्थिते तत् तु न दास्यति ।
 अन्यस्त्रीगमनं तस्य न भवेदिदमीरितम् ॥
 अव्याहतगतिस्तस्य भवतीति न संशयः ।
 साधिताऽपि विधानेन यदि नायानि यक्षिणी ॥
 विषं क्रोधात्मकं प्रोच्यामुकयक्षिण्यतः परम् ।
 भूतेशान्मादनं वायुद्वयं क्रोधास्त्वसंयुतम् ॥
 क्रोधेनानेन चाक्रम्य जपेदष्टसहस्रकम् ।
 एवं कृते समायाति वाञ्छितार्थं प्रयच्छति ॥

मुद्रामाह ।

मुष्टिमन्योन्यमास्थाय कनिष्ठे वेष्टयेद्भुभे ।

प्रसार्याकुञ्च्य तर्जन्यौ कार्या चैषाऽङ्गुशाकृतिः ॥
 इयं क्रोधाङ्गुशी मुद्रा यक्षिण्याकर्षणक्षमा ।
 इयं ते कथिता विद्या सुगोप्या या सुरेश्वरि ॥
 तव स्नेहेन भक्त्या च वशोऽहं परमेश्वरि ।

इति मनोहरासाधनम् ।

अथ धनदामन्त्रस्तत्रैव ।

तत्तूर्यं विन्दुना युक्तं लज्जाबीजं सविन्दुकम् ।
 लक्ष्मीबीजं ततो देवि सम्बोध्य च रतिप्रिया ॥
 स्वाहान्तो मनुराख्यातो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः ।

मन्त्रान्तरम् ।

तत्तूर्यं विन्दुसंयुक्तं लक्ष्मीः प्रणव एव च ।
 मायाबीजं समुद्धृत्य सम्बोध्य च रतिप्रियाम् ॥
 वह्निजायामिति प्रोक्तो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः ।
 कुबेरोऽस्य मुनिः प्रोक्तः पङ्क्तिच्छन्दोऽथ देवता ॥
 धनदाप्रीतये तस्या विनियोगः प्रकीर्तितः ।
 षड्दीर्घमायया चैव कराङ्गन्यास इष्यते ॥

ततो ध्यानम् ।

कुङ्कुमोदरगर्भाभां किञ्चिद्यौवनशालिनीम् ।
 मृणालकोमलभुजां केयूराङ्गदभूषिताम् ॥
 तुलाकोटिपरिश्रान्तपादपद्मद्वयान्विताम् ।
 माणिक्यहारमुकुटकुण्डलादिविभूषिताम् ॥
 नीलोत्पलदृशं किञ्चिदुद्यत्कुचविराजिताम् ।
 कराब्जभ्राम्यत्कमलां रक्तवस्त्राङ्गरागिणीम् ॥
 हेमप्राकारमध्यस्थां रत्नसिंहासनोपरि ।

ध्यायेत् कल्पतरोर्मूले देवीं तां धनदायिकाम् ॥
 ध्यात्वा च साधकश्रेष्ठः पूजयेद्भक्तितत्परः ।
 नवयोन्यात्मकं चक्रं विलिखेत् कर्णिकोपरि ॥
 दिग्दलं पद्ममालिख्य चतुरस्रं ततो बहिः ।
 कोणेषु वज्रान् संलिख्य मध्ये बीजं समुल्लिखेत् ॥
 अङ्गानि केशरेऽभ्यर्च्य दले शक्तीः प्रपूजयेत् ।
 लक्ष्मीः पद्मा तथा पद्मालया श्रीश्च हरिप्रिया ॥
 हरा चैवाऽथ कमलालयाऽब्जलोलचञ्चला ।
 एताः शक्तीः प्रपूज्याथ मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ॥
 प्रजपेद्दक्षसूत्रेण रत्नालिकृतकेन च ।
 लक्षे जपेत् मन्त्रसिद्धिः प्रयोगानाचरेद्बुधः ॥
 रात्रौ चेज्जपते चाष्टसहस्रं सप्त वासरान् ।
 एतेनैव सुसिद्धः स्यात् पुरश्चर्यादिको विधिः ॥
 किमत्र दुर्लभं देवि साधयेद्यदि मानवः ।
 भुक्त्वा वाऽप्यथ वाऽभुक्त्वा पायसान्नं प्रदाय च ॥
 दशकृत्वोऽथ वा शौचमकृत्वा वा कुले च ताम् ।
 यः स्मरेद्देवि विद्यां तां दारिद्र्यैर्नाभिभूयते ॥
 कामदेवं जपेत् पार्श्वे देव्याः प्रत्यहमादरात् ।
 तेन देव्या महाप्रीतिर्वाञ्छितार्थं ददाति च ॥
 पूजान्ते च समायाति रात्रौ देवी धनेश्वरी ।
 सर्वालङ्कारमुत्सृज्य दत्त्वा याति निजालयम् ॥
 धनं च विपुलं दत्त्वा साधकस्य मनोरथान् ।
 पूरयित्वा महेशानि वशगा जायते शुभा ॥

स्वयमाह्वेति यक्षेशी यो मां स्मरति मानवः ।
तस्य दारिद्र्यसन्यासं दासीवत् करवाण्यहम् ॥

द्वितीयमन्त्रस्य पुरश्चरणमाह ।

सहस्रसप्ततिर्यावत् पुरश्चरणमुच्यते ।
होमो घृतेन खण्डेन मधुना च दशांशतः ॥
ताम्रपात्रे मण्डलं च कृत्वा चन्दनलेपिते ।
पूजा कार्या महादेव्याः क्षणादारिद्र्यशान्तये ॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ चाङ्गे चैवास्य देवता ।
कुबेरस्य मतेनास्याः पूजाऽपि क्रियते तथा ॥

इति धनदासाधनम् ।

अथाप्सरःसाधनं (भूतडामरे)

प्रालेयं श्रीः शशी देव्या अनादिः श्रीस्तिलोत्तमा ।
तारादिमन्त्रमुद्धृत्य प्रोक्ता काञ्चनमालिका ॥
तारं श्रीर्वर्मणा युक्ता भाव्या कुण्डलहारिणी ।
तारं वर्मसमायुक्तं रत्नमाल्येति पञ्चमी ॥
तारं ब्रह्मेति रम्भाख्या विषं श्रीरुर्वशी परा ।
अनादिवीजमाता च भूतिनीत्यप्सराः क्रमात् ॥
क्रोधं नत्वा प्रवक्ष्येऽहमथासां सिद्धिसाधनम् ।
शैलशृङ्गं समारुह्य जपेच्छक्षं समाहितः ॥
पौर्णमास्यां समभ्यर्च्य घृतदीपं निवेदयेत् ।
प्रजपेत् सकलां रात्रिमायाति बन्धनक्षये ॥
चन्दनार्घेण संतुष्टा वरं वरय भाषिते ।
कामिता सा भवेद्द्वार्या प्रयच्छति रसायनम् ॥

सहस्रं वत्सरं याति वरं दद्याद्यथेप्सितम् ।
 जपेद्युतमात्रं तु क्षीराशो सप्तवासरान् ॥
 चन्दनेन विधायाथ मण्डलं सप्तमे दिने ।
 संपूज्य भक्तितः शुक्लाष्टम्यां पर्वतमूर्धनि ॥
 प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशात्यये ।
 आगत्य पुरतस्तिष्ठेत् सितवस्त्रोन्नतस्तनी ॥
 चुम्बत्याऽऽलिङ्गयत्याशु भार्या भवति कामिका ।
 राज्यं यच्छति संतुष्टा त्रिदिनं दर्शयत्यपि ॥
 पञ्चवर्षयहस्रं तु भुक्त्वा भोगमनुत्तमम् ।
 मृते राजकुले जन्म प्रयच्छति तिलोत्तमा ॥
 अन्यथा म्रियते शीघ्रं विपरीते कृते सति ।
 नीचगासङ्गमं कृत्वा मण्डलं चन्दनेन च ॥
 धूपं चैवागुरुं दत्वा बलिं च प्रतिपादयेत् ।
 जपेदष्टसहस्रं तु नित्यं सप्तदिनावधि ॥
 सप्तमे दिवसे पूजां कृत्वा धूपं प्रदापयेत् ।
 प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशात्यये ॥
 चन्दनार्घ्येण संतुष्टा वरं वरय भाषिते ।
 साधकेनापि वक्तव्यं मातृवत् परिपालय ॥
 वस्त्रालङ्करणं भक्ष्यं सेवकेभ्यः प्रयच्छति ।
 मृते राजकुले जन्म दद्यात् काञ्चनमालिका ॥
 न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासो विधीयते ।
 शैलमूर्ध्नि समास्थायायुतं मासं जपेन्मनुम् ॥
 धूपं दत्वा समभ्यर्च्य पुनः रात्रौ जपेत् ततः ।

अर्धरात्रे समायाति प्राग्वदर्थं प्रदापयेत् ॥
 कामिता सा भवेद्भार्या प्रत्यहं संप्रयच्छति ।
 लक्षमेकं हिरण्यं च सिद्धद्रव्यं रसायनम् ॥
 दर्शयेत् पृष्ठमारोप्य स्वर्गं कुण्डलहारिणी ।
 देवतायतनं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ॥
 मासमेकं तु मासान्ते पौर्णमास्यां पुनर्जपेत् ।
 समभ्यर्च्यार्धरात्रौ च श्रूयते नूपरध्वनिम् ॥
 समायात्यन्तिकं दद्यात् पुष्पासनमनुत्तमम् ।
 किमिच्छसि वद त्वं मे भव भार्येति साधकः ॥
 भार्याकर्म करोत्येवं राज्यं यच्छति कामिकम् ।
 याति वर्षसहस्राणि प्रत्यहं परितोषिता ॥
 प्रतिपत्तिथिमारभ्य कृत्वा चन्दनमण्डलम् ।
 धूपं च गुग्गुलुं दत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ॥
 त्रिसन्ध्यं पौर्णमास्यां च पूजां कृत्वा सुशोभनाम् ।
 प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशात्यये ॥
 कामिता सा भवेद्भार्या चान्यथा म्रियते ध्रुवम् ।
 ददाति कामिकं भोज्यं सिद्धद्रव्यं रसायनम् ॥
 दशवर्षसहस्राणि जीवतेऽन्ते मृते पुनः ।
 जन्म राजकुले कुर्यादद्यात् क्रोधप्रसादतः ॥
 रात्रौ देवगृहं गत्वा चन्दनेन च मण्डलम् ।
 कृत्वा धूपं ततो दत्वाऽयुतं मासयुतं मनुम् ॥
 मासान्ते महतीं पूजां कृत्वा रात्रौ जपं चरेत् ।
 निशात्यये समायाति प्रदद्यात् कुसुमासनम् ॥

कृते च स्वागतं पृच्छेत् किमिच्छसि च भाषते ।
 साधकः प्राह भार्या त्वं भव यच्छ रसायनम् ॥
 याति वर्षसहस्राणि अप्सराः स्वयमुर्वशी ।
 परस्त्रो व्रजयेत् सर्वां चान्यथा म्रियते ध्रुवम् ॥
 एकाकी शयने स्थित्वा शुची रात्रौ च कुङ्कुमैः ।
 लिखित्वा भूषिणीं भूजे चन्दनेन तु धूपयेत् ॥
 जपेदष्टसहस्रं तु मासं यावत् प्रयत्नतः ।
 मासान्ते तु समभ्यर्च्य जपेदष्टसहस्रकम् ॥
 राज्यधीन्तिकमायाति भार्या भवति कामिता ।
 सिद्धद्रव्यं हिरण्यं च तुष्टा यच्छति भूषिणी ॥
 क्रोधराजः पुनः प्राह यदि नायाति साधकः ।
 अनेन क्रोधयोगेन जपेदप्सरसां चयम् ॥
 विषं प्राथमिकं बीजमुद्धरेच्च कटुद्वयम् ।
 अमुको क्रोधबीजं च वातमादरसंयुतम् ॥
 जपेत् सकृत् समुद्धृत्य मन्त्रमष्टसहस्रकम् ।
 म्रियते शीर्यते मूर्ध्नि प्रस्फुटत्यप्सरेति च ॥
 वन्दयेदप्सरोवृन्दं मन्त्रेणानेन साधकः ।
 विषवन्धद्वयं प्रोच्यहनयुग्ममुदीरयेत् ॥
 अमुकीं क्रोधमन्त्रोऽयमप्सरोवश्यकारकः ।
 अथ वक्ष्येऽप्सरोवश्यकारकं मनुमुत्तमम् ॥
 विषं चलद्वयं प्रोच्य अमुकीं वश्यमानय ।
 सकूर्चास्त्रजपादेवाप्सरोवश्यमियाद्भुवम् ॥

इत्यप्सरसाधनम् ।

अथ ज्वालामुखीसाधने (फेत्कारिणीतन्त्रे)

नमो भगवतीत्युक्त्वा ज्वालामालिन्यतः परम् ।

गृध्रगणपरिवृते द्विठान्तो मनुरीरितः ॥

ॐ नमो हृदयं प्रोक्तं भगवति शिरः स्मृतम् ।

ज्वालामालिनि च शिखा गृध्रगणपरिवृते ॥

वर्मखाह्रात्रमित्येतज्जातियुक्तं न्यसेत् तनौ ।

अभुक्त्वा नियतं चैतज्जयमन्त्रं जपेज्जयी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

रुद्राङ्गनाग्निजायाभ्यां रुद्रज्वालामुखीत्यपि ।

मन्त्रान्तरं समाख्यातं ज्वालामुख्या अनन्तरम् ॥

दीपतैलाक्तपादोऽर्धरात्रे गुरुदिनादितः ।

जपेदष्टसहस्रं तु त्रयोविंशतिवासरान् ॥

प्रत्यहं पलषट्कं च ददातीति न संशयः ।

पूर्वमन्त्रमाहात्म्यमाह ।

नारायणेन कथितमगस्त्यैः कथितं पुनः ।

सुसिद्धिमिच्छता गोप्यो नामापि न समीरयेत् ॥

पुत्रस्य नृपतेश्चापि धार्मिकस्य विशेषतः ।

नवदुर्गाविधानेन दर्शयेत् कार्यगौरवात् ॥

नृपोऽपि सम्यगाचारो मन्त्रज्ञो विविधं धनम् ।

निवेद्य विधिवत् पश्चान्मन्त्रग्रहणमाचरेत् ॥

स्मृतिमात्रेण वैवर्णान् रिपून् सर्वान् विनाशयेत् ।

प्रदद्यादक्षिणां तस्य सहस्रं शतमेव वा ॥

गवां सुवर्णं निष्काणां भूमिं वा शस्यशालिनीम् ।

सर्वशान्तिमवाप्नोति सर्वरक्षाकृतिर्भवेत् ॥

निष्कमलङ्कारः ।

इति ज्वालामुखीसाधनम्

अथ कर्णपिशाचीमन्त्रस्तत्रैव ।

कहयुग्मं कालिके च गृह्य युग्मं तथैव च ।

पिण्डं पिशाचि स्वाहेति द्वीपार्णः कथितो मनुः ॥

ध्यानम् ।

ध्यायेत् पिशाचीं चलशूलहस्तां श्यामां सुदीर्घां युवतीं त्रिनेत्राम् ॥

क्रुद्धां विवर्णां तनुवृत्तमध्यां गुञ्जाफलैः कल्पितहारयष्टिम् ॥

साधनप्रकारमाह ।

एकविंशदिनं यावदुदयास्तमयं जपेत् ।

नित्यं सायं स्वमाहारं पिण्डं हर्म्योपरि क्षिपेत् ॥

त्रिसप्ताहाच्च तुष्टा सा शय्यां गत्वा पिशाचिनी ॥

पञ्चविंशतिदेशानां कथां च कथयत्यपि ॥

त्रिंशदिनैश्च देवेशि जम्बूद्वीपकथां नयेत् ।

द्वात्रिंशता तथा गौरि त्रैलोक्यं श्रावयेद्भुवम् ॥

त्रिस्वादुबलिदानेन सर्वं वदति तत्क्षणात् ।

सभायां यदि संघाते द्यूते च रिपुसंसदि ॥

सर्वं कथयति क्षिप्रं नूनं तुष्टा पिशाचिनी ।

केनापि नैव वेद्या सा साधकस्तां प्रपश्यति ॥

इति कर्णपिशाचीसाधनम् ।

अथ विभूषिण्यादिसाधनानि (केत्कारिणीतन्त्रे)

आद्या विभूषिणी देवी परा कुण्डलधारिणी ॥

हारिणी सिंहिनी चैव हंसिनी तु ततो नटी ॥

देवी कामेश्वरी चैव प्रोक्ता देवी रतिप्रिया ।

विभूषिणीमन्त्रमाह ।

क्रोधास्त्रद्वयमायान्ते भूतिनी च त्रिकूर्चतः ॥

तारलज्जाद्वयादस्त्रद्वयान्ते च विभीषिका ॥

क्रोधद्वयान्तो मन्त्रोऽयं विभूषण्या उदीरितः ।

ध्यानम् ।

कर्त्री चैव करे परे नरशिरस्तुङ्गाकृतिर्भूषणा ।

दन्तान्तर्गतमांसशोणितवसासंयुक्तभूतव्रता ।

कालव्यालकरालसत्त्वविकटव्यालम्बिदंष्ट्राङ्कुरा

यस्याः केशकुलाकुलाखिलमहोशैलाऽस्तु सा रक्षतु ॥

साधनप्रकारमाह ।

एकवृक्षतरं गत्वा यामिन्यां प्रवसेत् त्र्यहम् ।

जपेदष्टसहस्रं तु ध्यायन्नव्यग्रमानसः ॥

जपान्ते पूजनं नाम्नाऽगुरुधूपं निवेदयेत् ।

प्रजपेदर्धरात्रे तु समायाति विभूषिणी ॥

चन्दनोदकमिश्रेण दत्तार्घा तुष्यति ध्रुवम् ।

माता वा भगिनी भार्या हृष्टा भवति कामिता ॥

करमेलनकं कृत्वा माता भूत्वा जगन्नये ।

शताष्टपरिवारस्य सदाऽभ्यञ्जनभूषणम् ॥

भगिनी चेन्महायोगिन् सहस्रयोजनादपि ।

ददाति स्त्रियमानीय दिव्यं रसरसायनम् ॥

भार्या चेत् स्पृष्टमारोप्य स्वर्गं नयति तत्क्षणात् ।

दिने रत्नसहस्रं तु रसं चैव रसायनम् ॥

दद्यादिति शेषः ।

सर्वांशाः पूर्यत्येव सदा देवो विभूषणी ।

अथ कुण्डलधारिणीमन्त्रस्तत्रैव ।

ध्रुवमायास्त्रयुगला प्रोक्ता कुण्डलधारिणी ।

जपेदष्टसहस्रं तु मासमात्रं दिने दिने ॥

कर्णे कण्डलधारिणी शशिकुण्डलधारिणी ।

आयाति रुधरेणार्घा देयास्तुष्टा वदत्यपि ॥
किं कर्त्तव्यं मया वत्स मातेति भव साधकः ।
पञ्चाशता दिनेनापि त्रैलोक्यमपि दास्यति ॥

अथ सिन्दूरहारिणीमन्त्रस्तत्रैव ।

क्रोधद्वयास्त्रयुगतः सिन्दूरहारिणीपदम् ।
कूर्चत्रयान्तः संप्रोक्तः सिन्दूरहारिणीमनुः ॥

ध्यानम् ।

स्वर्णालङ्कृतिहारिणी चलदलव्यालोलशाखाम्बरा
सोत्कण्ठीकृतगात्रकर्मसुभगा* शुभ्रांशुचन्द्रप्रभा ।
अन्तः संततकान्तिदन्तमलिना त्रैलोक्यशोभास्पदा
पायादूर्ध्वनवांशुशूललतिका सिन्दूरहारिण्यसौ ॥
शून्यदेवालयं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
शीघ्रमायात्यागता सा भार्या भवति कामिता ॥
पञ्चविंशति दिनानि वस्त्रालङ्कारभूषणम् ।
ददाति साधकेन्द्राय देवी सिन्दूरहारिणी ॥

अथ सिंहिनीमन्त्रस्तत्रैव ।

लज्जाद्वयास्त्रयुगलं सिंहिनीति पदं ततः ।
क्रोधबीजत्रयाद्यन्तः कीर्त्तितः सिंहिनीमनुः ॥

ध्यानम् ।

शैलाग्रद्रुमस्वर्गदन्तवदने दुर्गान्तदैत्यस्थिता
केशा अस्थिसमस्तबिष्णुचरणप्रभ्रष्टसंत्रासिनी ।
या दन्तान्तरलम्बिधारणरणे प्रक्षुब्धसिद्धाङ्गना
सेयं पातु समस्तकण्टककुलव्याकम्पिमालाकुला ॥

गतैकलिङ्गं यामिन्यां प्रजपेदयुतं मनुम् ।
 ततो हृष्टाऽतिवरदा सिंहिन्यायाति पूजिता ॥
 किं करोमि वदत्येवं भार्या भवति कामिता ।
 दीनाय वस्त्रयुगलं दद्याद्रसरसायनम् ॥

अथ हंसिनीमन्त्रस्तत्रैव ।

तारत्रिकूर्चास्त्रयुगाद्धंसिनी भूतिनी ततः ।
 कूर्चत्रयान्तः कथितो हंसिनीमनुरुत्तमः ॥

ध्यानम् ।

शुभ्रा शुभ्रसरोजतुल्यनयना दुग्धासवेनार्चिता
 प्रारब्धध्वनिमुग्धमानवधूसंसेविता सादरम् ।
 किञ्चित्तुङ्गविलोलपाङ्गवलितव्यामुग्धमीलन्मुखी
 मुक्तायुक्तविलोलहारललिता श्रीहंसिनी पातु नः ॥
 वज्रपाणिगृहं गत्वा प्रतिमां शोभनां लिखेत् ।
 हयमारेण संपूज्य जपेदयुतसंख्यकम् ॥
 यावदर्धनिशां देवी हंसिन्यायाति निश्चितम् ।
 चन्दनार्घ्यप्रदानेन हृष्टा वदति साधकम् ॥
 किं मया ते प्रकर्तव्यं किङ्करी भव साधकः ।
 वस्त्रालङ्कारभोज्याद्यं व्ययार्थं संप्रयच्छति ॥
 तदशेषव्ययाभावान्न ददाति प्रकुप्यति ।

अथ चेटीसाधनं तत्रैव ।

ततः कूर्चयुगं चास्त्रयुगं चेटी ततः परम् ।
 डेऽन्तं क्रोधयुगं चोक्त्वा चेटीयुगं त्रयां ततः ॥

ध्यानम् ।

गच्छन्ती मितभाषिणी शशिसखी श्रेष्ठोत्तरीयाधरा

विभ्रन्ती कलसं सरोजयुगलं स्वर्णान्तसीमन्तिनी ।
 श्रीखण्डादिविलेपनामलवपुःसौरभ्यसंभाविता
 किञ्चिद्धर्मसमार्जितार्पितकरा पायादियं चेटिका ॥
 कुत्रापि भोषणस्थाने नामोच्चारणमात्रतः ।
 ध्रुवं चेटिं समागत्य चेटिकर्म करोत्यपि ॥
 अथ वाऽस्य गृहद्वारे त्र्यहं रात्रौ जपं चरेत् ।
 आगत्य नियतं देवी चेटिकर्म करोति च ॥

अथ कामेश्वरीमन्त्रस्तत्रैव ।

तारकूर्चास्त्रयुक्कामेश्वरि भूतिन्यतः परम् ।
 डेन्तं क्रोधत्रयं कामेश्वरीमन्त्र उदाहृतः ॥

ध्यानम् ।

कामस्कन्धसमागता मधुलतावासन्तिपुष्पान्विता
 गायन्ती मधुराधरस्मितमुखी वीणावती चञ्चला ।
 रक्ताम्भोजविलोचना मधुमदैर्मत्ता समन्तादियं
 पायात् पुष्पधनुर्धरा मधुमती कामेश्वरी भूतिनी ॥
 मातृस्थानं समागत्य कृत्वा मांसस्य भक्षणम् ।
 मांसादिना बलिं दत्वा सहस्रं सप्त वासरान् ॥
 जपान्नियतमायाति रुधिरार्घं निवेदयेत् ।
 कामेश्वरी भवेत् तुष्टा भार्या भवति कामिता ॥
 सर्वाशाः पूरयत्येव राज्यं यच्छति निश्चितम् ।

अथ रतिप्रियामन्त्रस्तत्रैव ।

तारं लज्जा च कूर्चास्त्रद्वययुक्ता रतिप्रिया ।
 क्रोधत्रयपास्त्रयुक्कामेश्वरीमन्त्रोक्तवत् क्रिया ॥

ध्यानम् ।

हेमप्राकारमध्ये सुरविटपितटे हेमपीठाधिरूढा
 यक्षीमालाविसर्पत्परिमलकुसुमोद्भासिधम्मिल्लभारा ।
 पीनोत्तङ्गस्तनाढ्या कुवलयनयना रक्तवर्णा कराभ्यां
 भ्राम्यद्रक्तोत्पलाभा सकलसुरयुता दिव्यभूषाङ्गरागा ॥
 रात्रौ देवगृहं गत्वा तत्र शय्यां प्रकल्पयेत् ।
 सितवस्त्रं चन्दनं च जातीपुष्पं प्रदापयेत् ॥
 धूपं तु गुग्गुलं दत्वाऽष्टसहस्रं जपेन्मनुम् ।
 जपान्ते नित्यमायाति चुम्बनालिङ्गनादाभिः ॥
 कामिता जायते भार्या सत्यं देवी कुमारिका ।
 दद्यादष्टदिनेनैव दिव्यं वस्त्रयुगं ततः ॥
 कामिकं भोजनं दिव्यं परिवारस्य दास्यति ।
 अन्यद्वैश्वानरगृहाद्द्रव्यमानोय यच्छति ॥
 सहस्रमेतानि जपेज्जपान्ते सिद्ध्यति ध्रुवम् ।
 मुहुर्मुहुर्जपेन्मन्त्रमित्याह क्रोधभूषतिः ॥

इति विभूषिण्यादिसाधनानि ।

अथ धरित्रीसाधनम् । तदुक्तं (वैष्णवीकल्पे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि धरित्रीसाधनं परम् ।
 रहस्यातिरहस्यं च सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥
 सर्वैश्वर्यकरं नृणां दुर्लभं परमाद्भुतम् ।
 यज्ज्ञात्वा साधकश्रेष्ठो धनदेन समो भवेत् ॥
 शरत्काले च केदारमध्ये कमलसंकुले ।
 विनिर्माय कुटीं रम्यां स्थापयेत् कलशं शुभम् ॥
 भौमाष्टम्यामाहृत्या मृदा नक्तं विनिर्मितम् ।

गन्धर्वकर्मैर्लिप्तं वेष्टितं शुक्लवाससा ॥
 वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण तत्रावाह्य वसुन्धराम् ।
 नानोपचारसम्भारैस्त्रिसन्ध्यं पूजयेत् सुधीः ॥
 भूबीजं तारमायान्ते डेन्ता चैव वसुन्धरा ।
 हृदयं वह्निजायान्तो द्वादशाणो मनुः स्मृतः ॥
 महावराहोऽस्य मुनिर्गायत्री छन्द ईरितम् ।
 वसुन्धरा देवता च भूबीजं बीजमुच्यते ॥
 मायाबीजं धरित्र्याश्च विनियोगः प्रसादने ।
 मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि कृत्वा ध्यायेद्वसुन्धराम् ॥

ध्यानम् ।

फूलाभोरुहमध्यस्थामिन्दीवरदलप्रभाम् ।
 पीतकौशेयवसनां नानालङ्कारभूषिताम् ॥
 नीलोत्पलद्वयं शालिमञ्जरीं चक्षुकं करैः ।
 बिभ्राणां सर्वलोकस्य धात्रीं वसुमतीं भजे ॥
 एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं वेदलक्षं समाहितः ।
 जपान्ते वसुधादेवी भाषते कलशोदरान् ॥
 वरं ब्रूहि प्रदास्यामि यत् ते मनसि वर्तते ।
 इति ब्रुवाणां तां देवीं प्रसूनाञ्जलिभिस्त्रिभिः ॥
 संपूज्य प्रणमेद्भूमौ दण्डवत् साधकोत्तमः ।

श्लोकार्थपठितमन्त्रः ।

नमस्तुभ्यं भगवति जगद्धात्रि वसुन्धरे ।
 विष्णुपत्नि वराहस्य दंष्ट्राकोटिकृतालये ॥
 विश्वम्भरे नमस्तुभ्यं सर्वभूताश्रये धरे ।
 रत्नानां च निधीनां च त्वदभ्यन्तरवर्तिनाम् ॥

लब्धुकामोऽस्मि कल्याणि प्रसादात् तव मेदिनि ।
 इति संप्रार्थयेद्देवीं सा ददाति वरं ततः ॥
 द्रक्ष्यसि प्राप्स्यसीत्येवं ततः पश्यति साधकः ।
 पदे पदे च रत्नानि विधानं योजनत्रये ॥
 ततस्तानि समादाय यथेष्टं विहरेद्भुवि ।
 आदौ पुरस्कृयां कुर्याद्द्वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥
 तदशांशं च जुहुयात् संस्कृते हव्यवाहने ।
 ससर्पिषा पायसेन तदशांशं च तर्पयेत् ॥
 मार्जयेत् तदशांशेन तदशांशेन वैष्णवान् ।
 विप्रान् संभोजयेन्मन्त्री ततः साधनमाचरेत् ॥
 पुरश्चर्यामकृत्वा तु न मन्त्रः कोऽपि सिद्ध्यति ।

इति धरित्रीसाधनम् ।

एवं किन्नर्यादिसाधनानि विस्तरभयादुपेक्षितानि ।

मेरुतन्त्रं महाकालसंहितां शक्तिसङ्गम् ।
 वाडवानलतन्त्रं च तन्त्रं कालानलाभिधम् ॥
 कालीतन्त्रं परातन्त्रं तन्त्रराजं तथैव च ।
 मुण्डमालाख्यतन्त्रं च योगिनीहृदयं तथा ॥
 कुमारीतन्त्रमाम्नायरहस्यं श्रीमतोत्तमम् ।
 कुलिकाम्नायतन्त्रं च कुलचूडामणिं तथा ॥
 तन्त्रचूडामणिं तद्वद्भावचूडामणिं तथा ।
 समयाचारतन्त्रं च विश्वसारं तथैव च ॥
 भैरव्या भुवनेश्वर्याश्चामुण्डायास्तथैव च ।
 योगिन्याश्चापि वाराह्याः पञ्च तन्त्राणि च क्रमात् ॥
 नीलतन्त्रं गौतमीयतन्त्रं फेस्कारिणीमपि ।

वामकेश्वरतन्त्रं च वीरतन्त्रं तथैव च ॥
 संमोहनाख्यतन्त्रं च तन्त्रं गन्धर्वसंज्ञकम् ।
 माहेश्वरीयतन्त्रं च तन्त्रं प्रथमसंज्ञकम् ॥
 तद्वत् कात्यायनीतन्त्रं बालातन्त्रं तथैव च ।
 उड्डीशं मालिनीतन्त्रं गुह्यातन्त्रं तथैव च ॥
 कौलेशं कुब्जिकातन्त्रं कुलरत्नावलीमपि ।
 विशुद्धेश्वरतन्त्रं च गणेश्वरविमर्षिणीम् ॥
 सिद्धसारस्वतं शम्भुविद्यातन्त्रं तथैव च ।
 तद्वद्भैरवतन्त्रं च ज्ञानार्णवकुलार्णवौ ॥
 तथैव वैष्णवीकल्पं कालीकल्पं कुलामृतम् ।
 श्रीमत्प्रत्यङ्गिराकल्पं ताराकल्पं तथैव च ॥
 निरुत्तराख्यतन्त्रं च तन्त्रमुत्तरसंज्ञकम् ।
 तन्त्रं तद्वत् स्वतन्त्राख्यं मन्त्रदेवप्रकाशिकाम् ॥
 श्रीक्रमं ब्रह्मरुद्रादियामलानि कुलागमम् ।
 शैषागमं सोमशम्भुमतं देव्यागमं तथा ॥
 डामरं भूतपूर्वं च यक्षपूर्वं च डामरम् ।
 वैनायकीसंहितां च वैशम्पायनसंहिताम् ॥
 अगस्त्यसंहितां तद्वद्बृहच्छ्रीक्रमसंहिताम् ।
 सुरेन्द्रसंहितां चैव नन्दिकेश्वरसंहिताम् ॥
 वशिष्ठसंहितां तद्वद्वायवीयां च संहिताम् ।
 गोरक्षसंहितां तद्वत्सिद्धनाथाद्यसंहिताम् ॥
 संहितां चैव वाराहीं महार्थवर्णसंहिताम् ।
 संहितां तत्त्वसाराद्यां दक्षिणामूर्तिसंहिताम् ॥

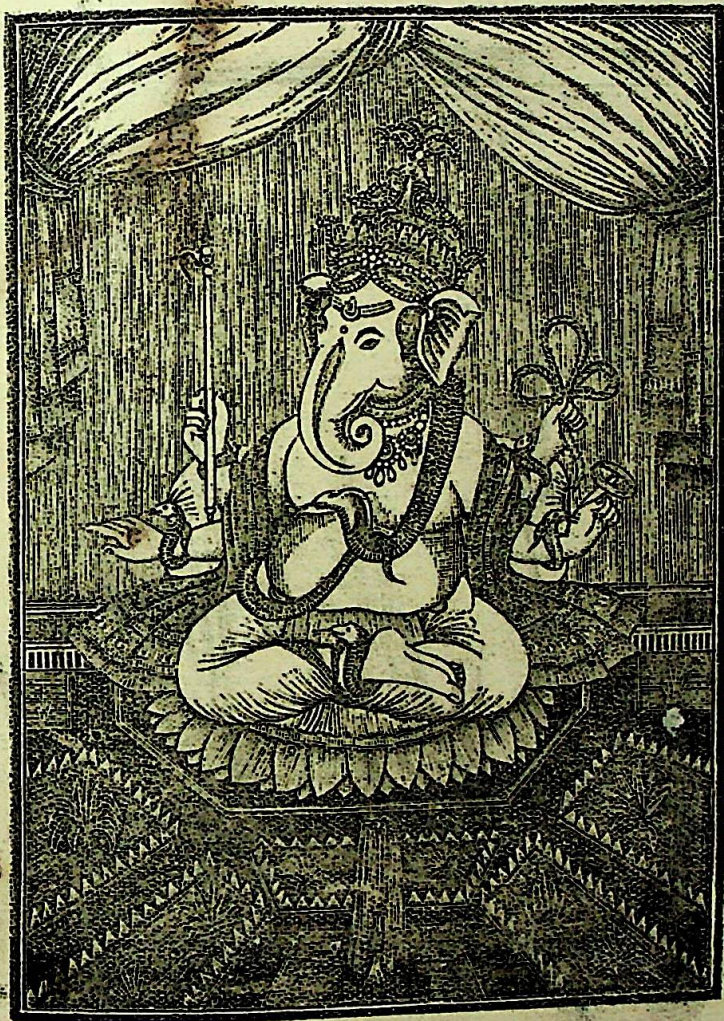
विष्वक्सेनीसंहितां च तथैव ब्रह्मसिंहताम् ।
 निबन्धेषु क्रियासारं त्रिपुरासारसंग्रहम् ॥
 प्रपञ्चसारं सिद्धान्तसारं मन्त्रमहोदधिम् ।
 शारदातिलकं चापि पुरश्चरणचन्द्रिकाम् ॥
 मन्त्ररत्नावलीं तद्दत्ताचारकुसुमावलीम् ।
 संग्रहेषु प्रसिद्धेषु ताराभक्तिसुधारणवम् ॥
 आगमाद्यां कल्पलतां मन्त्ररत्नाकरं तथा ।
 क्रियासंग्रहनामानं ग्रन्थं सिद्धान्तसंग्रहम् ॥
 कालीतत्त्वं तथा श्यामारहस्यं मन्त्रचण्डिकाम् ।
 तारारहस्यवृत्तिं च दुर्गाभक्तिरङ्गिणीम् ॥
 तन्त्रसारं तन्त्ररत्नं तन्त्रचिन्तामणिं तथा ।
 तत्त्वसारं योगसारं श्रीरामार्चनचन्द्रिकाम् ॥
 ग्रन्थं विधानमालाख्यं विधिमुक्तावलीमपि ।
 नानाविधाः पद्धतीश्च तथोपनिषदोऽपि च ॥
 ज्योतिःशास्त्रं शालिहोत्रं पुराणानि स्मृतीरपि ।
 सम्यगालोक्य लोकानामुपकारविधिरसया ॥
 महाराजधिराजेन सुरराजानुकारिणा ।
 श्रीमत्प्रतापसिंहेन विद्याब्धेः पारदृश्वना ॥
 संवत्सरे निशानाथवह्निनागधरा-१८३१ङ्किते ।
 तपस्यर्जुनपक्षे हि तिथौ भास्करवासरे ॥
 पुरश्चर्यार्णवो नाम ग्रन्थ एष विनिर्मितः ।
 महीमहीपालगणोत्तमाङ्गस्रग्धूलिभिर्धूसरपादपद्मः ।
 वीरो महादानमहाह्वेषु प्रतापसिंहो नृपतिश्चकास्ति ॥

उन्मीलयन् स्वजनमानसमानसानि
 संकोचयन् प्रतिनृपाननकैरवाणि ।
 संमोदयन् सकलकोविदलोककोकान्
 यस्य प्रतापसवितोदयते धरायाम् ॥

यस्य क्षोणिपतेः प्रतापतपने विभ्राजमाने परे
 राजन्ते न महीक्षितः क्षितितले खद्योतपोतद्युतः ।
 यत्कीर्त्तौन्दुमरीचिभिस्त्रिभुवने शुभ्रीकृते सर्वतः
 श्यामत्वं द्विषतामकीर्त्तिमिरस्तोमेषु विश्राम्यति ॥
 यावल्लोकोपकारी रचयति दिनकृद्वासरानस्ततन्द्र-
 श्चन्द्रो यावत् त्रियामाः कुमुदविशदया ज्योत्स्नयाऽलङ्करोति
 यावन्नामानि विष्णोः प्रजपति जनता सन्ति भूतानि यावद्-
 भूभर्तुस्तस्य कीर्त्तिः स्फुरतु वसुमती मण्डले तावदेषा ॥
 यद्विष्णुं प्रवदन्ति वैष्णवगणाः शैवाः शिवं मन्वते
 गाणेशा निगदन्ति दन्तिवदनं शौरा दिनेशं विदुः ।
 चिच्छक्तिं कलयन्ति शाक्तनिवहाः साङ्ग्याः परं पूरुषं
 ब्रह्माब्रह्मविदो वदन्त्यवतु वस्तदैव्यसिंहं वपुः ॥
 बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैचित्र्यचित्रामृत-
 स्रोतशालिनि सन्निबन्धनसरित्सम्भेदमभ्यर्हितम् ।
 नव्येऽस्मिन् नरदेवनिर्मितपुरश्चर्यार्णवे द्वादशः
 सद्युक्तिं स्फुटमौक्तिकोत्कररुचोत्तुङ्गस्तरङ्गो गतः ॥

इति श्रीगिरिराजचक्रचूडामणिनरनारायणेत्यादिविविधविरुदावलीविराजमानमा-
 नोन्नतश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीप्रतापसिंहसाहदेवविरचिते पुरश्चर्यार्णवे ब्राह्म्यादिमन्त्र-
 पुरश्चरणपूर्वकयन्त्रस्तवकवचादिपुरश्चरणभेदनिरूपणं नाम द्वादशस्तरङ्गः समाप्तः ।

पुरश्चर्यार्णवस्य ध्येयदेवताचित्राणि ।



गणेशध्यानम् । (६३० पृ. २० पं.)



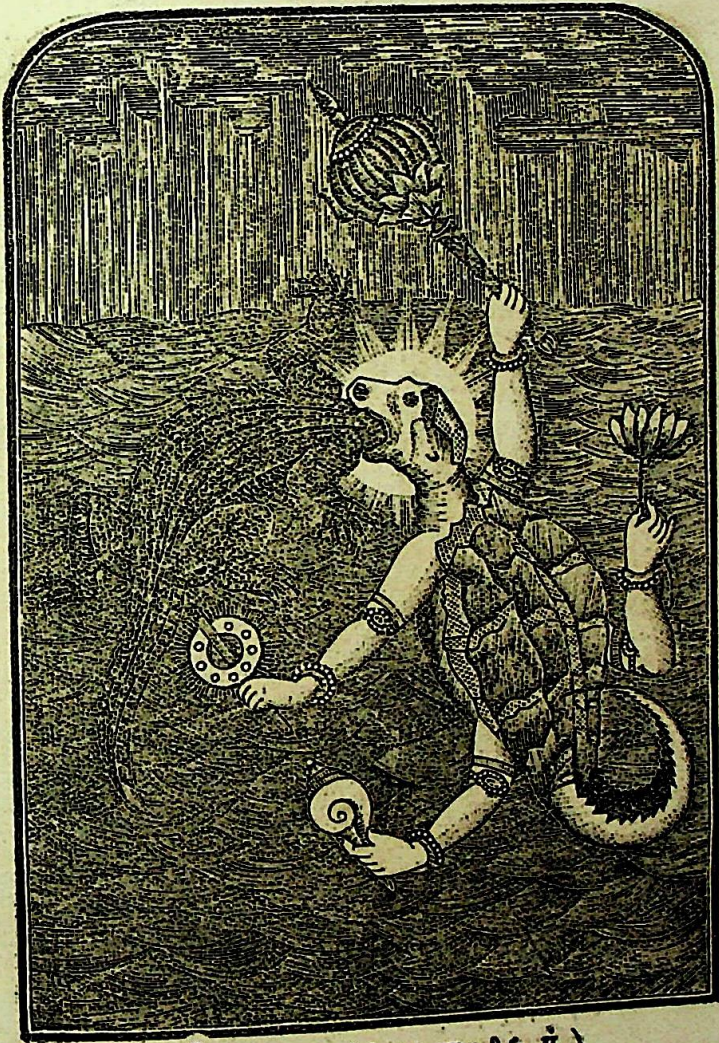
सूर्यध्यानम् । (१४० पृ. ९ पं.)



विष्णुध्यानम् । (६४३ पृ. १९ पं.)

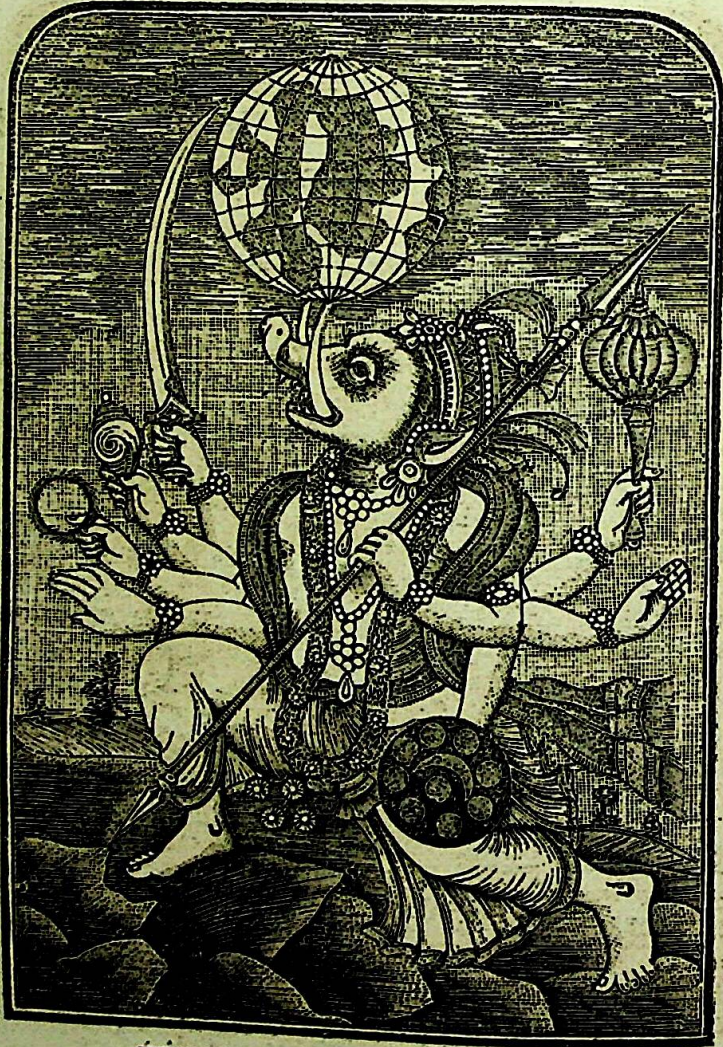


मत्स्यध्यानम् । (६४६ पृ. ४ पं.)



कूर्मध्यानम् । (१४७ पृ. १९ पं.)

पुरश्चर्यार्णवस्य



वराहध्यानम् । (६४८ पृ. १० पं.)



नृसिंहध्यानम् । (६९२ पृ. २९ पं.)



वामनध्यानम् । (६६९ पृ. १५ पं.)



परशुरामध्यानम् । (६७१ पृ. ४ पं.)



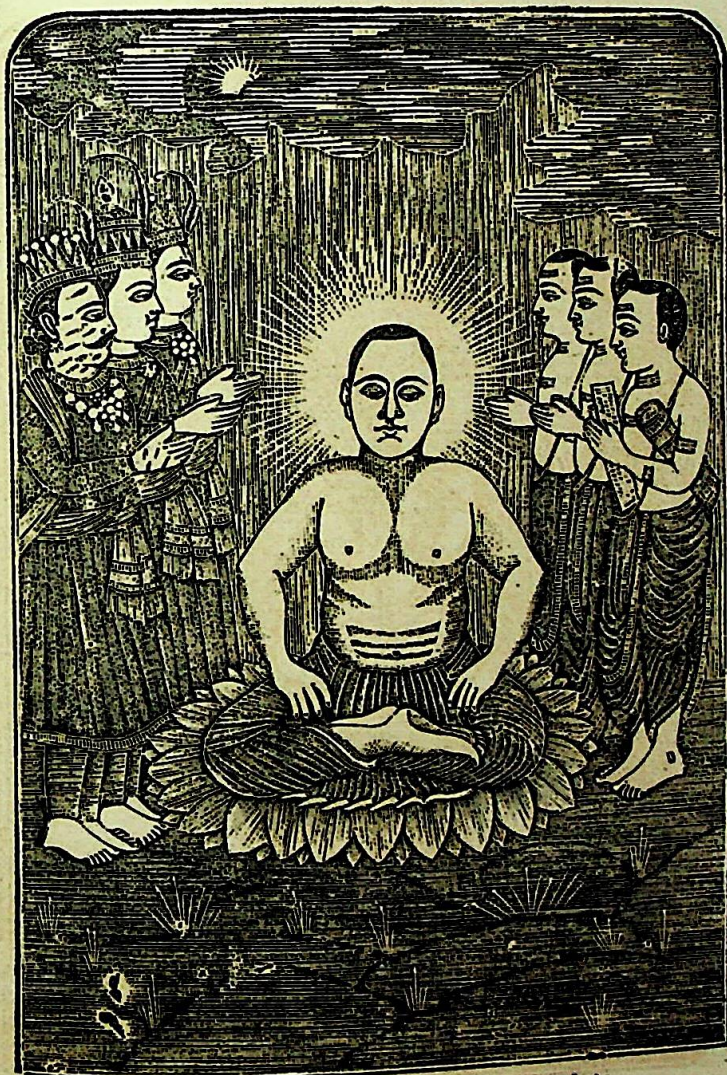
रामध्यानम् । (६७६ पृ. १८ पं.)



बलरामध्यानम् । (६८३ पृ. २० पं.)



कृष्णध्यानम् । (६८९ पृ. ४ पं.) :



बुद्धध्यानम् । (६९१ पृ. २६ पं.)



कल्किध्यानम् । (६९२ पृ. १२ पं.)



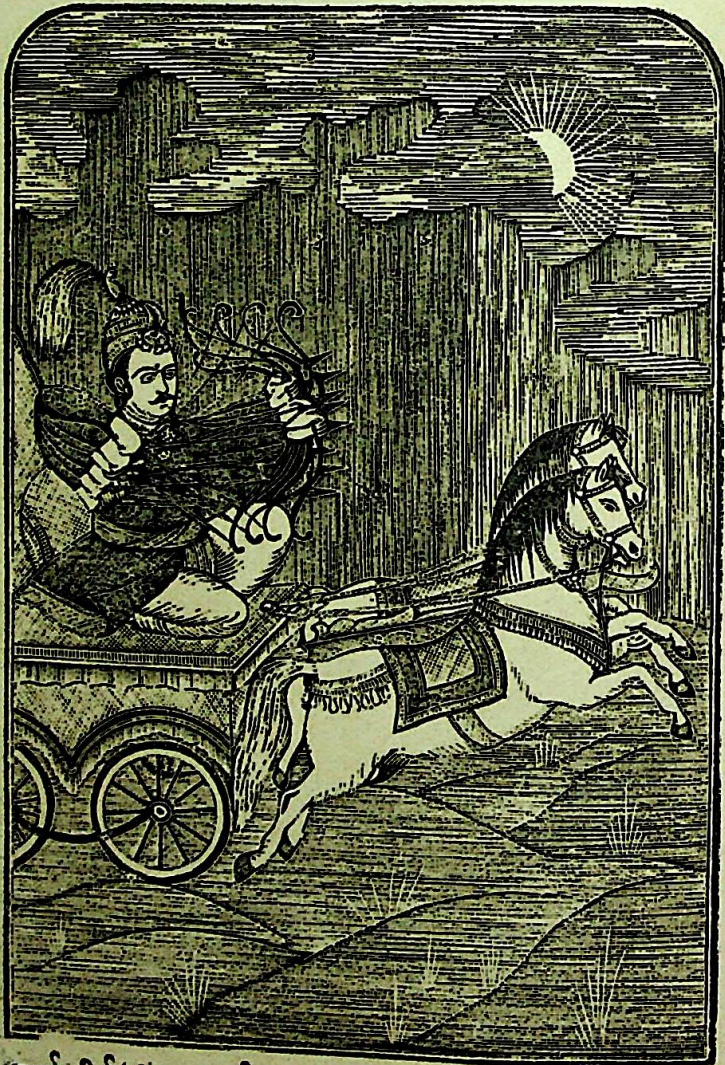
हयग्रीवध्यानम् । (६९२ पृ. १७ पं.)



शिवध्यानम् । (६९७. पृ. २१. पं.)



शरभध्यानम् । (७०४ पृ. १८ पं.)

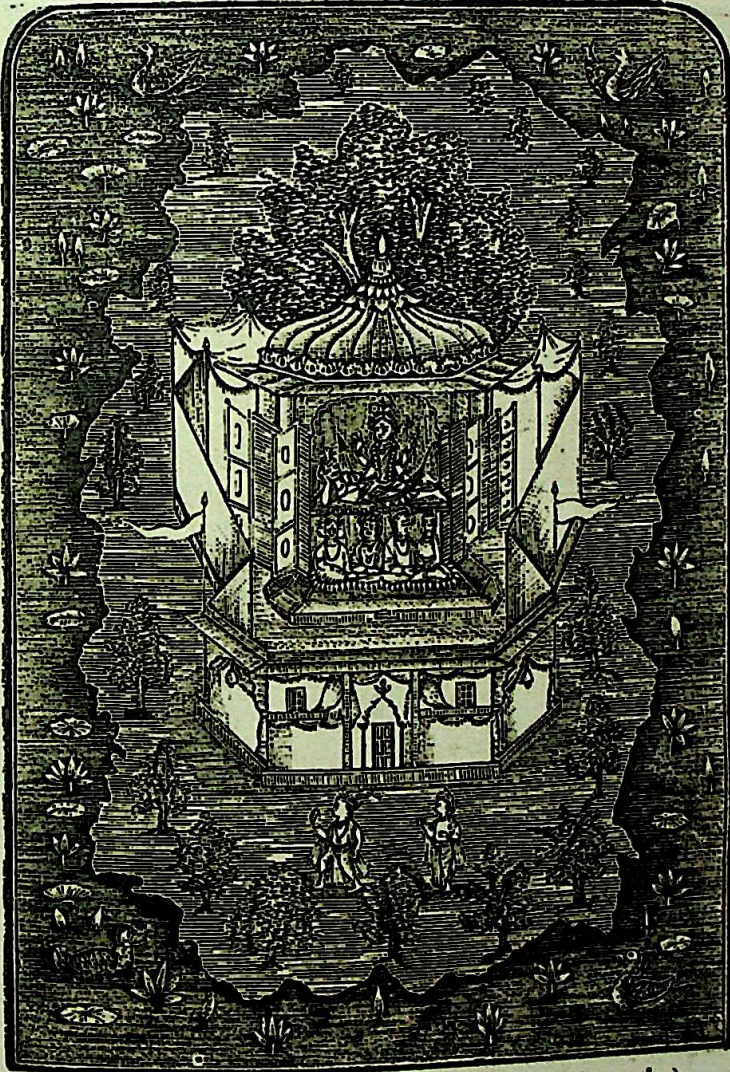


कार्तवीर्य-(सहस्रार्जुन-)-ध्यानम् । (७१० पृ. १६ पं.)

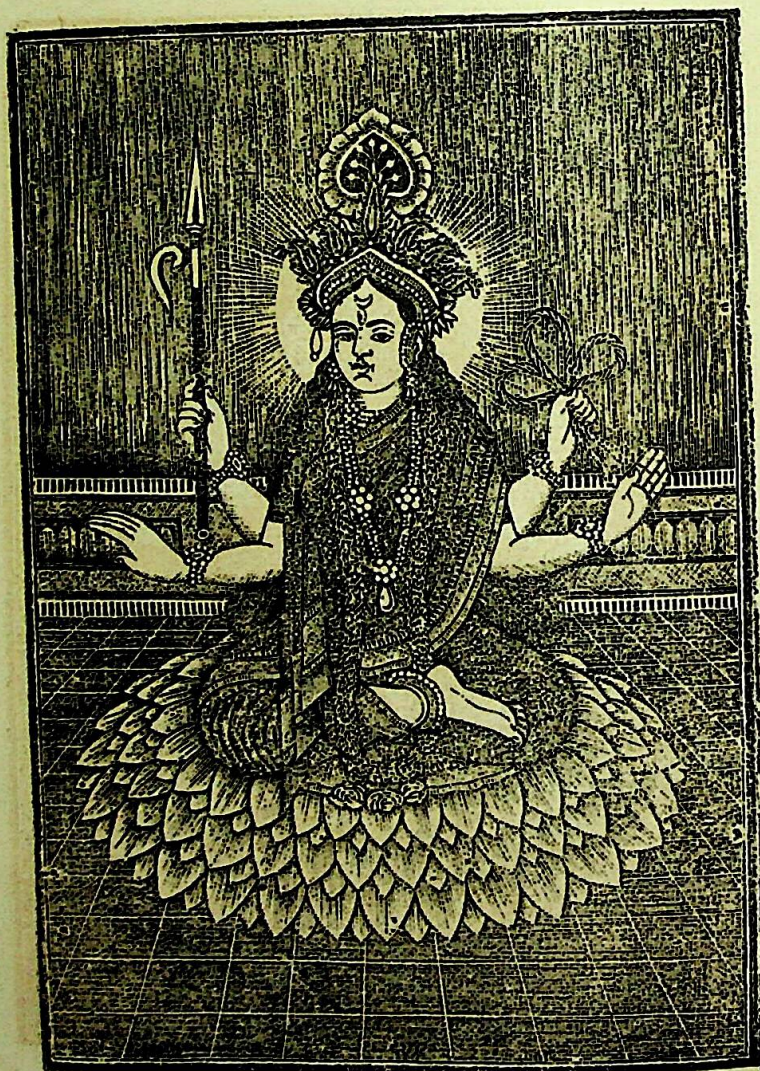




ताराध्यानम् । (७८६ पृ. २ पं.)



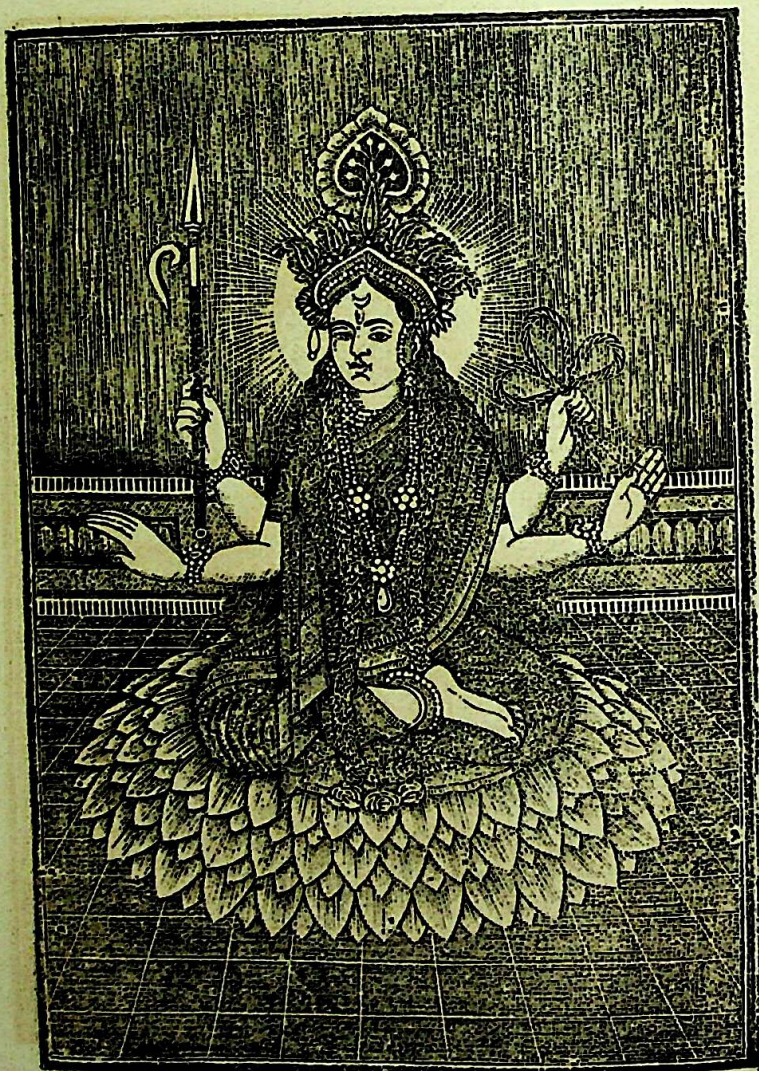
षोडशी-(श्रीविद्या)-ध्यानम् । (७९९ पृ. १० पं.)



भुवनेश्वरीध्यानम् । (८०६ पृ. २६ पं.)



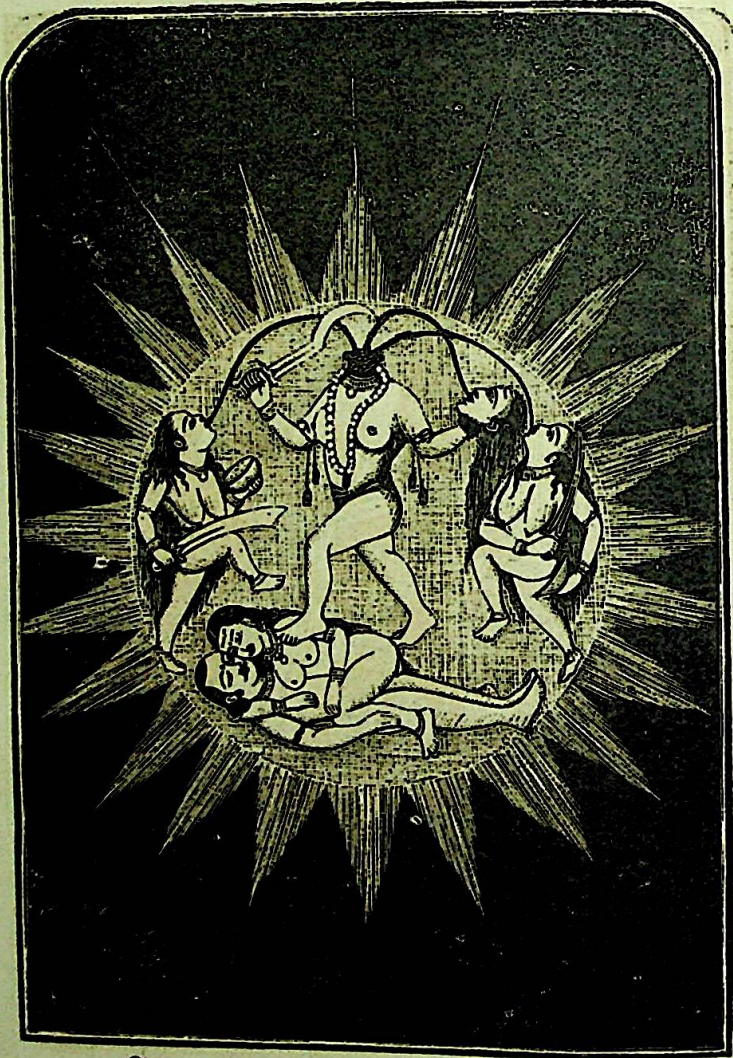
भैरवीध्यानम् । (८०९ पृ. ९ पं.)



शुक्लेश्वरीध्यानम् । (८०६ पृ. २६ पं.)



भैरवीध्यानम् । (८०९ पृ. ९ पं.)



छिन्नमस्ताध्यानम् । (८१६ पृ. ४. पं.)



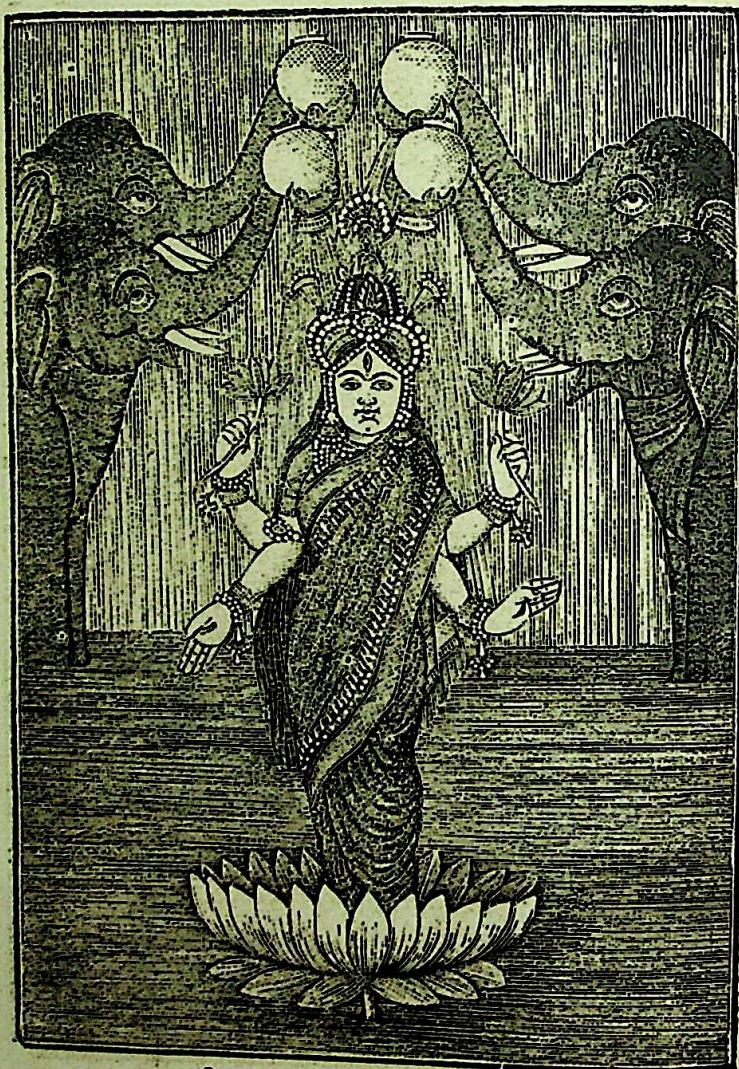
ध्रुमावतीध्यानम् । (८२२ पृ. ५ पं.)



वगलामुखीध्यानम् । (८२६ पृ. १३ पं.)



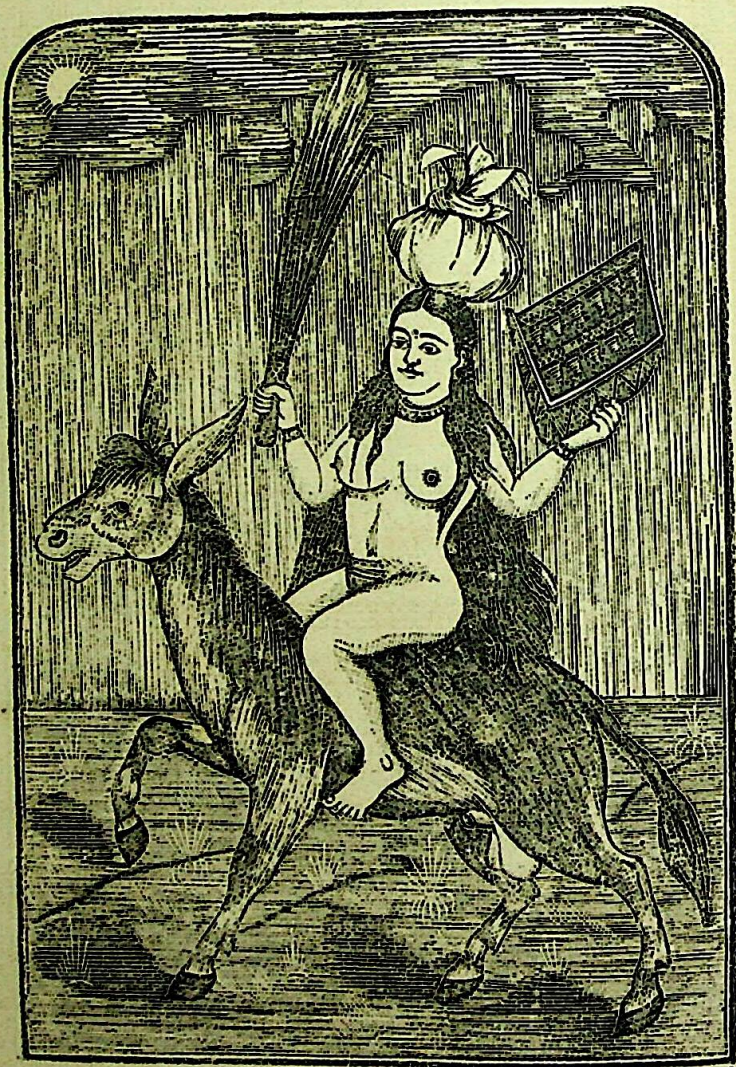
मातङ्गीध्यानम् । (८२७ पृ. १६ पं.)



लक्ष्मीध्यानम् । (८३३ पृ. ६ पं.)



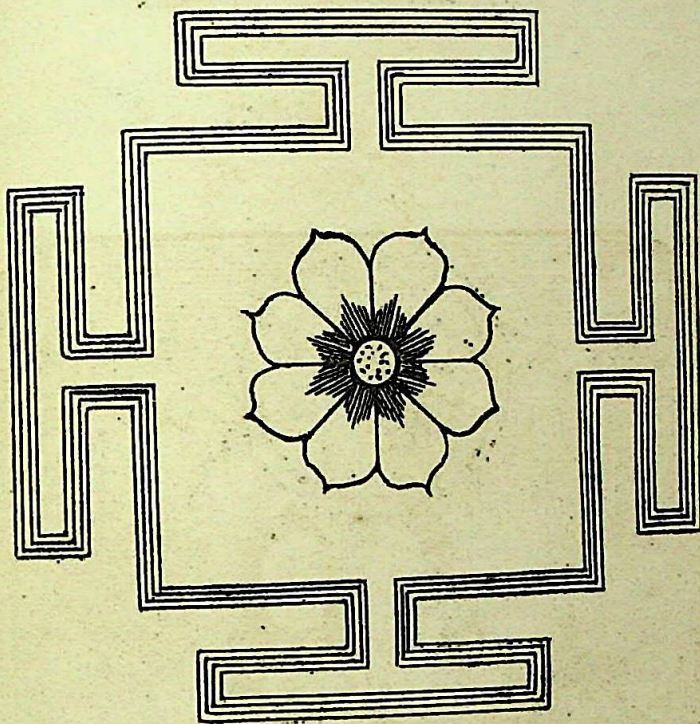
दशभुजादुर्गाध्यानम् । (९६३ पृ. २१ पं.)



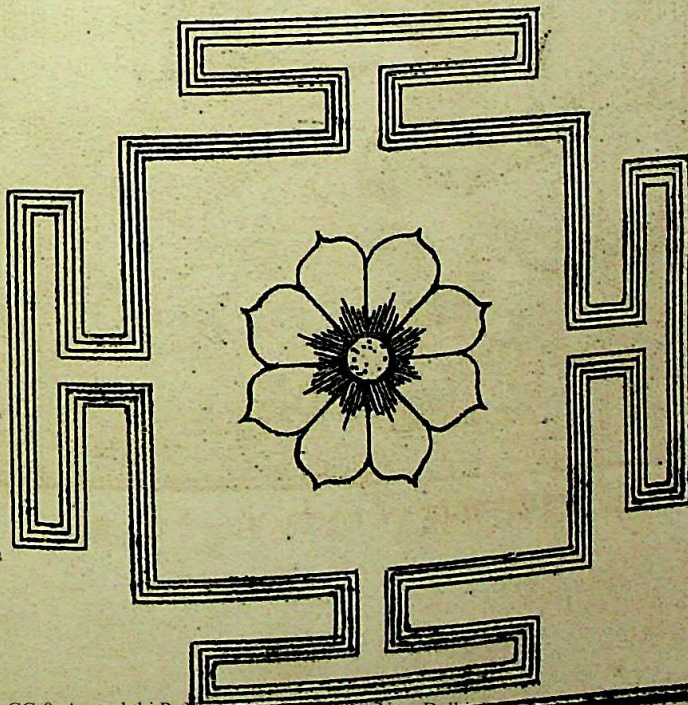
गीतलाघ्यानम् । (११३९ पृ. ११ पं.)

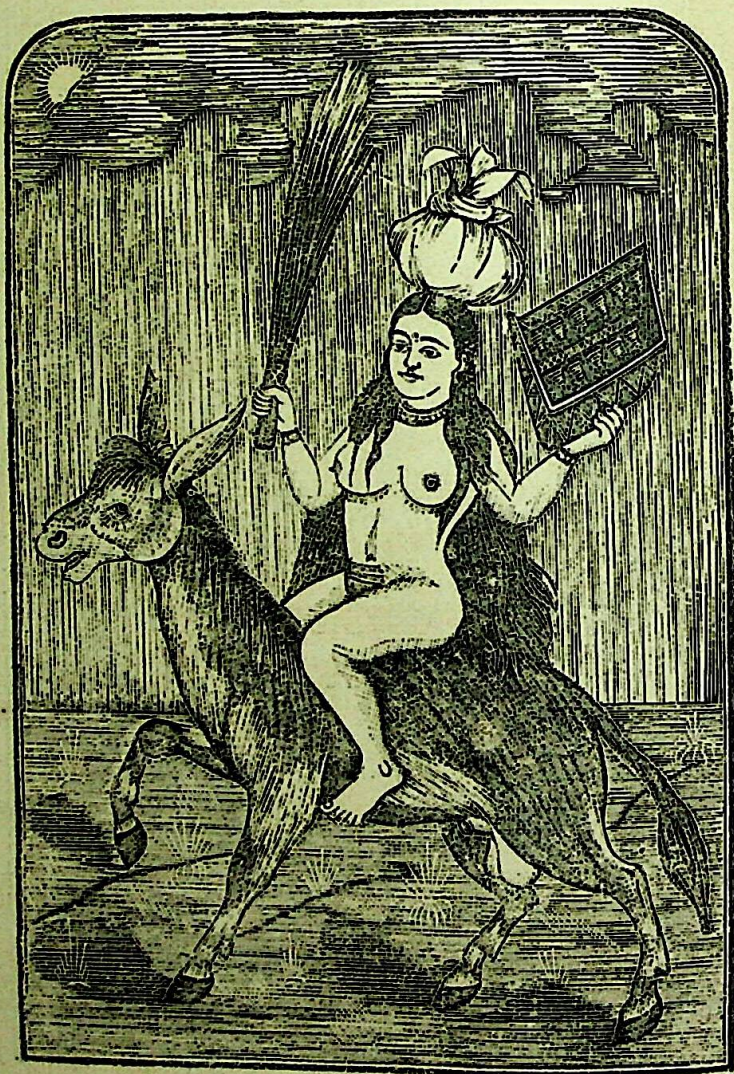
कृष्ण मन्त्रम् (पृ- ११४५ पं- १)

[१]



कार्तवीर्य मन्त्रम् (पृ- ११४६ पं- १)

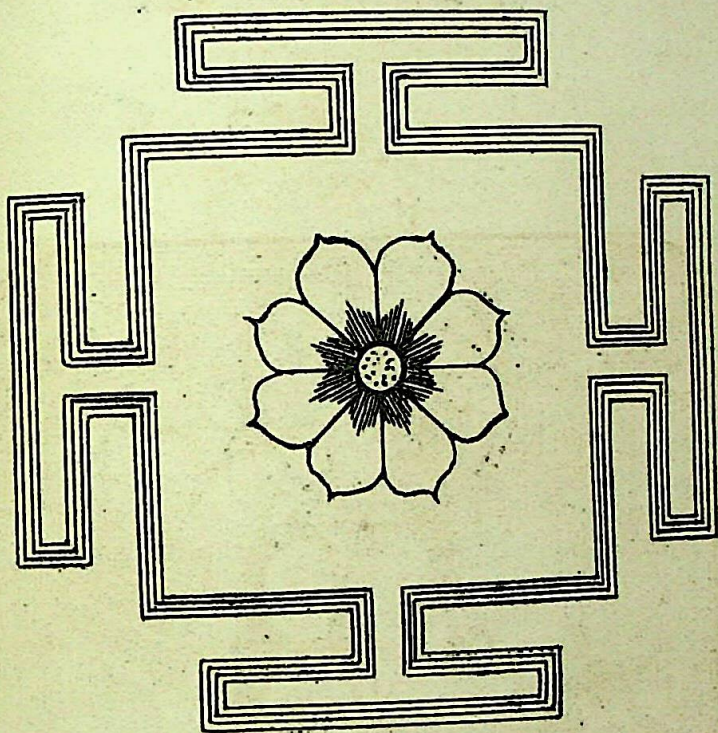




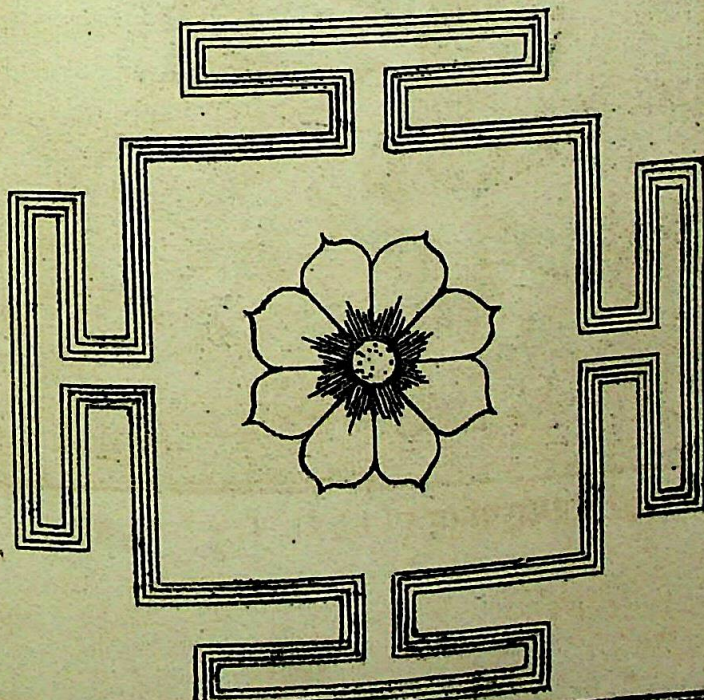
शीतलाध्यानम् । (११३९ पृ. ११ पं.)

कृष्ण मन्त्रम् (पृ- ११४५ पं- १)

[१]

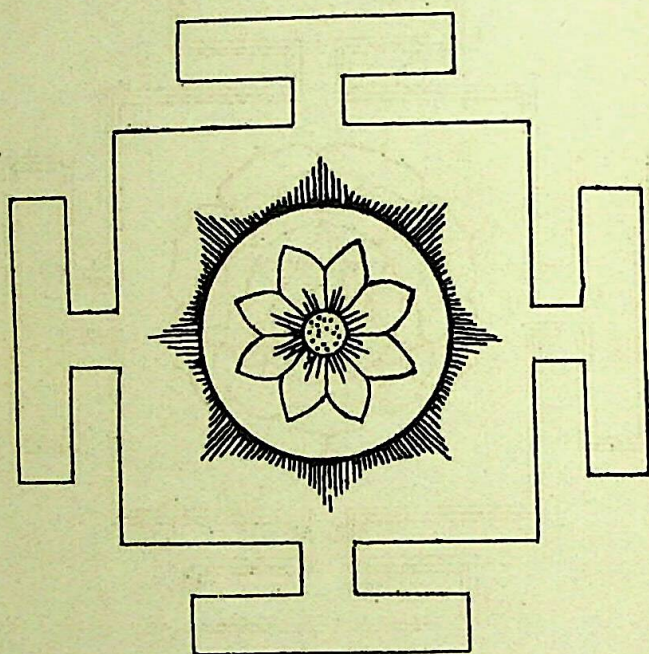


कार्तवीर्यमन्त्रम् (पृ- ११४६ पं- १)

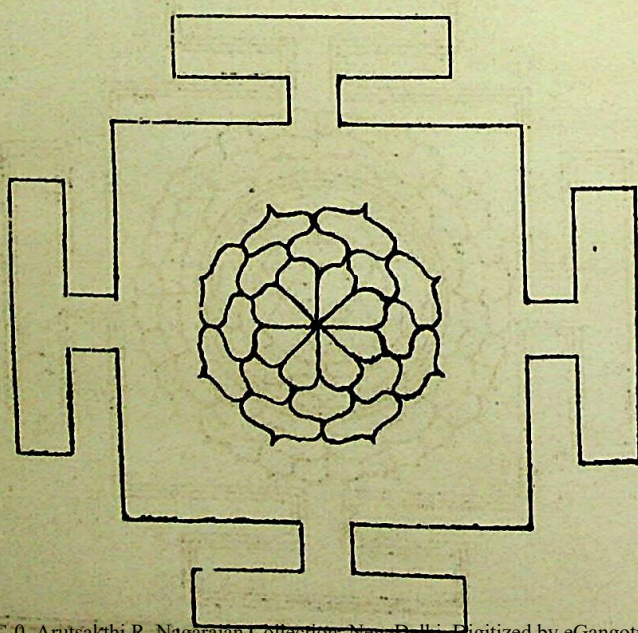


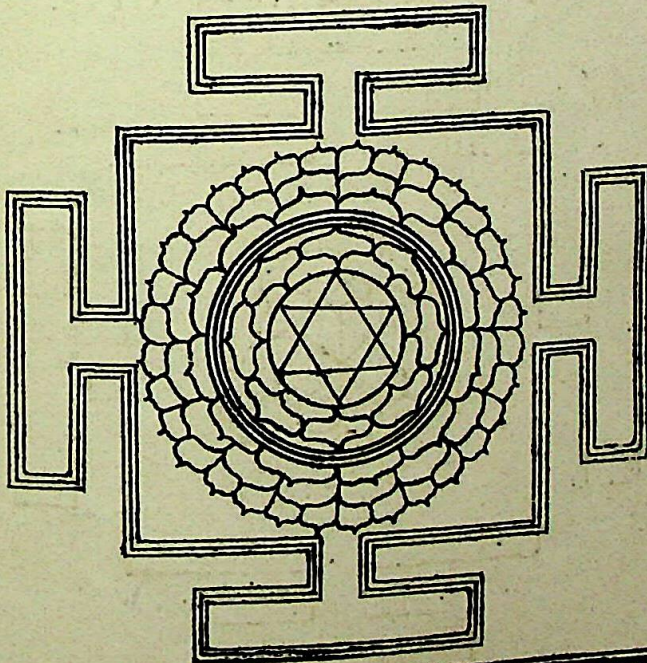
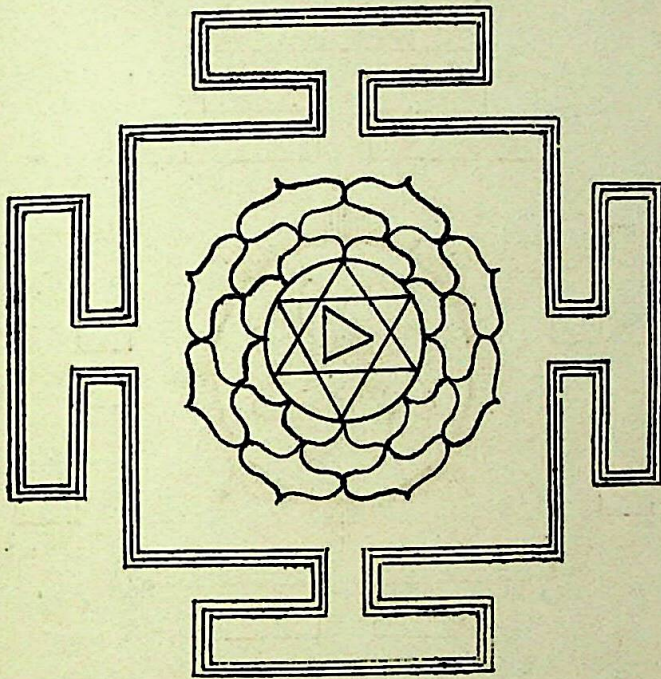
२]

वाहयन्त्रम् (पृ- ११४१ पं- २६)



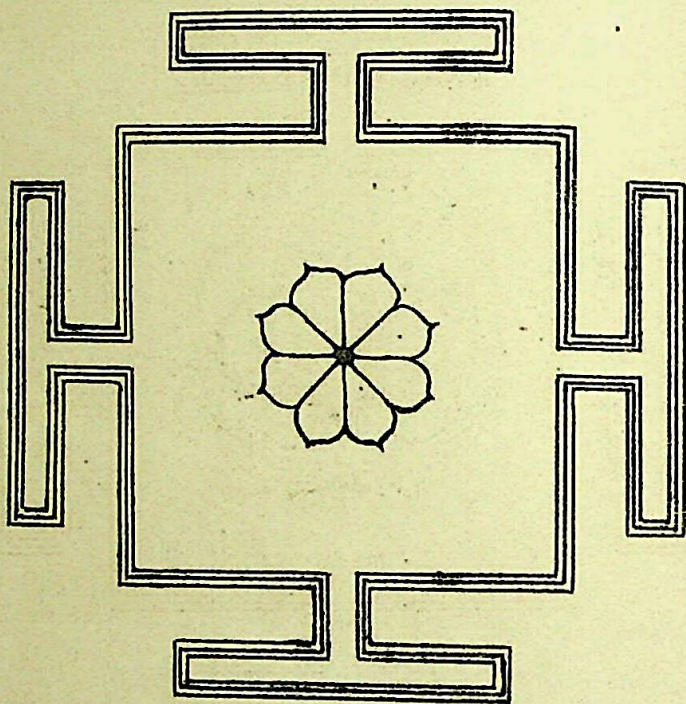
वृसिंहयन्त्रम् (पृ- ११४१ पं- १२)



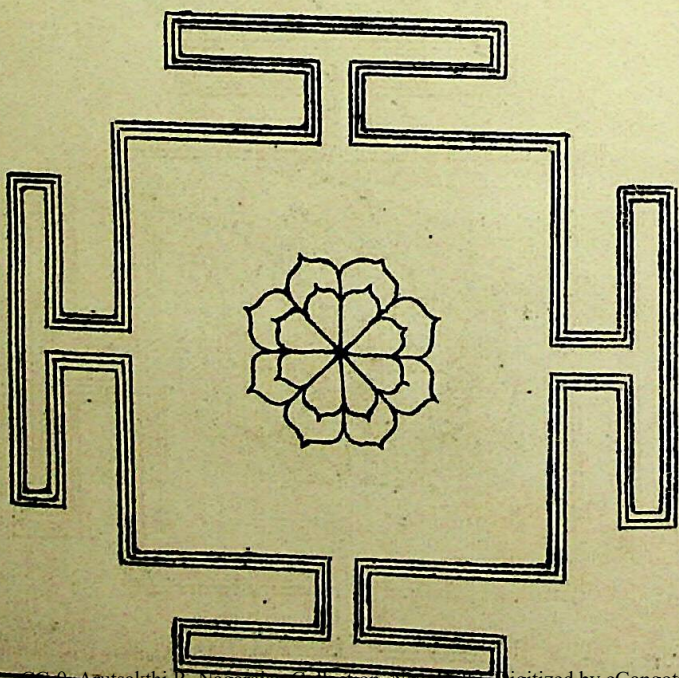


४]

विष्णुराज - यन्त्रम् (पृ. ११४० पं. ९)

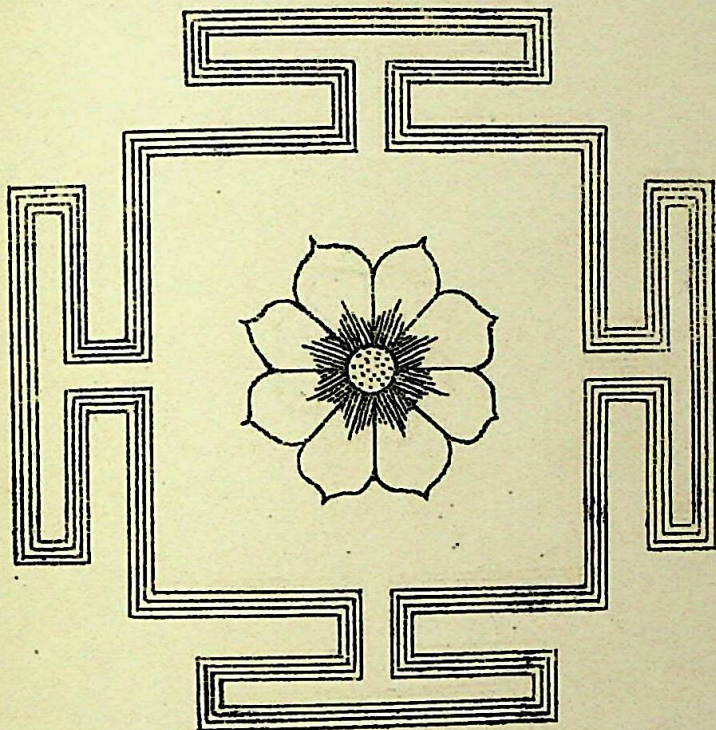


दुर्गायन्त्रम् (पृ. ११५९ पं. ५)

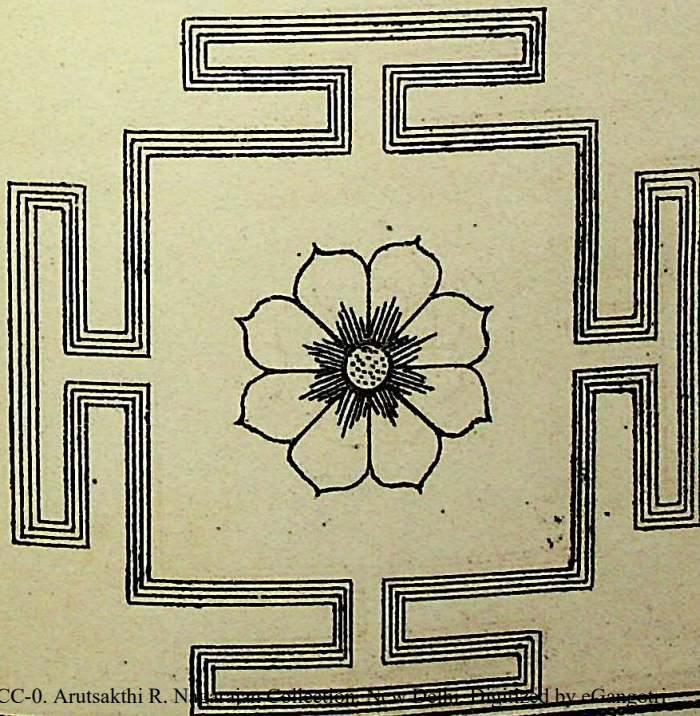


हयग्रीवयन्त्रम् (पृ-११४५ पं-६)

[५]

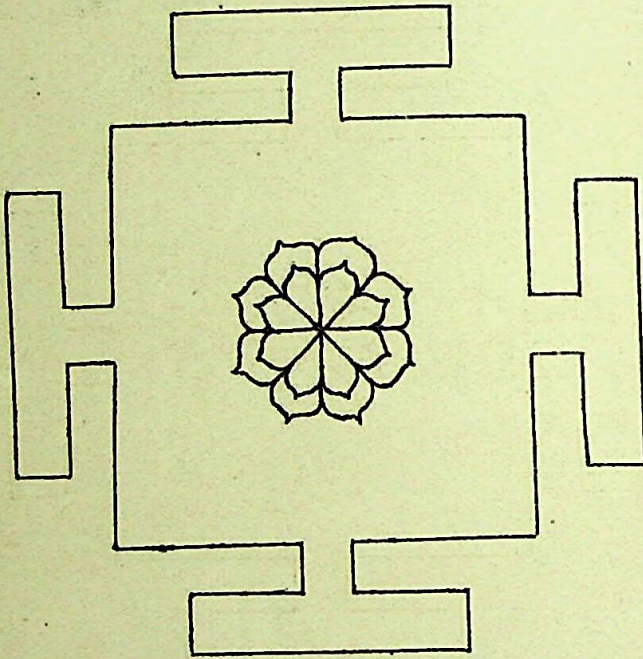


कलिकयन्त्रम् (पृ-११४५ पं-५)

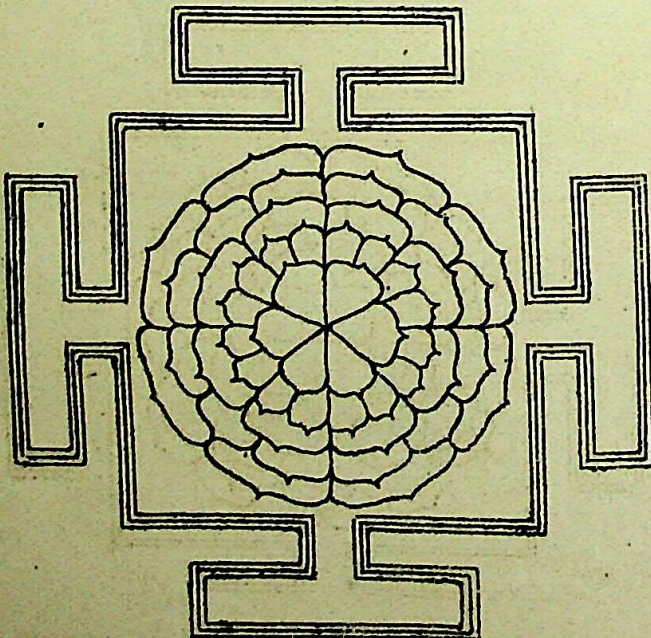


६

सूर्य यन्त्रम् (पृ- ११४० पं- २३)

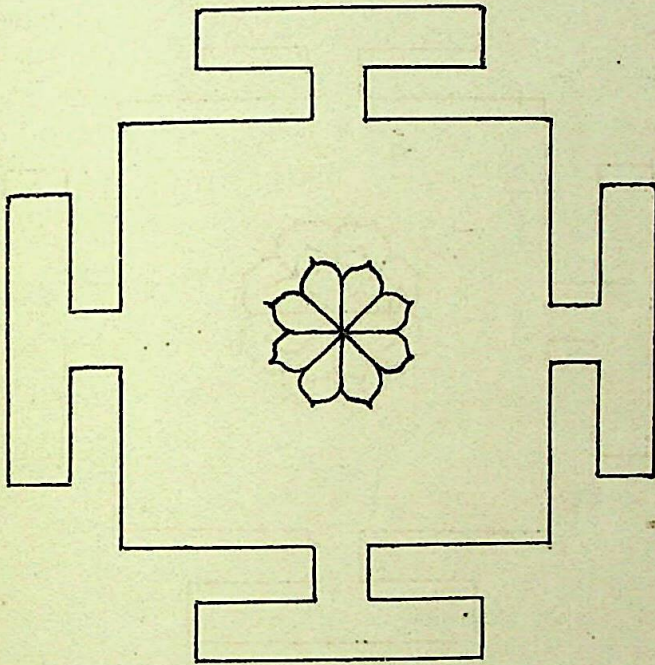


वामन यन्त्रम् (पृ- ११४१ पं- २६)

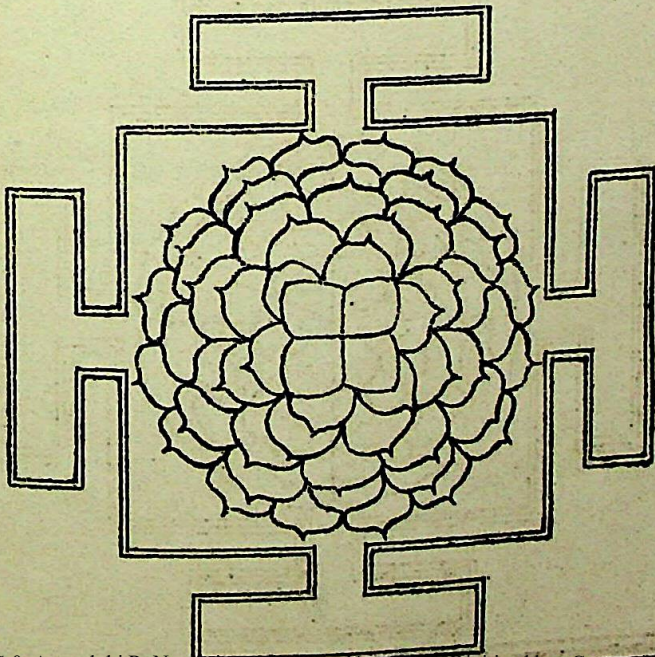


कूर्म यन्त्रम् (११४१ पं-१४)

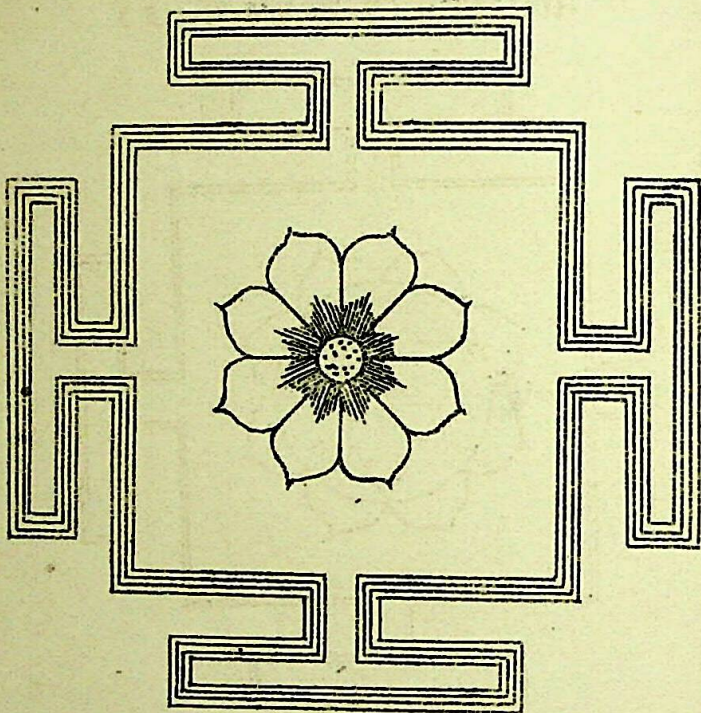
७



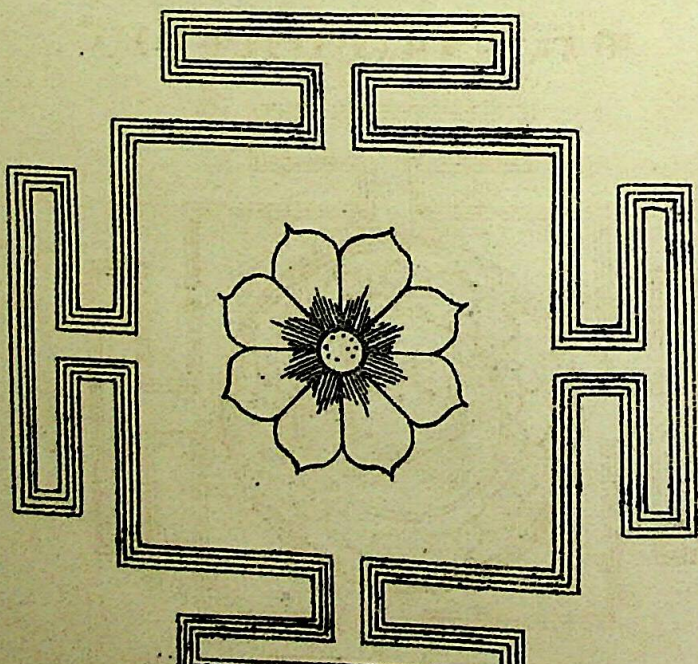
परशुराम यन्त्रम् (पृ- ११४२ पं-२)



बलसम यन्त्रम् (पृ- ११४५ पं-१)

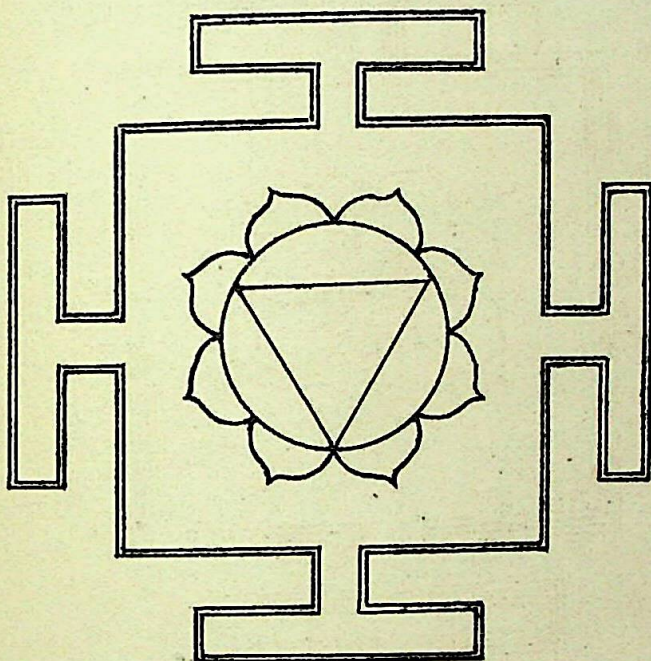


विष्णुयन्त्रम् (पृ- ११४९ पं-७)

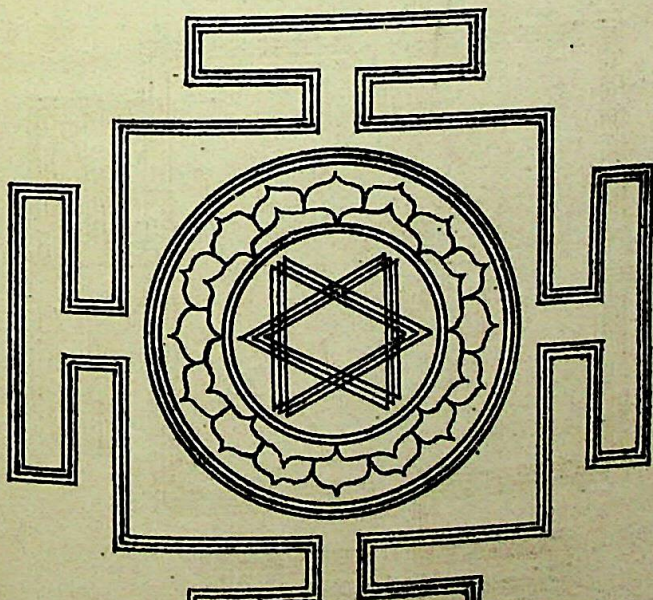


तारायन्त्रम् (पृ-११५१ पं- १)

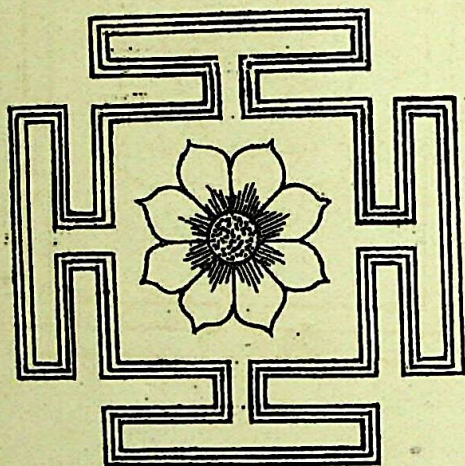
९



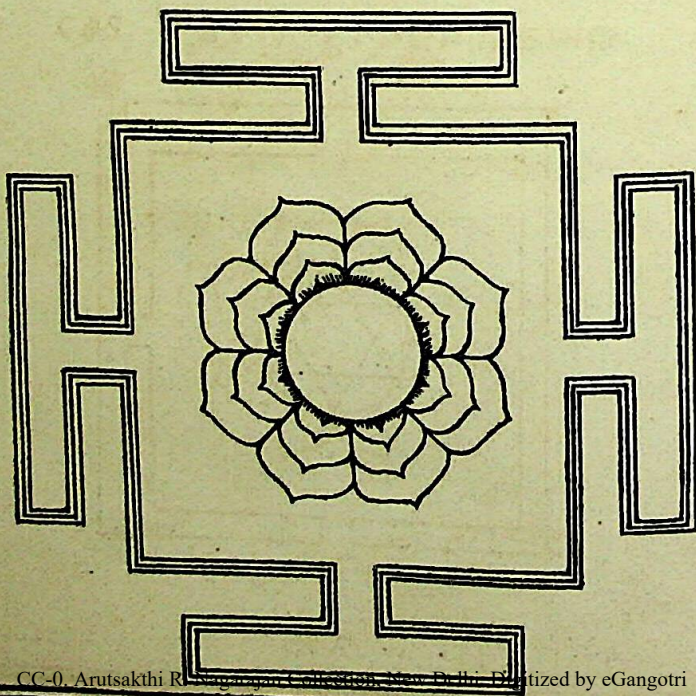
षोडशो यन्त्रम् (पृ-११५२ पं- ७)



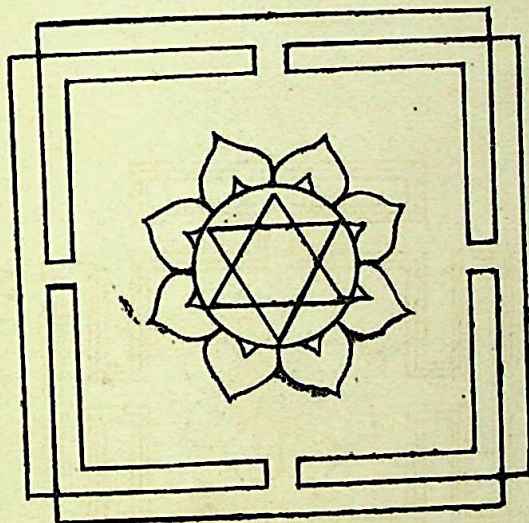
शीतला यन्त्रम्
 कर्शिका बाह्यभागे वै चाष्टपत्रसुशोभनम् ।
 चतुर्द्वारसमायुक्तं भूपुरं च त्रिरेखकम् ॥



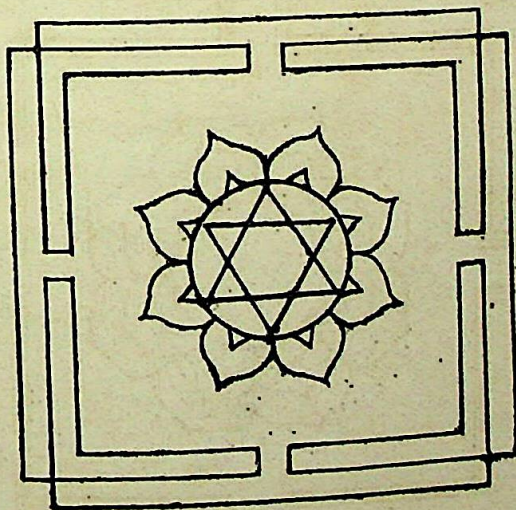
शिव यन्त्रम् (पृ-११४५ पं-१२)

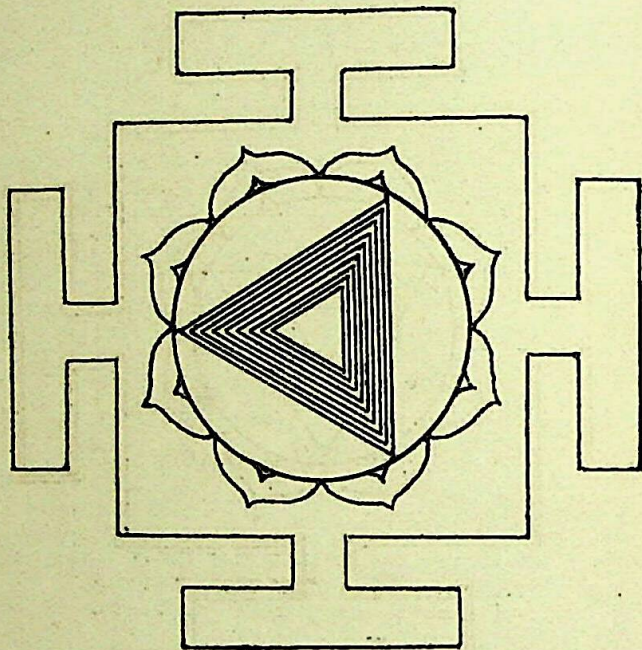


मातङ्गी यन्त्रम् (पृ- ११५६ पं- २५)

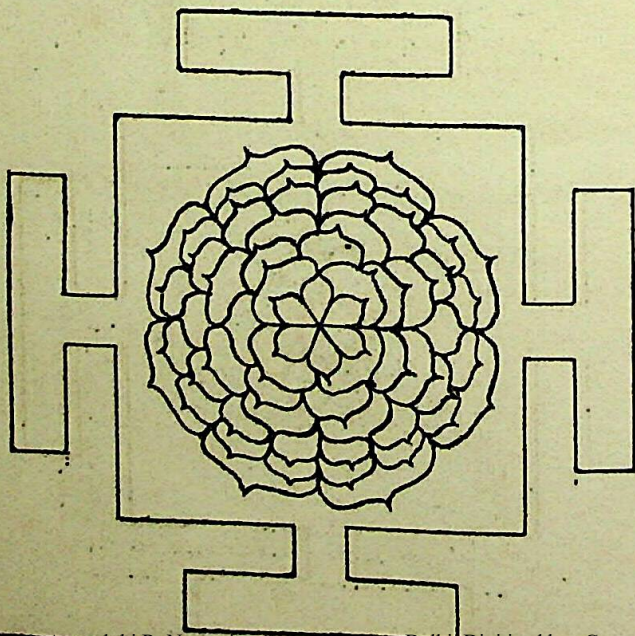


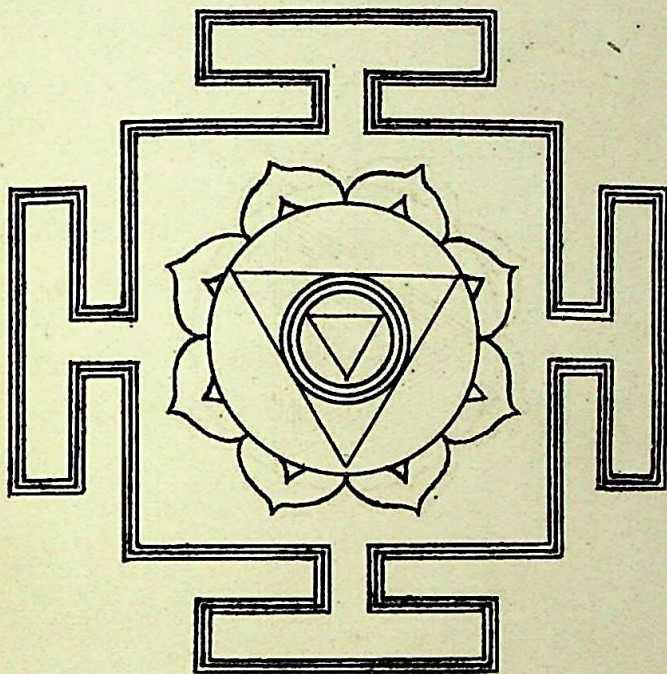
घृमावती यन्त्रम् (पृ- ११५६ पं- १६)



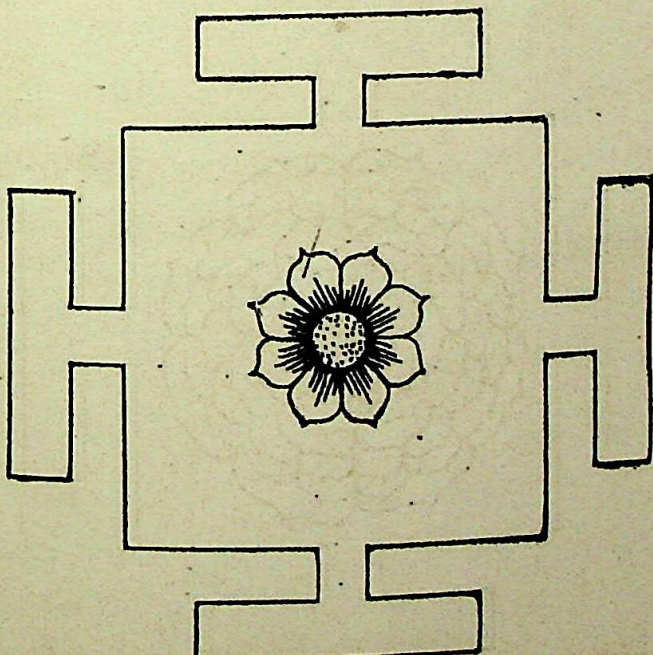


मन्त्रयन्त्रम् (पृ-११४९ पं-१०)



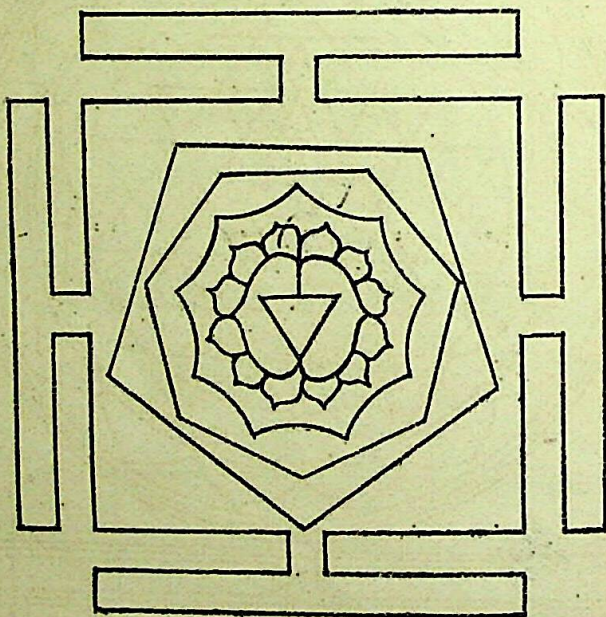


लक्ष्मी यन्त्रम् (पृ- ११५७ पं- ११)

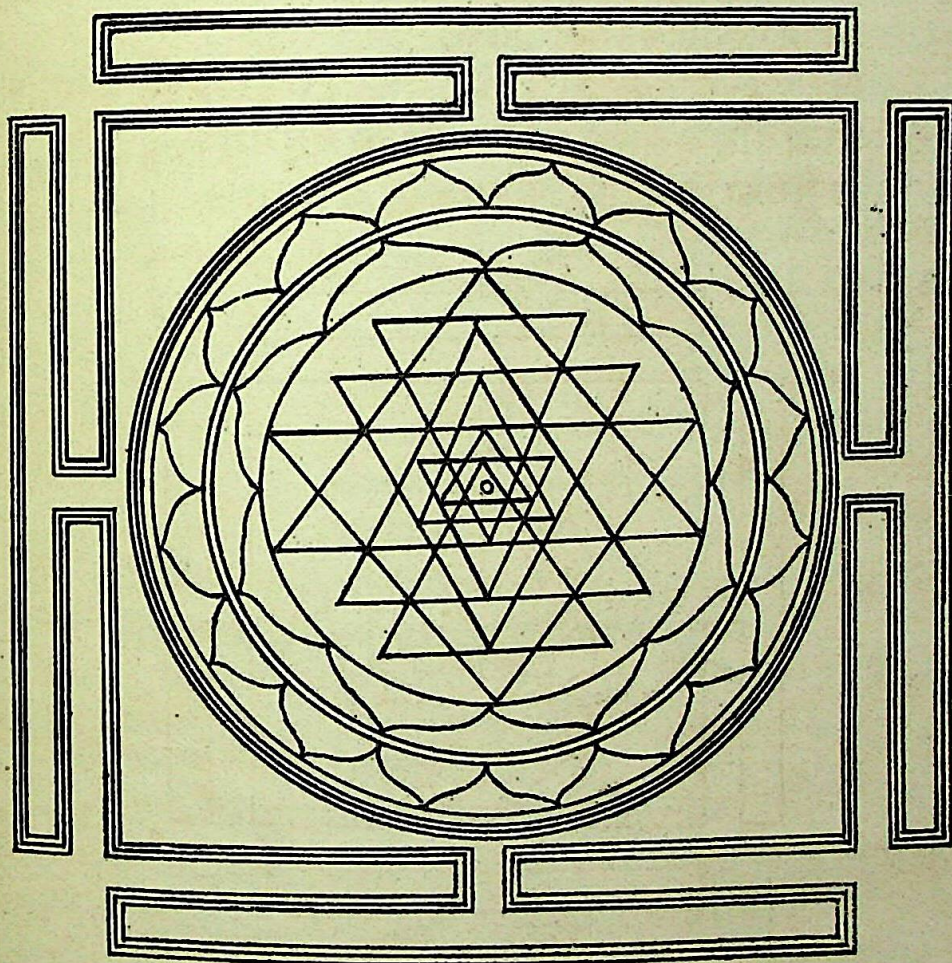


शरभयन्त्रम्॥

त्रिकोणं विलिखेत् पूर्वं तद्वाह्ये तु दलद्वयम् ।
 द्वादशारं तु तद्वाह्ये तद्वाह्ये तु नवास्त्रकम् ॥
 सप्तास्त्रं चैव पञ्चास्त्रं भूषणं च क्रमाल्लिखेत् ।
 पावकादि पृथिव्यन्तं लिखेन्मन्त्रं यथा क्रमम् ॥
 तद्बहिः कोणाषट्केषु भागारभ्यमनुं शिखे ।
 खट् फट् जह्नि तथा द्विन्धि भिन्धि हन्धि लिखेत् क्रमात् ॥
 आकारादि क्षकारान्तं वैष्टये द्विन्दु संयुतम् ।
 महायन्त्रं मिदं पुण्यं सप्तावरणं कं परम् ॥

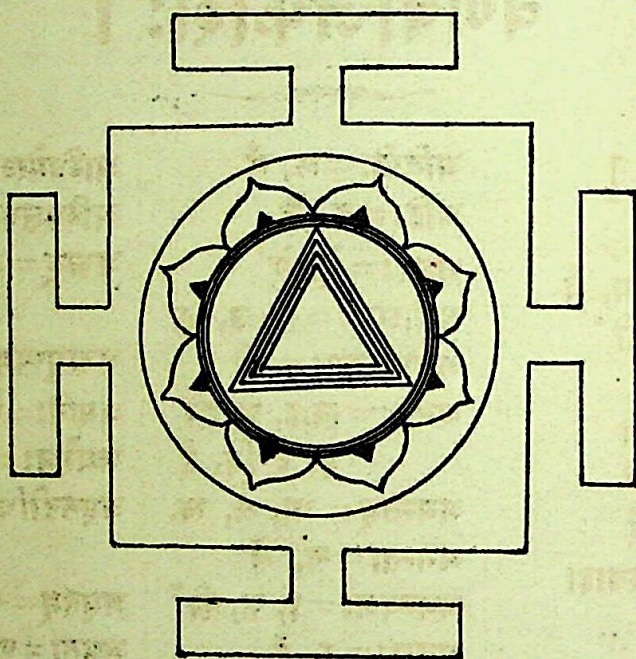


श्री चक्रम् (पृ. ११५३ पं. ८)

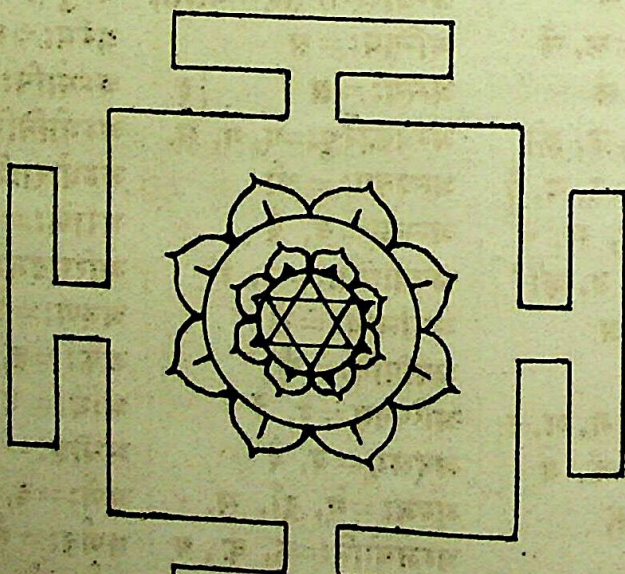


१६

श्रीकाली यन्त्रम् (पृ-११६८ पं-१२)



मुक्तेश्वरी यन्त्रम् (पृ-११५४ पं-२०)



वर्णबीजकोशः ।

[अ]

अकूपारः=रूँ
अक्षतिः=ट, य, यँ
अक्षम्=ऊँ, व्रीँ
अगः=द, रूँ
अगस्त्यः=औ
अगिरः=र, रँ
अग्निः=र, रँ
अग्निवधूः=स्वाहा
अग्निबलभा=,,
अग्निसुन्दरी=,,
अङ्कुशः=ट, क्रौँ
अङ्कुशी=अ
अचलः=द, रूँ
अचलकीला=ल, लँ
अचला=ल, लँ
अच्युतः=अ, उ, क्लीँ
अजगत्प्राणः=ट, य, यँ
अजः=ऐ, द्राँ, स, ॰
अजितः=अ, उ, क्लीँ
अजेशः=ज, झ
अञ्जनी=ड
अट्टहासः=ए, ग, स, ह
अण्डजः=क, कै, म
अतिथीशः=ऊ
अत्रिः=द
अत्रिनेत्रजः=ऐ, द्राँ, स, ॰
अत्रीशः=द

अदितिः=ल, लँ
अद्रिः=द, रूँ
अधरः=ऐ, ऐँ
अधोक्षजः=अ, उ, क्लीँ
अधोदन्तगः=औ
अनङ्गः=ख, इ, क, क्लीँ
ह, हँ [ह, हँ
अनन्तम्=आ, क्ष, ख,
अनन्ता=ल, लँ
अनन्यजः=इ, क, क्लीँ
अनलः=र, रँ
अनिरुद्धः=:
अनिलः=ट, य, यँ
अनुग्रहेशः=औ [ख, ह, हँ
अन्तरि(री)-क्षम्=आ, क्ष,
अन्तिमः=क्ष
अन्त्यः=क्ष [ह
अन्धकारिपुः=ए, ग, स,
अन्धतमः=औ
अन्धम्=व, वँ
अपपारिकः=र, रँ
अपांनाथः=रूँ
अपांपतिः=रूँ
अप्पितम्=र, रँ
अबलम्=व, वँ
अब्जः=ऐ, द्राँ, स, ॰
अब्जयोनिः=क, क, म
अब्धिद्वीपा=ल, लँ
अब्धिबीजम्=रूँ

अब्धिमेखला=ल, लँ
अब्धिनायनः=अ, उ, क्लीँ
अभ्रम्=आ, ख, व, वँ
ह, हँ
अभ्रपुष्पम्=व, वँ
अमतिः=ऐ, द्राँ, स, ॰
अमरेशः=इ, उ, ल
अमृतदीधितिः=ऐ, द्राँ, स, ॰
अमृतम्=व, वँ
अमृता=ए
अमृताद्यः=ट [ह, हँ
अम्बरम्=आ, औ, ख,
अम्बु=व, वँ,
अम्बुधा=व, वँ
अम्भः=व, वँ
अम्भोधिः=रूँ
अम्भोनिधिः=रूँ
अम्भोराशिः=रूँ
अराणेः=र, रँ
अरिसूदनः=अ, उ, क्लीँ
अरुणः=उ, म
अर्कः=ह, म
अर्घिः=उ
अर्घीशः=ऊ
अर्णः=व, वँ
अर्णवः=रूँ
अर्धगण्डी=ख
अर्धनारीशः=ह

अर्धर्चः = लृ
 अर्यमा = म
 अर्हः = इ, ल
 अलकनन्दा = लृ
 अवनिः = ल, लँ
 अवनीधरः = द, लँ
 अम्बरः = न
 अष्टकर्णः = क, कँ, म
 अष्टमूर्तिः = ए, ग, स, ह
 असितः = लृ
 अक्षम् = फद [ह]
 अस्थिमाली = ए, ग, स,
 अस्थिसंज्ञः = य
 अहर्षतिः = म
 अहस्करः = म
 अहार्यः = द, लँ
 अहिहिदः = इ, ल

[आ]

आः = क, कँ, म [ह]
 आकाशः = आ, ख, ह,
 आखण्डलः = इ, ल
 आखुगः = गँ [म, क्ली°
 आत्मभूः = इ, क, कँ,
 आत्मा = अ
 आदिदेवः = अ, उ, क्ली°
 आदिमः = य
 आदिमा = ल, लँ
 आद्या = ल, लँ
 आनन्दः = उ
 आपः = व, वँ
 आप्यायनी = ओ
 आलयः = अ
 आवकः = ट, य, यँ

आशयाशः = र, रँ
 आशुगः = ट, य, यँ
 आशुशुभाणिः = र, रँ
 आश्रयाशः = र, रँ
 आषाढी = त
 आस्फुजित् = ब्रौ°

[इ]

इच्छा = झ
 इहा = ल, लँ
 इडिका = ल, लँ
 इन्दिरा = ई, श्री°
 इन्दुः = ऐ, द्रौ, स, ॰
 इन्द्रः = इ, ल
 इन्द्रजनकः = लँ, क्ली°
 इन्द्रधाम = ऊ
 इन्द्रावरजः = अ, उ, क्ली°
 इन्धिका = उ
 इरः = य
 इरा = ल, लँ, व, वँ
 इरेशः = अ, उ, क्ली°
 इला = ल, लँ
 इलिका = ल, लँ

[ई]

ईरः = य
 ईरा = ल, लँ
 ईशः = ए, ग, स, सौ, ह
 ईशानः = ए, ग, स, ह
 ईश्वरः = ए, ग, स, ह
 ईहा = ऊँ

[उ]

उः = ए, ग, स, ह
 उग्रः = ए, ग, स, ह

उग्रशेखरा = लृ
 उडु = त्रौ
 उडुपः = ऐ, द्रौ
 उत्कारी = व
 उदकम् = व, वँ
 उदाधिः = लँ
 उदधिबल्ला = ल, लँ
 उदम् = व, वँ
 उदधिः = र, रँ [क्ली°
 उन्मत्तोन्मत्तकः = इ, क,
 उपलः = कुँ
 उपान्त्यगः = लृ
 उपेन्द्रः = अ, उ, क्ली° [ह
 उमाकान्तः = ए, ग, ण, स,
 उमापतिः = ए, ग, स, ह
 उरोजः = जँ
 उर्वरा = ल, लँ
 उर्वी = ल, लँ
 उशनाः = ब्रौ°
 उपबुधः = र, रँ
 उपबुधमिया = स्वाहा
 उष्णराशिः = म

[ऊ]

ऊर्जम् = व, वँ
 ऊर्ध्वदेवः = अ, उ, क्ली°
 ऊर्ध्वदन्तः = ओ
 ऊर्ध्वम् = ए, ऐ [ह
 ऊर्ध्वरेताः = ए, ग, स,
 ऊर्मिः = व, वँ
 ऊर्मिमाली = लँ

[ऋ]

ऋसम् = त्रौ
 ऋतधामा = क्ली°

क्रतम् = व, वँ
क्रदिः = ख
क्रभुक्षाः = इ, ल
क्रषिकुल्या = लृ

[ए]

एकदन्तः = गँ
एकनेत्रः = गँ, छ
एकभृङ्गः = अ, उ, झीं
एकाङ्गिः = लृ
एणतिलकः = ऐ, द्रौ, स, ॰
एणाङ्गः = ऐ, द्रौ, स, ॰

[ऐ]

ऐन्द्रम् = ई
ऐश्वरी = उ

[ओ]

ओषधीशः = ऐ, द्रौ, स, ॰

[क]

कंसारातिः = अ, उ, झीं
कंसारिः = अ, उ, झीं
ककुद्रतः = ल
कङ्कली = ए, ग, स, ह,
कचङ्गलः = हँ
कचम् = ज
कच्छपः = च
कच्छेष्टः = च
कञ्जजः = क, कँ, म
कटकी = क्राँ
कटप्रः = ए, ग, स, ह,
कटी = क्राँ
कठिनपृष्ठगः = च [ह
कण्ठेकालः = ए, ग, स,

कन्दर्पः = इ, क, झीं
कन्धिः = हँ
कन्यास्तनः = :
कपन्धम् = व, वँ
कपर्दी = ए, ग, स, ह
कपालभृत् = ए, ग, स, ह
कपिलः = र, रँ
कवन्धम् = व, वँ
कमठः = च
कमण्डलुः = ठ
कमलम् = व, वँ
कमला = श्रीं
कमलाक्षी = स्त्रीं
कमलासनः = क, कँ, म
कमलोद्भवः = क, कँ, म
कम् = व, वँ
कम्बलम् = व, वँ
करकम् = कुँ
करटी = क्राँ
करभी = क्राँ
करादिगः = क
करी = क्राँ
करेणुः = क्राँ
कर्णः = उ
कर्णिकी = क्राँ
कर्चुरम् = व, वँ
कर्मप्रिया = सौ
कलानिधिः = ऐ, द्रौ, स, ॰
कलावान् = ऐ, द्रौ, स, ॰
कल्पः = धुँ
कल्पान्तः = धुँ
कविः = लृ, औ
काङ्क्षः = उँ

काण्डम् = व [झीं, स, ॰
कान्तः = ऐ, द्रौ, इ, उ, क,
कान्ता = स्त्रीं
कान्तिः = फ, हँ
कान्तिमान् = इ, क, झीं
कापीशम् = ऊँ, त्रीं
कामः = इ, क, झीं
कामगः = इ, क, झीं
कामचारः = इ, क, झीं
कामदः = इ, क, झीं
कामरूपम् = ऐ
कामवर्धनः = इ, क, झीं
कामिकः = त
कामी = इ, क, झीं
कामुकः = इ, क, झीं
कामेशी = ई
कायः = क्ष
कार्षिकः = ऋ
कालः = म
कालञ्जरः = ए, ग, स, ह
कालनेमिरिपुः = अ, उ,
झीं
कालम् = हँ
काली = क्रीं
कान्यः = लृँ, औं
काशीनाथः = ए, ग, स, ह
काश्यपी = ल, लँ
किङ्करी = ऊ
कीलालम् = व, वँ
कुः = ल, लँ
कुञ्जरः = क्राँ
कुटारः = द, हँ
कुन्ती = क्राँ

कुमारसूः=लृ [स,
 कुमुदः=ट
 कुमुदिनीपतिः=ऐ, द्राँ, स,
 कुमुदेशः=ऐ, द्राँ स,
 कुमोदकः=अ, उ, क्लीं
 कुम्भी=क्राँ
 कुलेश्वरः=ए, ग, स, ह
 कुवेरदक=लृ
 कुशम्=व, वँ
 कुसुमेषुः=इ, क, क्लीं
 कूटत्रयम्=ऐ, क्लीं-ह्रीं
 कूटम्=कौँ, श
 कूर्मः=च
 कूलङ्कषः=रुँ
 कृत्तिवासाः=ए, ग, स, ह
 कृपा=ऋ
 कृपीटम्=व, वँ
 कृपीटयोनिः=र, रँ
 कृशा=हीँ
 कृशानुः=र, रँ
 कृशानुरेताः=ए, ग, स, ह
 कृपाद्वैतः=क
 कृष्णः=अ, उ, क्लीं
 कृष्णवर्त्मा=र, रँ
 कृष्णा=थ
 कृष्णार्चिः=र, रँ
 केशवः=अ, उ, क्लीं
 केशी=अ, उ, क्लीं
 कैटभजित्=अ, उ, क्लीं
 कैलासनिकेतनः=ए, ग,
 स, ह
 कोपतन्त्रम्=क्ष

कोमलम्=व, वँ
 कौमुदीपतिः=ऐ, द्राँ, स,
 क्रतुध्वंसी=ए, ग, स, ह
 क्रिया=ल
 क्रूरः=:
 क्रोडकान्ता=ल, लँ
 क्रोडाङ्गः=च
 क्रोधिनी=र
 क्रोधीशः=क
 क्लीववक्त्रम्=ङ
 क्लेदुः=ऐ, द्राँ, स,
 क्षपाकरः=ऐ, द्राँ, स,
 क्षमा=ल, लँ
 क्षरम्=व, वँ
 क्षान्तिः=उ
 क्षामिदम्=धुँ
 क्षितिः=ल, लँ
 क्षितिभृत्=द, रुँ
 क्षीरम्=व, वँ
 क्षीराब्धिः=रुँ [स,
 क्षीरोदनन्दनः=ऐ, द्राँ,
 क्षोणिः=ल, लँ
 क्षोणिप्राचीरम्=रुँ
 क्षौणिः=ल, लँ
 क्ष्मा=ल, लँ
 क्ष्माभृत्=द, रुँ

[ख]

खगवती=ल, लँ
 खचमसः=ऐ, द्राँ, स,
 खड्गीशः=व
 खण्डनी=ल, लँ
 खण्डपरशुः=ए, ग, स,

खण्डपरशुः=ए, ग, स, ह
 खम्=ह, हँ
 खरुः=ए, ग, स, ह
 खश्वासः=ट, य, यँ
 खसंस्थितः=क्ष
 खसर्पणः=क, कै, म
 खापगा=लृ
 खेजरः=ए, ग, स, ह
 खेलकः=इ, क, क्लीं

[ग]

गगनम्=ख, ह, हँ
 गङ्गा=लृ
 गङ्गाधरः=ए, ग, स, ह, रुँ
 गजः=क्राँ
 गजमुखः=गँ
 गजाङ्कुशः=उ
 गजाननः=गँ
 गजास्यः=गँ
 गणाधिपः=गँ
 गणेशः=गँ
 गदाग्रजः=अ, उ, क्लीं
 गदाधरः=अ, उ, क्लीं
 गदाभृत्=अ, उ, क्लीं
 गन्धवती=ल, लँ
 गन्धव-(वा)हः=उ, य, यँ
 गभस्तिमान्=म
 गरुडध्वजः=अ, उ, क्लीं
 गर्जनम्=ह
 गान्दिनी=लृ
 गायनः=इ, क, क्लीं
 गिरिः=द, रुँ
 गिरिकर्णिका=ल, लँ

गिरि(री)शः=ए, ग,
स, ह

गिरिसुता=ही

गीतिजः=इ, क, क्ली

गुडाकेशः=अ, उ, ए, ग,
स, ह, क्ली

गुणसागरः=क, कै

गुह्यः=च

गूढाङ्गः=च

गृध्रः=अ, उ, क्ली

गोत्रः=द

गोत्रभित्=इ, लँ

गोत्रा=ल, लँ

गोपालः=अ, उ, क्ली

गोपेन्द्रः=अ, उ क्ली

गोमुखः=ग

गोवर्धनधरः=अ, उ, क्ली

गोविन्दः=अ, उ, क्ली

गौः=लृ, ल, लँ

ग्रहपतिः=म

ग्रावा=द

ग्लौः=ऐ, द्राँ, स, ॰

[घ]

घनः=घ

घनम्=व, वँ

घनरसः=व, वँ

घनस्मरः=घ

घृतम्=व, वँ

घोषः=ह

[च]

चक्रपाणिः=अ, उ, क्ली

चक्रभृत्=अ, उ, क्ली

चक्रवालुका=ख

चक्री=अ, उ, क, क्ली

चञ्चलः=च, ट, य, यँ

चटी=ही

चण्डः=ऐ

चण्डांशुः=म

चण्डिकेश्वरः=ऐ, ऐ

चण्डीभम्=ह्राँ

चतुराननः=क, कै, ज

चतुर्मुखः=अ, क, कै

चतुष्कलम्=हुँ

चन्दिरः=ऐ, द्राँ, स, ॰

चन्द्रः=ऐ, द्राँ, स, ॰

चन्द्रमाः=ऐ, द्राँ, स, ॰

चन्द्रविम्बम्=ठ

चन्द्रशेखरः=ए, ग, स, ह

चन्द्रापीडः=ए, ग, स, ह

चरः=च

चर्म=ऐ

चर्मण्यम्=ऐ

चर्मवसनम्=ऐ

चाणूरसूदनः=अ, उ, क्ली

चाणुण्डा=ब्री

चारः=ण

चारुकम्=छी

चार्वङ्गी=ऐ, छी, ऐ

चित्=ऐ

चित्रकारी=च

चित्रकूटः=लृ

चित्रकोणः=ए

चित्रभानुः=म र, रँ,

चित्रमूर्तिः=ई

चित्रमूर्तीशः=ई

चित्राटीरः=ऐ, द्राँ, स, ॰

चिन्तामणिः=क, कै

चिह्नम्=हुँ

चेटी=ही

[छ]

छगलाण्डः=ब

छविः=फ, हँ

छागवाहनः=र, रँ

छायामृगधरः=ऐ, द्राँ, स, ॰

[ज]

जगत्=लृ

जगती=ल, लँ

जगत्पार्श्वः=प

जगदीशः=अ, उ क्ली

जगन्नाथः=अ, उ, क्ली

जटाधरः=ए, क, कै

ग, स, ह

जठरगः=म

जनकः=ज

जनार्दनः=अ, उ, क्ली, फ

जम्भभेदी=इ, ल

जम्भादिः=स्त्री

जयनः=ज

जयन्तः=ज, ए, ग, स, ह

जरा=ट

जलकङ्कः=क्रौ

जलकाङ्कः=क्रौ

जलदा=क्ली, स्त्री

जलधिः=रुँ

जलनिधिः=रुँ

जलपीथम्=व, वँ

जलम्=स्वाहा

जलसंज्ञः = व, वँ
 जलेन्द्रः =
 जलेशयः = अ, उ, क्लीं
 जहुः = अ, उ, क्लीं
 जहुकन्या = लृ
 जहुतनया = लृ
 जहुसुता = लृ
 जातवेदाः = र, रँ
 जातसंज्ञः = झ
 जाली = र
 जाह्नवी = लृ
 जितामित्रः = अ, उ, क्लीं
 जिनः = अ, उ, क्लीं, घ
 जिष्णुः = अ, उ, क्लीं
 जिह्वा = क्री
 जीवः = स
 जीवनम् = व, वँ, स
 जुह्वारः (लः) = र, रँ
 जैवातकः = ऐ, द्राँ, स, उ
 ज्ञप्तिगः = व
 ज्योतिः = त्राँ
 ज्वलनः = र, रँ
 [झ]

झषः = प
 झिण्टी = ए
 झिण्टीशः = ए
 [ड]
 डाकिनी = रुफे
 डामरः = ड
 [त]

तटम् = हँ
 तनूनः = ट, थ, धँ

तनूनपात = र, रँ
 तन्द्री = म
 तपनः = ऋ, म
 तपसः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तपस्तप्तः = इ, ल
 तमः = औ, त, ल, लँ
 तमोनुत् = र, रँ
 तमोहरः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तरङ्गः = वँ
 तरणिः = ण, म
 तरन्तः = रूँ
 तरलः = त
 ताण्डवम् = चँ
 तापनः = म
 तामरसम् = व, वँ
 तारः = ओँ, त्राँ
 तारकः = ओँ
 तारकम् = त्राँ
 तारा = ऊँ, त्राँ
 ताराधिपः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तारापतिः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तारापीडः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तारिका = त्राँ
 तारिघः = रूँ
 तारिषः = रूँ
 तार्क्ष्यध्वजः = अ, उ, क्लीं
 तिथिमणीः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तिमिः = रूँ
 तिमिकोशः = रूँ
 तिमिरम् = ल, लँ
 तीक्ष्णः = प, थ
 तीरम् = हँ
 तीव्रः = ए, ग, त, स, ह

तुङ्गी = ऐ, द्राँ, स, उ
 तुङ्गीपतिः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तुराषाट् = इ, ल [स, उ]
 तुषारकिरणः = ऐ, द्राँ, स, उ
 तोयानिधिः = रूँ
 तोयम् = व, वँ
 त्रपा = ही
 त्रिगुणाकारः = ण
 त्रितत्त्वम् = हूँ, ओँ
 त्रिदशः = क्ष
 त्रिदिवेशः = क्ष
 त्रिपात् = अ, उ, क्लीं
 त्रिपुरः = ऐ [ह]
 त्रिपुरान्तकः = ए, ग, स, ह
 त्रिमात्रः = ओँ
 त्रिमूर्तिः = ई, ईँ
 त्रिमूर्त्तिशः = ई
 त्रिरेखः = ण
 त्रिलोचनः = ए, ग, स, ह
 त्रिविक्रमः = ऋ, अ, इ, क्लीं
 त्रिविन्दुः = छ
 त्रिवृत् = ओँ
 त्र्यम्बकः = ए, ग, स, ह
 त्वक् = य
 त्विषाम्पतिः = म

[द]

दकम् = व, वँ
 दक्षकपोलः = लृ
 दक्षगुल्मगः = ड
 दक्षजान्वग्रगः = ठ
 दक्षनेत्रम् = इ
 दक्षपादगः = ट
 दक्षपादाङ्गुलिमूलगः = ढ

दक्षपार्श्वः = प
 दक्षाङ्गुल्यग्रगः = ड
 दक्षिणकूर्पगः = ख
 दक्षिणहस्तगः = श
 दक्षिणाङ्गुलिमूलगः = घ
 दण्डः = नमः, ०
 दण्डी = थ
 दण्डीशः = थ
 दन्तावलः = काँ
 दन्ती = काँ
 दमुना = र, रँ
 दर्पकः = इ, क, क्ली०
 दर्शविपत् = ऐ, द्राँ, स, ०
 दशाश्वः = ऐ, द्राँ, स, ०
 दहनः = र, रँ
 दाता = द
 दामोदरः = अ, उ, ऐ, क्ली०
 दारकः = ड
 दारदः = रूँ
 दाशार्हः = अ, उ, क्ली०
 दिगम्बरः = ए, ग, स, ह
 दिनकरः = म
 दिनमाणिः = म
 दिवस्पतिः = म
 दिवाकरः = म
 दिवौकाः = क्ष
 दीपिका = ऊ
 दीर्घः = न
 दीर्घमारुतः = काँ
 दुश्चयवनः = इ, ल
 देवः = क्ष [क्ली०
 देवकीनन्दनः = अ, उ
 देवकीमनुः = अ, उ, क्ली०

देवताधिपः = इ, ल
 देवदेवः = ए, ग, स, ह
 देवमाता = ऋ, ॠ
 देवराजः = इ, ल
 देहिनी = ल, लँ
 दैत्यगुरुः = लँ, ब्रौँ
 दैत्यमान्यः = ल, ब्रौँ
 दैत्यारिः = अ, उ, क्ली०
 दैवज्ञः = ऋ, ॠ
 दोग्घ्री = हूँ
 दोला = फ्रैँ
 दोषाकरः = ऐ, द्राँ, स, ०
 दौर्गमाता = ऋ
 द्युतिः = छ
 द्युमणिः = म,
 द्योः = आ, ख, ह, हँ
 द्यौः = आ, ख, ह, हँ
 द्रुघणः = क, कँ
 द्रुमारिः = काँ
 द्रुहिणः = क, कँ
 द्वादशात्मा = म
 द्वारकेशः = अ, उ, क्ली०
 द्विजपतिः = ऐ, द्राँ, स, ०
 द्विजराजः = ऐ, द्राँ, स, ०
 द्विपः = काँ
 द्विरण्डेशः = भ
 द्विरदः = काँ
 द्विरदनः = काँ
 द्वीपवान् = रूँ
 द्वैमातुरः = गँ
 [ध]
 धनञ्जयः = र, रँ

धनेशः = ध
 धर(णी)णिः = ल, लँ
 धरणीकीलकः = द [क्ली०
 धरणीधरः = द, अ, ड,
 धरणीध्रः = च
 धरणीपूरः = रूँ
 धरणीशः = ध
 धरा = ल, लँ
 धराधरः = च, द
 धरित्री = ल, लँ
 धर्मद्रवी = लृ
 धवलम् = व, वँ
 धाता = क, कँ
 धातृभृत् = द
 धात्री = ल, लँ
 धारयित्री = ल, लँ
 धारिणी = ल, लँ
 धुनीनाथः = रूँ
 धूर्जटिः = ए, ग, स, ह
 धूलिध्वजः = ख, ट, य,
 यँ, ह, हँ
 धेनुकारिः = अ, उ, क्ली०
 ध्रुवः = अ, उ, ए, क्ली०,
 ग, स, ह
 ध्रौवम् = अः
 ध्वान्तम् = लँ

[न]

नकुली = ह
 नक्षत्रनेमिः = ऐ, द्राँ, स, ०
 नक्षत्रम् = त्रौँ
 नक्षत्रेशः = ऐ, द्राँ, स, ०
 नगः = द

नटनम् = चँ
 नदी = न
 नदीनः = न
 नन्दकः = इ, क, क्लीँ
 नन्दजः = ठ
 नन्दनः = इ, क, क्लीँ
 नन्दनन्दनः = अ, उ, क्लीँ
 नन्दयिता = इ, क, क्लीँ
 नन्दात्मजः = अ, उ, क्लीँ
 नन्दिनी = लृ
 नन्दिवर्धनः = ए, ग, स, ह
 नन्दी = इ, क, क्लीँ, उ
 नन्दीश्वरः = ए, ग, स, ह
 नपुंसकमन्त्रः = नमोऽन्तः
 नभः = लृ, नमः, आ, ख, ह, हँ
 नभःप्राणः = ट, य, यँ
 नभःस्वरः = ट, य, यँ
 नभश्चमसः = ऐ, द्राँ, स, उ
 नभसम् = आ, ख, ह, हँ
 नभस्वान् = ट, य, यँ
 नमुचिसूदनः = इ, ल
 नरः = ठ
 नरकजित् = अ, उ, ण, क्लीँ
 नरसिंहः = अ, उ, क्लीँ
 नरायणः = अ, उ, क्लीँ
 नर्त्तकः = इ, क, क्लीँ
 नर्त्तकम् = चँ
 नर्त्तकी = ऊँ-ब्रीँ, स्त्रीँ
 नाकनाथः = इ, ल
 नाकम् = आ, ख, ह, हँ
 नागः = औ, अः, क्राँ
 नागलोकः = थ

नाट्यम् = च, चँ
 नादः = उँ
 नादी = न
 नाभिगतः = भ
 नाभिजन्मा = क, कँ
 नारम् = व, वँ
 नारायणः = अ, उ, क्लीँ
 नारायणप्रिया = श्रीँ
 निःश्वासकः = ट, य, यँ
 निद्रा = भ
 निधनः = क, कँ
 निरञ्जनः = अ
 निर्जरः = क्ष
 निर्झरः = क्राँ
 निर्झरी = द
 निर्वाणः = ण
 निवृत्तिकला = ह्राँ
 निशाकरः = ऐ, द्राँ, स, उ
 निशाचरः = इ, क, क्लीँ

[प]

पक्षजः =
 पक्षजन्माः =
 पक्षधरः =
 पञ्चधन्वा = इ, क, क्लीँ
 पञ्चनखः = च, क्राँ
 पञ्चबाणः = इ, क, क्लीँ
 पञ्चरश्मिः = ओँ
 पञ्चशरः = इ, क, क्लीँ
 पञ्चसुप्तः = च
 पञ्चाननः = ए, ग, स, ह
 पञ्चान्तकः = ग
 पद्मः = ठ, ऊ, ब्रीँ

पद्मनाभः = अ, उ, क्लीँ
 पद्मपाणिः = क, कँ
 पद्मा = ऊ, श्रीँ
 पद्मासनः = क, कँ
 पद्मी = क्राँ
 पद्मेशः = य
 पपञ्चमः = म
 पम्पा = ख
 परमात्मा = क्ष
 परमेष्ठी = क, कँ
 परा = लृ, ह्रीँ
 परिज्ञाः = ऐ, द्राँ, स, उ
 पर्वतः = द
 पर्वतारिः = इ, ल
 पर्वधिः = ऐ, द्राँ, स, उ
 पर्यण्यः = इ, ल
 पशुपाणिः = गँ
 पल्लवावासः = च
 पवनः = ट, य, यँ
 पवमानः = ट, य, यँ
 पांशुचन्दनः = ए, ग, स, ह
 पाकशासनः = इ, ल
 पाचनः = र, रँ
 पाण्डवायनः = अ, उ, क्लीँ
 पातकः = र
 पाथः = व, वँ
 पानीयम् = व, वँ
 पापम् = ऊ
 पारा = ल, लँ
 पारावारः = रूँ
 पार्थिवः = प
 पार्थः = प
 पालिनी = ठ

निशापतिः = इ, क, क्लीँ
निशामणिः = ऐ, द्राँ, स, ॰
निशीथनानाथः = ऐ, द्राँ, स, ॰

निश्चला = ल, लँ
नीरम् = व, वँ, स्वाहा
नीलः = त
नीलकण्ठः = ए, ग, स, ह
नीलचरणः = लृ
नीललोहितः = ए, ग, स, ह

नृहरि = अ, उ, क्लीँ
नृसिंहास्त्रम् = ई

पावकः = र, रँ
पाशः = ओँ
पिङ्गलः = र, रँ
पिङ्गलिका = ऊँ, ब्रीँ
पिण्डपादः = क्राँ
पितामहः = अ, क, कँ, म
पिनाकपाणिः = ए, ग, स, ह

पिनाकी = ए, ग, ल, स, ह
पिप्पलम् = व, वँ
पीता = ष
पीताम्बरः = अ, उ, क्लीँ
पीयूषमहाः = ऐ, द्राँ, स, ॰
पीलुः = क्राँ
पीवरः = च
पुण्डरीकाक्षः = अ, उ, क्लीँ
पुनर्वसुः = अ, उ, क्लीँ
पुष्पत्रः = हुँ, फडन्तः
पुरदंशा = इ, ल
पुरदिद = ए, ग, स, ह

पुरन्दरः = इ, ल
पुरहूतः = इ, ल
पुराणगः = क, कँ, म
पुराणपुरुषः = अ, उ, क्लीँ
पुरुषोत्तमः = अ, उ, क्लीँ, प
पुलोमारिः = इ, ल
पुष्करम् = आ, ख, म्लौ, व, वँ, ह, हँ
पुष्करी = क्राँ
पुष्पम् = ध

पूतक्रतुः = इ, ल
पूतनारिः = अ, उ, क्लीँ
पूर्वः = क, कँ
पूर्वदिक्षुपतिः = इ, ल
पूषा = म, स
पूतनारापादः = इ, ल
पृथिवी = ल, लँ
पृथुशेखरः = दृ
पृथ्वी = ल, लँ
पृषताम्पतिः = ट, य, यँ
पृषदश्वः = ट, य, यँ
पेटकी = क्राँ
पेटलः = क्राँ

प्रकम्पनः = ट, य, यँ
प्रजापतिः = क, कँ, म
प्रणवः = ओँ
प्रतिष्ठाकला = ह्रीँ
प्रद्युम्नः = इ, क, क्लीँ
प्रभञ्जनः = ट, य, यँ
प्रभुः = अ, उ, क, कँ, क्लीँ, म
प्रमथाधिपः = ए, ग, स, ह
प्रलयक्षयः = ध्रुँ
प्रशस्तिका = ह्रीँ

प्रसूतिः = ध
प्रसूनः = ध
प्रस्थम् = म्लौ
प्रस्थवान् = द
प्राचीनवर्हिः = इ, ल
प्राणः = ह
प्रासादः = हौँ
प्रियतमः = ए, ग, स, ह
प्रिया = स्त्री
प्रीतिः = ध

[फ]

फट्कारः = फ
फणाधरधरः = ए, ग, स, ह
फणिप्रियः = ट, य, यँ
फली = क्रौँ
फेत्काटी = हेँ, रुफ =

ह् + स् + ख् + फ्रै

[ब]

बकः = श
बकेशः = श
बभ्रुः = अ, उ, क्लीँ
बलम् = व
बलारातिः = इ, ल
बलिध्वंसी = अ, उ, क्लीँ
बहुरूपः = क, कँ, म
बाणः = ण
बालः = व
बीजप्रसूः = ल, लँ
बृहद्भानुः = र, रँ
ब्रध्नः = म
ब्रह्मसूः = इ, क, क्लीँ
ब्रह्मा = क, कँ, म

[भ]

भगः = ए
 भगाली = ए, ग, स, ह
 भद्रः = क्राँ
 भद्रिका = भ
 भपतिः = ऐ, द्राँ, स, ॰
 भम् = त्राँ
 भयदः = ऐ
 भया = व
 भयावहः = भ
 भरद्वाजः = भ
 भरुः = ए, ग, स, ह
 भर्गः = ए, ग, स, ह
 भवः = ए, ग, स, ह
 भवायना = लृ
 भागीरथी = लृ
 भानुः = म
 भारभूतिः = ऋ
 भार्गवः = अः, लृ, त्रौ
 भास्करः = म
 भास्वती = भ
 भास्वान् = म
 भीमः = ए, ग, स, ह
 भीमा = भ
 भीरुः = ए, ग, स, ह
 भीषणः = ए, ग, स, ह
 भीष्मजननी = लृ
 भीष्मसूः = लृ
 भुजगः = य
 भुजङ्गेशः = ट
 भुवनम् = व, व
 भुवनमाता = ल, लँ
 भुवनेशः = ह

भुवनेशी = ह्रीँ
 भूः = ल, लँ
 भूतधात्री = ल, लँ
 भूतनाथः = ए, ग, स, ह
 भूतम् = उ, फ्रैँ, स्फ्रैँ
 भूतिः = ह्रीँ
 भूतेशः = ए, ग, स, ह
 भूधरः = द, व
 भूभृत् = द
 भूमिः = ल, लँ
 भूरिः = ए, ग, स, ह
 भृगुः = स
 भृङ्गः = इ, क, क्लीँ
 भृङ्गीशः = ए, ग, स, ह
 भृङ्गेशः = इ, क, क्लीँ
 भैरवः = ए, ग, स, ह
 भोगिकान्तः = ट, य, यँ
 भौतिकः = ऐँ
 भौमजः = ड
 भ्रमणः
 भ्रममाणः
 भ्रमावहः
 भ्रमोऽपरः = इ, क, क्लीँ
 भ्रान्तः
 भ्रान्तचारः
 भ्रामकः
 भ्रामणः
 भृकुटी = भ

[म]

मः = क, कँ, म
 मकरध्वजः = इ, क, क्लीँ
 मघना = इ, ल

मघाभूः = लँ, त्रौँ
 मज्जा = ष
 मञ्जुघोषः = म, क, कँ
 मठसंज्ञः = ग्लौँ
 मण्डलः = म
 मण्डूकः = म
 मतङ्गः = क्राँ
 मत्स्यः = प
 मथुरेशः = अ, उ, क्लीँ
 मदनः = इ, क, क्लीँ
 मधुजित् = अ, उ, क्लीँ
 मधुरिपुः = अ, उ, क्लीँ
 मधुसूदनः = अ, उ, क्लीँ
 मनसिजः = इ, क, क्लीँ
 मनुः = औ
 मन्त्रनाथः = औ
 मन्त्रमनुः = स्वाहा
 मन्त्रेशः = म
 मन्दाकिनी = लृ
 मन्दाक्षम् = हीँ
 मन्दास्यम् = ह्रीँ
 मन्मथः = इ, क, क्लीँ
 मरुत् = ट, य, यँ
 मरुत्वान् = इ, ल
 मलिनम् = ड
 महाकच्छः = रूँ
 महाकान्ता = ल, लँ
 महाकालः = ए, ग, म, स, ह
 महाघोषः = ह
 महानटः = ए, ग, स, ह
 महामाया = ई
 महाविलः = आ, ख, ह, हँ
 महासेनः = ट

मही = ल, लँ
 महीध्रः = द
 मातङ्गः = इ, क, काँ, क्लीँ
 मातरिश्वा = ट, य, यँ
 मादः = इ, क, क्लीँ
 माधवः = अ, इ, उ, क्लीँ
 मानवः = अः
 मानी = म
 माया = ई, हीँ
 मायी = औ
 मायोत्तरम् = उ
 मारः = इ, क, क्लीँ
 मारुतः = ट, य, यँ
 मार्जः = अ, उ, क्लीँ
 मार्त्तण्डः = म
 मालूरः = क्षौ
 मित्रः = म
 मिहिरः = म
 मीनकेतनः = इ, क, क्लीँ
 मुकुन्दः = अ, उ, क्लीँ
 मुखाङ्कुरम् = इ
 मुञ्जकेशी = अ, उ, क्लीँ
 मुरलीधरः = अ, उ, क्लीँ
 मुरारिः = औ
 मूर्धा = ऐ
 मृगपिपुः = ऐ, द्रौ, स,ँ
 मृगवाहनः = ट, य, यँ
 मृडः = ए, ग, स, ह
 मृत्तिका = हीँ
 मृत्युः = श
 मृत्युञ्जयः = ए, ग, स, ह
 मृत = हीँ

मृत्स्ना = हीँ
 मेघः = व
 मेघपुष्पम् = व, वँ
 मेघवान् = इ, ल
 मेघवेश्म = आ, ख, ह, हँ
 मेदः = व
 मेदिनी = ल, लँ
 मेरुः = क्ष, ष
 मेषः = न
 मोक्षः = औ
 मोचिका = क
 मोहः = इ, क, क्लीँ
 मोहनः = ,,
 मोहवर्धनः = ,,

[य]

यज्वनाम्पति = ऐ, द्रौ, स,ँ
 यदुनाथः = अ, उ, क्लीँ
 यमः = व
 यमान्तकः = ए, ग, स, ह
 यादःपति = रँ
 यादवः = अ, उ, क्लीँ
 यादसाम्पतिः = रँ
 यामिनीपतिः = ऐ, द्रौ, स,ँ
 यामुनः = य
 यामुनेयः = य
 योगिनी = छीँ
 योनिः = ए

[र]

रक्तम् = र
 रक्षणाधिपः = ऊ
 रतिः = इ, क्लीँ
 रतिनाथः = इ, क, क्लीँ

रतिपातिः = इ, क, क्लीँ
 रतिप्रियः = इ, क, क्लीँ
 रतिसखः = इ, क, क्लीँ
 रत्नगर्भा = ल, लँ
 रत्नाकरः = रँ
 रत्नावली = ल, लँ
 रदनी = काँ
 रन्तिदेवः = अ, उ, क्लीँ
 रमः = इ, क, क्लीँ
 रमणः = इ, क, क्लीँ
 रममाणः = इ, क, क्लीँ
 रमा = श्री
 रमाकान्तः = इ, क, क्लीँ
 रम्भा = स्त्री
 रविः = म
 रशना = क्रीँ
 रसज्ञा = क्रीँ
 रसना = क्रीँ
 रसनायकः = ए, ग, स, ह
 रसा = क्रीँ
 रसाङ्का = क्रीँ
 रसाला = क्रीँ
 रसिका = क्रीँ
 राजा = ऐ, द्रौ, स,ँ
 राजीवः = काँ
 रात्रिः = त
 रात्रिनाथः = इ, क, क्लीँ
 रामा = स्त्री
 रावः = फेँ
 राहुभेदी = अ, उ, क्लीँ
 रिपुघ्नः = क
 रुक्मिणी = श्री
 रुचिरः = र

रुद्रः=ए, ग, स, ह
 रुद्रशेखरा=ल्
 रुधिरम्=र
 रेणुका=ड
 रेरिहाणः=ए, ग, स, ह
 रोचिष्मान्=र
 रोहिणीपतिः=ऐ, द्राँ, स, ॰
 रोहिणीशः=ऐ, द्राँ, स, ॰
 रोहिताश्वः=र, रँ
 रौद्री=फ

[ल]

लकुली=ह
 लक्ष्मीः=व, श्री
 लक्ष्मीसहजः=ऐ, द्राँ, स, ॰
 लज्जा=स्त्री, ह्री
 लता=ए
 लम्पटः=ल
 लम्बोदरः=गँ
 ललना=क्री, स्त्री
 लवणम्=न
 लिप्सा=ऊँ
 लेखः=क्ष
 लेखर्षभः=इ, ल
 लेखा=ही
 लोकनाथः=क, कँ, म
 लोकेशः=क, कँ, म
 लोभवर्धनः=इ, क, ह्री
 लोला=क्री
 लोहितः=प, ही

[व]

वज्रकायः=क्ष
 वज्रदण्डः=ल्

वज्रपाणिः=इ, ल
 वज्रमुष्टिः=व
 वज्री=इ, ल
 वधूः=स्त्री
 वनम्=व, वँ
 वनम्=स्वाहा
 वनमाली=अ, उ, ह्री
 वराकः=ए, ग, स, ह
 वराहः=न
 वरुणः=वँ
 वरेश्वरः=ए, ग, स, ह
 वर्गादिः=क
 वर्त्तः=ऐ
 वर्धमानः=अ, उ, ह्री
 वर्म=हुँ
 वर्हा=थ
 वर्हिः=र, रँ
 वर्हिथुष्मा=रूँ
 वलसगुः=ऐ, द्राँ, स, ॰
 वसुः=ए, ग, स, ह
 वसुन्धरा=ल, लँ
 वस्त्रबीजम्=आँ
 व्रद्धिः=र, रँ
 वाः=व, वँ
 वाक्=ऐ, ऐँ
 वायुरा=मी
 वाग्भवम्=ऐँ
 वाग्मी=मी
 वाङ्कः=रूँ
 वाणी=ऐँ
 वातुदा=मी
 वामकर्णः=ऊ
 वायगण्डः=ल्

वामगुल्फगः=द
 वामदेवः=ए, ग, स, ह
 वामनः=अ, उ, क, ह्री
 वामनासिकः=क
 वामनेत्रम्=ई
 वामपादाङ्गुलितलगः=ज
 वामपादाङ्गुलीगः=ध
 वामपार्श्वगः=फ
 वाममणिमध्यगः=न
 वामलोचनम्=ई
 वामलोचना=क
 वामहस्ताङ्गुलितलगः=झ
 वामहस्ताङ्गुल्यग्रगः=ञ
 वामांसगतः=व
 वामोरुमूलगः=त
 वायुः=ट, य, यँ
 वायुसखः=र, रँ
 वारणः=क्राँ
 वारणम्=ऐ, ऐँ, क्राँ
 वारांनिधिः=रूँ
 वाराही=ए
 चारि=व, वँ
 वारिदः=व
 वारिधिः=रूँ
 वारिनिधिः=रूँ
 वारिराशिः=रूँ
 वारुणम्=क, व
 वार्त्तादा=मी
 वार्धिः=रूँ
 वार्षः=रूँ
 वासना=ऐ, ऐँ, ऊँ, ब्री
 वासवः=इ, ल

वासुः = अ, उ, औ, क्लीं
 वासुदेवः = ॥
 वास्तोष्पातिः = इ, ल
 वाहिनीपतिः = रूँ
 वाहिकम् = ग्लौं
 विघ्नपः = ग, गं
 विजयी = उ
 विद्या = इ
 विद्युत् = ष
 विधिः = क, कै, म, वँ
 विन्दुः = ०
 विन्दुमाली = ई
 विपुला = ल, लँ
 विभावसुः = र, रँ
 विभूतिः = हीँ
 विमलः = ल
 विलः = थ
 विशालाक्षः = थ
 विश्वप्सा = र, रँ
 विश्वम् = ल, नमः
 विश्वम्भरा = ल, लँ
 विश्वमूर्तिः = भ
 विषः = म
 विष्णुः = अ, उ, क्लीं
 वीतिहोत्रः = र, रँ
 वीरः = य
 वृक्षः = अं, अः
 वृषः = ष
 वृषाकपिः = र, रँ
 वृष्टिः = क्रँ
 वेदादिः = ऊँ
 वेश्या = ऊँ, व्रीँ
 वकुण्ठः = म

वैश्यः = य
 वैश्वानरः = र, रँ
 वैष्णवः = आ
 व्यक्तः = लृ
 व्याघ्रपादः = उ
 व्यापिनी = औ
 व्योम = आ, लृ, ख, ह, हँ, ०
 व्योषम् = हीँ

[श]

शंवरम् = व, वँ
 शक्तिः = ए, स, ह्सौँ
 शक्रः = इ, ल
 शङ्करः = ए, ग, स, ह
 शङ्कुकर्णः = श
 शङ्खभृत् = अ, उ, क्लीं
 शङ्खान्तराकृतिः = ढ
 शचीपतिः = इ, ल
 शतक्रतुः = इ, ल
 शतघ्नी = ध्रीँ
 शतधामा = अ, उ, क्लीं
 शतधृतिः = इ, क, कै, म, ल
 शतपत्रनिवासः = क, कै, म
 शतपर्वेशः = लँ, व्रौँ
 शतमन्युः = इ, ल
 शतानन्दः = क, कै, म
 शतावर्त्तः = अ, उ, क्लीं
 शतावर्त्ती = ॥
 शनिः = छ
 शम्बरारिः = इ, क, क्लीं
 शम्भुः = ए, ग, श, स, ह
 शम्भुवनिता = हीँ
 शरजन्मा = टँ
 शरत् = स

शर्म = ए, स
 शर्वरीपतिः = ऐ, द्राँ, स, ०
 शर्वरीशः = ॥
 शशधरः = ॥
 शशविन्दुः = अ, उ, क्लीं
 शसीनः = ट, य, यँ
 शान्तिः = ई [हैँ, हौँ
 शान्त्यतीता कला = हँ, ०
 शाम्भवम् = रूँ
 शार्ङ्गभृत् = अ, उ, क्लीं
 शार्ङ्गी = अ, उ, क्लीं, ग
 शालिका = ध्रौँ
 शिखरम् = म्लौँ
 शिखरी = द
 शिखावान् = र, रँ
 शिखी = र, रँ
 शितिकण्ठः = ए, ग, स, ह
 शिपिविष्टः = ॥
 शिरः = ०, क
 शिली = म
 शिलोच्चयः = द
 शिवः = ए, ग, स, ह
 शिवकीर्त्तनः = अ, उ, क्लीं
 शिवा = हीँ
 शिविपिष्टः = ए, ग, स, ह
 शिवोत्तमः = घ
 शीतभानुः = ऐ, द्राँ, स, ०
 शीतमरीचिः = ॥
 शीतरश्मिः = ॥
 शीतलः = ॥
 शीतांशुः = ॥
 शुक्रः = स, लँ, व्रौँ
 शुक्रः = स

भुक्ता = ध्रीं
 भुचिः = र, रँ
 भुभाङ्गिः = ड
 भुभ्रा = लृ
 भुभ्रांशुः = ऐ, द्रौ, स, उ
 भुष्मा = र, रँ
 भृकरः = न
 भृग्यम् = इसौ
 भृगः = प, म
 भृपकः = ग, गँ
 भृपकर्णः = कौ
 भृलः = द
 भृलधरः = ए, ग, स, ह
 भृली =
 भृज्जारी = कौ
 भृज्जी = द
 भृणिः = क्रौ
 भृलः = द
 भृलशिविरम् = हँ
 भृलेन्द्रजा = लृ
 भृचिष्केशः = र, रँ
 भृभा = फ, हँ
 भृरिः = थ, न
 भृरी = नमः
 भृयामा = कीं, धँ, ल, लँ
 भृवणः = उ
 भृकण्ठः = ए, ग, स, ह
 भृकरः = अ, उ, क्रीं
 भृकान्तः =
 भृगर्भः =
 भृधरः = लृ
 भृनिकेतनः = अ, उ, क्रीं
 भृनिवासः =

श्रीपतिः = अ, उ, क्रीं
 श्रीमान् =
 श्रीवत्सः =
 श्रीवत्सभृत् =
 श्रीवत्सलाञ्छनः =
 श्रीवराहः =
 श्रीशः =
 श्रीहरिः =
 श्रुतिः = उ, ॐ
 श्लेष्मकः = छ
 श्वसनः = ट, य, यँ
 श्वेतः = लँ, ब्रौ
 श्वेतरथः = लँ, ब्रौ, स
 श्वेतवाहनः = ऐ, द्रौ, स, उ
 श्वेतेश्वरः = ष

[ष]

षडाकारः = ष
 षडाननः = टँ, प
 षण्मुखः = ऊ, टँ
 षष्ठिहायनः = कौ
 षोडशांशुः = लँ, ब्रौ
 षोडशार्चिः = लृ, ब्रौ

[से]

संक्रन्दनः = इ, ल
 संवर्त्तकः = क्ष
 संहारः = ख
 सकला = ह्रीं
 सङ्कषणः = औ
 सङ्कथकः = ड
 सङ्गतिः = स
 सत्यः = द
 सत्यकः = क, कँ, म
 सदनम् = व, वँ

सदागतिः = ट, य
 सदानन्दः = क, कँ
 सदायोगी = अ, उ
 सदाशिवः = व, फौ
 सद्यः = ओ
 सद्योजातः = ओ
 सनत् = क, कँ, म
 सनातनः = अ, उ
 सन्ध्यानटी = ए, ग
 सन्ध्यारामः = क, कँ
 सपरः = ह
 सप्तजिह्वः = र, रँ
 सप्तार्चिः = र, रँ
 सप्ताश्वः = म
 सफरी = फ
 समयः = स
 समस्ता = ह्रीं
 समीरः = ट, य, हँ
 समीरणः = ट, य, हँ
 समुद्रः = हँ
 समुद्रनवतातः = ऐ
 समुद्रसुभगा = लँ
 सम्बलम् = व, वँ
 सरः = व, वँ
 सरम् = व, वँ
 सरसी = उ
 सरस्वान् = हँ
 सरित्पतिः = हँ
 सरिदाम्पतिः = हँ
 सरिद्वरा = लँ
 सरिलम् = व, वँ
 सरोजी = क, कँ
 सरारुहनिवासिनी =

